कांपती तथा गर्भबलसे आक्रान्त होकर अग्नि-देवसे बोलीं, हे भगवन्! मैं आपके इस तेजको धारण करनेमें समर्थ नहीं हूं। मैं इस तेजसे विमूढ़ हुई हूं; पहलेकी भांति मेरा स्वास्थ्य नहीं है। हे अनघ भगवन्! मैं विह्वल हुई हूं, मेरी चेतनशक्ति नष्ट होरही है। हे तप-ताम्वर! मैं इस तेजको धारण नहीं कर सकती इसलिये मैं दुःखपूर्व्वक इसे त्यागती हूं और स्वेच्छानुसार त्यागना नहीं चाहती। हे देव विभावसु! मेरा कभी किसी तेजके साथ संस्पर्श नहीं है। हे महाद्युति! आपदके हेतु यह आपके संग अत्यन्त सूक्ष्म सम्बन्ध हुआ। हे हुताशन! इस विषयमें जो कुछ दोष गुण अथवा धर्म्माधर्म्म होगा, उसे मैं तुम्हारा ही विचारती हूं।

अनन्तर हुताशनने उनसे कहा, मेरे तेजसे युक्त इस गर्भको धारण करो, इससे महागुण तथा फल प्राप्त होगा। तुम निज शक्तिबलसे इस अखण्ड भूमण्डलको धारण करने तथा उठानेमें समर्थ हो, गर्भ धारणके अतिरिक्त तुम्हें और कुछ भी अप्राप्य नहीं है। अग्नि और देवताओंसे निवारित होके भी गर्भ धारण करनेमें असमर्थ होनेसे सरिद्वरा गङ्गाने उस समय पर्व्वत श्रेष्ठ सुमेरुके ऊपर उस गर्भको परित्याग किया, वह गर्भधारण करनेमें समर्थ होनेपर भी रुद्ररूपी अग्निके तेजसे प्रधर्षित होके निज तेजके सहारे गर्भ धारण न कर सकीं। हे भृगुकुलधुरन्धर! जब गङ्गाने उस अग्निसदृश प्रभायुक्त प्रदीप्त गर्भको परित्याग करके निवास किया, तब अग्निदेव उस सरिद्वराको दर्शन देके बोले, हे देवि! गर्भ सुखसे उदित हुआ है? उसका कैसा वर्ण है? कैसा दीखता है और वह कैसे तेजसे संयुक्त है? यह सब वृत्तान्त मुझसे कहो।

गङ्गा बोलीं, हे अनघ! वह गर्भ सुवर्ण-वर्ण और तेजमें तुम्हारे सदृश है, विमल सुवर्ण समान उस प्रदीप्त गर्भने पर्व्वतको प्रकाशित किया है। हे तपताम्वर! वह गर्भ पद्मोत्पल-युक्त ह्रदकी भांति शीतल है, उसकी सुगन्धि कदम्बपुष्पकी भांति है, सूर्य्यके समान तेजयुक्त उस गर्भकी किरणोंके सहारे पृथ्वी और पर्व्व-तकी जो कुछ वस्तु स्पर्शित हुई हैं, वे सब काञ्चनरूपी दिखाई देती हैं। वह गर्भ तेजके सहारे स्थावर जङ्गमात्मक त्रिभुवनको प्रदीप्त करते हुए पर्व्वत, नदी और झरनोंमें दौड़ रहा है। हे हव्यवाहन! आपका पुत्र ऐसे ऐश्वर्य्यसे युक्त है, कि तेजमें सूर्य्य तथा वैश्वानरके समान और कान्तिमें द्वितीय चन्द्रमा हुआ है। हे भृगुनन्दन! भागीरथी देवी इतना कहके वहीं अन्तर्हित हुईं, तेजस्वी पावक भी उस समय देवताओंके कार्य्य को सिद्ध करके अभिलषित स्थानमें चले गये। इन्हीं सब कर्म्मों तथा गुणोंसे लोकमें देवताओं और ऋषियोंके द्वारा अग्निका 'हिरण्यरेता' नाम वर्णित हुआ करता है। पृथिवीदेवी भी उसी समयसे वसु-मती नामसे विख्यात हुई हैं। गङ्गाके गर्भसे गिरके वह अग्निसे उत्पन्न अद्भुतदर्शन तेज-युक्त गर्भ दिव्य शरवणका प्राप्त होके वहां बढ़ने लगा। कृत्तिकागणोंने उस बालाकसदृश तेज सम्पन्न सन्तानको देखा, वे लोग उस बालकको पुत्रकी स्तनका दूध पिलाके पालने लगीं। इस ही निमित्त उस परम तेजस्वी बालकका नाम कार्त्तिकेय हुआ। गङ्गाके गर्भसे स्खलित होनेसे उनका नाम स्कन्द और गुहामें बास करनेसे गुह नाम हुआ था। इस ही भांति अग्निका पुत्र सुवर्ण उत्पन्न हुआ। सुवर्ण अनेक भांतिका होनेपर भी उसके बीच जाम्बुनद नाम स्वर्ण ही सबसे श्रेष्ठ है, वह देवताओंका भूषण होनेसे जातरूप नामसे विख्यात हुआ है यह सब रत्नोंके बीच उत्तम रत्न तथा समस्त भूषणोंके बीच उत्तम भूषण सारो पवित्र वस्तु-ओंसे पवित्र और सब मङ्गलोंका मङ्गलस्वरूप

है। सुवरण ही भगवान अग्नि ईश और प्रजापति स्वरूप है। हे द्विजसत्तम! सोना सब पवित्र वस्तुओंके बीच अत्यन्त पवित्र है, जातरूप अग्निसोमात्मक रूपसे वर्णित हुआ करता है।

वशिष्ठ बोले, हे राम! पहले समयमें जो परमात्मा पितामह ब्रह्माको ब्रह्मदर्शन हुआ था; मैंने वह कथा सुनी है। हे तात! वारुणी मूर्त्तिधारी महादेवके वारुण ऐश्वर्य्यके समय अग्नि आदि देवताओं और मुनियोंने ईश्वर रुद्रदेवके निकट आगमन किया था। यज्ञके सब अङ्ग, मूर्त्तिमान वषट्कार, सशरीर समस्त साम, सहस्रों यजुर्मन्त्र और पद तथा क्रम विभूषित ऋग्वेदने वहांपर आगमन किया। समस्त लक्षण, देवताओंकी स्तुति, निरुक्त, स्वरपंक्ति ओंकार और निग्रह प्रग्रह नाम यज्ञके दो नेत्र, ये सब वहांपर स्थित हुए। उपनिषदोंके सहित सब वेद, सावित्री विद्या, वर्त्तमान, भूत और भविष्य आदिको भगवान महादेवने धारण किया था। उस समय उन्होंने स्वयं ही अपनेको आहुति प्रदान की। पिनाकधारी महादेवने बहुरूप यज्ञको शोभित किया। सर्व्व भूतपति ये भगवान महादेव ही स्वर्ग, आकाश, पृथिवी, भूपति, सर्व्वविघ्नेश्वर श्रीमान् विभावसु, ब्रह्मा, शिव, रुद्र, वरुण और अग्नि हैं तथा येही प्रजापतिरूपसे वर्णित होते हैं। हे भृगुकुलधुरन्धर! उस पशुपतिके यज्ञ, तपस्या तथा सब क्रिया निर्व्वाहित होती रहनेपर दीप्तव्रती दीक्षा देवी, दिगीश्वरके सहित सब दिशा, देवपत्नी, देवकन्या और देवमातृगण महात्मा वरुणके ऊपर प्रसन्न होके सब कोई मिलकर महादेवके यज्ञमें आयीं। देवकन्या प्रभृतिको देखके स्वयम्भूका बीर्य्य पृथ्वीपर गिरा। पूषाने उनके शुक्रके निस्पन्दवशसे पृथ्वीपरसे दोनों हाथोंसे वीर्य्यके सहित पांशु संग्रह करके उसी अग्निमें डाल दिया। उस प्रज्वलित अग्निसेयुक्त उस यज्ञके पूर्ण होनेपर होमकर्त्ता प्रजापतिके द्वारा परम श्रेष्ठ धातुकी उत्पत्ति हुई, हे भृगुनन्दन! धातु स्खलित होते ही उन्होंने उसी स्रुवामें लेकर मन्त्र पढ़के घृतकी भांति होम किया।

अनन्तर वीर्य्यवान भगवान् ब्रह्माने उस तेजसे चार प्रकारके प्राणियोंको उत्पन्न किया। उस हीसे इस लोकमें प्रवृत्ति प्रधान समस्त जङ्गम प्राणी उत्पन्न हुए, उस बीर्य्यके तम अंशसे स्थावरोंकी उत्पत्ति हुई; स्थावर और जंगम दोनों ही सत्त्वांशमें सन्निविष्ट रहे। वह सत्त्वही प्रकाशरूपी बुद्धिका नित्यगुण है, सत्त्व ही बुद्धि स्वरूप है, उस बुद्धिसत्त्वसे आकाश आदि सारा जगत् उत्पन्न हुआ। तमोमय जड़ शरीरमें सत्त्व अर्थात् प्रकाश वा उत्तम तेज तथा धर्म्मप्रवृत्ति स्थित रही। अग्निके बीच प्रजापतिका बीर्य्य होम किये जानेपर उससे निज निज कारणज गुणोंके सहित तीन मूर्त्तिमान पुरुष उत्पन्न हुए। अग्निज्वाला भृगसे पहले भृगु उत्पन्न हुए, अंगारसे अंगिरा जन्मे। अंगारकी अल्पज्वालासे कवि नाम पुरुष उत्पन्न हुआ। भृगु ज्वालमालाके सहित उत्पन्न हुए थे, इस ही निमित्त भृगु अर्थात् ज्वालाके नामके सहारे उनका भृगु नाम हुआ है। मरीचि अर्थात् किरणोंसे मरीचि उत्पन्न हुए, मरीचिसे कश्यपकी उत्पत्ति हुई। हे तात! अंगारसे अंगिरा और कुशोंसे बालखिल्य मुनि उत्पन्न हुए। अत्र अर्थात् इन कुशोंसे ही अत्रि जन्मे थे, इसलिये पण्डित लोग उन्हें अत्रि कहा करते हैं। भस्मसे ब्रह्मर्षियोंसे सम्मत तपस्या शास्त्रजाल और गुणलिप्स वैखानस मुनिवृन्द उत्पन्न हुए। उनके आंसूसे सुन्दरतायुक्त दोनों अश्विनीकुमार जन्मे। अवशिष्ट प्रजापतिवृन्द उनकी इन्द्रियोंसे उत्पन्न हुए। रोम कूपसे ऋषि, स्वेदसे छन्द और बीर्य्यसे मनकी उत्पत्ति हुई। शास्त्र ज्ञानसे युक्त ऋषि लोग वेद प्रमाण देखके इस ही निमित्त अग्निको सर्व्व देवमय कहा करते हैं। यज्ञस्थानमें जो सब दारु थीं, वे मांस और

दारुगत जो लाक्षादि वृक्ष थे, वे पक्ष, मुहूर्त्त तथा अहोरात्र नामसे विख्यात हुए। वरुणको ज्योतिको पित्त और रुद्रको ज्योतिको पण्डित लोग लोहित कहते हैं, ऐसा वर्णित है, कि लोहितसे स्वर्ण उत्पन्न हुआ है। सुवर्णका अधिष्ठात्री देवता मित्र है, इसलिये इसे मैत्र जानो। यह कारण है, कि धूमसे वसुगण उत्पन्न भये हैं। ज्वालासे रुद्र और महातेजस्वी आदित्य उत्पन्न हुए, यज्ञस्थलमें जो सब अंगार थे, वेही आकाशस्थित ग्रह नक्षत्र रूपसे वर्णित हुए हैं। जो जगत्के आदिकर्त्ता है, वेही परब्रह्म, वेही ध्रुव तथा सर्व्व कामप्रदाता हैं। प्राचीन लोग ऐसा कहा करते हैं, कि उन्होंने अपना निज रहस्य कहा था।

अनन्तर यज्ञ समाप्त होनेपर पानात्मके महादेव वरुण बोले, हमारा ही दिव्य अस्त्र है, इस समय मैं ही ग्रहपति हूं, पहले जो भृगु, अंगिरा और कवि नाम तीन अपत्य उत्पन्न हुए हैं, वे निःसन्देह हमारे ही पुत्र हैं। हे देवगण! वह हमारे ही यज्ञका फल जानो।

अग्निदेव बोले, पूर्व्वोक्त तीनों पुत्र मेरे अंगसे उत्पन्न हुए हैं और मेरा ही आसरा किये हैं, इसलिये वे मेरे ही पुत्र हैं, वरुणका चित्त अवश हुआ है, इसीसे ये भ्रममें पड़े हैं।

अनन्तर लोकगुरु सर्व्वलोक पितामह ब्रह्मा बोले, हमारे उस वीर्य्यके होम करनेपर जो तीन अपत्य उत्पन्न हुए हैं, वे मेरे ही पुत्र हैं, मैं ही यज्ञकर्त्ता और वीर्य्यहोम करनेवाला हूं, इसलिये यदि वीर्य्य कारण हो, तो जिसका वीज है, उसहीका फल होसकता है।

अनन्तर देववृन्द पितामहके समीप आके हाथ जोड़ सिर झुकाके उन्हें प्रणाम करके बोले, हे भगवन्! हम सब कोई स्थावर जंगमात्मक समस्त जगत्के सहित तुमसे ही उत्पन्न हुए हैं इसलिये आप ही हम लोगोंके उत्पत्ति विषयमें कारण हैं, किन्तु विभावसु अग्नि, वरुण और देवेश्वर अपना अभिलषित विषय प्राप्त करें। ब्रह्माके स्वभाव तथा आज्ञाके अनुसार यादोगणके स्वामी वरुणने सूर्य्यके समान तेजस्वी जेठे पुत्र भृगुको ग्रहण किया। ईश्वरने अंगिराको अग्निका पुत्र कर दिया और तत्त्ववित् पितामह ब्रह्माने कविको निजपुत्र कहके ग्रहण किया। तभीसे प्रसवकर्म्मकारी भृगु वारुण नामसे विख्यात् हुए। श्रीमान् अंगिरा आग्नेय नामसे प्रसिद्ध हुए और महायशस्वी कवि ब्राह्म नामसे विख्यात हुए। भार्गव और आंगिरस इस लोकमें लोकविस्तारके कारण हुए। ये तीनों प्रजापति समस्त पुत्रोंको उत्पन्न करने लगे। यह निश्चय जानो कि सब कोई इन्होंके सन्तान हैं। च्यवन, वज्रशीर्ष, शुचि, और्व्व, वरणीय शुक्र, विभु और सवन, ये सातों भृगुके पुत्र हैं, ये सब कोई भृगुके सदृश गुणयुक्त हैं। तुम जिनके वंशमें उत्पन्न हुए हो, वे भार्गवगण भी वारुण हैं। और वृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, विरुप, सम्वर्त्त और सुधन्वा ये आठो अंगिराके पुत्र हैं, ये सभी ज्ञाननिष्ठ, निरामय और वन्हिज होनेपर भी वारुण कहा है। ब्रह्माके पुत्र कवि हैं, कविके आठ पुत्र हुए, वेभी वारुण नामसे वर्णित हुआ करते हैं, ये सब गुणयुक्त, कारण और कल्याणकारी हैं, इनके ये नाम है,—कवि, काव्य, धृष्णु, वुद्धिमान् उशना, भृगु, विरजा, काशी और धर्म्मज्ञ उग्र, ये आठो कविके पुत्र हैं, इनसे सारा जगत् व्याप्त है। इन्होंके सहारे प्रजासमूहकी उत्पत्ति हुई है, इस ही निमित्त ये प्रजापति हैं। हे भृगुश्रेष्ठ! इस ही प्रकार अंगिरा, कवि और भृगुके वंशीय सन्तान परम्पराक्रमसे जगत् व्याप्त हुआ है। हे विप्र! हे तात! सर्व्वशक्तिमान् सर्व्वनियन्ता वरुणने पहले कवि और भृगुको ग्रहण किया था, इस ही निमित्त वे दोनों वारुण नामसे विख्यात हुए हैं। और शिखावान अग्निदेवने अंगिराको ग्रहण किया था,

इसीसे उनके वंशमें उत्पन्न हुए सन्तानोंको आंगिरस जानो। पितामह ब्रह्मा पहले देवताओंके द्वारा इस ही भांति प्रसन्न हुए थे, कि ये नियन्तृगण जगत्‌में प्रजापुञ्जके सहारे हम लोगोंको पूरी रीतिसे तारेंगे। इसलिये ये सब कोई प्रजापति तथा तपस्वी होकर आपकी कृपासे सब लोकोंका उद्धार करेंगे और आपके तेजकी वृद्धि करते हुए वंशकर्त्ता होंगे। ये प्राजापत्य महर्षिगण प्रियदर्शन और देवपक्षमें श्रेष्ठ होकर परम तपस्या तथा ब्रह्मचर्य लाभ करेंगे।

हे प्रभु पितामह! हम और ये लोग सब कोई तुमसे ही उत्पन्न हुए हैं, आप देवताओं और ब्राह्मणोंके विधाता हैं, मरीचि प्रभृति समस्त भार्गवगण आपके अपत्य हैं, यह देखके हम लोग आपके उत्कर्षके लिये परस्परके अभिभव करनेमें यत्नवान् न होंगे। वे लोग क्षमाशील होके प्रजा उत्पन्न करेंगे और इस ही प्रकार उत्पत्ति और प्रलयके अन्तरालमें आपको स्थापित करेंगे। लोक पितामह ब्रह्माने उस समय देवताओंका वचन सुनके 'तथास्तु' कहा; तब देववृन्द अपने अपने स्थान पर गये। आदिकालमें वारुणी मूर्त्तिधारी देवश्रेष्ठके उस यज्ञमें ऐसी ही घटना हुई थी, अग्नि ही ब्रह्मा, महादेव, सर्व्वरुद्र और प्रजापतिस्वरूप है। ऐसा निश्चय है, कि यह सुवर्ण अग्निका पुत्र है। प्रमाणज्ञ जामदग्न्य वेदश्रुतिके निदर्शननिबन्धनसे अग्निके अभावमें उसके स्थानमें सुवरण स्थापित किया करते हैं। ऐसी जनश्रुति है, कि कुशस्तम्बमें अग्निमें होम करे; वहांपर स्थित सुवर्णमें तथा वल्मीक, वपा, बकरेके दहिने कान, शकट, भूमि, तीर्थके जल और ब्राह्मणके हाथमें होम करनेसे भगवान् हुताशन प्रसन्न होते हैं। हमने सुना है, कि समस्त देववृन्द अग्निनिष्ठ हैं। ब्रह्मासे अग्निदेव प्रकट हुए और अग्निसे सुवर्ण उत्पन्न हुआ है; ऐसा सुना गया है, कि जो धर्म्मदर्शी मनुष्य सुवर्ण दान करते हैं, वे समस्त देवता प्रदान करते हैं। हे भार्गव! वे परम गति पानेवाले मनुष्य तमरहित लोकोंमें जाकर कौरवराज्यमें अभिषिक्त होते हैं। सूर्य्य उदय होनेके समय जो लोग विधिपूर्व्वक मन्त्र पढ़के सोना दान करते हैं, उनके दुःस्वप्न नष्ट हुआ करते हैं। जो लोग भोरके समय सुवरण दान करते हैं, उनके सब पाप नष्ट होते हैं, मध्यान्ह कालमें सुवरण दान करनेसे दाताके अनागत पाप नष्ट हुआ करते हैं। जो लोग यतव्रती होकर सायं सन्ध्याके समय सुवरण प्रदान करते हैं, उन्हें ब्रह्मा, वायु, अग्नि और चन्द्रमाके सदृश लोक प्राप्त होते हैं और इन्द्र लोकोंमें शुभ प्रतिष्ठा मिलती है, इस लोकमें यश पाके पापरहित होकर प्रमुदित होते हैं। अनन्तर वे परलोकमें सदा अप्रतिम, अनावृत्त गतिसे युक्त और कामचारी होते हैं, उनका यश कभी क्षीण नहीं होता, बल्कि सर्व्वत्र महत् यश व्याप्त होता है। अक्षय सुवरण दान करनेसे मनुष्य पुष्कल लोकोंको पाता है। जो लोग सूर्य्य उदय होनेके समय अग्नि जलाके व्रतके उद्देश्यसे सुवरण दान करते हैं, उन्हें समस्त काम्य भोग प्राप्त होता है। ऐसा प्राचीन लोग कहा करते हैं, कि सूर्य्योदयके समय सुवरणदान पूर्ण गुणयुक्त, ध्यानप्रवर्त्तक और दानरोचक होनेसे सुखावह है। हे पापरहित भृगुनन्दन! यह मैंने तुमसे सुवरण और कार्त्तिकेयकी उत्पत्तिका विषय कहा है, इसलिये इसे मालूम करो। हे भृगुकुल धुरन्धर! उस समय कार्त्तिकेय बहुतसा समय बीतनेके अनन्तर बर्द्धित होके इन्द्रादि देवताओंके सेनापति पदपर अभिषिक्त हुए। अभिषिक्त होके इन्द्रकी आज्ञासे सब लोकोंकी रक्षाके लिये तारक नाम दैत्य तथा दूसरे बहुतेरे असुरोंको मारा। हे विभु! सुवरण दानके जो सब फल हैं, वह

मैंने तुमसे कहा । हे दातवर ! इसलिये तुम ब्राह्मणोंको सुवरण दान करो ।

भीष्म बोले, प्रतापवान् जामदग्न्य रामने वशिष्ठका ऐसा वचन सुनके ब्राह्मणोंको सुवरण दान किया, और उस ही कारणसे पाप-रहित हुए । हे महाराज युधिष्ठिर ! यह मैंने सुवर्णदानका फल और सुवरणकी उत्पत्तिका विषय तुम्हारे समीप वर्णन किया, इसलिये तुम भी ब्राह्मणोंको बहुतसा सोना दान करो । हे महाराज ! तुम सुवर्ण दान करनेसे पाप-रहित होगे ।

८५ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! आपने विधानके अनुसार सुवरणदानके गुण और श्रुतिसिद्ध लक्षण तथा सुवरणकी उत्पत्तिका कारण विस्तार पूर्व्वक वर्णन किया ; परन्तु वह तारकासुर किस प्रकारसे मारा गया ? मेरे समीप यह विषय वर्णन करिये । हे राजन् ! पहले आपने कहा, कि वह देवताओंसे अवध्य था, तब किस प्रकार उसकी मृत्यु हुई ? उसे विस्तारपूर्व्वक कहिये । हे कुरुकुलधुरन्धर ! मैं तुम्हारे समीप उस तारकासुरके वधका विषय विस्तारके सहित सुननेकी इच्छा करता हूं, इस विषयमें मुझे बहुत ही कौतूहल हुआ है ।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र ! देवताओं और ऋषियोंके सब कार्य्य विनष्ट होनेसे उन्होंने सन्तानको पालनेके लिये कृतिकागणको भेजा । देवताओंके बीच कोई देवी भी अग्निके द्वारा अर्पित गर्भको धारण करनेमें समर्थ नहीं हैं, कृत्तिकागण ही निज तेजके प्रभावसे उस गर्भको धारण कर सकेंगी, ऐसा विचारके देवताओंने उन्हें अनुमति दी थी । अग्निने उन कृतिकागणको अपना परमसुन्दर वीर्य्ययुक्त तेज अर्पण किया, उनके गरुड़रूपसे उस वीर्य्यको पीकर छः प्रकारसे गर्भधारण करनेसे अग्निदेव अत्यन्त ही प्रसन्न हुए । छहों कृतिका जातवेदाके अर्पित गर्भको धारण करने लगीं । हुताशनका समस्त तेज छः कृतिकाओंके गर्भमें जानेसे छः स्थानमें स्थित हुआ था । अनन्तर वृद्धिशील महानुभाव कुमारका तेज उनके सब अवयवोंमें व्याप्त हुआ, उन्हें किसी स्थानमें भी सुखप्राप्त न हुआ ।

हे पुरुषश्रेष्ठ । अनन्तर प्रसवका समय उपस्थित होनेपर तेजपरितांगी कृतिकागणने एक ही समयमें गर्भको परित्याग किया, प्रसवके अनन्तर वह षड़धिष्ठान गर्भ एकत्र हो गया । वसुमतीने सुवरणके समीपसे उस गर्भको ग्रहण किया । दीप्यमान अग्निसे उत्पन्न हुआ वह दिव्यावयव प्रियदर्शन गर्भ दिव्य शरवनमें वर्द्धित होने लगा । कृतिकागणने उस सूर्य्यसदृश तेजसे युक्त सन्तानको देखा, देखते ही पुत्रस्नेह और सुहृदताके वशमें होकर उसे स्तनका दूध पिलाके पालने लगीं । वह बालक कृतिकाओंके द्वारा प्रतिपालित होनेपर चराचर तीनों लोकोंके बीच कार्त्तिकेय नामसे विख्यात हुआ । गंगाके गर्भसे स्खलित होनेसे स्कन्द और गुहामें वास करनेसे उसका गुह नाम हुआ था । अनन्तर तेंतीस देववृन्द, दिगीश्वरके सहित दशों दिशा, रुद्र, धाता, विष्णु, यम, पूषा, अर्य्यमा, भग, अंश, मित्र, साध्यगण, वसुगण, इन्द्र, दोनों अश्विनीकुमार, जल, वायु, आकाश, चन्द्रमा, नक्षत्रगण, सारे ग्रह, सूर्य्य और मूर्त्तिमान ऋक्, यजुः, साम प्रभृति वेदोंने उस अद्भुत जलनात्मक कुमारको देखनेके निमित्त आगमन किया । ऋषि लोग उस षड़ानन बारह नेत्रवाले द्विजप्रिय कुमारकी स्तुति करने लगे और गन्धर्व्वोंने गीत गाना आरम्भ किया । पीनस्कन्ध, बारह भुजा, अग्नि और सूर्य्यसदृश तेजस्वी शरस्तम्भमें सोये हुए कुमारको देखकर महातेजस्वी ऋषियोंके सहित

देवता लोग परम हर्षित हुए और तारकासुरको मरा समझा। अनन्तर देवताओंने सब ठौरसे कुमारके लिये समस्त प्रियवस्तु ला दिया। जब वह खेलने लगे, तब देवताओंने उन्हें खेलने योग्य अनेक प्रकारके पक्षी दिये और उनके चढ़नेके लिये गरुड़के पुत्र विचित्र वर्णयुक्त मयूरको ला दिया, राक्षसोंने बराह और भैंसे दिये, अरुणाने स्वयं उन्हें अग्निसङ्काश कुक्कुट दिया। चन्द्रमाने भेड़ा दिया और सूर्य्यने उन्हें रुचिर प्रभा दी, गौवोंकी माता सुरभिने उन्हें सौ हजार गौ दान किया, अग्निने बकरे दिये और इलाने बहुत सुन्दर फूल तथा फल दिया। सुधन्वाने उन्हें शकट तथा अनेक कूबरयुक्त रथ दिया। वरुणाने दिव्य सुन्दर वारुण हाथी दिये, देवराजने सिंह, शार्दूल, हाथी तथा अनेक भांतिके पक्षी, अनेक प्रकारके घोर श्वापद और विविध छत्र प्रदान किये। राक्षस तथा असुरगण उस कुमारके अनुगत हुए। तारकासुरने उसे बढ़ते हुए देखके अनेक प्रकारके उपायोंसे मारनेकी चेष्टा की, परन्तु उस सर्व्वशक्तिमान् कुमारको मारनेमें समर्थ न हुआ, देवताओंने उन्हें सेनापतिका पद देके पूजा करके तारकासुरके उपद्रवके विषय कहे, देव सेनापति प्रभु कार्त्तिकेयने विशेष रूपसे वर्द्धित होकर तारकासुरको अमोघ शक्तिसे मार डाला। जब कुमारने खेल करते हुए उस असुरको मार दिया, तब इन्द्र फिर देवराज्यपर स्थापित हुए। अनन्तर प्रतापशाली देवसेनापति स्कन्द देवताओंके नियन्ता तथा रक्षक और शङ्करके प्रियकारी होकर सुशोभित हुए। हिरण्यमूर्त्ति भगवान अग्निपुत्र कुमारने इस ही भांति देवसेनापतिका पद पाया था, अग्निके परम तेज तथा कार्त्तिकेयके संग उत्पन्न होनेसे सुवरण मंगलकर श्रेष्ठ और अक्षय रत्न है। हे कुरुनन्दन! पहले समयमें वशिष्ट मुनिने रामसे यह कथा कही थी। हे नरनाथ! इसलिये तुम सुवरण दानके लिये सदा यत्नवान रहो। रामने सुवरण दान करनेसे पापरहित होके सुरपुरमें मनुष्योंके लिये असुलभ स्थान पाया था।

८६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे धर्म्मात्मन् राजन्! आपने जिस प्रकार चारों वर्णोंके धर्म्म कहे वैसे ही मेरे निकट श्राद्धकी समस्त विधि वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शान्तनुपुत्र भीष्म उस समय युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके श्राद्धकी सब विधि कहने लगे।

भीष्म बोले, हे परन्तप पृथ्वीनाथ! तुम सावधान होके इस धन, यश और पुत्रदायक शुभ पितृयज्ञ श्राद्धकर्म्मकी विधि सुनो। देव, असुर, मनुष्य, गन्धर्व्व, सर्प, राक्षस, पिशाच और किन्नर प्रभृति सबके ही लिये पितृगण सदा पूजनीय हैं। पहले पितरोंकी पूजा करके पीछे सब कोई देवताओंको तृप्त किया करते हैं; इसलिये पुरुषोंको सदा सब प्रकार यत्नपूर्व्वक पितरोंकी पूजा करनी योग्य है। हे महाराज! प्रति महीनेमें पितरोंकी तृप्तिके निमित्त जो श्राद्ध किया जाता है, उसे अन्वाहार्य्य कहते हैं, पितरोंकी तृप्तिके निमित्त श्राद्ध करना योग्य है, यह प्रथम कल्पित अर्थात् सामान्य विधि अमावस्या तिथिमें जिस दिन चन्द्रमा नहीं दीखता उस दिन अपराह्नमें पिण्डदानरूपी पितृयज्ञ करे, इस विशेष विधिके द्वारा बाधित होवे। जिस किसी दिन होसके, श्राद्ध करनेसे ही पितामहगण प्रसन्न होते हैं, इस हेतु तुमसे तिथि और आतिथ्यके गुण दोष तथा समय कहता हूं। हे पापरहित! जिन दिनोंमें श्राद्ध करनेसे जो जो सब फल प्राप्त होते हैं, वह तुम्हारे समीप पूरी रीतिसे कहता हूं सुनो।

प्रतिपदामें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्य निज गृहमें सुन्दरी तथा बहुसन्तान उत्पन्न

करनेवाली स्त्री पाता है। द्वितीयामें श्राद्ध करनेसे कन्या जन्मती है। तृतीया तिथिमें पितरोंको पिण्डदान करनेसे मनुष्यको बहुतसे घोड़े मिलते हैं। चतुर्थीमें श्राद्ध करनेसे गृहमें अनेक प्रकारके क्षुद्र पशु होते हैं। हे राजन्! पञ्चमीमें श्राद्ध करनेवालोंके बहुतसे पुत्र जन्मते हैं, षष्ठिमें जो लोग श्राद्ध करते हैं, वे तेजस्वी होते हैं। हे महाराज! सप्तमी तिथिमें श्राद्ध करनेवाले कृषिभागी हुआ करते हैं। अष्टमीमें जो लोग श्राद्ध करते हैं, उन्हें वाणिज्यमें लाभ होता है। नवमीमें श्राद्ध करनेवालोंको कई भांतिके एक खो पशु प्राप्त होते हैं। दशमीमें श्राद्ध करनेवालेकी गौवें विशेष रूपसे वर्द्धित होती हैं। हे राजन्! एकादशी तिथिमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य शस्त्रपात्र आदि धनसे युक्त होता और उसके गृहमें ब्रह्मवर्चस्वी पुत्र जन्मते हैं। द्वादशीमें श्राद्ध करनेवालोंके घरमें सदा बहुत सा धन रूपा वा मनोहर सुवरण दीखता है। जो लोग त्रयोदशी तिथिमें श्राद्ध करते हैं, वे स्वजनोंके बीच श्रेष्ठ हुआ करते हैं। चतुर्द्दशीमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य युद्धभागी होताहै और उसके गृहमें अवशीभूत सब युवा पुरुष पञ्चत्वको प्राप्त होते हैं। अमावस्या तिथिमें पिण्डदान करनेसे मनुष्यके सर्व्वकाम अक्षय प्राप्त होते हैं। कृष्ण पक्षकी चतुर्द्दशीको त्यागिके दशमीके पहले जो सब तिथि पड़ती हैं, वेही श्राद्धकर्म्ममें श्रेष्ठ हैं, अन्य तिथि वैसी श्रेष्ठ नहीं हैं। जैसे पहले पक्षसे दूसरा पक्ष श्रेष्ठ है, वैसे ही श्राद्धकर्म्मके विषयमें पूर्व्वान्हसे अपरान्ह विशेषरूपसे श्रेष्ठ है।

८७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पितरोंके उद्देश्यसे कौन वस्तु दान करनेपर अक्षय होती है? कैसी हवि सदाके लिये तथा अनन्तको निमित्त कल्पित हुआ करती है?

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! श्राद्धवित पण्डित लोग श्राद्धकल्पमें जिसे हविरूपी जानते हैं, उन काम्यविषयों तथा उनके फल मेरे समीप सुनो। हे राजन्! तिल, व्रीहि, यव, मांस, जल और फलमूलके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरगण एक महीनेतक प्रसन्न हुआ करते हैं। मनुने कहा है, कि वर्द्धमान तिल श्राद्ध अक्षय होता है। समस्त भोजनकी वस्तुओंके बीच तिल सबसे मुख्य कहा गया है। मत्स्यके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरगण दो महीनेतक तृप्त रहते हैं। मेढ़ेके मांससे श्राद्ध करनेसे तीन महीने और खरहेके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरगण चार महीनेतक प्रसन्न हुआ करते हैं। हे राजन्! बकरेके मांससे श्राद्ध करनेसे पितर लोग पांच महीनेतक प्रसन्न रहते हैं। वराहके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरगण सात महीनेतक तृप्त रहते हैं। चित्रमृगके मांससे श्राद्ध करनेपर आठ महीने और कृष्णसार मृगके मांससे श्राद्ध करे तो पितरगण प्रसन्न होके नव महीनेतक निवास करते हैं, गवय मांससे श्राद्ध करनेपर पितरोंको दश महीनेकी तृप्ति होती है। भैंसेके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरोंको ग्यारह महीनेकी तृप्ति हुआ करती है। ऐसा वर्णित है, कि गव्यके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरोंको एक वर्षतक तृप्ति होती है। जैसा गव्य है, घृतके सहित पायस भी वैसा ही उपयोगी है। महोक्ष पक्षिविशेष, वा बकरा विशेषके, मांसके द्वारा पितरोंको बारह वर्षकी तृप्ति होती है। पितृयज्ञमें खड्गि मांस दिये जानेपर आनन्त्यको हेतु हुआ करता है। कालशाक काञ्चन वृक्षके पुष्प आदि और बकरे अनन्त्य रूपसे वर्णित होते हैं। हे युधिष्ठिर! इस विषयमें जो लोग पितृगीत गाथा गाया करते हैं, पहले समयमें भगवान सनत्कुमारने मेरे समीप समस्त गाथा कही थी। हमारे निज वंशमें जो पुरुष जन्मेंगे, वे त्रयोदशीमें हम लोगोंका श्राद्ध करेंगे

और दक्षिणायनके मघा नक्षत्रमें सर्पियुक्त पायस दान करेंगे। मघा नक्षत्रमें यतव्रती होकर अन्न काञ्चन हव्य पुष्प आदिसे हमें तृप्त करेंगे। हस्तिच्छायामें विधिपूर्व्वक पायस आदि प्रदान करेंगे। बहुतसे पुत्रोंके लिये कामना करनी योग्य है, क्योंकि क्या जाने उनमेंसे एक पुत्र भी गयाधाममें जाय, जहांपर अक्षयवट लोकके बीच विख्यात है। पितृयज्ञमें जल, मूल, फल, मांस और अन्न प्रभृति मधुमिश्रित जो कुछ वस्तु दी जाती है, वही अनन्त-फलजनक रूपसे कल्पित हुआ करती है।

८८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, यमने शशबिन्दुसे जो यह श्राद्ध विषय कहा था, उस पृथक् पृथक् नक्षत्रोंमें विहित काम्य श्राद्धका विषय मेरे समीप सुनो। जो मनुष्य कृत्तिका नक्षत्रमें सदा श्राद्ध करता है और अग्नि जलाके यज्ञ किया करता है, वह अपत्योंके सहित शोकरहित होता है। पुत्रकामनावाले मनुष्य रोहिणी नक्षत्रमें और तेजके अभिलाषी मनुष्य मृगशिरा नक्षत्रमें श्राद्ध करें। आर्द्रा नक्षत्रमें श्राद्ध दान करनेसे मनुष्य क्रूरकर्मा होता है। पुनर्व्वसु नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य कृषिभागी हुआ करता है। पुष्टिकी इच्छावाले मनुष्य पुष्य नक्षत्रमें श्राद्ध करें, जो मनुष्य अश्लेषा नक्षत्रमें श्राद्ध करते हैं, उनके वीर पुत्र उत्पन्न होते हैं। मघा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवालोंकी स्वजनोंके बीच श्रेष्ठता प्राप्त होती है। पूर्व्वफाल्गुनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे श्राद्धकर्त्ता सौभाग्यशाली होता है। उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवाले पुत्रवान् हुआ करते हैं। हस्त नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य फलभागी होता है। चित्रा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवाले रूपवान् पुत्र पाते हैं। स्वाती नक्षत्रमें पितरोंकी अर्चना करनेसे पुरुष वाणिज्यसे उपजीवी होता है। पुत्रकामनावाले मनुष्य विशाखा नक्षत्रमें पितृयज्ञ करनेसे बहुतसे पुत्र पाते हैं। अनुराधा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य राजचक्रका प्रवर्तक होता है। ज्येष्ठा नक्षत्रमें पितृतर्पण करनेसे मनुष्यको आधिपत्य प्राप्त होता है। मूल नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे आरोग्यता प्राप्त होती है। हे कुरुकुल श्रेष्ठ! श्रद्धा-दमसे युक्त पूर्व्वाषाढा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्यको उत्तम यश मिलता है। उत्तराषाढा नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेवाले मनुष्य शोकरहित होके पृथ्वीमण्डलपर विचरते हैं। उत्तराषाढाके शेषपाद और श्रवणके प्रथम चारों दण्ड, अभिजित नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवालोंको श्रेष्ठ विद्या प्राप्त होती है। श्रवण नक्षत्रमें श्राद्ध दान करनेवालोंको परलोकमें सद्गति मिलती है। धनिष्ठा नक्षत्रमें पितृयज्ञ करनेवाले मनुष्य सदा राज्यभागी होते हैं। शतभिषा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे भिषक् सिद्धि प्राप्त होती है। पूर्व्वभाद्रपद नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्य बहुतसे बकरे और मेषादि धन पाता है। उत्तरभाद्रपदमें श्राद्ध करनेसे मनुष्यको बहुतसी गऊ मिलती हैं, रेवती नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य सोना रूपाके अतिरिक्त बहुत सा धन पाता है। अश्विनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे उत्तम घोड़े और भरणी नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्यको उत्तम आयु प्राप्त होती है। शशबिन्दुने इस श्राद्धविधिको सुनके वैसा ही अनुष्ठान किया और उन्होंने बिना क्लेशके ही पृथ्वीमण्डलको जीतके उसे शासन किया था।

८९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे कुरुकुलश्रेष्ठ पितामह! कैसे द्विजोंको दान करनेसे श्राद्ध सिद्ध होता है, कहिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! दान धर्म्मके जाननेवाले क्षत्रियोंको देवकार्य्यमें ब्राह्मणोंकी परीक्षा करनी योग्य नहीं है, किन्तु ऋषियोंने ऐसा कहा है, कि पितृकार्य्यमें न्यायपूर्व्वक ब्राह्मणोंकी परीक्षा करनी योग्य है। मनुष्य देवकार्य्यमें केवल देवताओंकी पूजा किया करते हैं, इसलिये उसमें देवताओंके उद्देश्यसे ब्राह्मण मात्रको ही दान देना उचित है, परन्तु विद्वान् मनुष्य श्राद्धके समय कुल, शील, अवस्था, रूप और मर्य्यादाके सहारे ब्राह्मणोंकी परीक्षा करे। हे महाराज! ब्राह्मणोंके बीच कोई कोई पङ्क्तिदूषण और कोई पङ्क्ति-पावन हैं, उनमेंसे दुष्कर्म्म आदिसे जो लोग पांति बाहर हैं, उनका विषय कहता हूं, सुनो। धूर्त्त, भ्रूणहत्यारे यक्ष्मा रोगग्रस्त, पशुपालक, अध्ययनादि वर्ज्जित, ग्रामप्रेष्य, वार्द्धुषिक अर्थात् वृद्धिके निमित्त धन प्रयोग करनेवाले, गायक, सर्व्वविक्रयी, स्थान जलानेवाले, गरद, कुण्डाशी, सोमविक्रयी, सामुद्रिक, राजसेवक, तेलीका कर्म्म करनेवाले, कूटकारक, पिताके संग विवाद करनेवाले, जिनके गृहमें उपपति है वैसे पुरुष अतिशस्त, चोर, जो पुरुष शिल्पकार्य्यके सहारे जीवन धारण करते हैं, पर्व्वकार अर्थात् वेशान्तरधारी, चुगल, मित्रद्रोही, पारदारिक, शूद्रोंके उपाध्याय, शस्त्रजीवी जो पुरुष कुत्तेके सहारे मृगया करता है, जिसे कुत्तेने काटा हो, जेठे भाईके क्वांरे रहते यदि लहुरा व्याह करे तो वह परिवित्ता हुआ करता है। दुश्चर्म्मा, गुरुशय्यागामी कुशीलव, कुसीदक, देवल और जो पुरुष नक्षत्र निरूपण करके जीविका निर्व्वाह करते हैं, येही पांतिसे बाहर हैं। हे युधिष्ठिर! ब्रह्मवादी लोग कहते हैं, कि ऐसे अपांक्तेय ब्राह्मण लोग जिस जिस श्राद्धमें भोजन करते हैं, उस श्राद्धके हविको राक्षस लोग भक्षण किया करते हैं। जो शूद्रास्त्रीगामी ब्राह्मण श्राद्धमें भोजन करके अध्ययन करता है, श्राद्ध करनेवालेके पितर उस ब्राह्मणके पुरीषमें एक महीनेतक शयन किया करते हैं। सोमवेचनेवालेको जो दान किया जाता है, वह विष्टासदृश है। भिषक् वृत्तिवाले ब्राह्मणोंको जो दान किया जाता है, वह पीवशोणित समान है। देवलको जो वस्तु दान की जाती है, वह नष्ट हुआ करती है, वार्द्धुषिक ब्राह्मणको दान करनेसे अप्रतिष्ठा होती है। वाणिज्य व्यवसायी ब्राह्मणको जो दान किया जाता है, वह इस लोक और परलोकमें कार्य्यकारी नहीं होता। पौनर्भव ब्राह्मणको दान देना राखमें घृतकी आहुति सदृश हुआ करता है। धर्म्मसे विचलित और दुश्चरित्र ब्राह्मणको जो लोग हव्य-कव्य प्रदान करते हैं, उनका वह दान परलोकमें विनष्ट होता है। जो अल्पबुद्धि मनुष्य जानके ऐसे अपांक्तेय ब्राह्मणोंको श्राद्धसमयमें दान करते हैं, उनके पितृगण निश्चय ही परलोकमें पुरीष भक्षण करते हैं। जो अल्पबुद्धिवाले ब्राह्मण शूद्रोंको उपदेश करते हैं, उन्हें और पहले कहेहुए अधम द्विजोंको पांतिबाहर जानो। हे महाराज! यदि कोढ़ पुरुष ब्राह्मणोंकी पांतिमें बैठे, तो वह साठ ब्राह्मणोंको दूषित करता है; क्लीव पुरुष एक सौ ब्राह्मणोंको दूषित करता और श्वित्ररोगी जहांतक देखता है, उतने दूरके ब्राह्मणोंको दूषित किया करता है। जो लोग सिर बांधके खाते, जो दक्षिणास्य होके भोजन करते तथा जो लोग जूता पहरके खाते हैं, उन्हें असुर जानो, जो असूयावशसे दिया जाय और जो श्राद्धविवर्ज्जित रूपसे दान किया जाता है, ब्रह्माने असुरेन्द्र बलिके निमित्त उस समस्त भागकी कल्पना की है। कुत्ते और पंक्ति दूषित ब्राह्मण किसी प्रकार श्राद्धको न देखने पावें इस ही निमित्त आवृत स्थानमें पितरोंके उद्देश्यसे दान करे और तिल छोटे। जो श्राद्ध विना तिलके किया जाता है, जो लोग क्रोधके वशमें होकर श्राद्ध

करते हैं, राक्षस और पिशाचगण उस श्राद्धके हविको लुप्त किया करते हैं। अपांक्तेय ब्राह्मण पांतिके बीच जितने भोजन करनेवाले ब्राह्मणोंको देखता है, कर्त्तव्यविमूढ़दाताका उतने परिमाणसे फल भ्रष्ट किया करता है।

हे भरतश्रेष्ठ! पहले अपांक्तेय ब्राह्मणोंका विषय कहा है, अब जो लोग पंक्तिपावन हैं, उनका विषय कहता हूं, तुम वैसे ब्राह्मणोंकी परीक्षा करना। विद्यास्नात, व्रतस्नात, वेदस्नात और सदाचारयुक्त सब ब्राह्मणोंको ही सर्व्वपावन जानो। जो लोग पांक्तेय हैं, उनका विषय कहता हूं, तुम उन्हें पंक्तिपावन जानना। जिन्होंने त्रिनाचिकेत मन्त्र पढ़ा है, जिन्होंने गार्हपत्य, दक्षिण, आवहनीय, सत्य और सर्व्वाग्नि, इन पांच प्रकारके अग्निका अनुष्ठान जाना है, जिन्हें त्रिसुपर्ण नाम बह्वृचगणके तीनों मन्त्र विदित हैं, जो लोग शिक्षा, कल्प, प्रभृति वेदके षड़ाङ्गवेत्ता हैं, जो वंश परम्परासे वेद पढ़ाया करते हैं, उनके वंशमें जो लोग उत्पन्न हुए हों; जो लोग ज्येष्ठ सामगान करनेमें समर्थ हैं, तथा जो माता पिताके वशीभूत हों, जिनके दश पुरुष श्रोत्रिय हों, जो सदा ऋतुकालमें धर्म्मपत्नी गमन करते हैं और जो लोग वेद विद्या तथा व्रतस्नात हैं, वे ब्राह्मण ही पांतको पवित्र किया करते हैं। जो लोग अथर्व्ववेदके शिरोभागको पढ़ते हैं, जो ब्रह्मचारी और यतव्रती हैं, जो लोग सत्यवादी, धर्म्मशील और निजकर्म्ममें रत हों; जो लोग पुण्यतीर्थोंमें स्नान करनेके लिये श्रम करते हैं, जिन्होंने यज्ञोंमें अवभृत स्नान किया है, जो लोग क्रोधरहित, चपलताहीन, क्षमाशील, दान्त, जितेन्द्रिय और सब प्राणियोंके हितमें रत हों, उन्हें श्राद्धमें निमन्त्रण करे। इन लोगोंको दान करनेसे अक्षय फल होता है, इन्हें ही पंक्तिपावन जानो। जो लोग मोक्षधर्म्मके जाननेवाले, यति योगचारी और उत्तम रीतिसे व्रत करते हैं, तथा जो लोग सावधान होकर उत्तम द्विजोंके इतिहास सुनाया करते हैं, जो लोग भाष्यवेत्ता और व्याकरण शास्त्रमें रत रहते हैं, जो लोग पुराण शास्त्र अथवा धर्म्मशास्त्र पढ़ा करते हैं और पढ़के विधिपूर्व्वक उसका अनुष्ठान करते हैं, जिन्होंने गुरुकुलमें निवास किया है, जो सत्यवादी तथा सहस्रदाता हैं सब वेदशास्त्रोंमें जो लोग अग्रगण्य हैं, वे पांतमें जहांतक देखते हैं, उतने परिमाणसे लोगोंको पवित्र किया करते हैं; इसलिये पंक्तिको पवित्र करनेसे वे लोग पंक्तिपावन नामसे वर्णित हुए हैं। ब्रह्मवित् पुरुष ऐसा कहते हैं, कि जो लोग वंशपरम्परासे वेद पढ़ाते हैं, वैसे वंशमें जो पुरुष उत्पन्न हुए हों, वे अकेले ही कोस आधकोस अथवा तिहाईकोससे पांतको पवित्र किया करते हैं। ऋत्विक् अथवा उपाध्यायके गुणहीन होनेपर भी यदि कोई उनकी अनुमतिके बिना पहले आसनपर बैठे, तो भी वे पंक्तिके दुष्कृतको हरण किया करते हैं। पंक्तिदोषसे रहित वेद जाननेवाले विप्र यदि पतित न हों, तो वे पंक्तिपावन हैं। इसलिये सब भांतिसे यत्नपूर्व्वक परीक्षा करके निज कर्म्ममें रत, सत्कुलमें उत्पन्न तथा अन्य बहुश्रुत ब्राह्मणोंको आमन्त्रण करें। दैव और पितृकार्य्यमें जिसका मित्रभोजन ही मुख्य उद्देश्य है, तथा जो पुरुष पितरों और देवताओंको परितृप्त नहीं करता, वह स्वर्गमें जानेमें समर्थ नहीं होता। जो श्राद्धके निमित्त बन्धुबान्धवोंके सङ्गमें मिलाता है, वह देवयानपथसे गमन नहीं कर सकता, वह श्राद्धमित्र मनुष्य बन्धनसे मुक्त होके स्वर्गलोकसे च्युत होता है। इसलिये श्राद्ध करनेवाला मित्र पुरुषोंका आदर न करे, अन्य समयमें संग्रहके निमित्त मित्रोंको धन देवे। जिसे शत्रु वा मित्र नहीं जाना जाता, हव्यकव्य दानके समय उस मध्यस्थ ब्राह्मणको भोजन करावे। जैसे ऊसरभूमिमें बीज

बोनेसे अङ्कुर नहीं निकलता तथा बोनेवाला जैसे उस बीजका अंश नहीं पासकता, वैसे ही अयोग्य ब्राह्मणको श्राद्धमें भोजन करानेसे इस लोक तथा परलोकमें भी श्राद्धका फल नहीं मिलता। बिन पढ़ा हुआ ब्राह्मण तृणकी अग्निकी भांति शान्त होता है, इसलिये उसे श्राद्धीय दान करे,—क्यों कि भस्ममें कदापि होम नहीं होता। सत्भोजनी अर्थात् परस्पर दीयमान दक्षिणाको पिशाचदक्षिणा कहते हैं; जैसे पिशाचोंको जो पुरुष भोजन कराता है, वे भी उसे ही भोजन कराया करते हैं, यह भी उसीके तुल्य है; इसलिये ऐसे दानका फल पितृलोक अथवा देवलोकमें नहीं मिलता। जैसे नष्टवत्सा गऊ गृहके भीतर भ्रमण करती है, वैसे ही वह पुण्यहीन दक्षिणा इस लोकमें ही घूमा करती है। जैसे अग्नि बुझ जानेपर उसमें घृतकी आहुति देनेसे वह देवलोक अथवा पितृलोकमें नहीं पहुंचती, नाचने गानेवालों तथा मिथ्यावादियोंको जो दान किया जाता है, वह भी वैसा ही है। झूठ बोलनेवालोंको जो दक्षिणा दी जाती है, वह उसी दाताके दोनों कुलोंको नष्ट करती है और उसे पालन नहीं करती; वह अघातिनी निन्दनीय दक्षिणा स्वयं पतित होकर प्रदाताको प्रेतोंके देवयान पथसे च्युत करती है। हे युधिष्ठिर! जो लोग सदा ऋषियोंके नियमाचरण करते हैं, वे निश्चितबुद्धि सब धर्म्मोंके जाननेवाले पुरुषोंको देवता लोग भी ब्राह्मण जानते हैं। हे भारत! स्वाध्याय-निष्ठ, तपोनिष्ठ और कर्म्मनिष्ठ ब्राह्मणोंको ऋषि जानो। हे भारत! ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणोंको कव्य प्रदान करना योग्य है। जो लोग ज्ञाननिष्ठ होते हैं, वे ब्राह्मणोंकी निन्दा नहीं करते। जो जल्पनाके समय ब्राह्मणोंकी निन्दा करते हैं श्राद्धमें उन्हें भोजन न करावे। हे महाराज! ब्राह्मण लोग निन्दित होनेपर तीन पुरुषतक कुलको नष्ट किया करते हैं। हे महाराज! वैखानस ऋषियोंका यह वचन सुना जाता है, कि वेदपारग ब्राह्मणोंकी दूरसे परीक्षा करे; वे प्रिय हों अथवा अप्रिय ही होवें, श्राद्धकालमें उन्हें दान करना योग्य है। हे भारत! जो मनुष्य सहस्रों झूठे ब्राह्मणोंको भोजन कराते हैं, वे केवल मन्त्र जाननेवाले एक ही ब्राह्मणको भोजन कराके प्रसन्न करनेसे उन सबके फलको पाते हैं।

९० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! किन पुरुषोंके द्वारा श्राद्ध सङ्कल्पित हुआ है? किस समय श्राद्ध करना उचित है? श्राद्धका कैसा स्वरूप है? जिस समय भृगु और अंगिराके वंशमें उत्पन्न ऋषियोंके अतिरिक्त और कोई न थे, उस समय किस मुनिके द्वारा श्राद्ध प्रवर्त्तित हुआ? श्राद्धके समय कौन कौनसे कर्म्म वर्ज्जित हैं? कौन कौनसे फलमूल धान्य त्यागने योग्य हैं? आप मेरे समीप इस विषयको बयान करिये।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! जिस प्रकार श्राद्ध प्रवृत्त हुआ है, जिस समय श्राद्ध करना होता है, श्राद्धका जैसा रूप है, जिसके द्वारा सङ्कल्पित हुआ है, वह वृत्तान्त मेरे समीप सुनो। हे कुरुवंशधुरन्धर महाराज! स्वयम्भूके पुत्र अत्रि नामसे एक प्रतापवान् परमर्षि विख्यात हैं, उनके वंशमें दत्तात्रेय उत्पन्न हुए। दत्तात्रेयके निमि नाम एक तपस्वी पुत्र हुआ था निमिके श्रीयुक्त श्रीमान् नाम पुत्र था, वह दुष्कर तपस्या करके सहस्र वर्ष पूरा होनेपर काल धर्म्मसे आक्रान्त होकर मृत्युको प्राप्त हुआ। पुत्रशोकसे युक्त निमि विधिपूर्व्वक शोचकार्य्य करके बहुत ही सन्तापित हुए। अनन्तर महाबुद्धिमान् निमि चतुर्द्दशी तिथिमें भोरके समय मिष्टान्न और वस्त्र आदि सामग्री लाके शोक चिन्ता करते करते सावधान हुए।

उन्होंने शोकसे व्यथित हृदय होकर अत्यन्त बन्धकरण शोकविषयसे मनको हटाया अर्थात् शोकको परित्याग करके सावधान होनेपर उनकी बुद्धि विस्तारगामिनी हुई। शेषमें वह समाहित होकर श्राद्धकल्पका विचार करने लगे। उनके पास जो सब फल मूल भोज्य थे और दूसरी जो कुछ वस्तु उनकी कही हुई तथा इष्ट थी, महाप्राज्ञ तपोधन निमिने मनही मन सबका निश्चय करके अमावस्या तिथिमें पूजित ब्राह्मणोंको लाके स्वयं प्रदक्षिणावर्त्तित आसनोंका स्थापित किया। अनन्तर उन्होंने सात ब्राह्मणोंको एकबारही भोजन करनेके लिये बैठाया और बिना लवणके सांवां अन्न खानेको दिया। शेषमें जो सब ब्राह्मण अन्न भोजन कर रहे थे, उनके दोनों चरणोंके समीप आसनके बीच अग्रभागमें दहिनी ओर दाभ रक्खी गई। उन्होंने सावधान और पवित्र होकर दाभोंको अग्रभागमें दहिनी ओर करके नाम तथा गोत्र उच्चारण करके श्रीमान्के उद्देश्यसे पिण्ड प्रदान किया। मुनिश्रेष्ठ निमिने धर्म्मसङ्कर करके अर्थात् वेदमें पितरोंके उद्देश्यसे पिण्डदान धर्म्म दीख पड़ता है, इसलोकमें पुत्रके निमित्त पिण्डदान स्वेच्छानुसार कल्पित हुआ है, ऐसा समझके अत्यन्त पश्चात्तापसे परितापित होके चिन्ता करने लगे। उन्होंने सोचा, कि पहले मुनियोंने जिसे नहीं किया, मैंने किस निमित्त उसका अनुष्ठान किया, ब्राह्मण लोग शापके द्वारा मुझे क्यों नहीं जलाते हैं? अनन्तर वह अपने वंश कर्त्ताका ध्यान करने लगे; ध्यान करते ही तपोधन अत्रि निमिको इस प्रकार पुत्रशोकसे दुःखित देखके अभिलषित वचनके सहारे अत्यन्त ही धीरज देने लगे। उन्होंने कहा, हे तपोधन निमि! तुम मत डरो, तुम्हारा सङ्कल्पित यह पितृयज्ञ पहले स्वयं ब्रह्माके द्वारा धर्म्मरूपसे देखा गया है, तुम्हारा यह सङ्कल्पित धर्म्म स्वयं उत्तम रीतिसे विहित हुआ है, ब्रह्माके अतिरिक्त और कौन पुरुष श्राद्धसम्बन्धीय विधि बना सकता है। हे पुत्र! मैं तुम्हारी इस उत्तम श्राद्धसम्बन्धीय विधिकी व्याख्या करूंगा। हे पुत्र! यह ब्रह्माके द्वारा विहित है, इसलिये इसका अनुष्ठान करो और इसका विवरण मेरे समीप सुनो। हे तपोधन! पहले मन्त्र पढ़के अग्निमें करणहोम करके फिर चन्द्रमा वरुण और विश्वदेव, जो कि पितरोंके सङ्ग सदा विचरते हैं, स्वयम्भूने उनके निमित्त स्वयं सब भाग कल्पित किये हैं। निरपधारिणी पृथ्वीकी इस ही समय वैष्णवी, काश्यपी और अक्षया कहके स्तुति करनी होगी। जल लानेके विषयमें प्रभु वरुणकी स्तुति करे। हे पापरहित! अग्नि और चन्द्रमाको तुष्ट करना होगा। पितृ नामक जो देवगण स्वयम्भूके द्वारा निर्म्मित हुए हैं और जो सब महाभाग उष्णपगण हैं, उनका भी हिस्सा कल्पित है। वे सब श्राद्धके द्वारा पूजित होनेपर नरकादि रूप क्लेशोंसे छूटते हैं। सप्त पितृवंश पहले ब्रह्माके द्वारा जाना गया है और अग्नि आदि विश्वदेवगण पहले ही गिने गये हैं। इस समय उन हिस्सा लेनेवाले महानुभावोंका नाम कहता हूं। बल, धृति, विपाप्मा, पुण्यकृत, पावन पार्ष्णिक्षेमा समूह, दिव्यसानु, विवस्वान, वीर्य्यवान्, ह्रीमान्, कीर्त्तिमान, कृत, जितात्मा, मुनिवीर्य्य, दीप्तरोमा, भयङ्कर, अनुकर्म्मा, प्रतीत, प्रदाता, अंशुमान, शैलाभ, परम क्रोधी, धीरोष्णी, भूपति, स्रज, वज्री, वरी, सनातन विश्वदेवगण, विद्युद्वर्चा, सोमवर्चा, सूर्य्याश्रि, सोमप, सूर्य्यसाविता, दत्तात्मा, पुण्डरीयक, उष्णीनाभ, नभोद, विश्वायु दीप्ति, चमूहर, सुरेश, व्योमारि, शङ्कर, हर, ईश, कर्त्ता, कृति, दक्ष, भुवन, दिव्य, कर्म्मकृत, गणित, पञ्चवीर्य्य, आदित्य, रश्मिवान, सप्तकृत, सोमवर्चा, विश्वकृत, कवि, अनुगोप्ता, सुगोप्ता, नप्ता और ईश्वर, इस कालकी गतिके अनुसार

जिन्हें जाना जा सकता है, वेही सब महाभाग गण वर्णित हुए। इसके अनन्तर जो वस्तु श्राद्धमें अदेय है, उन्हें कहता हूं। कोदों धान्य और पुलाक अर्थात् टूटे हुए चावल, तुच्छ धान्य, हींगसे बनी वस्तु, सब भांतिके शाक, प्याज, लहसुन, शोभाञ्जन, कोविदार अर्थात् लाल पीले रङ्गके फूल, गृञ्जन प्रभृति, कुम्हड़ा जातीय सब वस्तु अलावू काला नमक पाले हुए सूअरका मांस और जो कुछ बेजानी वस्तु हों, काला जीरा, बीटलवन, जो सब अन्न शरद्-ऋतुमें पकते हैं, सिंघाड़ा और वंशकरीर प्रभृति अङ्कुर श्राद्धमें वर्ज्जित हैं; सब प्रकारके नमक और जामुनका फल श्राद्धमें त्यागना चाहिये, श्राद्धके समय अवक्षुत और रोदन वर्ज्जित है, पितरोंके उद्देश्यसे दान कार्य्य और हव्यकव्यमें सुदर्शन शाक अत्यन्त निन्दनीय है। श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर चाण्डाल और श्वपच जातिवाले पुरुषोंको बहुत दूरमें स्थित करे। यदि वे लोग हविको देख लेवें, तो उसे पितर और देवगण ग्रहण नहीं करते। श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर गेरुआ वस्त्रवाले, कुष्टरोगी, पतित, ब्रह्महत्यारे, नीचयोनिमें जन्मे हुए ब्राह्मण और पतित पुरुषसे संसर्ग रखनेवाले पुरुष, इन सबको पण्डित लोग उस समय वहां-पर न आने देवें। पहले समयमें तपोधन अत्रि भगवान् निजवंशमें उत्पन्न हुए निमिऋषिसे ऐसी कथा कहके ब्रह्माकी दिव्य सभामें चले गये।

९१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भारत! निमिके इस प्रकार श्राद्ध करनेमें प्रवृत्त होनेपर सब महर्षिवृन्द विधि दृष्ट कर्म्मके सहारे पितृयज्ञ करने लगे। धर्म्मनिष्ठ यतव्रती ऋषि लोग श्राद्ध करके तीर्थोंके जलसे तर्पण करने लगे। ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंके द्वारा निवाप पाके पितर और देवगण तृप्त होके उस समय अन्नजीर्ण करने लगे। पितरोंके सहित देववृन्द प्रतिदिन प्राप्त हुए अन्नके पचानेमें असमर्थ होके अजीर्ण रोगसे ग्रस्त हुए। उस समय वे लोग अन्नसे पीड़ित होकर चन्द्रमाके समीप गये। वे अजीर्णसे पीड़ित पितृगण चन्द्रमाके निकट जाके बोले, हम अन्नसे पीड़ित होरहे हैं, इसलिये जिस प्रकार इस विषयमें हमारा कल्याण हो, आप वैसा ही उपाय करिये। अनन्तर चन्द्रमाने उन लोगोंको उत्तर दिया कि, हे सुरगण! यदि तुम लोगोंको कल्याणका इच्छा हुई हो, तो ब्रह्माके स्थानपर जाओ, वह तुम्हारे कल्याणको उपाय करेंगे। हे भारत! पितरोंके सहित वे सब देवगण चन्द्रमाका वचन सुनके सुमेरु पर्व्वतके शिखरपर सुखसे बैठे हुए ब्रह्माके निकट गये।

पितरवृन्द बोले, हे भगवन्! हम लोग निवाप अन्नसे अत्यन्त पीड़ित होरहे हैं। हे देव! इसलिये आप प्रसन्न होके हमारे कल्याणका विधान करिये। ब्रह्मा उन लोगोंका ऐसा वचन सुनके बोले, मेरे निकटमें स्थित यह अग्निदेव तुम्हारे कल्याणका विधान करेंगे।

अग्निदेव बोले, पितरोंके उद्देश्यसे दान उपस्थित होनेपर हम सब कोई मिलके उसे भक्षण करेंगे, हमारे सङ्ग खानेसे तुम लोग अन्नको निःसन्देह पचा सकोगे। पितर लोग अग्निका ऐसा वचन सुनके उस समय शोकर-हित हुए। हे महाराज! इस ही निमित्त पहले अग्निके निमित्त अन्न दिया जाता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! पहले अग्निको निवाप देनेसे ब्रह्मराक्षसगण उसे नष्ट करनेमें समर्थ नहीं होते और अग्निदेवके उपस्थित रहनेपर राक्ष-सवृन्द दूर भागते हैं।

पहले पिताको पिण्ड देवे, फिर पिताम-हको पिण्ड देना योग्य है, अनन्तर प्रपिताम-हको पिण्ड प्रदान करे, इस ही प्रकार श्राद्धकी विधि वर्णित हुई है। श्राद्धकालमें समाहित

होके प्रत्येक पिण्ड देनेके समय गायत्री जपे और "सोमाय पितृमते" इत्यादि वचन कहना योग्य है। श्राद्धके समयमें रजस्वला, बहिरो, तथा अंगहीन स्त्रीको वहांपर न आने दे अर्थात् ये लोग निवापको न देखने पावें और दूसरे वंशकी स्त्रियोंको पाकके निमित्त संग्रह न करे। जलमें उतरके पितामह आदिका नाम उच्चारण करे और नदीमें स्नान करके पितरोंको पिण्ड दे तथा तर्पण करे। पहली अपने वंशवालोंको जलसे तर्पण करके फिर सुहृद और सम्बन्धियोंको अञ्जली भरके जल देवे। विचित्र रूपवाले दो गौवोंसे युक्त गाड़ी तथा नौकाके ऊपर चढ़कर जो लोग अपार जलसे पार होते हैं, उनके पितर उनके समीप गजके पूंछके सहित तर्पणकी अभिलाष किया करते हैं। इसलिये जो लोग इसे जानते हैं, वे सावधान होकर शकट अथवा नौकाके सहारे नदी उतरनेके समय पितरोंका तर्पण करते हैं। अर्द्ध-मासके कृष्णपक्षकी अमावस्या तिथिमें पितरोंका श्राद्ध करना योग्य है, पितृभक्ति रहनेपर पुष्टि, आयु, बल और श्री हुआ करती है। हे कुरुकुलश्रेष्ठ! पितामह, पुलस्त्य, वशिष्ठ, पुलह, अंगिरा, क्रतु और कश्यप, ये महायोगीश्वर नामसे वर्णित हुए हैं, ये भी पितर हैं। हे महाराज! यही श्रेष्ठ श्राद्धकी विधि है, इस श्राद्धकर्मके सहारे परलोकमें गये हुए पितरोंका प्रेतत्व छूट जाता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! यह निर्दिष्ट श्राद्धकी उत्पत्तिका विषय शास्त्रके अनुसार कहा गया; इसके अनन्तर दानका विषय कहता हूं।

९२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! जो व्रतयुक्त ब्राह्मण लोग दशाह आदिमें यजमानकी इच्छासे हवनीय वस्तु अथवा अन्न भोजन करते हैं, सो कैसा है? अर्थात् इसमें व्रत करनेवाले ब्राह्मणोंका व्रतलोप होता है अथवा ब्राह्मणकी कामनाभंग गुरुतर है?

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! अवेदोक्त व्रतचारी ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंकी इच्छासे भोजन करने पर व्रतहीन नहीं होते और जो लोग वेदविहित यज्ञांगभूत व्रताचरण करते हैं, वे ब्राह्मणकी कामनानुसार श्राद्धमें भोजन करनेसे लुप्तव्रत हुआ करते हैं, इसलिये उन्हें व्रतलोपके हेतु प्रायश्चित्त करना योग्य है, साधारण ब्राह्मण न मिलनेपर व्रती ब्राह्मण श्राद्धमें भोजन करके प्रायश्चित्त करें, परन्तु श्राद्धलोप न करें।

युधिष्ठिर बोले, साधारण लोग जो उपवासको तपस्या कहते हैं, उस उपवासको ही इस स्थलमें तपस्या कहा है अथवा अन्य भांतिके किसी नियमसे तपस्या होती है?

भीष्म बोले, साधारण लोग जो एक महीना अथवा अर्द्धमासके उपवासको तपस्या कहते हैं, वह तपस्या नहीं होसकती, क्यों कि जो पुरुष अपने शरीर और कुटुम्बको कष्ट देकर उपवास करता है, वह तपस्वी वा धर्मज्ञ नहीं है, धन दानको भी श्रेष्ठ तपस्या कहा जाता है। व्रतचारी मनुष्य सदोपवासी होते हैं, जो ब्राह्मण सदा वेदमन्त्र जपता है, वह मुनि हुआ करता है। धर्मकी इच्छा करनेवाला मनुष्य कुटुम्बिक और सदा अस्वप्न होवे सर्वदा अमांसाशी हुआ करे और सदा पवित्र जप करे, सदा सत्य बोले और निरन्तर स्थिर होके निवास करे; सदा विघसाशी और अतिथिप्रिय होवे; सर्वदा अमृताशी और पवित्र रहे।

युधिष्ठिर बोले, हे राजन्! किस प्रकार लोग सदा उपवासी होते हैं? किस भांति ब्रह्मचारी हुआ करते हैं? किस प्रकार विघसाशी होते और किस प्रकार अतिथिप्रिय हुआ करते हैं?

भीष्म बोले, जो मनुष्य प्रातर्भोजन और सन्ध्याकालके भोजनके अतिरिक्त फिर भोजन

नहीं करते, वेही सदोपवासी होते हैं। जो लोग ऋतुकालमें भार्य्या गमन करते हैं और जो मनुष्य सत्यवादी तथा दानशील हैं, उन्हें ब्रह्मचारी कहा जाता है। यज्ञ आदिके अतिरिक्त जो लोग वृथा मांस भक्षण नहीं करते वे अमांसाशी होते हैं जो लोग दान करते हैं, वे पवित्र होते हैं। जो लोग दिनको नहीं सोते, उन्हें अस्वप्न कहा जाता है। हे युधिष्ठिर। जो मनुष्य सबके तथा अतिथियोंके भोजन करनेके अनन्तर भोजन करता है, जान रखो, कि वही अमृत भोजन किया करता है। जो मनुष्य ब्राह्मणके भूखा रहनेपर भोजन नहीं करता, उस अभोजन निबन्धनसे वह स्वर्गको जीतता है। देवताओं पितरों और आश्रितोंको अन्न देकर जो लोग शेषमें बचा हुआ अन्न खाते हैं, धीर लोग उन्हें ही विघसाशी कहते हैं। हे प्रजानाथ! ब्रह्माके स्थानमें उन विघसाशी पुरुषोंके लोकोंकी सीमा नहीं है, उनके निकट गन्धर्व्वोंके सहित अप्सरावृन्द उपस्थित होती हैं। जो लोग देवता, अतिथि और पितरोंके सहित भोजन करते हैं, वे पुत्र-पौत्रोंके सहित सुख भोग किया करते हैं और उन्हें श्रेष्ठ गति प्राप्त होती है।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह। जो लोग ब्राह्मणोंको विविध वस्तु दान करते हैं, उन देनेवाले और लेनेवालोंमें क्या विशेषता है?

भीष्म बोले, जो ब्राह्मण साधु वा असाधु पुरुषोंसे प्रतिग्रह लेता है, वह गुणवान पुरुषोंके निकट ग्रहण करनेके हेतु थोड़ा दोषी होता है और निर्गुण पुरुषके समीप ग्रहण करनेसे पापमें डूबता है। हे भारत! प्राचीन लोग इस विषयमें वृषादर्भि और सप्तर्षियोंके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि, ये सप्तऋषि हैं और पतिव्रता अरुन्धती इन लोगोंकी गण्डा नामक एक परी थी, पशुसखनाम शूद्र उसका पति हुआ था, वे सब कोई समाधिके द्वारा सनातन ब्रह्मलोक पानेके निमित्त इस पृथ्वीमण्डलपर विचरते थे। हे कुरुनन्दन! अनन्तर अनावृष्टि होनेपर उस समय सब कोई क्षुधातुर होके कृच्छ्रप्राण हुए थे। पहले समय किसी यज्ञमें शिविराजके पुत्र शैव्यने ऋत्विकोंको दक्षिणा देनेके लिये अपना पुत्र प्रदान किया था। इस ही समयमें वह आयु नष्ट होनेसे मर गया, क्षुधासे परिपीड़ित ऋषियोंने उस मृतराजपुत्रको घेर लिया। हे भारत! क्षुधासे आर्त्त ऋषियोंने उस राजपुत्रको मरा हुआ देखके उसे स्थालीमें पकाया। यह मर्त्त्यलोक अन्नसे रहित होनेपर तपस्वियोंने शरीररक्षाकी इच्छा करके कृच्छ्रवृत्ति अवलम्बन की थी। अनन्तर पृथ्वीनाथ शैव्य वृषादर्भिने मार्गमें विचरते हुए उन क्लेशित ऋषियोंको पाक करते देखा।

वृषादर्भि बोले, दान लेनेसे पुरुष क्लेशसे छूट जाता है। हे तपस्विगण! इसलिये आप लोग पुष्टिके लिये प्रतिग्रह ग्रहण करिये। मेरे समीप जो वस्तु हो, उसे आप लोग मांगिये। मांगनेवाले ब्राह्मण ही मुझे अत्यन्त प्रिय हैं, इसलिये मैं आप लोगोंको सहस्र अश्वतरी देता हूं, मैं आप लोगोंको एक एक वृषभके सहित शीघ्रगामी सफेद रोमवाली सत्प्रसूत गऊ दान करता हूं और वंशको पालनेमें समर्थ बोझा ढोनेवाले एक एक सौ सफेद बैल सबको देता हूं, पहले ही गाभिन हुई लाल शरीरवाली श्रेष्ठ उत्तम सत्प्रसूता गऊ देता हूं, श्रेष्ठ ग्राम, व्रीहि, रस, यव और इसके अतिरिक्त जो सब दुर्लभ रत्न हैं, कहिये उनके बीचसे क्या दूं? आप लोग इस अभक्ष्य वस्तुमें ऐसा अभिप्राय न करिये। आपलोगोंकी पुष्टिके निमित्त कौनसी वस्तु दूं?

ऋषिगण बोले, हे महाराज! राजाओंका प्रतिग्रह मधुरकी भांति स्वादयुक्त होता है,

किन्तु विषके समान है, तुम उसे जानके भी किस निमित्त हमें लोभ दिखा रहे हो? देवताओंकी ब्राह्मण शरीरका सहारा है, वे देवतास्वरूप ब्राह्मण तपस्याके द्वारा प्रसन्न होनेसे सबको प्रीतिका विधान करते हैं, ब्राह्मणकी एक दिनमें भी जो तपस्या उपार्ज्जित होती है, कदाचित प्राप्तहुआ राजप्रतिग्रह दावानलकी भांति उसे जलाया करता है, हे महाराज! दानके सहित सदा तुम्हारा कुशल होवे इसलिये तुम याचकोंको सब वस्तु दान करो, ऐसा कहके ऋषियोंने दूसरे मार्गसे गमन किया। वे महानुभावगण जो मांस पकाते थे, वह अपक्क ही रहा। अनन्तर वे सब कोई उसे छोड़के आहारकी इच्छासे बनमें चले गये। अनन्तर राजाके भेजनेपर उनके मन्त्रियोंने बनमें जाके उडुम्बरका फल तोड़के उन्हें देना आरम्भ किया और हेमगर्भ अन्य उडुम्बर देने लगे। तब उनके सेवक उन स्वर्णपूरित उडुम्बरोंको ग्रहण करनेके लिये दौड़े। अत्रिने उसे गुरुतर जानके अग्राह्य समझकर यह वचन कहा, 'हम मन्दविज्ञानी तथा मन्दबुद्धि नहीं हैं, जानता हूं, कि वे सब सुवर्णमय हैं, इसलिये सावधान होकर जागता हूं। इस लोकमें इसे ग्रहण करनेसे परलोकमें बहुत कष्ट होता है, इस लोक तथा परलोकमें जो लोग सुखकी अभिलाष करें उनकेलिये यह अप्रतिग्राह्य है।'

वशिष्ठ बोले, एकसौ उडुम्बरसे निष्क और सहस्र उडुम्बरसे संमित गिना जाता है, इस प्रकार बहुतसा सुवर्ण प्रतिग्रह करनेसे मनुष्यको पापियोंकी गति प्राप्त होती है।

काश्यप बोले, पृथ्वीमें जो सब ब्रीहि यव, हिरण्य, पशुवन्द और स्त्रियां हैं, वे एकको ही पर्य्याप्त नहीं हैं, इसलिये विद्वान् ब्राह्मण शान्ति अवलम्बन करे। भरद्वाज बोले, उत्पन्न होके बढ़नेवाले रुरु मृगके सींग क्रमसे बढ़ते हैं, इसलिये पुरुषको प्रार्थनाके सदृश छोटापन नहीं है।

गौतम बोले, लोकमें ऐसीवस्तु नहीं है, जो लोगोंको परिपूर्ण करे, पुरुष समुद्रसदृश है, इसलिये वह कभी पूर्ण नहीं होता।

विश्वामित्र बोले, काम्यविषयकी इच्छा करनेवाले मनुष्यकी तृष्णा जब पूरी रीतिसे बढती है तब तृष्णारूपी दूसरा काम बाणकी भांति इस पुरुषको विद्ध करता है।

जमदग्नि बोले, निश्चय है, कि प्रतिग्रह विषयमें संयम ही तपस्याको धारण करता है, लोभ करनेसे ब्राह्मणका वह तपस्यारूपी धन नष्ट होता है।

अरुन्धती बोली, इस लोकमें धर्म्मार्थकेलिये द्रव्य सञ्चय करना पाक्षिक सम्मत है, इसलिये इस लोकमें द्रव्य सञ्चयसे तपस्यासञ्चय करना ही श्रेष्ठ है।

गण्डाने कहा, मेरे प्रभु बलवान् होके भी जब इस प्रचण्ड भयसे डर रहे हैं, तब मुझे निबलकी भांति इनसे भी अधिक भय है।

पशुसख बोला, लोभ आदि दोषोंसे धर्म्म भ्रष्ट होनेपर श्रेष्ठपद नहीं मिलता, ब्राह्मण लोग उस श्रेष्ठ पदको ही धन जानते हैं, इसलिये मैं उत्तम शिक्षाके लिये इन विद्वानोंकी उपासना करूं।

ऋषियोंने कहा, जिनकी प्रजा छलयुक्त फल दान नहीं करती, उस दाताके दानमें कुशल होता है,

भीष्म बोले, अनन्तर वे धृतव्रती ऋषि लोग हेमगर्भ फलोंको त्यागके दूसरी ओर चले गये।

मन्त्रिगण बोले, हे महाराज! आपको विदित होवे कि वे लोग छल करके उन फलोंको त्यागके दूसरे मार्गसे जा रहे हैं।

राजा वृषादर्भि मन्त्रियोंका ऐसा वचन सुनके बहुत ही क्रुद्ध हुए और उनके प्रतिकारके निमित्त सब कोई गृहपर गये। उस राजाने आवहनीय अग्निके समीप जाकर तीव्र नियम अवलम्बन करके संस्कृत मन्त्रोंके

हमारे एक आकृति दो। उस अग्निसे लोक-भयङ्करी कृत्या निकली ; वृषादर्भिने उसका यातुधानी नाम रखा। कालरात्रिकी भांति वह कृत्या हाथ जोड़के वृषादर्भिके निकट उपस्थित होके बोली, मैं क्या करूं ?

वृषादर्भि बोले, सप्तर्षियों और अरुन्धतीके निकट जाओ, उनके तथा उनकी दासीगर्भा वा दासीके नामका अर्थ मनहीमन निश्चय करो और इन सबके नामको जानकर सबका ही नाश करो। उनके नष्ट होनेपर जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां जाना। यातुधानी स्वरूपिणी वह कृत्या "ऐसा ही करूंगी" इस प्रकार अङ्गीकार करके जिस बनमें वे महर्षिवृन्द विचरते थे, वहां गई।

भीष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर अत्रि प्रभृति महर्षिगण उस बनमें फलमूल खाते हुए विचरते थे, उस समय उन्होंने लाल हाथ, लाल चरण, लाल मुख और पीतोदरयुक्त एक स्थूल शरीरवाले परिव्राजकको कुत्ते के सहित भ्रमण करते हुए देखा। अरुन्धती उस सर्व्वाङ्गसुन्दर परिव्राजकको देखके ऋषियोंसे बोली, आप लोग ऐसे नहीं हैं।

वशिष्ठ बोले, इस समय हम लोगोंका अग्निहोत्र नहीं होता, सन्ध्या और सवेरे होम करना चाहिये, वह भी नहीं होता, इसलिये नित्यकर्म्मोंके लोप होनेसे हम लोग इस प्रकार कृशित हुए हैं। इनका नित्यकर्म्म लोप नहीं हुआ है, इसी लिये ये कुत्तेके सहित इस प्रकार लक्षित हैं।

अत्रि बोले, क्षुधासे हम लोगोंका बल जिस प्रकार नष्ट होरहा है और अत्यन्त कष्टसे पढ़ी हुई विद्या जिस भांति विनष्ट हुई है, इनकी वैसी नहीं हुई, इसी निमित्त ये इस प्रकार कुत्तेके सहित लक्षित हैं।

विश्वामित्र बोले, हम लोगोंका शास्त्र-प्रतिपादित धर्म्म जिस प्रकार जीर्ण हुआ है, हम जैसे भूखे आलसी और मूर्ख हुए हैं, ये वैसे नहीं हैं, इसीसे कुत्तेके सहित लक्षित हैं।

जमदग्नि बोले, हम लोग जिस भांति वार्षिक अन्न और काष्ठकी चिन्ता करते हैं, इन्हें उस प्रकार कुछ भी चिन्ता नहीं करनी पड़ती, इसीसे ये कुत्तेके सहित ऐसे लक्षित हैं।

कश्यप बोले, जैसे हमारे चारों सहोदर देहि देहि, करके भीख मांगते हैं, इनके भाई वैसे नहीं हैं, इसीसे ये कुत्तेके सहित लक्षित हैं

भरद्वाज बोले, हमें भार्य्याके अपवादवश जैसा शोक हुआ है, इस अल्पचित्त ब्रह्मबन्धुको वैसी घटना नहीं हुई, इसी लिये यह पुरुष कुत्तेके सहित ऐसे लक्षित हैं।

गौतम बोले, हम लोगोंकी कुशरज्जुसे गुंथा हुआ त्रिवर्षीय रंकुमृगचर्म्म जिस प्रकार पुराना हुआ है, इसका वैसा नहीं है, इसीलिये यह पुरुष कुत्तेके सहित ऐसा लक्षित है।

भीष्म बोले, अनन्तर उस परिव्राजकने सप्तर्षियोंको देखके उनके समीप जाकर न्याय-पूर्व्वक हाथसे स्पर्श किया और बोला, आप-लोगोंकी बनके बीच जिस प्रकार भूख मिटेगी, मैं उसी भांति तुम्हारी टहल करूंगा, परस्परको ऐसा कहनेपर वे सब कोई इकट्ठे होकर निवास करने लगे। वे सब एक ही कार्य्यके अभिलाषी होकर बनके बीच फलमूल ग्रहण करते हुए विचरनेमें प्रवृत्त हुए। किसी समय उन्होंने विचरते हुए उत्तम वृक्षोंसे पूरित और पवित्र जलसे युक्त एक सुन्दर तालाब देखा। वह तालाब बालसूर्यसदृश कमलोंसे सुवासित था, वैदूर्य्य वर्णसदृश पद्मपत्रोंसे परिपूर्ण, अनेक प्रकारके जलचर पक्षियोंसे अलंकृत था, उसमें प्रवेश करनेके लिये एक ही द्वार था, कोई उन कमल तथा तालाबके जलको नहीं ले सकते थे, उसमें जानेके लिये एक ही मार्ग था और कीचड़ नहीं था। वृषादर्भि राजाके द्वारा भेजी हुई वह भयङ्करी कृत्या जो यातुधानी

नामसे विख्यात थी, वह उस तालाबकी रक्षा करती थी। पशुसखके सहित महर्षि लोग मृणालके निमित्त उस कृत्यारचित तालाबकी ओर गये। अनन्तर महर्षियोंने तालाबके तट-पर स्थित यातुधानी कृत्याको देखके कहा, तुम अकेली किसके लिये यहांपर निवास करती हो? तालाबके तटको अवलम्बन करके तुम्हारे निवास करनेका क्या प्रयोजन है और तुम क्या करनेकी इच्छा करती हो, उसे कहो।

यातुधानी बोली, मैं चाहे जो कोई क्यों न होऊं, मुझसे तुम लोगोंको कुछ पूछना न चाहिये। हे तपस्वीवृन्द! तुम्हें मालूम हो, कि मैं इस तालाबकी रक्षामें नियुक्त हूं।

ऋषिवृन्द बोले, हम लोग क्षुधासे आर्त हैं हमारे पास कुछ भी नहीं है, तुम्हारी सम्मति हो, तो हम लोग मृणाल लें।

यातुधानी बोली, तुम लोग एक नियमके अनुसार अपने नामका अर्थ कहके स्वेच्छा पूर्व्वक इसमेंसे मृणाल ग्रहण करो।

भीष्म बोले, अनन्तर क्षुधासे व्याकुलचित्त अत्रिने उस यातुधानी कृत्याको नामका अर्थ जाननेमें समर्थ और ऋषियोंके मारनेकी इच्छा जानके यह वचन कहा।

अत्रि बोले, जो इस सारे जगत्को पापसे उबारता है, वेद उसे अत्रि नामसे पुकारता है, इसलिये जो पापसे परित्राण करता है, वह अत्रि है और काम क्रोध आदि शत्रु जिसे अव-लम्बन किया करते हैं, उसे अर अर्थात् पाप कहा जाता है, उस पापसे जो बचाता है, वह अराज्ञि है, इसलिये जो अराज्ञि हो, वही अत्रि है; अत् शब्दका अर्थ मृत्यु है, उससे जो त्राण करता है, उसे भी अत्रि कहा जाता है, इसलिये धर्म्म भी अत्रिपदवाच्य है, अद्य अर्थात् वर्त्तमान कालमें जो तीनबार अधिगत नहीं होता, अतीत पुत्रादिके अनुत्पत्ति समयमें आग-तत्व निबन्धन, उत्पत्तिकालमें वर्त्तमान हेतु और नाश होनेपर अतीतत्वके द्वारा जो जाना नहीं जाता, जिसका इस त्रिवार अविगम नहीं है, केवल वर्त्तमान ही है; जो अवस्था हार्द्दीका शाश्वत जगत्कारणप्राप्ति सर्व्व पापविनाशिनी है, उसे ही अरात्रि कहते हैं। हे सुन्दरी! इसलिये जब मैं ही अरात्रि हूं, तब तुम मेरा नाम अत्रि निश्चय करो।

यातुधानी बोली, हे महाद्युति! तुमने मेरे समीप जो नाम कहा, वह मनमें भी धारण करना बहुत कठिन है। इसलिये तुम जाओ तालाबमें उतरो।

वशिष्ठ बोले, अग्नि, पृथ्वी, वायु, आकाश, स्वर्ग, आदित्य, चन्द्रमा, नक्षत्रगण और श्रुति प्रसिद्ध वसु अर्थात् जिन्हें अवलम्बन करके सब कोई वास करते हैं, ये जिसके अधीन होते हैं, वह अणिमा आदि ऐश्वर्य्यशाली महायोगी हैं, ये सब मेरे वशीभूत हैं, इस हो निमित्त मैं वशिष्ठ और अत्यन्त महान् होनेसे वरिष्ट तथा सब आश्रमोंके उपजीव्य वास योग्य गृहस्थाश्र-ममें निवास किया करता हूं, इसलिये वसि-ष्ठत्व और वास करनेसे मुझे वसिष्ठ जानो, मैं सबका अवलम्ब हूं, इसलिये देवता लोग मेरी रक्षा करते हैं।

यातुधानी बोली, तुमने जो अपने नामका निरुक्त कहा, उसका अक्षरार्थ अत्यन्तदुःखसे बोध होता है, इसलिये इसकी धारणा नहीं की जा सकती; अच्छा जाओ, तुम तालाबमें उतरो।

काश्यप बोले, मैं प्रति शरीरमें एक हूं, इस-लिये मेरा नाम काश्यप है। अर्थात् काशाई अश्वरूपी इन्द्रियोंको कश्य कहते हैं, उन इन्द्रि-योंका अवलम्ब शरीर भी कश्य है, इसलिये कश्यकी रक्षा करनेसे काश्यप द्विज और कु अर्थात् पृथ्वीकी जो रक्षा करता है, उसे कुप अर्थात् जल कहा जाता है, उस कुप अर्थात् जलको जो पीता तथा सोखता है, वह कुकप अर्थात् द्वादश-सूर्य्य मेरा पुत्र है, इसलिये मैं कुकप

हूं, दीप्तिमान होनेसे काश्य और काशपुष्पसदृश केशयुक्त होके सदा तपस्यासे प्रदीप्त हूं।

यातुधानी बोली, हे महाद्युति! तुमने मेरे समीप जिस प्रकार अपना नाम कहा, वह मनमें भी धारण नहीं किया जाता, इसलिये जाओ तालावमें उतरो।

भरद्वाज बोले, मैं अशिष्य अर्थात् शासन न करके योग्य शत्रुओंको भी करुणासे वशीभूत करके प्रतिपादन करता और असुत अर्थात् उदासीन, दीन हीन लोगोंको प्रतिपालन किया करता हूं; देवताओंको भरण करता और द्विजोंको भी भरण किया करता हूं, भार्य्या, पुत्र और सेवकोंको दूसरे लोग जिस प्रकार पालते हुए पृथ्वीकी भांति सर्व्वसह और अन्नप्रद होते हैं, मैं भी वैसा ही हूं। हे सुन्दरि! इसलिये मैं अनर्घ्य, अर्थात् मायाके द्वारा लोकहितके लिये उत्पन्न होनेसे अनव्याज हूं; इससे तुम मुझे भरद्वाज जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका ऐसा निर्व्वचन तथा अक्षरार्थ कहनेमें अत्यन्त कष्ट होता है, यह धारण नहीं किया जा सकता; इसलिये जाओ तालावमें उतरो।

गौतम बोले, मैं जितेन्द्रिय होनेसे गोपद वाच्य, स्वर्ग और भूमिको वशीभूत करनेसे गोदम तथा धूमरहित अग्नितुल्य होनेसे अधूम हूं, इसलिये तुममें समदर्शन निबन्धनसे अदम अर्थात् दूसरेसे दमनीय नहीं हूं। हे यातुधानी कृत्या! मेरे जन्मते ही मेरी गो अर्थात् किरणके सहारे तम अर्थात् अन्धकार नष्ट हुआ था, इसलिये मेरा नाम गौतम जानो, मैं अग्निकी भांति तुम्हारे लिये दुष्पधर्ष हूं।

यातुधानी बोली, हे महामुनि! मेरे समीप तुमने जो नाम कहा, वह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालावमें उतरो।

विश्वामित्र बोले, ब्रह्माण्डके देवगण मेरे मित्र हैं और मैं इन्द्रियोंका मित्र हूं। हे यातुधानी! इसलिये तुम मुझे विश्वामित्र जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे इस नामका निरुक्त और इसका अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालावमें उतरो।

जमदग्नि बोले, यज्ञादिकोंमें जो बारबार हवि भक्षण करते हैं, उन्हें याजमन्त्र कहा जाता है। उस याजमन्त्र अर्थात् देवगणका जिसके द्वारा यजन किया जाता है, उसका नाम यज अर्थात् अग्नि जानो। हे सुन्दरि! उसके आविर्भावमें मैंने जन्म लिया है, इसलिये तुम मुझे जमदग्नि जानो।

यातुधानी बोली, हे महामुनि! तुमने जिस प्रकार मेरे समीप अपना नाम कहा, वह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालावमें उतरो।

अरुन्धती बोली, मैं पतिकी अनुगामिनी होकर धर अर्थात् पर्व्वत, धारणी और वसुधा अर्थात् देवगणोंके निवास स्थान स्वर्गमें वास करती हूं, तथा पतिके मनका अनुरोध किया करती हूं, इसलिये मुझे अरुन्धती जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निर्व्वचन और इसका अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये तुम भी जाओ तालावमें उतरो।

गण्डा बोली, हे अग्निसम्भवे! मुखके एक स्थानको पण्डित लोग गण्ड कहते हैं, मेरा वह स्थान ऊंचा है, इसलिये मुझे गण्डा जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निरुक्त और अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारणाके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तुम भी तालावमें उतरो।

पशुसख बोला, हे अग्नि सम्भवे! मैं पशु अर्थात् जीवोंको देखते ही रक्षा वा रञ्जन किया करता हूं, इसलिये मैं सदा पशुओंका सखा हूं, इस ही गुणके सम्बन्धसे मेरा पशुसख नाम जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निरुक्त और अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारणा करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तुम भी तालाबमें उतरो।

शुनःसख बोले, हे यातुधानी! इन लोगोंने जिस प्रकार अपना अपना नाम कहा, मैं उस भांति कहनेका उत्साह नहीं करता, इसलिये मुझे शुनःसखा अर्थात् धर्म्मके सखा मुनियोंके सखारूपसे निश्चय करो।

यातुधानी बोली, तुमने सन्दिग्ध भाषासे निज नामका निर्व्वचन किया है, हे द्विज! इसलिये अब एकबार अपना यथार्थ नाम कहो।

शुनःसख बोले, मैंने एक बेर अपना नाम कहा, उसे यदि तू नहीं समझ सकी, तो इस त्रिदण्डकी चोटसे शीघ्र ही जलके खाक हो।

यातुधानी कृत्या उस समय ब्रह्मदण्डसदृश त्रिदण्डकी चोट सिरपर लगतेही पृथ्वीपर गिरके उसी समय भस्म होगई। शुनःसखा भी उस महाबलशालिनी यातुधानीको मारके पृथ्वीपर त्रिदण्ड रखके शाद्वल तृणके बीच बैठ गये।

अनन्तर वे मुनिवृन्द स्वेच्छापूर्व्वक कमल मृणाल लेके हर्षित होकर तालाबसे निकले। उन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे मृणालोंको इकट्ठा कर तालाबके तटपर रखकर जलसे तर्पण किया। अनन्तर वे पुरुषश्रेष्ठ ऋषिगण जलसे निकलके स्थलमें आकर एकत्रित हुए, किन्तु मृणालकी राशि नहीं देखा। ऋषिगण बोले, हम लोग क्षुधातुर होके खानेकी इच्छासे जो सब मृणाल लाये, उसे न जाने किस पापी नृशंस मनुष्यने हर लिया? वे द्विजसत्तमगण शङ्कित होके आपसमें इसी प्रकार पूछने लगे। हे अरिकर्षन! तब उन्होंने निषद्ध कार्य्यके अकर्त्तव्यताच्छलसे शपथ करनेके लिये कहा। वे सब क्षुधार्त्त और अत्यन्त श्रमयुक्त थे, इसलिये ऐसा ही करूंगा, कहके सब कोई उस समय शपथ करनेको उद्यत हुए।

अत्रि बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह पांवसे गऊको स्पर्श करे, सूर्य्यकी ओर मूत्र पुरीष परित्याग करे और अनध्यायके समय अध्ययन करे।

वसिष्ठ बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह लोकके बीच अनद गाय परायण होके क्रीड़ा वा मृगालके निमित्त सारमेय आकर्षण करे; परिव्राट होके, स्वेच्छाचारी होके, शरणागत पुरुषको मारे, निज दुहिताको उपजीव्य करे अर्थात् शुल्क लेकर अपनी कन्या बेंचके जीवन बितावे, तथा कर्षकके समीप धनकी अभिलाषा करे।

कश्यप बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह सब ठौर सब विषयोंमें आलाप करे, न्यस्तधन लुप्त करे, झूठी साक्षी दे, यज्ञादि निमित्तके अतिरिक्त वृथा मांसाशी हो, नट कर्त्तृक प्रभृतिको वृथा दान करे और दिनमें स्त्री सम्भोग करे।

भरद्वाज बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह धर्म्मत्यागी होकर स्त्रीजाति और गौवोंके विषयमें निठुर आचरण करे अथवा ब्राह्मणोंको जय करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह उपाध्यायको अग्राह्य करके ऋक् और यजुर्व्वेद पढ़े और तृणयुक्त अग्निमें होम करे।

जमदग्नि बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, जलमें विष्ठा फेंके, गौवोंको मारे तथा गौवोंके विषयमें द्रोहाचरण करे, ऋतुकालके अतिरिक्त अन्य समयमें मैथुन करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह सबका द्वेषी होवे, भार्य्याकी उपजीव्य करके जीवन बितावे, उसके बन्धुजन पृथक रहें, सदा वैर युक्त हो और परस्परमें अतिथि होवे।

गौतम बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह वेदोंको पढ़के उन्हें त्याग देवें, दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आवहनीय अग्निको

परित्याग करे, सोमविक्रयी होवे, एकमात्र कूए'के जलसे जिस स्थानमें जीवन धारण किया जाता है, वैसे देशमें ब्राह्मण होके भी जो वृषलीपति हुआ करता है,—जिसने मृणाल हरण किया है, वह वैसे ब्राह्मणोंकी सदृशताको प्राप्त होवे।

विश्वामित्र बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, उसके जीवित रहते ही दूसरे लोग उसके गुरुजनों तथा सेवकोंका पालन करें, वह गतिहीन और बहुपुत्र-युक्त होवे। जिसने मृणाल हरण किया है, उसके वेद अपवित्र हों, वह सम्पत्ति पानेपर अहङ्कार करे तथा वह कर्षक और मत्सरी हो, जिसने मृणाल हरण किया है, वह वर्षाकालमें विचरे, राजाका वेतन भागी सेवक हो, साधारण लोगोंका पुरोहित और अयाच्य पुरुषका अयाचक होवे।

अरुन्धती बोली, जो स्त्री मृणाल हरण किये हो, वह सदा सासको परिभव करे, स्वामीके समीप मन मलिन होवे, अकेली सुस्वादु वस्तु खावे। जिसने मृणाल हरण किया है, वह स्वजनोंका अनादर करके गृहमें रहके दिन बीतनेपर सत्तू खाय और अभोग्य तथा अवोर प्रसविनी होवे।

गण्डा बोली, जिसने मृणाल हरण किया है, वह सर्व्वदा झूठ बोले, बन्धुजनोंके सङ्ग विरोध करे, शुल्क लेके कन्यादान करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह अन्न पाक करके स्वयं भोजन करे, दास्यकर्म्म करके बूढ़ी होवे, और जारके द्वारा गर्भ धारण करके मृत्युको प्राप्त होवे।

पशुसख बोला, जिसने मृणाल हरण किया है, वह दास होकर जन्मे, सन्तान रहित हो, उसके कुछ न रहे और देवताओंको नमस्कार न करे।

शुनःसख बोले, जिसने मृणाल हरण किया हैं, वह चारों वेद जाननेवाले अथवा सामवेदज्ञ वा ब्रह्मचर्य्य युक्त ब्राह्मणको कन्यादान करे और वह विप्र अथर्व्ववेद पढ़के स्नान करे।

ऋषिगण बोले, हे शुनःसख! तुमने जो शपथ किया, वह तो ब्राह्मणकी ही अभिलषित है, इसलिये तुमनेही हम लोगोंका मृणाल हरण किया है। शुनःसख बोले, आप लोगोंने इस समय न्यस्तधनको न देखके कृतकर्म्मा होकर जो वचन कहा, वह सत्य है, इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है, मैंने ही मृणाल हरण किया है, देखिये, ये सब मृणाल मेरे द्वारा लुप्त हुई हैं। हे अनघगण! मैंने आप लोगोंकी परीक्षाके लिये ऐसा किया है, मैं तुम लोगोंकी रक्षाके लिये इस स्थानमें आया हूं, इस अत्यन्त क्रूर यातुधानी कृत्याने आप लोगोंके वधकी इच्छा की थी। हे तपोधनगण! राजा वृषादर्भिने इसे भेजा था, मैंने उसे मारा है। यह दुष्टा हिंस्रा पापिन आप लोगोंके निमित्त अग्निसे उत्पन्न हुई थी। हे विप्रगण! इस ही निमित्त मैं यहांपर आया हूं, आप लोग मुझे इन्द्र जानो। आप लोगोंने लोभत्यागनेसे सर्व्वकाम सम्पन्न लोकोंको पाया है। हे द्विजगण! इसलिये यहांसे चलिये, आप लोगोंको शीघ्रही वे समस्त लोक प्राप्त होंगे।

भीष्म बोले, अनन्तर महर्षिवृन्द प्रसन्न होके इन्द्रसे बोले, "ऐसा ही होवे" इतना कहके देवराजके सङ्ग सुरपुरमें गये। इस ही भांति उन महात्माओंने राजाओंके द्वारा अनेक प्रकारके भोगोंसे प्रलोभित होनेपर भी भूखको क्लृत ही सहा था, परन्तु उस समय कुछ भी लोभ न किया, इस ही निमित्त उन्होंने स्वर्गलोक पाया। इसलिये मनुष्य सब अवस्थामें ही लोभ परित्याग करे। हे राजन्! यही परम धर्म्म है, इसलिये अवश्य ही लोभ त्यागना योग्य है। मनुष्य इस सच्चरित्र विषयको जनसमाजमें कहनेसे अर्थ-भागी होता है, कदाचित उसे दुर्गम स्थान नहीं मिलते, पितर, ऋषि और देववृन्द उसपर प्रसन्न होते हैं, वह मनुष्य परलोकमें जाकर यश धर्म्म और अर्थभागी होता है।

९३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, प्राचीन लोग इस विषयमें यह पुराना इतिहास कहते हैं, तीर्थयात्राके समय शपथके विषयमें जो घटना हुई थी, उसे सुनो। हे भरतसत्तम महाराज! कमलनालके लिये इन्द्रने जिस प्रकार चोरीकर्म्म किया और मुनियोंने शपथ की थी, राजर्षि और द्विजर्षियोंके द्वारा उस ही भांति शपथ हुई थी। पश्चिम प्रदेशमें ऋषियोंने एकत्र होके प्रभास तीर्थमें यह विचार किया कि हम लोग समस्त पृथ्वीमण्डलमें विचरते हुए स्वेच्छानुसार पुण्यतीर्थोंमें गमन करेंगे। हे राजन्! शुक्र, अङ्गिरा विद्वान् कवि, अगस्त्य, नारद, पर्व्वत, भृगु, वशिष्ठ कश्यप, गौतम, विश्वामित्र, जमदग्नि, गालव ऋषि, अष्टक, भरद्वाज, अरुन्धती और वालखिल्य मुनिगण, राजा शिवि, दिलीप, नहुष, अम्बरीष ययाति, धुन्धुमार और पुरु आदि राजाओंने महानुभाव वृत्रहन्ता देवराजको अगाड़ी करके तीर्थोंमें गमन किया; वे लोग अनेक तीर्थोंमें घूमकर माघीपूर्णिमाके दिन पुण्यतीर्थ कौशिकीमें उपस्थित हुए।

अनन्तर उन अग्निसदृश तेजस्वी ऋषियोंने देवतीर्थके जलमें स्नान और पुष्करभोजन करके सब तीर्थोंके पापको नष्ट करते हुए ब्रह्मसरोवरमें गये। हे महाराज! कोई कोई वहां बिष खनने लगे दूसरे ब्राह्मण लोग मृणाल लानेमें प्रवृत्त हुए। अनन्तर उन्होंने अगस्त्यको उस ह्रदमें बढ़े हुए कमलोंको तोड़ते देखा। अगस्त्य उन ऋषियोंसे बोले, किसने मेरा सुन्दर कमल लिया है? मैं तुम लोगोंपर शङ्का करता हूं, तुम लोग मुझे कमल दो, पद्मको हरण करना तुम्हें उचित नहीं है। मैंने सुना है, कि कालक्रमसे धर्म्मबल विनष्ट होगा, वही काल इस समय उपस्थित हुआ है, अधर्म्मसे पीड़ा होती है, जबतक इस लोकमें अधर्म्म विद्यमान नहीं होता है, उतने ही समयके बीच मैं सदाके लिये सुरलोकमें जाऊंगा, इसके अनन्तर ब्राह्मण लोग गांवके बीच स्पष्ट स्वरसे वृषलोंको वेद सुनावेंगे और राजा लोग व्यवहारमें प्रजाके धर्म्मको न देखेंगे; इसलिये अब मैं परलोकमें जाऊंगा। जबतक उत्तमें नीचे मनुष्य निकृष्ट और मध्यम लोगोंकी अवज्ञा नहीं करते, हैं, तथा जबतक यह जगत् अज्ञानसे परिपूरित नहीं होता है, उतने ही समयके बीच मैं सदाके लिये परलोकमें जाऊंगा। इसके बाद बलवान मनुष्योंके द्वारा निर्व्वल मनुष्योंको भुज्यमान देखूंगा, इसलिये मैं सदाके लिये परलोकमें जाऊंगा, इस लोकमें जीवोंको देखनेका उत्साह नहीं करता।

ऋषिवृन्द आर्त्त होकर उस महर्षिसे बोले, हे महर्षि! हमने आपका पुष्कर नहीं लिया है, आप हम लोगोंपर निरर्थक क्रोध न करिये। हम लोग तीव्र शपथ करते हैं। हे पुरुषेन्द्र! उस समय उन महर्षियोंने निश्चय करके इस धर्म्मको देखकर राजपुत्र और राजपौत्रोंके सहित क्रम क्रमसे शपथ करनेमें प्रवृत्त हुए।

भृगु बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह इस लोकमें निन्दित होके दूसरेकी निन्दा करे, ताड़ित होके दूसरेको मारे और पीठपर चढ़के वृषभ और ऊंटोंका मांस भक्षण करे।

बसिष्ठ बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह लोकके बीच अस्वाध्यायपरायण होके कुत्तेको आकर्षण करे और पुरीके बीच भिक्षुक होके रहे।

कश्यप बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह सब ठौर समस्त वस्तुओंको पण करके क्रय विक्रय करे, न्यस्त धन लोप करे और मिथ्या साक्षी दे।

गौतम बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह बुद्धिहीनतासे विषम काम क्रोध आदिके सहारे अहंकारयुक्त होके जीवन धारण करे और कर्षक तथा मत्सरी होवे।

अङ्गिरा बोले, जिसने आपका कमल लिया

है, वह अपवित्र तथा कपटी ब्राह्मण होवे, कुत्तेको आकर्षण करे, ब्रह्महत्या करके प्रायश्चित्त न करे।

धुन्धुमार बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह मित्रोंके निकट अकृतज्ञ होवे, शूद्राके गर्भमें जन्मे और उत्तम रीतिसे बने हुए अन्नको अकेला ही भोजन करे।

दिलीप बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह जिस गांवमें एक मात्र कूएंके जलसे जीवन धारण किया जाता है, वैसे गांवमें जो ब्राह्मण वृषलीपति होके वास करता है,—उसे प्राप्त होने योग्य लोकोंमें जावे।

पुरु बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह चिकित्सा करनेमें प्रवृत्त रहे, भार्य्याके सहारे पुष्टि लाभ करे और श्वसुरके द्वारा उसकी जीविका चले।

शुक्र बोले, जिसने आपका कमल हर लिया है, वह वृथा मांस भक्षण करे, दिनमें मैथुन करे और राजाका प्रेष्यदूत होवे।

यमदग्नि बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह अनध्यायमें पढ़े, श्राद्धकालमें मित्रोंको भोजन करावे।

शिवि बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह अनहिताग्नि होके मृत्युके मुखमें पड़े, यज्ञके समयमें विघ्न करे और तपस्वियोंके सङ्ग विरोध करे।

ययाति बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह व्रती और जटाधारी होके ऋतुकालके अतिरिक्त अन्य समयमें भार्य्याके द्वारा सन्तान उत्पन्न करे और वेदोंका निरादर करे।

नहुष बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह सन्यासी होके गृहस्थ होवे, दीक्षित होके स्वेच्छाचारी बने और वेतन लेके विद्यादान करे।

अम्बरीष बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह धर्म्मत्यागी होके स्त्रीजाति और गौवोंके विषयमें नृशंस होवे तथा ब्रह्महत्या करे।

नारद बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह गृहमें ज्ञानी होके बाहरमें विस्वर-पद युक्त शास्त्र पढ़े और गुरुजनोंकी अवज्ञा करे।

नाभाग बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह सदा मिथ्या वचन कहे, साधुओंके सङ्ग विरोध करे और पण लेके कन्या दान करे।

कवि बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह पांवसे गऊको मारे, सूर्य्यकी ओर मलमूत्र परित्याग करे।

विश्वामित्र बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह धनसे खरीदे जानेपर कृषि प्रतिबन्ध करे, राजाका पुरोहित हो और अयाच्य पुरुषोंका याचक होवे।

पर्व्वत बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह गांवमें सेवक होके रहे, गधेकी सवारीपर चले और वृत्तिके निमित्त कुत्तोंको आकर्षण करे।

भरद्वाज बोले, जिसने आपका कमल लिया है, नृशंस व्यवहार और झूठ कहनेसे जो पाप होता है, उसे वही पाप सदा प्राप्त होवे।

अष्टक बोले, जिस राजाने आपका कमल लिया है, वह अकृतप्रज्ञ, काम वृत्तिवाला तथा पापी हो और अधर्म्मपूर्व्वक पृथ्वीको शासन करे।

गालव बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह मनुष्य पापियोंसे भी अपूज्य और पापी होवे और दान करके कहता फिरे।

अरुन्धती बोली, जिस स्त्रीने आपका कमल हरण किया है, वह श्वसुरको निन्दा करे, पतिके समीप मन मारके स्थित रहे और अकेली स्वादिष्ट वस्तुओंको खाय।

बालखिल्यगण बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह वृत्तिके लिये गांवके पथमें एक चरणसे निवास करे और धर्म्म जाननेवाला होके भी धर्म्म त्यागी। शुनःसख बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह ब्राह्मण अग्निहोत्रका अनादर करके सुखसे सोवे और परिव्राट् होके भी स्वेच्छा चारी होवे।

सुरभि बोली, जिसने आपका कमल लिया है, वह कौशज अथवा बल्वज तृणकी रसरीसे गौवोंको दुहनेके समय पांव बांधके दूसरे बछड़ेके द्वारा दूध दूहे और कांसेके वर्त्तन उसके पात्र होवें।

भीष्म बोले, हे कौरवेन्द्र! अनन्तर उन सबके अनेक प्रकारसे शपथ करते रहनेपर देवराज सहस्राक्ष उस मुख्य विप्रको क्रुद्ध देखके अत्यन्त हर्षित हुए। हे महाराज! अनन्तर देवराज उस क्रोधी तपस्वीसे वार्त्तालाप करके अपना अभिप्राय कहने लगे, कि ब्रह्मर्षि देवर्षि और राजर्षियोंके बीच सबको अपना जानो।

इन्द्र बोले, जिस ब्राह्मणने कमल हरण किया है, वह यजुर्व्वेद जाननेवाले ब्राह्मण तथा सामवेद अध्ययन करनेवाले विप्रको अथवा जिसने ब्रह्मचर्य किया हो, वैसे ब्राह्मणको कन्या दान करे और अथर्व्व वेद पढ़के स्नान करे। जिसने आपका कमल लिया, वह वेदोंको पढ़े पुण्यशील तथा धार्म्मिक हो और ब्रह्मलोकमें जावे।

अगस्त्य बोले, हे बलसूदन! तुमने जो शपथ किया, वह तो आशीर्व्वाद है, इसलिये मुझे मेरा कमल दो, यही सनातन धर्म्म है।

इन्द्र बोले, हे भगवन्! इस समय मैंने लोभसे कमल नहीं लिया है, धर्म्म सुननेके लिये मैंने हरण किया था, इसलिये मुझपर तुम्हें क्रोध करना योग्य नहीं है। यह ऋषियोंकी कही हुई धर्म्मश्रुतिका पूर्ण उत्कर्ष, अनामय, अव्यय शाश्वत धर्म्मरूपी तरनेका उपाय मैंने सुना। हे विद्वन् द्विजसत्तम! इस लिये यह अपना कमल लीजिये। हे अनिन्दित भगवन्! आपको मेरा अपराध क्षमा करना योग्य है। अत्यन्त क्रोधी बुद्धिमान अगस्त्य मुनि महेन्द्रके ऐसा कहनेपर अपना कमल लेके प्रसन्न हुए। अनन्तर उन बनवासी मुनियोंके संग फिर तीर्थयात्रा की और पवित्र तीर्थोंमें स्नान करने लगे।

जो लोग योगयुक्त होके प्रति पर्व्वमें इस इतिहासको पढ़ते हैं, उनके मूर्ख पुत्र नहीं जन्मते और वह स्वयं मूर्ख नहीं होते; कोई आपदा उन्हें स्पर्श नहीं करती, वह शोकरहित होते और उन्हें जरा अवस्था नहीं प्राप्त होती, वे रजोगुणसे रहित और कल्याणयुक्त होके परलोकमें जाकर स्वर्गलोक पाते हैं जो ऋषियोंके द्वारा वर्णित शास्त्र पढ़ते हैं, वे उत्तम पुरुष अव्यय ब्रह्मलोकमें जाते हैं।

९४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! श्राद्धकर्म्ममें जो छत्र और पादुका दिया जाता है, वह किस पुरुषके द्वारा प्रवर्त्तित हुआ है? यह किस लिये उत्पन्न हुआ और किस निमित्त दिया जाता है, केवल श्राद्धकर्म्ममें ही क्यों, स्त्रियोंके व्रतादि पुण्योत्सवके समयमें भी पादुका और छत्र दिया जाता है। अनेक कारणोंसे यह पुण्यके अवलम्बसे दिया जाता है। हे राजन्! इसे विस्तारपूर्व्वक सुननेकी इच्छा करता हूं।

भीष्म बोले, हे महाराज! छत्र और पादुका जिस प्रकार लोकमें प्रचलित हुआ तथा जिसके द्वारा प्रवर्त्तित हुआ है, उसे विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सावधान होके सुनो। हे नरनाथ! यह जिस प्रकार अक्षय और पवित्र हुआ है, उसे मैं पूरीरीतिसे कहता हूं। हे प्रजानाथ! महाप्रभाव दिवाकर और जमदग्निके सम्वादयुक्त इस पहले कहे हुए इतिहासको सुनो। हे महाराज! पहले समयमें भगवान् भार्गव स्वयं धनुष लेकर क्रीड़ा करते हुए सन्धान करके बाण चला रहे थे, रेणुका उस प्रदीप्त तेजसे युक्त चलाये हुए बाणोंको बार बार लाके उन्हें देने लगी। अनन्तर वह उस बाणके शब्दसे अत्यन्त हर्षित होके बाण चलाने लगे, रेणुकाने उन बाणोंको फिर ला दिया। अनन्तर सूर्य्यके मध्य-

नेवाले नक्षत्रोंके बीच रोहिणी नक्षत्र और जेष्ठाके समसूत्रमें जानेपर मध्यान्हके समय द्विजश्रेष्ठ जमदग्निने शीघ्रगामी बाण चलाकर रेणुकासे कहा, हे विशालनयनी ! जाओ, धनुषसे छूटे हुए बाणोंको लाओ । हे सुन्दरि ! मैं फिर इन बाणोंको चलाऊंगा । हे प्रजानाथ ! रेणुका चलनेके समय सूर्य्यके धूपसे पांव और शिर झुलसनेपर वृक्षको छायामें मुहूर्त्त भर ठहरी । वह असितेक्षणा कल्याणि मुहूर्त्त भर खड़ी रहके पतिके शापभयसे डरकर फिर बाणोंको लानेके निमित्त चली । यशस्विनी सुन्दरी रेणुका उन बाणोंको लेकर दोनों पावोंमें फफोले पड़नेसे क्लेश पाके लौटी और पतिके भयसे कांपती हुई उनके समीप उपस्थित हुई, जमदग्निने क्रुद्ध होके उस उत्तम नेत्रवालीसे बार बार कहा, हे रेणुका ! तू किस लिये बहुत देरीमें आई ?

रेणुका बोली, हे तपोधन ! मेरा सिर और दोनों पांव बहुत परितप्त हुए थे मैंने सूर्य्यके तेजसे रुकके वृक्षको छायाका सहारा लिया था, हे ब्रह्मन् ! इस ही निमित्त में बहुत देरीमें बाणोंको ले आई । हे विभु तपोधन ! आप ऐसा सुनके मुझपर क्रोध न करिये ।

जमदग्नि बोले, हे रेणुके ! मैं इसही समय तुम्हें दुःख देनेवाले सूर्य्यको अस्त्रानलके सहारे गिरा दूंगा ।

भीष्म बोले, अनन्तर जमदग्नि दिव्य धनुष खींचके जिधर सूर्य्य जारहे थे, उस ही ओर मुंह करके खड़े हुए । हे कौन्तेय ! सूर्य्यदेव उन्हें बद्धकवच देखके ब्राह्मण स्वरूप धरके उनके समीप आके बोले, सूर्य्यने तुम्हारा क्या अपराध किया है ? सूर्य्य आकाशमें निवास करते हुए रसोंको आकर्षण करता है और वर्षाऋतुमें उन्हीं रसोंको बरसाता है, हे विप्र ! उस ही रससे मनुष्यके सुखके लिये अन्न उपजता है, अन्नही प्राण है, यह वेदमें वर्णित है, अनन्तर सूर्य्य आकाशमें रहके किरणोंके द्वारा इस सप्तद्वीपवाली पृथ्वीपर जलकी वर्षा करता है । हे प्रभु ! वही जल औषधि, लता पुष्प और पत्रोंमें पड़के अन्नरूपसे उत्पन्न होता है । हे भार्गव ! जातकर्म्म प्रभृति सब कार्य्य, व्रत, उपनयन, गोदान, विवाह और यज्ञसमृद्धि, सब शास्त्र, सब भांतिके दान और धन सञ्चय, सब विषय जिसे तुम जानते हो, उनमें अन्नसेही पूरी रीतिसे प्रवृत्ति हुआ करती है । जो सब उत्तम विषय हैं और जो आरम्भ हुआ करते हैं, वह सब अन्नसेही उत्पन्न होता है, इसलिये जो मुझे विदित है, वह तुमसे कहता हूं । हे विप्र ! मैंने जो कहा, तुम वह सब विषय जानते हो । हे विप्र ! इसलिये मैं तुम्हें प्रसन्न करता हूं । सूर्य्यको गिरानेसे तुम्हें कौनसा फल मिलेगा ?

९५ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, भगवान् सूर्य्यके ऐसा कहनेपर महातेजस्वी मुनिसत्तम जमदग्निने क्या किया ?

भीष्म बोले, हे कुरुसत्तम ! अग्नि सदृश प्रभायुक्त वह जमदग्नि मुनि सूर्य्यके ऐसी प्रार्थना करनेपर भी शान्त न हुए । हे नरनाथ ! अनन्तर विप्ररूपधारी सूर्य्य हाथ जोड़कर मुनिको प्रणाम करके मृदुस्वरसे बोले, हे विप्रर्षि ! सूर्य्य सदा चलता रहता है, इसलिये वह चललक्ष्य है, इसलिये जब सदा चललक्ष्य है । जब सदा गमनशील सूर्य्य चललक्ष्य हुआ, तब तुम उसे किस प्रकार विद्ध करोगे ?

जमदग्नि बोले, मैं ज्ञाननेत्रसे तुम्हें स्थिर और गमनशील, दोनोंही जानता हूं, इसलिये आज मैं अवश्य तुम्हें शिक्षा दूंगा । हे दिवाकर ! तुम मध्यान्हमें आधे निमेषभर ठहरते हो, उसी समय मैं तुम्हें विद्ध करूंगा । हे भास्कर ! इस विषयमें मुझे कुछ विचार नहीं है ।

सूर्य्य बोले, हे धन्विवर ! तुम मुझे अवश्य ही विद्ध करोगे इसमें सन्देह नहीं है। हे भगवन् ! यद्यपि मैंने तुम्हारा अपकार किया है, तोभी इस समय मुझे अपना शरणागत जानो।

भीष्म बोले, अनन्तर भगवान् जमदग्निने हंसके कहा। हे सूर्य्य ! तुम्हें डरना उचित नहीं है, क्योंकि तुम प्रणत हुए हो। ब्राह्मणोंमें जो सरलता है, पृथ्वीमें धैर्य्य, चन्द्रमामें मनोहरताई, वरुणमें, गम्भीरता, अग्निमें प्रकाश, सुमेरुमें प्रभा और सूर्य्यमें ताप इन सबको जो मनुष्य अतिक्रम करता है, वही शरणागत पुरुषको मार सकता है। जो पुरुष शरणमें आये हुएको मारता है, वह पुरुषही ब्रह्महत्यारा हुआ करता और वह मनुष्यही सुरा पीता है। हे तात ! इसलिये इस दुर्नीति विषयके नियमको विचारो, तुम्हारी किरणसे तापित मार्गके बीच जिस प्रकार सुखसे लोग चल सकें, उसका उपाय कहो।

भीष्म बोले, भृगुसत्तम जमदग्नि इतना कहके चुप होरहे। अनन्तर सूर्य्यदेवने उन्हें शीघ्र ही छत्र और पादुका दिया। सूर्य्यने कहा, हे महर्षि ! मेरी किरण जिससे निवारित होती है, उस शिरस्त्राण और पदत्राण (दोनों चर्म्म-पादुका) ग्रहण करो, आजसे इस लोकमें इसका समस्त पुण्यकार्य्योंमें परम अक्षयरूपसे प्रचार होगा।

भीष्म बोले हे भारत ! छत्र और पादुका दान सूर्य्यके द्वारा प्रवर्त्तित हुआ है, तीनों लोकमें यह परम पवित्र रूपसे प्रसिद्ध है; इसलिये तुम ब्राह्मणोंको उत्तम छत्र और पादुका दान करो, उससे तुम्हें महान् धर्म्म होगा, इस विषयमें हम लोगोंको विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ ! जो लोग द्विजातियोंको एक सौ शलाकासे युक्त छाता दान करते हैं, वे परलोकमें जाके सुखी होते हैं। हे भरतर्षभ ! वे लोग अप्सरा, गन्धर्व और द्विजोंसे पूजित होकर इन्द्रलोकमें निवास करते हैं। हे महाबाहो ! जो लोग तापयुक्त स्नातक ब्राह्मणों तथा संशितव्रती द्विजातियोंको दो पादुका दान करते हैं, वे भी देवताओंसे पूजित लोकको प्राप्त होते हैं तथा वे परलोकमें जाकर प्रीतियुक्त होके गोलोकमें निवास करते हैं। हे भरतसत्तम ! यह मैंने विस्तारपूर्वक तुमसे छत्र और पादुकादानका फल कहा है।

९६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ ! आप समस्त गार्हस्थ्यधर्म्म वर्णन करिये, मनुष्य क्या करनेसे इस लोकमें समृद्धि पाता है।

भीष्म बोले, हे भरतकुल तिलक प्रजानाथ ! इस विषयमें मैं तुमसे श्रीकृष्ण और पृथ्वीके सम्वादयुक्त प्राचीन इतिहास कहूंगा। हे भरतश्रेष्ठ ! तुमने मुझसे इस समय जो प्रश्न किया है, प्रतापवान् कृष्णने पृथ्वीदेवीको यथा योग्य स्तुति करके यही विषय पूछा था।

श्रीकृष्ण बोले, हे पृथ्वी ! मैं अथवा मेरे समान पुरुष गृहस्थधर्म्मको अवलम्बन करके नियमपूर्वक कौनसा कार्य्य करें तथा क्या करनेसे वह सिद्ध होगा ?

पृथ्वी बोली, हे माधव ! ऋषि, देवता, पितर और मनुष्यवृन्द गृहस्थ पुरुषोंके लिये अवश्य ही पूजनीय हैं, यज्ञकर्म्म अवश्य करना चाहिये, और भी मुझसे सुनो। हे मधुसूदन ! देवता सदा यज्ञसे तृप्त होते और मनुष्य सदा आतिथ्यके द्वारा तृप्त होते हैं, इसलिये अभिप्रायके अनुसार पूजनीय लोगोंकी सदा सेवा करनी योग्य है, ऐसे कार्य्यसे ऋषि लोग प्रसन्न होते हैं। सदा अभुक्त रहके अग्निकी परिचर्य्या करे, तथा बलिवैश्वदेव दान करे, उससे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। गृहस्थ पुरुष प्रतिदिन पितरोंकी प्रीतिका विधान करते हुए अन्न जल

अथवा दूध, फल, मूल आदिके सहारे, श्राद्ध करें, सिद्ध अन्नके द्वारा विधिपूर्व्वक वैश्वदेव दान करे और हुताशनमें अग्नि, चन्द्रमा अनन्तर धन्वन्तरिके लिये होम करे, प्रजापतिके निमित्त पृथक् होम करना योग्य है। आनुपूर्व्विक क्रमसे बलि देनी चाहिये, दक्षिण दिशामें यमको, पश्चिममें वरुण, उत्तरमें चन्द्रमा, वास्तुके बीच प्रजापतिको, पूर्व्वोत्तर भागमें धन्वन्तरि और पूर्व्व दिशामें इन्द्रको पूजाका उपहार प्रदान करे तथा मनुष्योंको गृहके द्वारपर अन्न प्रभृति दान करे। हे माधव! ऋषि लोग इसे ही बलि कहा करते हैं। मरुद्गण तथा देवताओंको गृहके भीतर बलि प्रदान करे और विश्वदेवगणको सूने स्थानमें बलि देनी योग्य है, निशाचर और भूतगणोंको रात्रिके समयमें बलि दे। इस ही भांति सबको बलि देके ब्राह्मणोंको भिक्षा देवे ब्राह्मणोंकी अनुपस्थितिमें अन्नका अग्राशन आगमें डाले। जब मनुष्य पितरोंके श्राद्ध करनेकी इच्छा करे, तब श्राद्धकर्म्मके पूर्ण होनेपर पितरोंकी तृप्तिका विधान करनेके अनन्तर विधिपूर्व्वक बलि देनी चाहिये। अनन्तर वैश्वदेव करके ब्राह्मणोंका निमन्त्रण करे। शेषमें अन्नादिसे अतिथियोंको सत्कार करके भोजन करावे। हे महाराज! ऐसा कार्य्य करनेसे अतिथिवृन्द मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न हुआ करते हैं। जिनके आनेकी तिथि नियत न हो, उन्हें अतिथि कहते हैं। आचार्य्य, पिता, मित्र, आप्त पुरुष और अतिथिको 'मेरे गृहमें आज भोजनको ये वस्तु उपस्थित हैं' गृहस्थ पुरुष सदा ऐसा निवेदन करे, ऐसा ही धर्म्म विहित है। हे कृष्ण! गृहस्थ पुरुष सदा सबके शेषमें अन्न भोजन करे, राजा, ऋत्विक्, स्नातक, गुरु और श्वशुरके वर्षभर तक गृहमें वास करनेपर भी उनकी मधुपर्कसे पूजा करे। कुत्ते, चाण्डाल और पक्षियोंको सन्ध्या और सबेरे पृथ्वीपर अन्न देवे, इसहीका नाम वैश्वदेव विहित है। जो लोग असूयारहित होके इन गृहस्थधर्म्मोंको प्रतिपालन करते हैं, वे इस लोकमें ऋषियोंसे वर पाके परलोकमें सुरपुरमें निवास किया करते हैं।

भीष्म बोले, प्रतापवान् श्रीकृष्णने पृथ्वीका वचन सुनके वैसा ही आचरण किया था, इसलिये तुम भी इस ही प्रकार अनुष्ठान करो। हे प्रजानाथ! तुम इस गृहस्थधर्म्मका अनुष्ठान करनेसे इस लोकमें यश पाके परलोकमें स्वर्ग पाओगे।

९७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतर्षभ! दीप दान कैसा है? यह किस प्रकार उत्पन्न हुआ और इसका क्या फल है, यह विषय आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे भारत! इस विषयमें प्राचीन लोग प्रजापति मनु और सुवर्णके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे भारत! सुवर्ण नाम कोई तपस्वी थे, वह रूपमें सुवर्णसदृश होनेसे सुवर्ण नामसे विख्यात हुए उन्होंने कुलशील गुणयुक्त स्वशाखोक्त वेदपाठमें पारदर्शी होकर निज गुणोंके सहारे स्ववंशीय अनेक पुरुषोंको अतिक्रम किया था। किसी समय उस ब्राह्मणने प्रजापति मनुको देखा और देखते ही उनके समीप उपस्थित हुआ; उस समय उन दोनोंने परस्परमें कुशल प्रश्न किया। अनन्तर वे दोनों सत्यसंकल्प सुवर्ण शैल सुमेरुके बीच एक रमणीय शिलापर बैठे। उस स्थानमें वे दोनों वार्त्तालाप करते हुए महानुभाव ब्रह्मर्षियों देवताओं और दैत्योंकी अनेक प्रकारकी पुरातन कथा जान सके। सुवर्णने स्वायम्भुव मनुसे कहा, हे प्रजानाथ! आपको सब जीवोंके हितके निमित्त मेरे प्रश्नका उत्तर देना योग्य है। मनुष्य लोग जो फूलोंसे

देवताओंकी पूजा करते हैं, यह किस प्रकार उत्पन्न हुआ और इसका फल क्या है? आप मुझसे यह विषय कहिये।

मनु बोले, इस विषयमें प्राचीन लोग महानुभाव शुक्र और बलिके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। बिरोचनपुत्र बलि जब त्रिभुवन शासन कर रहे थे, उस समय उनके निकट भृगुकुलधुरन्धर शुक्राचार्य्य आये। बहुतसी दक्षिणा देनेवाले, दानशील असुरराज बलि विधिपूर्व्वक अर्घ आदिसे भार्गवकी पूजा करके आसनपर बैठे। तब फूल, दीप और धूप दान करनेसे क्या फल होता है, तुमने इस विषयमें जैसा प्रश्न किया है, वैसा ही वहांपर प्रश्न हुआ था। अनन्तर दैत्येन्द्रने शुक्राचार्य्यसे उत्तम प्रश्न किया।

बलि बोले, हे ब्रह्मवित् द्विजश्रेष्ठ! फूल, धूप और दीप दान करनेसे क्या फल होता है? आप इसे कह सकते हैं।

शुक्र बोले, पहले तप उत्पन्न हुआ था, फिर धर्म्म प्रकट हुआ, इसके अनन्तर लता, ओषधी, अमृत, बिष और तुच्छ जाति विविध लता तथा अनेक प्रकारकी सामलता पृथ्वीपर उत्पन्न हुई। अमृत मनको प्रसन्न करनेवाला तथा सदा सन्तोष, प्रदान करता है और प्रचण्ड बिषकी गन्ध मनको सब प्रकारसे ग्लानियुक्त करती है। अमृतको मङ्गल और बिषको महाअमङ्गल जानना चाहिये। ओषधियां अमृत और अग्निसे उत्पन्न हुआ तेज ही बिष है। सब पुष्प मनको प्रसन्न तथा शोभायुक्त करते हैं, इस ही लिये पुण्यकर्म्म करनेवाले मनुष्य पुष्प फलोंको सुमनस कहा करते हैं। जो मनुष्य पवित्र होके देवताओंको सुमनस दान करता है, देववृन्द उसपर प्रसन्न होके उसे पुष्टि प्रदान करते हैं। हे प्रभु दैत्यराज! जिन जिन देवताओंके उद्देश्यसे फल दिये जाते हैं, वे दाताके मङ्गलके निमित्त उनपर प्रसन्न होते हैं। बहुवीर्य्य और अनेक रूपवाली पृथक् पृथक् ओषधियोंको उग्र, मनोहर और तेजस्वी जानो। वृक्षोंमें जो यज्ञीय तथा अयज्ञीय हैं, वह मुझसे सुनो और जो सब माला देवताओं तथा जो असुरोंके लिये हितकर हैं, वह भी सुनो। जो फूल राक्षस, सर्प और यक्षोंको प्रिय हैं, तथा जो मनुष्य पितरोंके लिये मनोहर हैं, उसे विस्तारपूर्व्वक सुनो। जो फल जङ्गली और ग्रामीण हैं, तथा जो भूमि खोदके लगाये गये हैं; जो फूल पर्व्वतीय, कांटेरहित और कांटेयुक्त हैं; जो सुगन्धि, सुन्दरताई और रसमय हैं, उनका विषय सुनो। फूलकी दो प्रकारकी गन्ध होती है, एक इष्ट दूसरी अनिष्ट, जिनकी सुगन्धि इष्ट हैं, उन्हें ही देवताओंके फूल निश्चय करो। कांटेरहित वृक्षोंके फूल प्रायः सफेद होते हैं, उन वृक्षोंके फूल सदा देवताओंके अभिलषित हैं। कमल प्रभृति जो सब जलज पुष्प उत्पन्न होते हैं, बुद्धिमान् मनुष्य उन फूलोंको यक्ष सर्प और गन्धर्व्वोंको प्रदान करें। कटु और कांटेयुक्त ओषधियां तथा लाल पुष्प शत्रुओंके अभिचारके निमित्त अथर्व्व वेदमें वर्णित हुए हैं। तीक्ष्णवीर्य्य, कांटे युक्त, दुरालम्भ, लाल काले फूल भूतोंको उपहार देवे। मन और हृदयके आनन्दको बढ़ानेवाले, मलनेमें मधुर, मनोहर फूल मनुष्योंके लिये बिहित हैं। बिवाहादि पुष्टियुक्त कार्य्यों और सुरतादि बिजन कार्य्योंमें श्मशान और देवस्थानमें उत्पन्न हुए पुष्पोंको न लाना चाहिये। हे सौम्य! पर्व्वतीय वृक्षोंके फूलोंको धोके स्मृतिके अनुसार यथायोग्य देवताओंको प्रदान करे। देवगण फूलकी सुगन्धिसे प्रसन्न होते हैं, यक्ष और राक्षस फूलको देखनेसे सन्तुष्ट होते हैं। सर्पगण पूरी रीतिसे फूलोंको उपभोग करनेसे प्रसन्न होते हैं और मनुष्य लोग सूंघने देखने और उपभोग इन तीन प्रकारकी उपायसे सन्तुष्ट हुआ करते हैं। सब फूल देवताओंको निवेदन करते ही प्रसन्न

करती हैं; वे सङ्कल्पसिद्ध हैं, इसलिये प्रसन्न होके मनुष्योंका मनोरथ इप्सितके सहारे वर्द्धित करती हैं। देववृन्द प्रसन्न होनेपर मनुष्योंको सदा प्रीतियुक्त करते हैं, वे सम्मानित होनेपर मनुष्योंको सम्मानयुक्त करते और अवज्ञात तथा अवधूत होनेपर अधम मनुष्योंको निश्चय ही जला देते हैं। अब धूपदान विधिका फल मुझसे सुनो। धूप अनेक प्रकारका है, उसमें उत्तम और निकृष्ट दो भेद हैं। गुग्गुल प्रभृति निर्य्यासमे बने हुए एक प्रकारके धूपको निर्य्यास कहते हैं। काठ और अग्निके संयोगसे निकाले हुए धूपका नाम सारि है और अष्ट-गन्ध द्रव्योंसे बने हुए धूपको कृत्रिम कहते हैं, इस प्रभेदके अनुसार धूप तीन प्रकारका है। गन्ध इष्ट और अनिष्ट भेदसे दो प्रकार है, उसे मेरे समीप विस्तारपूर्व्वक सुनो। सल्लकीरहित निर्यास धूप देवताओंको दिया जाता है, सब निर्यासोंके बीच गुग्गुल ही श्रेष्ठ कहके निश्चित हुआ है। यक्ष, राक्षस और भोगियोंके भोगके लिये सारवान वस्तुओंके बीच अगरु ही श्रेष्ठ है। दैत्योंको सल्लकी तथा उसके सदृश दूसरे निर्यास ही अभिलषित हैं। हे राजन्! सर्ज्ज-रस आदि गन्ध और देवदारुकी सुगन्ध फूली हुई मल्लिका प्रभृति फूलोंकी मकरन्द गन्धके सङ्ग मिलनेपर जो धूप बनती है, वह मनुष्योंके लिये विहित है और ऐसा वर्णित है, कि वह देव, दानव तथा भूतोंको सदा प्रीतियुक्त करती है। इसके अतिरिक्त जो विशाह मात्रके उपयुक्त है, वह मनुष्योंके लिये विहित है। दीपक दान करनेसे जो उत्तम फल मिलता है और जिस समयमें जिसके द्वारा जिस प्रकार जैसा दीपक दान करना चाहिये; वह भी कहता हूं। यह भी कहा जाता है, कि ऊर्द्धगामी दीपादि तेज तथा कान्ति प्रदान करते हैं; दीपदानसे मनुष्योंके तेजकी वृद्धि होती है। अन्धकार और दक्षिणायण अन्धन्तम नाम नरक स्वरूप है; इसलिये उत्तरायणकी रात्रिमें दीपदान करना उत्तम है, दीप ज्योति उर्द्धग और अन्धकारका नाशक है, इस ही लिये वह ऊर्द्धगति प्रदान करती है, इस विषयमें ऐसा ही निश्चय है। दीपदानसे ही देववृन्द तेजस्वी, भावयुक्त और प्रकाशमान हुए हैं और दीपदान करनेसे राक्षसोंका तामस भाव प्राप्त हुआ है; इसलिये दीपदान करना उचित है। मनुष्य दीपदान करनेसे नेत्रवान और प्रभायुक्त होते हैं, इसलिये दीपदान करके हिंसा न करे, न हरे और नष्ट न करे। जो पुरुष दीपक हरता है, वह अन्धा होता है अन्धकारमें चलता है, तथा उसकी उत्तम प्रभा नहीं रहती और दीपक दान करनेवाला स्वर्ग-लोकमें दीपमालाकी भांति विराजता है। घृतसे दीप दान करना प्रथम कल्प है, तिल, सरसों और ओषधियोंके तेलसे दान करना द्वितीय कल्प है। जो मनुष्य पुष्टिकी कामना करे, उसे उचित है, कि चर्व्वी, मेद, हड्डी प्रभृति प्राणियोंके अवयवोंसे निकले हुए तेल और निर्यासके द्वारा दीप दान न करे। जो अपने ऐश्वर्य्यकी अभिलाष करे उसे पहाड़के झरने, वन, चैत्यस्थान और चौहारोंमें सदा दीप दान करना चाहिये, दीप दाता सदा कुलप्रदीप और पवित्रचित्त होके प्रकाशित होता और उसे ज्योतिर्गणोंके सदृश लोक प्राप्त होते हैं। देव, यक्ष, सर्प, मनुष्य, भूत और राक्षसोंके बलिकर्म्मके विषयमें कर्म्मफल उदय होनेसे जो उत्कर्षता प्राप्त होती है, उसे कहता हूं।

ब्राह्मण, देवता, अतिथि और बालकवृन्द जिसके गृहमें अगाड़ी भोजन नहीं करते, उन निर्व्विशङ्कचित्त अमांगलिक लोगोंको राक्षस जानना चाहिये; इसलिये देवताओंको पूजित अन्नका अग्रभाग प्रदान करना योग्य है तथा सावधान और अतन्द्रित होके माथे चढ़ाके दी हुई बलिको देववृन्द सदा ग्रहण करते हैं, आगन्तुक अतिथि और यक्ष, राक्षस, सर्प उसके

गृहमें आनेसे प्रज्वलित होते हैं। देवता और पितर लोग इस लोकमें दी हुई हव्यकव्य बलिके द्वारा जीवन धारण करते हैं, वे प्रसन्न होके दाताको आयु, यश और धनके सहारे सन्तुष्ट किया करते हैं। दही, दूधयुक्त, पवित्र, सुगन्धित और उत्तम बलि फूलके सहित देवताओंको देवे। यक्ष राक्षसोंको रुधिर और मांसयुक्त बलि देनी योग्य है; उस सारी बलिको सुरा दूब और धरक विभूषित करे। पद्मोत्पल-मिश्रित बलि सर्पोंको प्रिय है। गुड़युक्त तिल भूतोंको उपहार देवे। अग्रदाता अगाड़ी भोजन करनेवाला, बल और वर्णयुक्त होता है इसलिये देवताओंको पूजित अन्नका अग्रभाग प्रदान करे। गृह और गृहके देवता रात दिन प्रज्वलित होते हैं, इसलिये ऐश्वर्य्यकी कामना करनेवाला मनुष्य उन्हें प्रसूताग्र प्रदान करके उनकी पूजा करे। भृगुनन्दन शुक्राचार्य्यने असुरेन्द्र बलिसे यह सब कथा कही थी। मनुने उसी सुवर्णसे कहा, सुवर्णने नारदसे और नारदने मेरे समीप यह सब फलका विषय कहा था। हे महातेजस्वी पुत्र! तुम भी यह सब मालूम करके ऐसा ही आचरण करो।

९८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! मैंने फूल धूप प्रभृति दान करनेवालोंका फल और बलि विधानका विषय सुना, यह विषय आपको फिर कहना योग्य है, धूपदान और दीपदानका क्या फल है? किस लिये गृहस्थ लोग बलि दिया करते हैं? इसे विस्तारपूर्वक वर्णन करिये।

भीष्म बोले, प्राचीन लोग इस विषयमें अगस्त्य, भृगु और नहुषके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे महाराज! महातपा राजर्षि नहुषने इस लोकके सुकृत कर्म्मोंसे देवराज्य पाया था। हे महाराज! राजा नहुष दिव्य और मानुष विविध क्रिया करने लगे। हे महाराज! उस महात्माको मानुषी क्रिया तथा स्वर्गीय क्रिया उस स्वर्गके बीच निभने लगीं। अग्निकार्य्यमें समिध, कुश, पुष्प और दूबके सहित धूपदान तथा दीप दान प्रभृति सब कार्य्य उस महानुभाव राजाके स्थानमें होने लगे, वह सुरपुरमें भी जप यज्ञ और मनोयज्ञ करने लगा। हे अरिन्दम! वह देवताओंका राजा होनेपर भी उनकी विधिपूर्व्वक पूजा करता था। अनन्तर "मैं इन्द्र हूं" ऐसा जानके वह अहङ्कारयुक्त हुआ। हे महाराज! उसके अभिमानयुक्त होनेपर उसकी सब क्रिया नष्ट हुई। उसने वर पाके मतवाला होकर ऋषियोंको सवारी ढोनेमें प्रवृत्त किया और क्रियारहित होके अत्यन्त निर्ब्बल होने लगा। उसके अहङ्कारयुक्त होके मुख्य तपस्वी ऋषियोंको वाहन बनाते रहते बहुत समय व्यतीत हुआ। हे भारत! अनन्तर वह पर्य्यायक्रमसे सब ऋषियोंको सवारी ढोनेके लिये नियुक्त करनेमें उद्यत हुआ, कालक्रमसे अगस्त्य मुनिका समय उपस्थित हुआ ब्रह्मवादियोंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी भृगु उस समय अगस्त्यके आश्रममें जाके यह वचन बोले, हे महामुनि! हम इस नीच बुद्धि देवेन्द्र नहुषके ऐसे असत्कारको किस प्रकार क्षमा करेंगे?

अगस्त्य बोले, हे मुनिवर! वरदाता प्रजापतिने जिसे वर दिया है, मैं उसे किस प्रकार शाप देनेमें समर्थ होऊंगा? आपसे भी यह छिपा नहीं है। जब वह स्वर्गमें जाने लगा, तब प्रजापतिके समीप यह वर मांगा, कि 'मैं जिसे देखूं' वह मेरे वशमें हो जाय, इस ही निमित्त वह निःसन्देह मेरे अथवा तुम्हारे तथा अन्य किसी मुख्य ऋषिके द्वारा भस्म तथा स्वर्गसे च्युत नहीं हुआ। महानुभाव पितामहने पहले समयमें इसे पीनेके लिये अमृत दिया था इस ही निमित्त हम उसे नष्ट करनेमें असमर्थ

हुए हैं। प्रजापतिने इसी प्रजापुञ्जसे दुःखकार वर दिया है, इसीसे यह पुरुषाधम ब्राह्मणोंके विषयमें अधर्म्मयुक्त व्यवहार करता है। हे वक्तृवर! उस विषयमें हम लोगोंके लिये जो समय उपस्थित हुआ है, आप उसे ही कहिये, आप जैसा कहेंगे, मैं निःसन्देह वैसाही करूंगा।

भृगु बोले, दैवबशसे मोहित बलवाले नहुषके प्रतिकार करनेके लिये मैं पितामहकी आज्ञानुसार आपके समीप आया हूं। वह नीचबुद्धि देवराज आज आपको रथमें नियुक्त करेगा, मैं आज ही इस अनिन्द्रको निज तेजके प्रभावसे गर्व्वित करूंगा। मैं आज ही आपके सम्मुखमें उस अत्यन्त नीचबुद्धि पापीको इन्द्रपदसे पृथक् करके शतक्रतुको निजपदपर स्थापित करूंगा। आज ही वह मन्दबुद्धि कुदेवराज दैवबशसे अपने नाशके लिये पांवसे तुम्हें प्रधर्षित करेगा। मैं धर्षणनिबन्धनसे अत्यन्त क्रोधित होके उस विधर्म्मी द्विजद्रोही पापीको क्रोधबशसे "सर्प होजाओ" कहके शाप दूंगा। हे महामुनि! अनन्तर उस अत्यन्त दुर्बुद्धि राजाको धिक् शब्दसे तेजरहित करके आपके सम्मुखमें ही पृथ्वीपर गिरा दूंगा। हे मुनि! ऐश्वर्य्यबलसे मोहित पापी नहुषको जिस प्रकार करनेके लिये आपकी जैसी रुचि होगी, मैं वैसा ही करूंगा। मैत्रावरुणि अविनाशी अगस्त्य मुनि भृगुका ऐसा वचन सुनके परम प्रसन्न और शोकरहित हुए।

९९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, राजा नहुष किस प्रकार विपद्ग्रस्त हुए? किस प्रकार पृथ्वीपर गिरे? किस लिये इन्द्रत्व पदसे भ्रष्ट हुए? यह विषय आपको वर्णन करना योग्य है।

भीष्म बोले, अगस्त्य और भृगुके इस प्रकार वार्त्तालाप करते रहनेपर महात्मा नहुष राजाके दिव्य और मनुष्य कार्य्य होने लगे। सब सामग्रियोंसे युक्त दीपदान, बलिकर्म्म तथा पृथक् पृथक् रीतिसे दूसरे सब कार्य्य प्रवृत्त थे। देवलोक और नरलोकमें जो सब सदाचार वर्णित हुए हैं, महानुभाव देवराज नहुषके वे सब कार्य्य पूरे हुए। हे राजेन्द्र! यदि साधुसम्मत सदाचार पूर्ण हो, तो गृहस्थ मनुष्य समृद्धियुक्त होता है। धूपदान, दीपदान, नमस्कार, ब्राह्मणकी सिद्धान्नका अग्रभाग प्रदान और गृहमें बलि देनेसे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। बलिकर्म्म विषयमें गृहस्थ पुरुष जिस प्रकार सन्तुष्ट होता है, देवताओंको उसमें उन लोगोंसे एक सौ गुणा अधिक प्रीति हुआ करती है; इसलिये साधु पुरुष आत्मगुणी वह नमस्कारयुक्त धूप और दीप दान किया करते हैं। विद्वान् पुरुष पवित्र जलसे स्नान करके जो कुछ कार्य्य करता है, उससे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। महाभाग पितर, तपस्वी, ऋषि और गृहदेवता विधिपूर्व्वक पूजित होनेपर प्रसन्न होते हैं। राजा नहुषने इस ही निमित्त ऐसी बुद्धि अवलम्बन करके महत् सुरेन्द्रत्व पाके भी अद्भुत रीतिसे पूर्व्वोक्त कार्य्योंको किया था। कुछ समयके अनन्तर भाग्यक्षयका समय उपस्थित होनेपर पूर्व्वोक्त कार्य्योंकी अवज्ञा करके वह नीचे कहे हुए कार्य्य करनेमें प्रवृत्त हुए थे। अनन्तर वह देवेन्द्र होके बलिकर्म्मसे रहित हुए और धूपदीप दान तथा पितरोंका तर्पण विधिपूर्व्वक करनेमें विरक्त रहे; अन्तमें उनके यज्ञ स्थानमें राक्षस लोग विचरने लगे। अनन्तर उस महाबली राजाने गर्व्वित होकर सरस्वतीके तटसे अगस्त्य महर्षिको सवारी ले चलनेके लिये शीघ्र ही बुलाया। तब महातेजस्वी भृगु अगस्त्यसे बोले, मैं जबतक तुम्हारी जटाके बीच प्रविष्ट करूं, तबतक तुम अपने नेत्र मूंद रक्खो। अनन्तर अगस्त्यके पर्व्वतकी भांति अचलभावसे स्थित होनेपर महातेजस्वी भृगुने राजा नहुषको

स्वर्गसे च्युत करनेके लिये उनके जटाजूटमें प्रवेश किया। हे नरनाथ! अनन्तर देवराजने सवारी ले चलनेके लिये अगस्त्य मुनिको पाया, तब अगस्त्यने सुरपतिसे कहा, हे सुरराज! मुझे जल्दी सवारीमें नियुक्त करो, मैं तुम्हें किस स्थानपर ले चलूं? हे देवराज! आप जहां कहो, वहां ही मैं आपको ले चलूंगा; नहुषने अगस्त्यका वचन सुनके उन्हें सवारीमें नियुक्त किया; भृगु उनके जटाजूटमें रहके अत्यन्त हर्षित हुए। वह महानुभाव नहुषके वर पानेका प्रभाव जानते थे, इसलिये उस समय उनके नेत्रके सामने नहीं हुए। नहुषने जब अगस्त्यको सवारीमें नियुक्त किया, तब भी वह उनपर क्रुद्ध नहीं हुए।

हे भारत! राजा नहुषने उन्हें कोड़ेसे मारा, उसपर भी वह धर्मात्मा क्रुद्ध न हुए, अनन्तर देवराजने क्रुद्ध होके उस समय अगस्त्यके सिर पर बाईं लात मारी। अगस्त्यके सिरपर लात मारनेसे उनके जटाके भीतर भृगुने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उस पापबुद्धि नहुषको शाप दिया। रे नीचबुद्धिवाले! तूने क्रोधके वशमें होकर इस महामुनिके सिरपर लात मारी है, इसलिये शीघ्र ही सर्प होकर पृथ्वीमें जाओ। हे भरत- र्षभ! उस समय नहुष अगोचर भृगुके द्वारा इस प्रकार शापयुक्त होके पतित हुए। हे महाराज! यदि नहुष उस समय भृगुको देख लेते तो वह निज तेजसे उन्हें भ्रष्ट न कर सकते। हे महाराज! राजा नहुष पृथ्वीमें गिरके भी पूर्व्वोक्त धूप दीप प्रदान करने तथा तप-नियमके सहारे स्मृतिशक्तिसे युक्त थे, वह शापके अन्त होनेके लिये भृगुको प्रसन्न करने लगे। हे महाराज! अनन्तर अगस्त्यने कृपायुक्त होके शापान्तके लिये भृगुको प्रसन्न किया; उन्होंने कृपालु होके शापान्तका नियम कह दिया।

भृगु बोले, युधिष्ठिर नाम एक वंशधर राजा होगा, वही तुम्हें शापसे मुक्त करेगा; इतना कहके भृगु अन्तर्द्धान हुए। महातेजस्वी अगस्त्य भी शतक्रतुका कार्य्य करके द्विजातियोंसे पूजित होके अपने आश्रमपर गये। हे महाराज! इस ही निमित्त नहुषका तुमने उद्धार किया है। हे प्रजानाथ! नहुष तुम्हारे द्वारा शापसे छूटके तुम्हारे सम्मुखमें ही ब्रह्मलोकमें गये हैं। उस समय भृगु नहुषको पृथ्वीपर गिराके ब्रह्माके स्थानमें गये और उन्हें सब वृत्तान्त सुनाया। अनन्तर ब्रह्मा देवराजको बुलाके देवताओंसे बोले, हे देवगण! मेरे वरदानसे नहुषने देव- राज्य पाया था; वह क्रुद्ध अगस्त्यके द्वारा भ्रष्ट होके पृथ्वीपर गया है। हे देवगण! राजाके बिना किसी स्थानमें कोई वास नहीं कर सकता; इसलिये पाकशासनको तुम लोग फिर देवराज्यपर अभिषिक्त करो। हे नरनाथ पार्थ! देवताओंने ब्रह्माका वचन सुनके अत्यन्त हर्षित होकर 'एवमस्तु' कहके उनकी बात स्वीकार की। हे नृपवर! इन्द्र भगवान् ब्रह्माके द्वारा देवराज्यपर अभिषिक्त होके पहलेकी भांति बिराजमान हुए। नहुषके विषयमें व्यतिक्रम होनेसे पहले ऐसी घटना हुई थी, उन्हें पूर्व्वोक्त कर्म्मोंके सहारे पूरी रीतिसे सिद्धि प्राप्त हुई; इसलिये गृहमेधी पुरुषोंको सन्ध्याके समय दीप- दान करना उचित है। दीपदान करनेवाला मनुष्य परलोकमें जाके दिव्यनेत्र पाता है। जब- तक अच्छिनिमिष प्रकाशमान रहते हैं, उतने वर्ष पर्य्यन्त दीपदान करनेवाले पूर्णचन्द्रके समान स्वर्गमें बिराजते हैं और दीपदान करने- वाले मनुष्य रूपवान तथा बलवान होते हैं।

१०० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ! जो नीचकर्म्म करनेवाले मन्दबुद्धि मूढ़ मनुष्य ब्राह्मणका धन हरते हैं, वे किस लोकमें जाते हैं?

भीष्म बोले, हे भारत! प्राचीन लोग इस विषयमें किसी क्षत्रिय और चाण्डालके सम्वाद-

युक्त पुराना इतिहास कहा करते हैं। ऋषि बोला, रे चाण्डाल! तू बूढ़ा होनेपर भी बालककी भांति क्यों चेष्टा करता है? तू कुत्ते और गधोंकी धूलिसे अवगुण्ठित होकर किसलिये गौवोंको व्याकुल करता है? साधु लोग चाण्डालके कार्य्य को अत्यन्त निन्दित कहते हैं। तू किसलिये चोरबुन्दसे युक्त गौवोंको जलकुण्डके बीच कर रहा है?

चाण्डाल बोला, हे राजन्! पहले समयमें किसी ब्राह्मणकी गौवें हरी गई थीं, उनके स्तनसे गिरे हुए दूधने सोमरसको नष्ट किया था। ब्राह्मणोंने उस सोमरसको पिया और यज्ञ करनेवाले राजाने भी उन्हीं गौवोंके दूधसेयुक्त सोमपान करनेपर यज्ञ करानेवालोंके सहित उस ब्रह्मस्वको भोगनेसे नरकमें प्रवेश किया था। जिन ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा दूसरे मनुष्योंने उस गऊ हरनेवालेके गृहमें घी, दही वा दूध पीया था, वे सब कोई नरकमें डूबे। गौवें साधु व्यवहारसे पशुओंकी प्रतीक्षा करती, स्वामी और बछड़ोंके वियोगसे कांप रही थीं, वैसी दशामें जिसने उन्हें हरण किया था, उनके पुत्र पौत्र और दम्पती अल्पायु हुए। हे महाराज! मैं ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर उस गऊ हरनेवाले मनुष्यके गृहमें निवास करता था। हे नरनाथ! उन हरी हुई गौवोंको धूलिसे मेरा भिक्षान्न विनष्ट हुआ था, हे नरनाथ! मैंने वही गोरजसे युक्त अन्न खाया था, इसीसे मैं चाण्डाल हुआ और वह ब्रह्मस्व हरनेवाला राजा भी अप्रतिष्ठित हुआ इसलिये कभी किसी ब्राह्मणका धन हरना उचित नहीं है। ब्रह्मस्वके रजसे परिपूरित भिक्षान्न खाके मैं जैसा हुआ हूं, उसे देखिये। विपश्चित पुरुष कदापि सोम-विक्रय न करें, इस लोकमें सोमविक्रय करनेसे मनोषिवृन्द विशेष रीतिसे निन्दा किया करते हैं। हे तात! जो लोग सोमरस बेचते हैं, तथा जो मनुष्य उसे मोल लेते हैं, वे सब कोई यमके समीप पहुंचके रौरव नरकमें पड़ते हैं। यह मत समझो, कि श्रोत्रिय ब्राह्मण अविधिपूर्व्वक ब्रह्मस्व संयुक्त सोमरस बेचके वार्द्धुषी अर्थात् व्याजजीवी होके शीघ्र नष्ट नहीं होता; वह तीस नरकमें भ्रमता हुआ विष्ठा भक्षण करता है। नीचसेवा, अभिमान और मित्रकी स्त्रीके साथ अत्याचार, इन तीनोंको ही तुलादण्डपर रखके तुल्य जाने; अभिमानी मनुष्य धर्म्मकी अतिक्रम करनेसे अधिक पापी होता है अर्थात् अभिमानी मनुष्य नीचसेवी और मित्रकी स्त्री हरनेवालेसे अधिक पापी है। देखिये पापी कुत्ता विवर्ण और कृश होता है, कुत्ते सब प्राणियोंके विषयमें क्रुद्ध होके अभिमानसे ही ऐसी गतिको प्राप्त हुए हैं। हे विभु! मैं दूसरे जन्ममें धनयुक्त बड़े कुलमें उत्पन्न होके ज्ञानविज्ञानसे युक्त हुआ था, उस समय इन दोषोंके विषयको जानके भी मैं अभिमानपूर्व्वक क्रुद्ध होके लोगोंका पृष्ठमांस भक्षण करता था। मैं उस ही चरित्र तथा वैसे भोजनसे ऐसी अवस्थामें पड़ा हूं; इसलिये समयका विपर्य्यय अवलोकन करो। मुझे तीक्ष्णतुण्डवाले भौरोंके झुण्डसे पीड़ित आदीप्त वैतान्तसदृश अत्यन्त संरब्ध होके दौड़ते हुए तथा रजोगुणसे युक्त देखिये। गृहमेधी मनुष्य स्वाध्यायपाठ तथा अनेक प्रकारके दानसे महत् पाप हरण करते हैं; पण्डित लोग जैसा कहा करते हैं, उसश्लोक अनुसार आश्रमस्थ पापी विप्रका वेद उद्धार करता है। हे क्षत्रियश्रेष्ठ भूपाल! मैं पापयोनिमें पड़ा हूं, निश्चय नहीं कर सकता, कि किस प्रकार मुक्त हूंगा। हे महाराज! मैं पूर्व्वजन्मके किये हुए किसी शुभकर्म्मसे जातिस्मर हुआ हूं, उस ही निमित्त मोक्षकी अभिलाष किया करता हूं। हे सत्तम! आप मुझ शरणागत संशय जिज्ञासु पुरुषके ऊपर कृपा करके बताइये, मैं चाण्डालसे किस प्रकार मुक्त हूंगा।

क्षत्रिय बोला, रे चाण्डाल ! तू जिसके सहारे मोक्ष पावेगा, उस विषयमें प्रतिज्ञा कर, तू ब्राह्मणके निमित्त प्राणत्यागनेसे अभिलषित गति पावेगा। ब्राह्मणके निमित्त राक्षसोंको शरीर दान करके युद्धरूपी अग्निमें प्राण समर्पण करनेसे तुझे मोक्ष प्राप्त होगी, अन्यथाचरण करनेसे मोक्ष न होगी।

भीष्म बोले, हे शत्रुतापन ! उस समय चाण्डालने उस क्षत्रियका ऐसा वचन सुनके ब्राह्मणस्वके निमित्त युद्धमें मरके अभिलषित गति पाई थी। हे भरतश्रेष्ठ महाबाहो वत्स ! यदि तुम शाश्वती गतिकी इच्छा करते हो, तो सदा ब्रह्मस्वकी रक्षा करना।

१०१ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! सुकृतशाली मनुष्य एक लोकमें ही निवास करते हैं, अथवा उस स्थानमें भी वे लोग पृथक् पृथक् लोकोंमें वास किया करते हैं। मेरे समीप आप यह विषय वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे पार्थ ! मनुष्य निज कर्म्मके सहारे अनेक प्रकारके लोकोंमें गमन किया करते हैं, पुण्य करनेवाले पुरुष पुण्यलोकमें जाते हैं और पापी मनुष्य पापलोकोंमें जाते हैं। हे तात ! प्राचीन लोग इस विषयमें इन्द्र और गौतम मुनिके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। गौतम नाम जितेन्द्रिय, मृदुस्वभाव, दम, शील और व्रत करनेवाले किसी ब्राह्मणने वनके बीच मातारहित तथा अत्यन्त दुःखी एक हाथीके बच्चेको देखकर दयायुक्त होके उसे पालके जिला रखा था। हाथीका बच्चा बहुत समयके अनन्तर अत्यन्त बलवान और बड़ा हुआ। पर्व्वतसदृश उस महाहस्तीको देखके इन्द्रने धृतराष्ट्रका रूप धरके उस हाथीको ले लिया। महातपस्वी संशितव्रती गौतम उस हाथीको हरते हुए देखके राजा धृतराष्ट्रसे बोले, हे अकृतज्ञ धृतराष्ट्र ! अत्यन्त कष्टसे पाले हुए मेरे इस पुत्रतुल्य हाथीको मत हरो। हे महाराज ! साधुलोग सात पग वार्त्तालापसे ही मित्रता कहा करते हैं, इसलिये तुम्हें मित्रद्रोह स्पर्श न करे। यह हाथी यूथसे बिछुड़ कर मेरे आश्रममें निवास करके मुझे काष्ठ और जल ला देता है, यह आचार्य्यकुलमें अत्यन्त विनीत, गुरुके कार्य्यमें रत, शिष्ठ, धार्म्मिक, कृतज्ञ और सदा मुझे प्रिय है। हे महाराज ! इसलिये मेरे इस प्रकार चिल्लाते रहनेपर तुम्हें हाथी हरना उचित नहीं है।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि ! मैं आपको एक हजार गऊ, एक सौ दासी, पांच सौ मुहर तथा और भी अनेक प्रकारका धन देता हूं, आप ब्राह्मण हैं, आपको हाथी लेनेसे क्या प्रयोजन है ?

गौतम बोले, हे नरनाथ महाराज ! गऊ, दासी और मुहरोंके सहित अनेक प्रकारके रत्न और बहुतसा धन तुम्हारे ही रहे, इस लोकमें ब्राह्मणोंको धनसे क्या प्रयोजन है।

धृतराष्ट्र बोले, हे विप्र ! ब्राह्मणोंका हाथीके सहारे कुछ कार्य्य नहीं होता, हाथी क्षत्रियोंके ही चढ़नेके लिये हैं, इसलिये अपने चढ़नेके लिये इस श्रेष्ठ हाथीको लेजानेसे मुझे कुछ अधर्म्म नहीं है। हे गौतम ! इसलिये आप इस कार्य्यसे निवृत्त हो।

गौतम बोले, हे महात्मन् जिस स्थानमें पुण्य कर्म्म करनेवाले प्रेत आनन्दित होते हैं और पापी प्रेत शोक किया करते हैं, उस ही यमके स्थानपर मैं तुमसे यह अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग क्रिया रहित, नास्तिक, श्रद्धवर्ज्जित, पापी और इन्द्रियोंके विषयोंमें फंसे हैं, वे ही यमयातना भोगते हैं, परन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, यमपुरी सब लोगोंको संयमन कारिणी है, जहांपर झूठ नहीं कहा जाता,

केवल सत्य ही बिराजता है, जहां निबल लोग बलवानोंको दुःखभोग कराते हैं, उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो मदमत्त मनुष्य जेठो बहिन और पितामाताके विषयमें अव्रताचरण करते हैं, वैसे लोगोंके लिये यमपुरी बनी है, किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, कुवेरराजमें भोगियोंको प्रविष्ट करानेवाली महाभागा मन्दाकिनी नदी है, जिसकी गन्धर्व्व अप्सरा और यक्षगण सदा सेवा किया करते हैं; उसी स्थानमें मैं निज फल-स्वरूप हाथीको तुमसे लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग सदा अतिथि और ब्राह्मणोंको आश्रय देते हैं तथा आश्रितोंको देकर शेषमें अन्नादि भोजन करते हैं; वेही मन्दाकिनीको विभूषित किया करते हैं, किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, सुमेरुके अग्रभागमें जो उत्तम रीतिसे फूला हुआ किन्नरी गीतसेयुक्त वन विराजमान है और जहांपर सुदर्शन जामुनका विशाल वृक्ष विद्यमान है, उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना फल स्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो ब्राह्मण मृदुस्वभाव, सत्यशील और अनेक शास्त्रोंके जाननेवाले हैं, तथा जो सब प्राणियोंके मनोहर इतिहासके सहित पुराणोंको पढ़ा करते हैं, वा मधुआहु-तिसे ब्राह्मणोंको प्रसन्न करते हैं। हे महर्षि! वैसे ही लोगोंके लिये ऊपर कहे हुए लोक बने हैं, परन्तु मैं वहां न जाऊंगा। इसलिये यदि आपको मेरे योग्य कोई स्थान मालूम हो तो बताइये, मैं वहां जाऊं?

गौतम बोले, सुन्दर फूलोंसेयुक्त किन्नर-राजसेवित, देवर्षि नारद, गन्धर्व्व और अप्सरा-ओंके लिये सदा प्रिय नन्दन नाम एक वन है, वहांपर मैं तुमसे अपना फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो मनुष्य नृत्य-गीत आदि विषयोंमें निपुण, अयाचक और सदा संहतियुक्त होके विचरते हैं यह लोक वैसे ही लोगोंके लिये बना है किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे नरेन्द्र! जहांपर उत्तर कुरुदेशवासी लोग देवताओंके सङ्ग सुख भोगते है। जहां अग्नियोनिज, जलयोनिज और पर्व्वत योनिज प्राणी निवास किया करते हैं, जहांपर इन्द्र अभिलषित विषयोंकी वर्षा करता है; जहां स्त्रियां कामचारिणी होती हैं, जहां नर-नारियोंमें परस्पर ईर्षा नहीं है, उसी स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो लोग सब जीवोंके विषयमें निवृत्तिकाम होके मांस भक्षण नहीं करते और न्यस्तदण्ड होके विचरते हैं, जो लोग स्थावर जङ्गम जीवोंकी हिंसा नहीं करते, जो सब जीवोंका आत्मवत्, आशारहित, निर्म्मल, रागहीन, हानि लाभ, स्तुति और निन्दाको समान जानते हैं, ऐसे ही लोगोंके लिये वह लोक बना है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, उससे श्रेष्ठ, पवित्र, सुगन्धयुक्त रजोगुण तथा शोकवर्ज्जित सनातन लोक महात्मा सोमराजके स्थानमें शोभित हैं, वहां ही मैं तुमसे निज फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो दानशील मनुष्य प्रतिग्रह नहीं करते तथा दूसरेसे धन नहीं लेते, पूज्य पुरुषोंके लिये जिनके निकट कुछ भी अदेय नहीं है, जो सबका ही आतिथ्य किया करते हैं; तथा जो लोग प्रसन्न, क्षमा-शील हैं और लोगोंके समीप अपने दुःखको जल्पना नहीं करते, जीवोंके विषयमें आच्छादन स्वरूप होके सदा सबकी रक्षा किया करते हैं, तथा जो लोग पुण्यशील हैं, उन्हींके लिये यह लोक बना है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे महात्मन्! आदित्य लोकमें उस ही प्रकारके रज और तमोगुणसे रहित

शोकहीन सनातन लोक सुशोभित है, वहां ही मैं तुमसे निज फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो लोग स्वाध्यायशील गुरुसेवामें रत, तपस्वी, उत्तमव्रती, सत्यसन्ध, आचार्य्यके विषयमें अनुकूल वचन कहनेवाले, सदा उद्योगी और गुरुके कार्य्यमें सर्व्वदा स्वयं प्रवृत्त रहते हैं, वैसे ही वाग्यत तथा सत्यमें स्थित महात्माओंके लिये यह लोक विहित हुआ है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे महात्मन्! उसके अतिरिक्त और भी सनातन लोक वसुधाराजके स्थानमें विराजमान हैं, वे लोक पवित्र, सुगन्धयुक्त, रजोगुणसे रहित और शोकहीन हैं; उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो मनुष्य सदा चातुर्म्मास याग किया करते हैं, जो लोग दस सौ यज्ञका फल पाते हैं; जो मनुष्य यथा समयमें स्नान करके श्रद्धापूर्व्वक तीन वर्ष अग्निहोत्रमें होम करते है, जो धर्म्मात्मा पुरुष धर्म्मभार उठानेके लिये उत्तम रीतिसे अपनी रक्षा किया करते हैं, जो लोग शास्त्रोक्त मार्गमें निवास करते हैं, उन्हीं महात्माओंको उक्त लोकमें गति प्राप्त होती है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, इन्द्रलोक रजोगुणसे रहित शोकहीन, दुरत्यय और मनुष्योंको अभिलषित है। हे महाराज! मैं अत्यन्त तेजसे युक्त इन्द्रलोकमें तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो शूर मनुष्य एक सौ वर्ष तक जीवित रहके अप्रमत्त होकर वेद पढ़ते तथा यज्ञ करते हैं, वेही इन्द्रलोकमें जाते हैं, किन्तु मैं वहांपर न जाऊंगा।

गौतम बोले, स्वर्गके ऊपर शोकहीन महत् पुष्कल प्राजापत्य लोक वर्त्तमान है, वह सबको ही अभिलषित है; इसलिये मैं उस ही स्थानमें तुमसे यह हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो राजा राजसूय यज्ञमें अभिषिक्त हुए हैं, जो धर्म्मात्मा प्रजाके रक्षक हैं, तथा जिन्होंने अश्वमेध यज्ञमें अवभृत स्नान किये हैं, उन्हीं लोगोंके निमित्त प्राजापत्य लोक विहित है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, इससे पवित्र, सुगन्धयुक्त, रजोगुणसे रहित शोकहीन सनातन गोलोक शोभित होरहा है, उस दुर्लभ अधर्षणीय गोलोकमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो दानशील मनुष्य प्रतिवर्ष में एक लाख गऊदान करते हैं, तथा जो लोग शक्तिके अनुसार एक हजार गोदान करते अथवा जो लोग इस लोकमें दश पुरुषोंको एक गऊ देते हैं, वा पांच पुरुषोंको एक गऊ दान किया करते हैं, तथा जो ब्रह्मचर्य्य व्रत करते हुए बूढ़े होते हैं, जो लोग सब भांतिसे वेदवाक्यकी रक्षा करते हैं, वे सब तीर्थयात्रा करनेवाले मनस्वी पुरुष गोलोकमें सखीक होके निवास किया करते हैं। प्रभास, मानस तीर्थ, पुष्कर, महत् सरोवर, पवित्र, नैमिष तीर्थ, बाहुदा, करतोया, गङ्गा, गयशिरा, विपाशा, स्थूलबालुका, कृष्णागङ्गा, पञ्चनद, महाह्रद गोमती, कौशिकी, पम्पा, सरस्वती, दृषद्वती और यमुना तीर्थमें जो सब व्रत करनेवाले महानुभाव मनुष्य जाके स्नान करते हैं, वेही गोलोकमें दिव्य शरीर धारण करके दिव्य मालासे विभूषित और पवित्र गन्धसे युक्त होके निवास करते हैं; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, जिस स्थानमें शर्दी और गर्म्मीका कुछ भी भय नहीं है, जहां भूख प्यासकी ग्लानि और सुख दुःख नहीं होता, जहांपर कोई शत्रु, मित्र, बन्धु, द्वेषी वा प्रिय नहीं है; जहांपर जरा मृत्यु और पुण्य-पाप कुछ भी नहीं है, उस रजोगुणसे रहित निर्म्मल प्रज्ञासत्त्वमें स्थित पवित्र स्वयंभूके स्थानमें तुम मुझे हाथी प्रदान करोगे।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग सर्व्वसङ्ग रहित, कृत-

कृत्य, यतव्रती, अध्यात्म योग स्थापन करनेमें नियुक्त रहके स्वर्गमें गये हैं, वेही सतोगुणसे युक्तपुरुष पवित्र ब्रह्मस्थानमें गमन किया करते हैं। हे महामुनि! वहांपर आप मुझे न देखेंगे।

गौतम बोले, जहांपर बृहत् रथान्तर सामवेद गाया जाता है, जहां सफेद सरसिजके द्वारा सब वेदी शोभित हैं, जहांपर लोग घोड़ेके सहारे चन्द्रलोकमें गमन किया करते हैं, वहांपर मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा। मैं यह जानता हूं, कि तुम वृत्रहन्ता इन्द्र सब लोकोंमें विचरते हो। मैंने मनके पराभववश कदापि वचनके सहारे तुम्हारा कुछ अपराध तो नहीं किया है?

इन्द्र बोले, मैं देवराज हूं, हाथीके अपवाद विषयमें प्रजासमूहके मार्गका अनुगमन किया है; इसलिये मैं प्रणत होता हूं; कहिये आपकी क्या आज्ञा है? आप जो कहेंगे मैं वह सब कार्य्य पूर्ण करूंगा।

गौतम बोले, हे सुरेन्द्र! मेरा श्वेतवर्ण दशवर्षीय बालक पुत्रस्वरूप जिस हाथीको तुमने हर लिया है, मेरे अकेले वनमें वास करनेपर जो हाथी द्वितीय हुआ था, आप मुझे वही हाथी दीजिये।

इन्द्र बोले, हे द्विजवर! यह तुम्हारा पुत्र स्वरूप हाथी तुम्हें देखकर आ रहा है, अपने सूंड़से तुम्हारे दोनों चरण सूंघता है। मैं आपको प्रणाम करता हूं, इसलिये मेरे कल्याणके लिये चिन्ता करिये।

गौतम बोले, हे सुरेन्द्र! मैं सदा ही तुम्हारे कल्याणकी चिन्ता करता तथा सर्व्वदा तुम्हारी पूजा किया करता हूं। हे देवराज! आप भी मेरा कल्याण करिये, आपका दिया हुआ हाथी प्रतिग्रह करता हूं।

इन्द्र बोले, जिन सत्यवादी महान् भाव मनीषियोंके हृदयाकाशमें वेद स्थित है, उनके बीच आप ही एक मात्र महान् भाव हैं, तुम्हारे द्वारा सावधान होनेसे इस समय मैं तुमपर प्रसन्न हुआ हूं। हे विप्रवर! आप निज पुत्र कुञ्जरके सहित सदाके लिये शुभ लोक पानेके निमित्त शीघ्र ही चलिये। वज्रधारी इन्द्र पुत्रस्वरूप हाथीके सहित गौतमको सङ्ग लेकर साधुओंके दुरासद सुरलोकमें गये। जो लोग जितेन्द्रिय होके सदा इस कथाको सुनते वा पढ़ते हैं, वे गौतम ब्राह्मणकी भांति ब्रह्मलोकमें गमन किया करते हैं।

१०२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! आपने अनेक प्रकारके दानके विषय शान्ति, सत्य, अहिंसा और निज स्त्रीमें सन्तुष्टि तथा दान करनेसे जो फल होते हैं, उन्हें वर्णन किया; तपबलके अतिरिक्त और दूसरा आपको क्या विदित है? तपस्यासे श्रेष्ठ दूसरा क्या है? उसे आप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर! जबतक तपस्याकी कथा कही जाती है, तबतक लोक विभूत रहते हैं, मेरा यह मत है, कि अनशनसे बढ़के दूसरी तपस्या और कुछ भी नहीं है। प्राचीन लोग इस विषयमें ब्रह्मा और भगीरथके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे भारत! मैंने सुना है, कि भगीरथ सुरलोक और गोलोकको अतिक्रम करके ऋषिलोकमें गये। ब्रह्माने उस भगीरथको देखके यह वचन कहा, हे भगीरथ! तुमने किस प्रकार इस दुरासद लोकमें आगमन किया? हे भगीरथ! देव, गन्धर्व्व और मनुष्यगण बिना तपस्या किये इस स्थानमें आनेमें समर्थ नहीं होते; इसलिये तुम किस प्रकार आये?

भगीरथ बोले, हे विद्वन! मैंने सदा ब्रह्मव्रत अवलम्बन करके सौ हजार निष्क, एक सौ आठ पलके परिमित सुवर्ण दान किया था, उसके फलसे इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक

रात्रिमें दश तथा पांच रात्रिसाध्य दश यज्ञ और ग्यारह रात्रिमें सिद्ध होनेवाले ग्यारह यज्ञ तथा एक सौ ज्योतिष्टोम यज्ञ किया था, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। मैंने जो एक सौ वर्षतक तपस्या करते सदा गङ्गाके तटपर निवास किया था, और उस ही स्थानमें एक हजार अश्वतरी तथा कन्याभवन प्रदान किये थे, उसके फलसे इस स्थानमें नहीं आया हूं। पुष्कर तीर्थमें द्विजातियोंको दश अयुत घोड़े और बीस अयुत गोदान किया था; चन्द्र-माकी भांति सफेद सुवरणके आभूषण धारण करनेवाली साठ हजार उत्तम कन्या दान की थी; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे लोकनाथ! मैंने प्रति गौ सब यज्ञमें एक एक ब्राह्मणको दश दश गऊ दान करते हुए बछड़ेयुक्त दूधवाली सुवरणमय दोहनपात्रसे युक्त दश अर्बुद गऊ दान की है, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। सोमयागमें प्रत्येक ब्राह्मणको उत्तम व्यायी हुई दूध देने-वाली रोहिणी गऊ दान करते हुए सैकड़ों तथा सहस्रों गऊ दान की है। हे ब्रह्मन्! अन्तमें मैंने हर एक ब्राह्मणको एक एक सौ गऊ दान की थी, उसके फलसे यहांपर नहीं आया हूं। दश अयुत सुवर्ण मालायुक्त श्वेत-वर्ण वाह्लिज घोड़े दान किये हैं, उसके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे ब्रह्मन्! एक एक यज्ञमें प्रतिदिन अट्ठारह करोड़ स्वर्ण-मुद्रा दान किया है, उसके फलसे यहां नहीं आया। हे पितामह! हे ब्रह्मन्! मैंने काले हरे रङ्गवाले स्वर्णमालायुक्त सत्तरह करोड़ घोड़े और ईखसदृश दांतयुक्त बड़े शरीरवाले, सोनेकी मालासे विभूषित सत्तरह हजार हाथी दिये हैं। हे देवेश! सोनेके दिव्य आभूषणोंसे अलंकृत सुवरणखचित दश हजार रथ दान किये हैं और वेदमें जो दक्षिणाके अङ्गरूपसे वर्णित हुए हैं, वैसे ही अलंकृत घोड़ोंसे युक्त रथ ब्राह्मणोंको दान दिये हैं, दस बार बाजपेय यज्ञमें पूर्व्वोक्त रथादि दिये गये हैं। यज्ञ और विक्रमके सहारे इन्द्रके सदृश प्रभावयुक्त सोनेकी सुहर गलेमें पहरनेवाले एक हजार राजाओंको दक्षिणामें दान दिया है। हे पितामह! मैं सब राजाओंको जीतके आठ राजसूय यज्ञ किये थे, उस हेतुसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे जगत्पति! मेरी दी हुई दक्षिणासे गङ्गाके सब स्रोत परिपूरित होगये थे, उस कारणसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक एक सौ स्वर्ण-मुद्रा भूषित दो दो हजार घोड़े और एक एक सौ उत्तम गांव मैंने हर एक ब्राह्मणको तीन बार दान किये थे, मैंने शान्ति अवलम्बन करके वाग्यत नियताहारी और तपस्वी होके हिमा-लयमें बहुत दिनोंतक गङ्गाकी उस दुरुसह धाराको धारण किया था, जिसे महादेवने सिरपर रक्खा; हे पितामह! मैं उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। पृथुबुध अर्थात् स्थूल और गोलाकार काष्ठदण्ड बलवान् पुरु-षके द्वारा फेंके जानेपर जितनी दूरमें गिरता है, जिस यज्ञमें उतने ही परिमाणसे वेदी हुआ करती है, उसे शम्याक्षेप यज्ञ कहते हैं। हे देव! मैं उस ही शम्याक्षेप यज्ञ, पुण्डरीक और सद्यस्क नाम अयुत यज्ञ तथा बारह वा तेरह दिनोंमें पूर्ण होनेवाले यज्ञोंसे देवताओंकी पूजा की थी; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। मैं हर एक ब्राह्मणको आठ हजार ककुद्मी सोनेके सींगसे युक्त सफेद वृषभ दान किये हैं और उन्हें सुहरके कण्ठेसे युक्त गऊ भी प्रदान की हैं। सुवरण, रत्न, रत्नोंके पर्व्वत और धनधान्यसे युक्त एक एक हजार गांव दान किये हैं। निरालसी होके बहुतेरे महायज्ञोंमें देवताओंकी पूजा करके ब्राह्मणोंको एक एक सौ उत्तम व्यायी हुई गऊ दान किया है; उसके फलसे भी यहां नहीं आया हूं। हे देव! मैंने ग्यारह दिनमें दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ

किया और दो बार बारह दिनमें अश्वमेध यज्ञ तथा सोलह बार आर्कायण नाम यज्ञ किया है। हे ब्रह्मन्! इनके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक योजन लम्बा अत्यन्त चौड़ा रत्नविभूषित सुवर्णमय वृक्षोंसे युक्त बन दान किया है, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। तीस वर्षतक क्रोधहीन रहके अनभिभवनीय उत्तरायणव्रत किया है, प्रतिदिन ब्राह्मणोंको नव सौ गोदान किया है। हे लोकनाथ सुरेश! मैंने सदा ब्राह्मणोंको बैल और दूध देनेवाली गऊ प्रदान की है; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे ब्रह्मन्! मैं सदा अग्निहोत्र करते हुए तीस वर्षतक निवास किया है। आठ सर्व्वमेध, सात नरमेध, एक हजार अठारह विश्वजित् यज्ञ किया है। हे देवेश! उसके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। सरयू, बाहुदा, गङ्गा और नमिषक्षेत्रमें सौ अयुत गौ दान किया है; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे वरेण्य! इन्द्रके हृदयाकाशमें तपस्याके द्वारा प्रवेश करके शुक्रने जो कुछ प्राप्त किया था, शुक्रके तेजसे जो इस लोकमें प्रकाशित है, मैंने उसे सिद्ध किया है, मेरे द्वारा वह कार्य्य सिद्ध होनेपर ब्राह्मण लोग मुझपर सन्तुष्ट हुए थे और उस ही स्थानमें एक हजार ऋषि इकट्ठे हुए थे। हे प्रभु! वे लोग मुझसे बोले, 'तुम ब्रह्मलोकमें जाओ।' एक हजार ब्राह्मणोंने प्रसन्न होके मुझसे ऐसा ही कहा है, इस ही निमित्त मैं इस स्थानमें आया हूं। इसलिये आप इस विषयकी चर्चा न करिये। हे सुरश्रेष्ठ! विधाताने जिसका विधिपूर्व्वक विधान किया है और मुझसे पूछा है, कि मुझे भी यथारीतिसे कहना योग्य है। मेरा यही मत है, कि उपवाससे बढ़के दूसरी कोई तपस्या श्रेष्ठ नहीं है। हे देव! मैं आपको प्रणाम करता हूं, आप मुझपर प्रसन्न होइये।

भीष्म बोले, जब राजा भगीरथने यह सब कथा कही, तब प्रजापति ब्रह्माने विधि विहित कार्य्यसे उस पूजने योग्य राजाकी पूजा की। इसलिये तुम अनशन व्रत अवलम्बन करके प्रतिदिन ब्राह्मणोंकी पूजा करो, ब्राह्मणोंके बचनसे इस लोकमें सब कामना सिद्ध होती हैं। वस्त्र, अन्न, गऊ और शुभस्थानके सहारे ब्राह्मण लोग देवताओंको सन्तुष्ट करनेवाले हैं, इसलिये लोभरहित होके इस परम गोपनीय विषयका अनुष्ठान करो।

१०३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पुरुष शतायु तथा शतवीर्य्य होके जन्मता है, परन्तु बाल्य अवस्थामें भी मनुष्य किस कारणसे मृत्युके मुखमें पड़ता है? किस प्रकार मनुष्य आयुष्मान हुआ करता है और किसलिये अल्पायु होता है? किस भांति कीर्त्ति प्राप्त होती है और कैसे लक्ष्मी मिलती है? तपस्या ब्रह्मचर्य्य, जप, होम, औषध, कर्म्म, मन और वचन, इन सबके बीच किस कारणसे ऊपर कहे हुए कार्य्य हो सकते हैं? हे पितामह! मेरे समीप आप यही विषय वर्णन करिये।

भीष्म बोले, तुमने मुझसे जो प्रश्न किया है अर्थात् मनुष्य जिस प्रकार अल्पायु तथा दीर्घायु हुआ करता है, जिस भांति कीर्त्तिमान और लक्ष्मीयुक्त होता है तथा जिस प्रकार रहनेसे पुरुषका कल्याण होता है, वह विषय तुमसे कहता हूं। आचारसे ही पुरुषकी आयु बढ़ती है, आचारहीसे लक्ष्मीयुक्त होता है और आचारसे ही इस लोक तथा परलोकमें कीर्त्ति प्राप्त होती है। दुराचारी मनुष्यको इस लोकमें दीर्घायु नहीं मिलती; जिससे जीवोंको भय तथा परिभव प्राप्त होती है, उसे ही महान् दुराचारी कहा जाता है; इस ही लिये यदि पुरुष अपने हितकी अभिलाष करे, तो इस

लोकमें सदाचरण करे, सदाचरण पापयुक्त शरीरका भी कुलक्षण हर लेता है। आचार, लक्षण, धर्म्म और चरित्रसे साधु लोग जाने जाते हैं; साधुओंका चरित्र ही आचारका लक्षण है। सत्कर्म्म करनेवाले धर्म्मचारी पुरुषोंको बिना देखे ही लोक समाजमें सब कोई उनका नाम सुनते हैं, उन्हें प्रिय समझते हैं। जो लोग नास्तिक क्रियारहित पुरुष गुरु और शास्त्रका वाक्य उल्लङ्घन करते हैं, जो अधर्म्मी तथा दुरा-चारी हैं, वेही शतायु होते हैं। जो लोग दुःशील मर्य्यादा तोड़नेवाले, सदा सङ्कीर्णताके सहित मैथुन करते हैं, वे इस लोकमें अल्पायु होके मरनेके अनन्तर नरकमें गमन करते हैं, जो मनुष्य सब लक्षणोंसे रहित होके भी सदा-चारी होता है, जो श्रद्धावान् और असूयारहित है, वह एक सौ वर्षतक जीवित रहता है। जो अक्रोधी, सत्यवादी, जीवोंकी हिंसा न करने-वाला, अनसूय और कपटरहित है, वह एक सौ वर्षतक जीवित रहता है। जो मनुष्य ढेलोंको फोड़ता तिनका तोड़ता, नखवादी, उच्छिष्टभोजी और सदा अस्थिर चित्तवाला होता है, वह इस लोकमें दीर्घायु नहीं पा सकता। ब्राह्म मुहूर्त्तमें सावधान होवे और उस समय धर्म्म अर्थका विचार करे; उठके आचमन करके हाथ जोड़के पूर्व्वसन्ध्याकी उपासना करे। उदयशील सूर्य्यको न देखे और अस्त होते हुए भी दिवाकरको न देखना चाहिये, राहुग्रस्त, जलके बीच और आकाशके मध्यमें गये हुए सूर्य्यको देखना योग्य नहीं है। ऋषि लोग सदा सन्ध्यावन्दन करते हैं, इसीसे उन्हें दीर्घायु प्राप्त हुई है; इसलिये पूर्व्व और पश्चिम सन्ध्याके समय वाग्यत होके रहे। जो ब्राह्मण प्रातः और सायं सन्ध्या नहीं करते, धार्म्मिक राजा उनसे शूद्रोंका कार्य्य करावे सब वर्णोंके बीच कदापि पराई स्त्री गमन करना उचित नहीं है; पुरुषके लिये जैसा परस्त्री गमन आयुका नाशक है, लोकमें वैसा अना-युष्य और कुछ भी नहीं है। स्त्रियोंके शरी-रमें जितने रोम हैं, परस्त्री गामी पुरुष उतने ही सहस्र वर्षतक नरकमें निवास करता है। केश संवारना अञ्जन लगाना, दांत धोना और देवताओंकी पूजा पूर्व्वान्हमें ही करनी योग्य है मल-मूत्र न देखे और कदापि वहां निवास न करे। अत्यन्त भोर, मध्यान्ह और सन्ध्याके समय मल-मूत्र परित्याग न करे, अनचीन्हे पुरुषके सङ्ग न चले, अकेले अथवा चाण्डालके सहित मार्गमें चलना उचित नहीं है। दूसरेका पहरा हुआ वस्त्र और पादुका न पहरे; सदा ब्रह्मचारी होवे पांवसे पांवको आक्रमण न करे, ब्राह्मण, गऊ, राजा, वृद्ध, बोझा ढोनेवाले, गर्भिणी स्त्री और निबल पुरुषको देखके उन्हें जानेके लिये मार्ग देवे। विख्यात बनस्पतियोंकी प्रदक्षिणा करे, चौराहोंकी प्रदक्षिणा करनी उचित है। मध्यान्ह रात्रि, विशेष करके आधी रात, सन्ध्या और भोरके समय चौराहे पर न जावे। अमावस्या पूर्णमासी, दोनों पक्षकी चतुर्दशी और अष्टमीमें सदा ब्रह्मचर्य्य करे। बृथा मांस भक्षण न करे और पृष्ठमांस खानेसे विरत होवे; आक्रोश, परिवाद और चुगल-खोरी न करनी चाहिये। किसीके ऊपर गुस्सा न करे, निठुर बचन न कहे; नीच पुरुषसे श्रेष्ठ द्रव्य लेना अनुचित है। जिस बातसे दूसरा पुरुष घबड़ाय, वैसी पापयुक्त अकल्याण-कारी बात न कहे। जो वाक्यबाण मुखसे बाहर होते हैं, उससे घायल हुए पुरुष रात दिन शोक करते हैं, वे वाक्यरूपी बाण मनुष्योंके मर्म्मस्थलके अतिरिक्त और कहीं नहीं लगते; इसलिये पण्डित पुरुष वैसे वाक्य बाणोंको न चलावे। बाणविद्ध और परशुसे काटा हुआ बन फिर अङ्कुरित होता है, किन्तु जो मर्म्मभेदी बच-नसे घाव होता है, वह फिर पूरित नहीं होता। कर्णि, नालीक और बाण शरीरसे निकल

आते हैं, परन्तु हृदयमें लगे हुए वाक्यबाणको निकालनेमें किसीको सामर्थ नहीं होती। हीन अङ्गवाले अत्यन्त रिक्ताङ्ग, निन्दनीय, विद्या-रूप और धनसे रहित तथा निबल पुरुषकी निन्दा न करे। नास्तिकता, वेद और देवता-ओंकी निन्दा, द्वेष, दम्भ, अभिमान तथा तीक्ष्णता परित्याग करे। दूसरेके ऊपर दण्ड न चलावे, क्रुद्ध होके दूसरेके ऊपर प्रहार न करे, केवल पुत्र और शिष्यको शिक्षाके निमित्त ताड़न करनेमें कोई बाधा नहीं है। ब्राह्म-णोंकी निन्दा और नक्षत्र निर्देश न करे, पक्ष-सम्बन्धीय तिथि न कहे, तो आयु नहीं घटती। मलमूत्र त्यागने, मार्गसे आने, वेदपाठ और भोजनके समय पैर धोवे। देवताओंने ब्राह्म-णोंके लिये तीन विषयोंको पवित्र रूपसे कल्पना किया है, अदृष्ट जल प्रक्षालन तथा जो वचनके द्वारा उत्तम होता है संयाव (घृत-दूधसे बना हुआ पिष्टक कृशर) तुल्य तिलान्न, मांस, पूरी और पायस अपने ही लिये न बनावे, देवताओंके उद्देश्यसे प्रस्तुत करे। सदा अग्निकी परिचर्य्या करे, प्रतिदिन भिक्षा देवे और वाग्यत होके नित्य दतून करे, सूर्य्य उदय होनेपर सोता न रहे, सूर्य्य उदय होनेपर सोनेवाला मनुष्य प्राय-श्चित्त करनेके योग्य होता है। उठके पहले मातापिताको प्रणाम करे, अनन्तर आचार्य्य और दूसरे गुरुजनोंकी वन्दना करे; तो दीर्घायु प्राप्त होती है। दतून करके उसे त्याग देवे; वह सदा ही त्यागने योग्य है। उत्तर ओर मुख करके समाहित होकर शौचकार्य्य करे, बिना दतून किये देवपूजा न करे और बिना देवपूजा किये कदापि गुरु, वृद्ध, धार्म्मिक तथा पण्डि-तोंके अतिरिक्त दूसरे किसी स्थानमें न जावे। बुद्धिमान मनुष्य मलिन आरसी न देखे, अन-चीन्ही स्त्रीके निकट कदापि न जावे और गर्भिणी स्त्री गमन करना अनुचित है। उत्तर और पश्चिम ओर सिर करके न सोवे, बुद्धिमान मनुष्य पूर्व्व और दक्षिण ओर सिर करके शयन करे। टूटी फटी शय्यामें सोना अनुचित है अत्यन्त अन्धेरे स्थान, नारीयुक्त शयनगृहमें और उलटा होके कदापि न सोवे, कार्य्य वा समय वशसे कदाचित नास्तिकके निकट न जावे; पांवसे आसन आकर्षण करके मनुष्य उसपर न बैठे। वस्त्रहीन होके नदी प्रभृति अथवा रात्रिके समयमें कदापि स्नान न करे, बुद्धिमान मनुष्य स्नान करनेके अनन्तर शरीर मार्जन न करे; बिना स्नानके अनुलेपन विहित नहीं है, स्नानके अनन्तर वस्त्र धोना अनुचित है। मनुष्य सदा भीगे वस्त्रको न पहरे, गलेसे स्वयं माला निकालके फेंकना योग्य नहीं है, बाहिरी हिस्सेमें माला न धारण करे। रजस्वला स्त्रीके सङ्ग कदापि वार्त्तालाप न करे, क्षेत्र और गांवके समीप मलत्याग न करे, जलमें मल-मूत्र का त्यागना वर्ज्जित है। अन्न भोजनकी इच्छा करनेवाला मनुष्य मुखमें तीनबार जल स्पर्श करे; अन्न भोजन करके उसी भांति तीनबारके अनन्तर फिर दो बार मुह धोवे। प्रतिदिन पूर्व्व ओर मुंह करके चुप होकर अन्नकी निन्दा न करके भोजन करे। भोजन करके किञ्चित शेषान्न छोड़ दे और भोजनके अनन्तर मनहीमन अग्नि स्पर्श करे। परमायु बढ़नेकी इच्छासे पूर्व्व ओर मुंह करके भोजन करे; यशकी कामनासे दक्षिण ओर मुंह करके भोजन करे, धन प्राप्तिकी इच्छासे पश्चिम ओर मुंह करके भोजन करना चाहिये और कल्या-णकी इच्छावाले मनुष्य उत्तर ओर मुंह करके भोजन किया करते हैं। अग्नि स्पर्श करके जलसे नासिका प्रभृति जल छिद्र शरीर, नाभि और करतल धोवे तुष, केश, राख और कपा-लिकाके ऊपर कदापि न बैठे, दूसरेके नहानेका जल दूरसे ही परित्याग करे, शान्ति और होम करे, तथा गायत्री मन्त्र जपे, बैठके भोजन करे, चलते कदापि न खावे। खड़ा होकर

पेशाब न करे, भस्म और गोस्थानमें पेशाब न करना चाहिये। भीगे पांवसेयुक्त होके न सोवे पांव धोके भोजन करे, जो लोग पैर धोकर भोजन करते हैं, वे एक सौ वर्षतक जीवित रहते हैं। जूठे रहके अग्नि, ब्राह्मण और गऊ इन तीनों तेजस्वियोंको कदापि न छूवे, छूनेसे आयु नष्ट होती है। सूर्य्य, चन्द्रमा और नक्षत्र इन तीनों तेजस्वियोंको जूठे रहके कदापि न देखना चाहिये। बूढ़े पुरुषके सम्मुख आनेपर युवा पुरुषोंके प्राण ऊपरको उठते हैं, उठके प्रणाम करनेसे वेही प्राण फिर निजस्थानमें स्थापित हुआ करते हैं। बूढ़ोंको प्रणाम करे और उन्हें स्वयं आसन देवे, हाथ जोड़के उनके सामने खड़ा रहे, जब वे चलने लगें, तो उनके पीछे पीछे चले। कटे फटे आसनपर न बैठे कांसेका पात्र परित्याग करे, एक वस्त्र होकर भोजन न करे, वस्त्ररहित होके स्नान करना उचित नहीं है। वस्त्रहीन होके न सोवे, जूठे रहके सोना न चाहिये; जूठा रहके सिर न छूवे, क्यों कि समस्त प्राण सिरकोही अवलम्बन करके रहते हैं; केश ग्रहण न करे, शिरमें प्रहार न करे और दोनों हाथोंसे सिर न खुजलावे; बार बार सिरपर जल डालके स्नान न करे, इन कार्य्योंके करनेसे आयु नष्ट होती है। सिरमें तेल मलके दूसरे अङ्गको स्पर्श न करे; तिलसंयुक्त भक्ष्य वस्तु न खावे; जो लोग इन कार्य्योंको करते हैं, उनकी परमायु नष्ट होती है। जूठा रहके कदापि न पढ़ावे और पढ़ना भी अनुचित है। वायुयुक्त तथा दुर्गन्धित स्थानका मनसे भी ध्यान न करे; इतिहास जाननेवाले पण्डित लोग इस विषयमें यमकी कही हुई गाथा वर्णन करते हैं,—"जो पुरुष जूठे मुंहसे चलता और स्वाध्याय पाठ करता है, मैं उसकी आयु नष्ट करता तथा उसके पुत्रोंको ग्रहण किया करता हूं।" जो ब्राह्मण अनध्यायके समय मोहवशसे वेदाभ्यास करता है, उसके वेद विनष्ट होते और आयु क्षीण होजाती है; इसलिये अनध्यायके समय कदापि न पढ़े। सूर्य्य, अग्नि, गऊ और ब्राह्मणके सम्मुख जो लोग मलमूत्र फेंकते हैं, वे गतायु होते हैं। दिनमें उत्तर ओर और रात्रिमें दक्षिण ओर मुंह करके मलमूत्र परित्याग करनेसे आयु नहीं घटती। जो जीवित रहनेकी इच्छावाले मनुष्य दीर्घायुकी आशा करते हैं उन्हें उचित है, कि वे ब्राह्मण, क्षत्रिय और सर्पको निबल जानके अवज्ञा न करें, क्यों कि ये तीनों ही आशीविष स्वरूप हैं। जैसे सर्प नेत्रसे देखकर जलाया करता है, वैसे ही जब क्षत्रिय क्रुद्ध होके देखता है, तो उस ही समय तेजके सहारे भस्म करता है; ब्राह्मण क्रुद्ध होनेपर ध्यान और नेत्रके सहारे तत्क्षण ही वंशनाश करता है; इसलिये पण्डित लोग यत्नपूर्व्वक इन तीनोंकी सेवा करें। हे युधिष्ठिर! गुरुके साथ कभी शत्रुता न करना चाहिये, गुरुके क्रुद्ध होनेपर उनका सान्त्व तथा उन्हें प्रसन्न करना योग्य है। गुरुके मिथ्या प्रवृत्ति होनेपर भी पूरी रीतिसे उनके समीप उपस्थित रहना उचित है। गुरुनिन्दा निःसन्देह मनुष्योंकी आयु हरती है, हितैषी मनुष्य आश्रमके बाहर पेशाब करे और हाथ पैर धोवे; दूर जाके जूठ फेंके। पण्डित लोग कमल और कुवलयके अतिरिक्त दूसरे लाल रङ्गके फूलोंकी माला न पहरें, पण्डितोंको सफेद फूलोंकी माला पहरनी उचित है। लालरङ्गके फूल तथा वानेय पुष्पोंको सिरपर रखना योग्य है, काञ्चन पुष्पकी माला पहरनेमें कदापि कुछ दोष नहीं होता।

हे नरनाथ! स्नात पुरुषको सदा आर्द्र वर्णक दान करे, बुद्धिमान मनुष्य दोनों वस्त्रोंका उलट फेर न करे अर्थात् धोतीको दुपट्टा और दुपट्टाको धोती बनाना अनुचित है। हे पुरुषश्रेष्ठ! दूसरेके पहरे हुए तथा

दशाहीन वस्त्रको पहरना योग्य नहीं है, शय्या और वस्त्र स्वतन्त्र होना चाहिये, मार्गमें चलनेके समय पृथक् वस्त्र और देवपूजाके समय पृथक् वस्त्र पहरना योग्य है। बुद्धिमान् मनुष्य प्रियङ्गू, चन्दन, बेल तथा तगरसे अनुलेपन करके केशरसे पृथक् अनुलेपन करे। स्नात, शुचि और अलंकृत होके ब्रह्मचर्य्य करे, सब पर्व्वोंमें ब्रह्मचारी होके रहे। हे प्रजानाथ! एक पात्रमें दो मनुष्य समान अन्न भोजन न करें और रजस्वलाके हाथसे बना हुआ भोजन करना अनुचित है। जिसका सारपदार्थ निकाला गया हो, वैसी वस्तु न खावे और भोजनके समयमें यदि कोई देखता रहे, तो उसे भोजनकी वस्तु बिना दिये भोजन करना विहित नहीं है। साधुओंके समीप मेधावी मनुष्य अपवित्र होके अन्न भोजन न करे, श्राद्धादिके प्रतिषिद्ध वस्तुओंको श्राद्धके अभावमें भक्षण करना अनुचित है; कल्याणकी इच्छा करनेवाले श्रेष्ठ पुरुष पीपल, बट, शणशाक और उडुम्बर न खावे। बकरीका दूध और मयूरका मांस त्याग देवे, सूखा मांस और बासी अन्न त्यागने योग्य हैं। विद्वान् पुरुष हथेलीमें और रात्रिके समय नमक, दही, शक्कर, सत्तू न खाय, वृथा मांस खाना उचित नहीं है। समाहित पुरुष सन्ध्या, सबेर और समयके शेषमें भोजन न करे, केशयुक्त अन्न आदि न खाना चाहिये और शत्रुके श्राद्धमें भोजन करना अनुचित है। वाग्यत होके एक वस्त्र पहरके और बिना बैठे कदापि भोजन न करे, सदा भूमिमें बैठके भोजन न करे, भोजन करनेके समय चुप रहे। हे नरनाथ! बुद्धिमान मनुष्य अतिथियोंको पहले जल देके, तब अन्न दान करे, अनन्तर एकचित्त होकर स्वयं भोजन करे, हे महाराज! एक पांतमें बैठे हुए सुहृदोंको समभावसे बिना भोजन कराये जो पुरुष स्वयं भोजन करनेमें प्रवृत्त होता है वह हलाहल विष खाता है। जल, सत्तू, पायस, दूध, दही, घृत और मधु खाके उसका शेषभाग पुत्रादिके अतिरिक्त दूसरे लोगोंको न देवे। हे पुरुषश्रेष्ठ! मनुष्य भोजन करते समय भोज्यवस्तु परिपक्व होगी, वा नहीं, ऐसी शङ्का न करे; परिपक्व होनेके निमित्त छाछ पीये, आचमन करके एक हाथसे दहिने पांवके अङ्गूठेके जलसे धोवे, सिरपर हाथ रखके अग्निको स्पर्श करके जो लोग समाहित होते हैं, व्यवहारमें निपुण उन मनुष्योंको स्वजनोंके बीच श्रेष्ठता प्राप्त होती है। जलसे प्राण स्थित करके नाभि और पाणितल स्पर्श करके प्रस्थान करे, भीगे हाथसे स्पर्श न करे, अङ्गूठेके नीचे ब्राह्मतीर्थ कही गई है और कनिष्ठा अङ्गुलीके नीचे देवतीर्थ वर्णित हुई है। हे भारत! अंगूठा और तर्जनी अङ्गुलीके मध्यभागके सहारे जल स्पर्श करके दूसरेका अपवाद न करे कदापि अप्रिय बचन न कहे, मङ्गलकी कामना करनेवाला मनुष्य किसी भांति क्रोध न करे। पतित पुरुषोंके साथ वार्त्तालाप न करे, उसे देखना न चाहिये और उसका संसर्ग न करे, तो दोर्घायु प्राप्त होती है। दिनमें मैथुन न करे, कन्या, रजस्वला और व्रती स्त्री गमन न करे, इन नियमोंका प्रतिपालन करनेसे दोर्घायु प्राप्त होती है। निज निज तीर्थोंमें आचमन करके पूरी रीतिसे उपस्थित कार्य्यमें तीनबार जलसे मुख धोके दो बार कुल्ला करनेसे मनुष्य पवित्र होता है। पुरुष एक बार सारी इन्द्रियोंको स्पर्श करते हुए तीन बार आचमन करके वेदविहित कार्य्यके सहारे देव और पितृकर्म्म करे। हे कुरुनन्दन! ब्राह्मणोंके लिये जो शौचाचार विहित हुआ है और भोजनके पहले तथा शेषमें जो पवित्र और हितकर है, वह भी सुनो। सब प्रकारके शौचकार्य्योंमें ब्राह्मतीर्थके द्वारा जल स्पर्श करे, मल त्यागने और चौर-

श्राद्ध करानेपर जल स्पर्श करके पवित्र होवे, बूढ़ों, स्वजनों और मित्रोंके दरिद्र होनेपर उन्हें निज गृहमें रक्खे; ऐसा करनेसे धन और आयुकी वृद्धि होती है। कबूतर तथा शुकशारिका प्रभृतिके गृहमें रहनेसे समृद्धि हुआ करती है; ये तथा तैलपायिका प्रभृति गृहमें रहनेसे अनिष्टके कारण नहीं होती, बल्कि अभ्युदयको हेतु हुआ करती हैं। उद्दीपनकारी गिद्ध वनके कपोत और भौंर यदि गृहके बीच सहसा प्रविष्ट हों, तो उस समय शान्ति अवलम्बन करे; ये सब कार्य्य तथा महात्माओंके विषयमें आक्रोश प्रकाश करना अमांगलिक है, महात्माओंके अत्यन्त गोपनीय विषयको किसी स्थानमें कहना उचित नहीं है। हे युधिष्ठिर! अगम्या स्त्रीगमन न करे; राजपथमें, वृद्ध बालक और वैद्यकी स्त्री, सखी, सेवककी भार्य्या, वधु, ब्राह्मणी, शरणागत पुरुषकी स्त्री और सम्बन्धियोंकी स्त्रियोंसे रमण करना अनुचित है; हे राजेन्द्र! इन सब विषयोंको पालन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। हे नरनाथ! ब्राह्मणों तथा ज्योतिषियोंकी सम्मतिके द्वारा जो स्थान बनाया जावे, कल्याणकी इच्छा करनेवाला मनुष्य सदा उसहीमें वास करे। हे महाराज! मेधावी मनुष्य सन्ध्याके समय न सोवे तथा विद्याभ्यास और भोजन न करे; इन नियमोंके पालनेसे मनुष्य दीर्घायु होता है। रात्रिके समय पितृकार्य्य न करे और भोजनके अनन्तर केश सवारना अनुचित है, जो लोग ऐश्वर्य्य की इच्छा करते हैं, उन्हें रात्रिमें स्नान आदि जलक्रिया न करनी चाहिये। हे भारत! रातके समय सत्तू खाना वर्ज्जित है, भोजनके समय शेषान्न निर्म्मल होनेपर भी जलमें न छोड़े। जबतक एक मनुष्य तृप्त न होजाय, तबतक दूसरे पुरुषको भोजन कराना उचित नहीं है; रात्रिके समय निज अन्नको भोजन करनेमें उक्त आचरण न करे। पक्षियोंको मारना उचित नहीं है, पक्षिमांस खावे, परन्तु स्वयं न मारके मोल लिया हुआ मांस भक्षण करे। अत्यन्त प्राज्ञ पुरुष महत् कुलमें उत्पन्न हुई श्रेष्ठ लक्षणयुक्त यथायोग्य अवस्थावाली कन्याके साथ विवाह करनेके योग्य होगा। हे भारत! अनन्तर पुत्र उत्पन्न करके वंश स्थापित करते हुए उन्हें ज्ञान और कुलधर्म्म सिखानेके लिये विद्वान् पुरुषके निकट समर्पण करे और कन्या उत्पन्न होनेके अनन्तर सद्वंशमें उत्पन्न हुए बुद्धिशक्तिसे युक्त पात्रको दान करे, पुत्रोंका भी सत्कुल सम्बन्धमें व्याह करे, मनुष्य जिस नक्षत्रमें जन्मा है, उसमें पूर्व्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका और स्वाती नक्षत्र जोड़के नवसे भाग करनेपर जो तारा पञ्चमी होवे, उस प्रत्यरिनक्षत्र तथा दारुण नक्षत्रोंमें देव और पितृकर्म्म न करे। हे भारत! ज्योतिष शास्त्रमें ये सब विषय कहे गये हैं; पूर्व्व और उत्तर ओर मुंह करके समाहित होकर क्षौरकार्य्य करावे। हे राजेन्द्र! ऐसा आचरण करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। अपना तथा दूसरेका अपवाद न करे, हे भरतश्रेष्ठ! ऐसा वर्णित है, कि परिवाद अधर्म्मका हेतु हुआ करता है। हे पुरुषोत्तम! न्यूनाङ्गी स्त्री और कन्याकी परित्याग करे, तुल्य प्रवर, विरूपाङ्गी, अधिकाङ्गी, मातृकुलमें उत्पन्न हुई, वर्षीयसी, प्रव्रजिता, पतिव्रता, निकृष्टवर्णा और श्रेष्ठ वर्णवाली कन्या परिवर्ज्जन करे। बुद्धिमान् मनुष्य कुलशीलको बिना जाने तथा हीन कुलमें उत्पन्न हुई स्त्रीके सङ्ग रमण न करे। तुम्हें पिङ्गल वर्णवाली और कुष्ट रोगग्रस्त स्त्रीगमन करना योग्य नहीं है। हे नरनाथ! अपस्मार युक्त पुरुषके गृहमें जो कन्या उत्पन्न हुई, जो कन्या श्वित्ररोगयुक्त पुरुषके कुलमें उत्पन्न हुई हो तथा जो कन्या अत्यन्त हीन कुलमें जन्मी हो उसे ग्रहण न करे। जो कन्या सुल-

क्षणा तथा श्रेष्ठ लक्षणोंसे युक्त हो, मनोहर और दर्शनीय हो उसके साथ तुम विवाह कर सकते हो। हे युधिष्ठिर! महत् वंश तथा सदृशकुलमें विवाह करना योग्य है, ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्य हीनवर्णवाली और पतित स्त्रीको ग्रहण न करें। यत्नपूर्व्वक तीनों अग्नि उत्पन्न करके वेदमें जो सब क्रिया वर्णित हुई है, ब्राह्मणोंके द्वारा उनका अनुष्ठान करें। स्त्रियोंके विषयमें ईर्षा न करनी चाहिये, स्त्रियोंकी सब प्रकारसे रक्षा करनी उचित है; स्त्रियोंके विषयमें ईर्षा करनेसे आयु घटती है, इसलिये ईर्षा न करनी चाहिये, दिनका तथा भोरका सोना आयुको घटाता है, जो लोग रात्रिके प्रथमभागमें सोते तथा जूठे रहके निद्रित होते हैं, वे अल्पायु होते हैं। परनारी हरनेसे आयु घटती है, चौरकर्म कराके स्नान न करनेसे आयुकी ह्रास हुआ करती है। हे भारत! सन्ध्याके समय भोजन, अध्ययन और स्नान न करना चाहिये; उस समय ध्यानयुक्त होवे और कुछ कार्य्य न करें। हे भारत! स्नान करके ब्राह्मणोंकी पूजा करे, व्रती होकर देवपूजा करे और गुरुजनोंको प्रणाम करे। हे भारत! बिना निमन्त्रित हुए पुरुष कहीं न जावे, केवल यज्ञस्थल देखनेके लिये जा सकता है, जाके सत्कृत न होनेसे आयु क्षीण होती है। एक पुरुषके साथ देशान्तरमें जाना उचित नहीं है और रात्रिके समय मार्गमें चलना अनुचित है, सन्ध्या न होते ही गृहमें आके निवास करना चाहिये। माता, पिता और गुरुजनोंकी आज्ञा माननी उचित है। उनके उपदेशसे चाहे भलाई हो वा बुराई होवे किसी भांति उसमें विचार करना उचित नहीं है। हे भारत! धनुर्व्वेद, वेदपाठ, हाथी और घोड़ोंकी पीठपर चढ़ने और रथ हांकनेके विषयमें यत्न करना योग्य है। हे राजेन्द्र! तुम्हें यत्नवान होना चाहिये, यत्नवान मनुष्य सुखी होता है और शत्रुओं सेवकों तथा स्वजनोंके विषयमें अनभिभवनीय हुआ करता है, प्रजा पालनेमें नियुक्त रहके कहीं भी क्षतिग्रस्थ नहीं होता। हे भरतकुलवर्द्धन नरनाथ! तुम्हें युक्तिशास्त्र, शब्दशास्त्र, गन्धर्व्व और नृत्यगीतादि विद्या जाननी योग्य है; पुराण, इतिहास, आख्यान और महानुभाव मनुष्योंमें चरितोंकी सदा सुनना उचित है। बुद्धिमान मनुष्य रजस्वला स्त्रीके निकट न जावे और उसे आवाहन भी न करे, चौथे दिन ऋतुस्नात स्त्रीके निकट जावे; पांचवें दिनमें कन्या और छठे दिनमें पुत्र जन्मता है, पण्डित पुरुष इसही विधिके अनुसार भार्य्याके निकट जाय। स्वजन, सम्बन्धी और मित्रगण सब भांतिसे पूजनीय हैं। शक्तिके अनुसार विविध दक्षिणायुक्त यज्ञसे देवताओंकी पूजा करनी चाहिये। हे नरनाथ! इसके अनन्तर वनवासी होना उचित है। हे युधिष्ठिर! मैंने तुम्हारे निकट आयुष्कर लक्षणोंको संक्षेपमें कहा है, अवशिष्ट लक्षणोंको तीनों वेदोंके जाननेवाले पण्डितोंके समीप मालूम करना। आचारसे ऐश्वर्य्य होता है, आचारही कीर्त्तिको बढ़ाता है, आचारसे ही आयु बढ़ती है, आचारही अलक्षणोंको हरता है, सब शास्त्रोंमें आचार ही श्रेष्ठरूपसे वर्णित हुआ है। आचारसे ही धर्म्म होता है, धर्म्मसे ही परमायुकी वृद्धि हुआ करती हैं। ब्रह्माने सब लोगोंके विषयमें कृपा करके यह यशदायक, आयु बढ़ानेवाला और स्वर्ग-सुखकर महत् स्वस्त्ययन कहा है।

१०४ अध्याय समाप्त।

———

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! जेठा भाई कनिष्ठ सहोदरोंके सङ्ग जैसा व्यवहार करे और कनिष्ठोंका जैसा आचरण करना योग्य है, वह विषय आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे तात! तुम ज्येष्ठकी भांति सदा व्यवहार करते हो, क्यों कि तुम ही जेठे

हो। हे भारत! गुरुके विषयमें शिष्योंको जैसा व्यवहार करना योग्य है, भक्तप्रश्न गुरुके निकट शिष्यगण उस प्रकार उपस्थित नहीं रह सकते। हे भारत! गुरुके लिये जैसो दीर्घ दर्शिता होनी चाहिये शिष्योंको भी वैसो हो दूरदर्शिताकी आवश्यकता होती है। गुरुके दोष देखनेके समय अन्धा होवे, अनघपुरुष जड़ होके रहे उसमें यदि कुछ व्यतिक्रम रहे, तो उस विषयको टालके अन्य बार्त्ता करे। हे कौन्तेय! शत्रुगण भ्रातृभेदकी इच्छा करते हैं उनकी श्री देखकर उनका हृदय विदीर्ण होता है, इसलिये वे भाइयोंमें फूट करादेते हैं। ज्येष्ठ चाहे वंशकी वृद्धि करे अथवा कुलका नाश करे; वह सब कुछ विनष्ट कर सकता है, क्यों कि उसहीसे वंशको उत्पत्ति होती है। जो ज्येष्ठ भ्राता कनिष्ठोंको ठगता है, वह जेठा नहीं है, वह अंशभागी नहीं होसकता, राजाओंको योग्य है, कि वैसे जेठेको शासित करें। प्रवञ्चक मनुष्य निःसन्देह पापलोकोंमें जाता है, ऐसा वर्णित है, कि बेतवनके पुष्प सदृश पिताका वैसा पुत्र निरर्थक हो है। जिस वंशमें पापी मनुष्य जन्म लेता है, वहां सब अनर्थ हुआ करते हैं, वह अकीर्त्ति उत्पन्न करके कीर्त्ति लोप करता है। कुकर्म्मी सहोदरगण पैतृक अंश ग्रहण करनेके योग्य नहीं होते कनिष्ठोंको बिना हिस्सा दिये जेठा भाई कदापि दायविभाग न करे। प्रवासी पुरुष पैतृक धनमें हस्तक्षेप न करके निज जङ्घाश्रमसे उत्पन्न हुआ फलपाता है, अकाम मनुष्य स्वयं समाहित होनेके प्राप्त धनको दान करनेमें समर्थ नहीं होता, अविभक्त भाइयोंको भोजनादि तथा धनविभाग एक साथ करना योग्य है, पिता कदापि पुत्रोंको विषम भाग प्रदान न करे। जेठा भाई चाहे दुष्कृती हो अथवा सुकृती हो, कदापि उसको अवज्ञा न करनी चाहिये। स्त्री अथवा कनिष्ठ भ्राता यदि दुष्कृत कर्म्म करें, तौभी जिस भांति उनका कल्याण हो, वैसा कार्य्य करे। धर्म्म जाननेवाले पुरुष कल्याणको ही धर्म्म कहते हैं, दश आचार्य्योंसे उपाध्याय श्रेष्ठ है, दश उपाध्यायसे पिता श्रेष्ठ है और दश पितासे माता श्रेष्ठ कही गई है, माता गौरवके सहारे सारी पृथ्वीको अभिभव करती है। इसलिये माताके समान गुरु नहीं है, माताके गरीयसी होनेसे ही लोग उसका मान्य किया करते हैं। हे भारत! पिताके परलोकमें जानेपर जेठा भाई पितातुल्य है। क्यों कि वही कनिष्ठ भाइयोंका वृत्तिदाता है, वही इन्हें प्रतिपालन करता है, छोटे भाई बड़ेके वशवर्त्ती होके उसे नमस्कार करें और जैसे पिताके आसरे जीवन बिताते थे, वैसे ही जेठे भाईके अवलम्बसे जीवनका समय बितावें। हे भारत! मातापिता इस शरीरको उत्पन्न करते हैं और आचार्य्यके शासन अनुसार जो उत्पत्ति होती है, वह सत्य, अजर तथा अमर है। हे भरतश्रेष्ठ! जेठी बहिन मातातुल्य और जेठे भाईकी भार्य्या भी मातृसदृश है, क्यों कि बाल्यावस्थामें उसके स्तनका भी दूध पीया जाता है।

१०५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, सब वर्णों तथा म्लेच्छोंको भी उपवास करनेकी मति देखता हूं, किन्तु मैं इसका कारण कुछ भी नहीं जानता, ब्राह्मण और क्षत्रियोंकी विषयमें ही मैंने नियमाचरणको विधि सुनी है। हे पितामह! परन्तु उन लोगोंको किस प्रकार उपवास करना चाहिये? हे राजन्! सबके ही नियम और उपवासके विषय वर्णन करो। हे तात! उपवासयुक्त मनुष्यको कैसी गति प्राप्त होती है? उपवास परम पुण्य और उपवासही परम अवलम्ब है। हे नरश्रेष्ठ! इस लोकमें उपवास करनेसे क्या फल मिलता है? किसके सहारे

मनुष्य अधर्म्मसे छूटता है ? हे भरतसत्तम ! मनुष्य किस प्रकार पुण्यात्मा होता और स्वर्ग-लोक पाता है ? हे नरनाथ ! उपवास करके क्या दान किया जाता है ? जिस धर्म्मके सहारे सब सुखदायक विषय प्राप्त होते हैं आप उसे वर्णन करिये ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब धर्म्मपुत्र धर्म्मज्ञ कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने ऐसा प्रश्न किया तब धर्म्मतत्वके जाननेवाले शान्तनुनन्दन भीष्म उनसे कहने लगे ।

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ महाराज ! उपवासविषयमें जो सब गुण हैं, उस विषयमें मैंने यह पुरातन प्रबन्ध सुना था । हे भारत ! जैसा तुमने मुझसे पूछा है, इस ही भांति मैंने पहले तपोधन अङ्गिरा ऋषिसे प्रश्न किया था । हे भरतसत्तम ! जब मैंने अग्निपुत्र अङ्गिरा ऋषिसे इस पवित्र उपवास विषयमें प्रश्न किया, तब उन्होंने मेरे प्रश्नका उत्तर दिया ।

अङ्गिरा बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ कुरुनन्दन ! ब्राह्मणों और क्षत्रियोंके लिये त्रिरात्र उपवास विहित है, द्विरात्र, त्रिरात्र और एक रात भी निर्दिष्ट है, जो वैश्य और शूद्र मोहके वशमें होकर द्विरात्र अथवा त्रिरात्र उपवास करते हैं, उन्हें उससे कुछ भी फल नहीं मिलता । वैश्य और शूद्रके लिये चतुर्थ भक्त क्षपण अर्थात् एक दिन अहोरात्र उपवास कहा गया है और पहले तथा दूसरे दिन एकबार भोजन करना विहित है, धर्म्मदर्शी धर्म्मज्ञ ऋषियोंने वैश्यों और शूद्रोंके लिये त्रिरात्र उपवासकी विधि नहीं कही है । हे भारत ! पञ्चमी, षष्ठी और पौर्णमासी तिथिमें नियतात्मा जितेन्द्रिय मनुष्य एक-भक्त द्वारा उपवास करनेसे क्षमावान, रूपवान और श्रुतवान हुआ करता है । बुद्धिमान मनुष्य इसी भांति उपवास करनेसे कदापि पुत्रहीन तथा दरिद्र नहीं होता । पञ्चमी और षष्ठी तिथिमें यज्ञ करनेवाला मनुष्य सत्कुलमें उत्पन्न हुए ब्राह्मणोंको भोजन करावे । हे कुरुनन्दन ! कृष्णपक्षकी चतुर्दशी तिथिमें उपवास करनेसे मनुष्य व्याधिरहित तथा वीर्य्यवान होता है । मार्गशीर्ष महीनेमें जो पुरुष दिनमें एक बार भोजन करके महीना व्यतीत करता और भक्ति पूर्व्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है, वह व्याधि तथा पापोंसे छूट जाता है । सर्व्वकल्याणमय तथा सर्व्वौषधियुक्त मनुष्य पूर्व्वोक्त तिथिमें उपवास करनेसे व्याधिरहित और वीर्य्यवान होके जन्मता है, वह कृषिभागी तथा अधिक धनधान्ययुक्त होता है । हे कौन्तेय ! जो लोग दिनमें एक बार खाके पूस महीना बिताते हैं, वे सुन्दर, दर्शनीय और यशभागी होते हैं । जो लोग माघ महीनेभर दिनमें एक बार भोजन करके समय व्यतीत करते हैं, वह लक्ष्मीयुक्त वंशमें स्वजनोंके बीच महत्व पाते हैं । फाल्गुन महीने भर जो लोग दिनमें एक बार भोजन करके समय बिताते हैं, वे स्त्रियोंके प्यारे होते और स्त्रियें उनके वशमें रहती हैं । जो लोग दिनमें एक बार भोजन करके चैत महीना बिताते हैं, वे सुवर्ण, मणि और मुक्तायुक्त महत्कुलमें जन्मते हैं । जो जितेन्द्रिय स्त्री अथवा पुरुष दिनमें एक बार भोजन करके वैशाख महीना व्यतीत करता है, उसे स्वजनोंमें श्रेष्ठता प्राप्त होती है । जेठ महीनेमें जो लोग दिनमें एकबार भोजन करके समय बितानेवाले पुरुष वा स्त्री उत्तम अतुल ऐश्वर्य्य प्राप्त होती है । जो लोग एकाहारी और अतन्द्रित होकर आषाढ़ महीना व्यतीत करते हैं, वे अधिक धनधान्य युक्त तथा बहुतसे पुत्रोंके पिता होते हैं । जो मनुष्य सदा एकबार भोजन करके सावन महीना बिताता है, वह किसी स्थानमें अवश्य अभिषिक्त होकर ज्ञातिवर्द्धक हुआ करता है । जो मनुष्य भादों महीनेमें एकाहारी होके रहता है, वह धनाढ्य होके समृद्धि तथा अचल ऐश्वर्य्य पाता है और जो मनुष्य एकाहारी होके

आश्विन महीना बिताता है, वह पतिव्रता स्त्री और बहुपुत्रयुक्त तथा वाहननानाढ्य होता है। कार्त्तिक महीनेमें जो मनुष्य एकाहारी होके रहता है, वह शूर बहुतसी स्त्रियोंसे युक्त और कीर्त्तिमान होता है। हे नरश्रेष्ठ महाराज! प्रति महीनेमें एकाहारी पुरुषोंको जो फल मिलता है, वह कहा गया; अब तिथियोंके नियम सुनो। हे भारत! एक एक पक्ष बीतनेपर जो लोग भोजन करते हैं, वे गोधन, बहु पुत्र-युक्त तथा दीर्घायु होते हैं। बारह वर्ष तक जो लोग महीने महीने त्रिरात्र व्रत करते हैं, उन्हें अनाविल, निःसपत्नी और गणाधिपत्य प्राप्त होता है। हे भरतश्रेष्ठ! प्रवृत्तिके वशवर्त्ती मनुष्योंको बारह वर्ष तक इन नियमोंको प्रतिपालन करना चाहिये। हे नरनाथ! जो पुरुष भारसे स्वस्थापर्य्यन्त भोजन करनेके अनन्तर जल नहीं पीता और अहिंसामें रत होके अग्निमें होम करता है, वह निःसन्देह छः वर्षके बीच सिद्ध होता है, वही अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है, वह रजोगुणसे रहित सुकृती मनुष्य अप्सराओंके नृत्यगीतयुक्त स्थानमें सहस्र स्त्रियोंमें घिरके क्रीड़ा करता है, तपाये हुए सुवर्णसदृश प्रभायुक्त विमानपर चढ़ता है और पूरे एक हजार वर्षतक ब्रह्मलोकमें निवास करता है; अन्तमें पुण्यक्षीण होनेपर इस लोकमें आके महानुभावताको प्राप्त होता है। जो मनुष्य पूरे वर्ष भरतक एकाहार करता है, वह अतिरात्र यज्ञका फल भोग किया करता है और दश हजार वर्ष स्वर्गलोकमें निवास करके पुण्यक्षय होनेपर इसलोकमें आनेसे उसे बहुतसी सहायता मिलती है। जो लोग अहिंसामें रत, सत्यवादी जितेन्द्रिय होके सम्वत्सरके चतुर्थ भाग अर्थात् तीन महीनेतक एकाहारी होते हैं, वे वाजपेय यज्ञका फल भोगते और एक हजार वर्ष स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। हे कौन्तेय! दिनके छठवें भागमें भोजन करके जो मनुष्य एक वर्ष तक समय बिताते हैं। उन्हें अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है और वे चक्रवाकके द्वारा चलनेवाले विमानपर चढ़के गमन करते हैं तथा चालीस हजार वर्ष तक देवलोकमें परम सुखसे निवास किया करते हैं। हे महाराज! जो मनुष्य दिनके आठवें भागमें भोजन करके वर्ष भर जीवित रहते हैं, वे गवामय यज्ञका फल पाते हैं, हंस सारसयुक्त विमानपर चलते और पचास हजार वर्ष देवलोकमें प्रमुदित हुआ करते हैं। हे राजन्! एक पक्ष बीतनेपर दूसरे पक्षमें जो लोग भोजन किया करते हैं, उनका वर्ष भरके बीच छः महीना अनशन व्रत होता है,—भगवान अङ्गिराने कहा है, कि ऐसे व्रतधारी पुरुष साठ हजार वर्ष तक स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। हे नरनाथ! वे निद्रित होनेपर वीणा, बल्लकी और बांसुरीकी मधुरध्वनिके सहारे जागते हैं। हे महाराज! जो लोग वर्ष भरके बीच एक महीनेतक केवल जल पीके जीवन धारण करते हैं, वे विश्वजित् यज्ञका फल पाते हैं और सिंह व्याघ्रयुक्त विमानके द्वारा चलते हैं तथा सत्तर हजार वर्षतक सुरलोकमें प्रमुदित होते हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! एक महीनेसे अधिक उपवास करनेकी विधि नहीं है। हे पार्थ! धर्म्म जाननेवाले पुरुष अनशन व्रत किया करते हैं, जो पुरुष अनार्त्त और व्याधिरहित होके अनशन अवलम्बन करता है, उसे निःसन्देह पद पदमें यज्ञका फल मिलता है, वह हंसयुक्त विमानके सहारे सुरलोकमें भ्रमण करता है, सौ हजार वर्षतक देवलोकमें प्रभु होके आनन्दित होता है, एक सौ अप्सरा उस पुरुषको प्रमुदित करती हैं। आर्त्त अथवा व्याधिग्रस्त मनुष्य यदि उपवास करे, तो वह सौ हजार वर्षतक सुरपुरमें आनन्द भोगता, निद्रित होके काञ्ची और नूपुरके शब्दसे जाग्रत होता और सहस्र हंसयुक्त विमानके सहारे गमन करता है। हे

भरतश्रेष्ठ ! वह स्वर्गमें जाके एक सौ स्त्रियोंसे युक्त उत्तम मनोहर स्थानमें रमण करता है। अनशन व्रतके द्वारा क्षीण लोगोंको आप्यायन देखी गई है, घायल पुरुषके घाव आरोग्य हुए देखे गये हैं। उपवास व्याधियुक्त पुरुषके लिये परम औषधी है, क्रुद्ध पुरुषोंको प्रसन्न करनेवाला, अर्थ और मानका हेतु तथा दुःखित पुरुषोंके दुःख दूर करनेका उपायस्वरूप है। सुखसम्भोगके अभिलाषी क्षीणतादि अवस्था युक्त स्वर्गकाम मनुष्योंको इन आप्यायन आदि विषयोंमें अभिरुचि नहीं होती, बल्कि वैसे पुरुष अनशन आदि दुःखसहिष्णु होके निज तपस्याको वृद्धि करते हैं, इसलिये वे पवित्र पुरुष सकाम और अलंकृत होकर एक सौ स्त्रियोंसे युक्त सुवरण सदृश विमानमें विहार किया करते हैं। स्वस्थ, सफल, सङ्कल्पसुखी और निष्पाप पुरुष अनशन व्रत करके उसका फल भोगते हैं वे लोग बाल सूर्य्य तथा सुवर्णसदृश प्रभायुक्त वैदूर्य्य मुक्ताखचित वीणा, पखावजकी ध्वनिसम्पन्न पताका, दीपिका और दिव्य घण्टाशब्दसे परिपूरित एक हजार स्त्रियोंसे भरे हुए विमानमें सुखभोग किया करते हैं। हे पाण्डव ! उनके शरीरमें जितने रोएं रहते हैं, उतने हजार वर्ष तक वे सुरपुरमें प्रमुदित होके वास करते हैं। वेदसे श्रेष्ठ शास्त्र नहीं है, माताके समान गुरु नहीं है, धर्म्मसे बढ़के परम लाभ कुछ भी नहीं है, गङ्गाके समान नदी नहीं और उपवाससे बढ़के दूसरी श्रेष्ठ तपस्या कुछ भी नहीं है। जैसे इस लोक और स्वर्गलोकमें ब्राह्मणोंसे पावन अन्य कोई नहीं है, वैसे ही उपवासके समान तप दूसरा कुछ भी नहीं है। देवताओंने विधिपूर्व्वक तपस्या करके त्रिदिवलोक पाया है, ऋषियोंको भी उपवाससे परम सिद्धि प्राप्त हुई है। बुद्धिशक्तिसे युक्त विश्वामित्रको सहस्र वर्षतक एकाहारी होनेसे क्षमा गुण प्राप्त हुआ था, इसीसे उन्हें ब्राह्मणत्व पद मिला। च्यवन, जमदग्नि, वसिष्ठ, गौतम और भृगु प्रभृति क्षमाशील महर्षिवृन्द स्वर्गलोकमें गये हैं। पहिले समयमें अङ्गिराने यह विषय महर्षियोंके बीच कहा था, जो लोग सदा इसे प्रदर्शित करते हैं, वे दुःख नहीं पाते।

हे कौन्तेय ! अङ्गिरा महर्षिके द्वारा यह विधि प्रचलित हुई है, जो मनुष्य सदा इसे पढ़ते वा सुनते हैं, उनके सब पाप नष्ट होते हैं। जो उत्तम पुरुष इस विषयको सुनते वा पढ़ते हैं। सब सङ्कटोंसे छूट जाते हैं, उनका चित्त पापकर्म्ममें अभिभूत नहीं होता, वे बियोनिज यक्षादिकोंकी बोली जान सकते और निश्चय ही कीर्त्ति लाभ करते हैं।

१०६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! महानुभाव ब्रह्माके द्वारा विधिपूर्व्वक सब यज्ञ कहे गये हैं और इस लोक तथा परलोकमें यज्ञोंके फल सब प्रकारसे वर्णित हुए हैं; परन्तु दरिद्र लोग उन यज्ञोंके फलको पानेमें समर्थ नहीं होते, क्यों कि यज्ञोंमें बहुतसे उपकरण तथा यज्ञकी सामग्री लानी होती है। हे पितामह ! उसका फल राजा अथवा राजपुत्र ही पा सकते हैं, धनरहित, गुणहीन अकेले और सहायता-वञ्चित मनुष्योंके द्वारा यज्ञ नहीं हो सकता। हे पितामह ! इसलिये जो विधि सदा दरिद्रोंके करने योग्य और इन सब यज्ञफलोंके तुल्य हो, उसे ही मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर ! अङ्गिराने कहा है, कि उपवास फलस्वरूप अनुष्ठान यज्ञफलके सदृश है; इसलिये तुम उसे सुनो। जो लोग अहिंसामें रत होके प्रति दिन अग्निमें होम करते हुए भोर और सन्ध्याके समय भोजन करके उक्त दोनों समयके बीच फिर भोजन नहीं करते, वे छः वर्षके बीच निःसन्देह सिद्ध

होते हैं; वे मनुष्य तपाये हुए सुवर्णसदृश विमान पाते और देवस्त्रियोंके नृत्यगीत तथा बाजे युक्त स्थानमें ब्रह्मलोक वा अग्निके समीप सौ करोड़ वर्षतक निवास करते हैं। जो लोग सदा धर्मपत्नीमें रत रहके तीन वर्षतक क्रमसे दिनमें एक बार भोजन करते हैं, वे अग्निष्टोम यज्ञ और इन्द्रके प्रिय बहुतसे सुवर्णके यज्ञोंका फल पाते हैं, वे सत्यवादी, दानशील, ब्रह्मनिष्ठ, अनसूयक, दमयुक्त और जितक्रोध होके परम गति प्राप्त करते हैं; व्रत पूरा होनेपर पाण्डुर-प्रभा और हंसचिन्हयुक्त विमानमें दो सौ करोड़ वर्षतक अप्सराओंके सङ्ग निवास करते हैं। जो लोग अग्निमें होम करते हुए एकवर्षके बीच एक रात्रि उपवास करके दूसरे दिन एक बार भोजन करते हैं और प्रतिदिन अग्निकर्ममें रत होके भोरको जागते हैं, वे मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञका फल पाते हैं और इन्द्र लोकमें वारा-ङ्गनाओंके बीच घिरके हंस-सारसयुक्त विमानमें निवास किया करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें होम करते हुए तीसरे दिन केवल एक बार भोजन करते तथा प्रतिदिन अग्निहोत्र करके भोरको जाग्रत होते हैं, वे अतिरात्र यज्ञका फल पाते हैं; उन मनुष्योंको मयूर हंसयुक्त विमान मिलता है और सप्तर्षि-योंके लोकमें सदा अप्सराओंके सङ्ग निवास किया करते हैं। तीन सौ करोड़ वर्षके अन-न्तर वहांसे उनकी पुनरावृत्ति होती, इसे पण्डित लोग जानते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें होम करते हुए चौथे दिन एकबार भोजन करते हैं, उन्हें वाजपेय यज्ञका उत्तम फल मिलता है, वे इन्द्रकन्याके द्वारा अधिरूढ़ विमान पाके समुद्रके पार इन्द्रलोकमें निवास किया करते हैं; और सदा देवराजकी क्रीड़ा अवलोकन करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए पांचवें दिन एक बार भोजन करते हैं और अलुब्ध, सत्यवादी, ब्रह्मनिष्ठ, हिंसारहित, असूया शून्य और निष्पाप होते हैं। स्वर्णमय हंस-चिन्हवाले सूर्य्य किरण सदृश प्रभासे युक्त पाण्डुरवर्ण गृहसदृश विमानमें चढ़ते और एकावन सौ पद्म वर्षतक उस ही स्थानमें सुखसे वास करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए सदा मननशील होके छठें दिन भोजन करते हैं और सदा त्रिकाल स्नान करनेवाले ब्रह्मचारी और असूयारहित हुआ करते हैं, वे गोमेध यज्ञका फल पाते हैं। वे अग्निज्वा-लाके सदृश प्रभायुक्त हंसवर्हिण युक्त सुवर्णमय उत्तम विमान पाते हैं और अप्सराओंकी गोदीमें सोके नूपुर-मेखलाकी ध्वनिसे जाग्रत होते हैं; वे तीन तीन हजार तीन सौण्डिक, अट्ठारह पद्म, दो महापद्म, पांच सौ अयुत और सौ सौ ऋक्षोंके चमड़ोंमें जितने रोए रहते हैं, उतने वर्षतक ब्रह्मलोकमें निवास करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए सातवें दिन एक बार भोजन करते और चुप होके ब्रह्मचर्य्य व्रत करते हैं तथा स्रुक्, चन्दन, मधु और मांस परित्याग करते हैं, वे देवलोकके बीच इन्द्रलोकमें जाते हैं और उन स्थानोंमें पुरुष सिद्धार्थ होके देवकन्याओंसे पूजित होते हैं, वेही मनुष्य बहुतसे सुवर्ण यज्ञका फल पाते हैं और पूर्व्वोक्त लोकमें असंख्य समय तक निवास किया करते हैं। जो लोग देवकार्य्यमें रत होकर अग्निमें एक वर्ष-तक आहुति देते हुए क्षमाशील होके आठवें दिनमें एकबार भोजन करते हैं, वे पुण्डरीक यज्ञका फल पाते और पद्मवर्ण सदृश विमानपर चढ़ते तथा उन्हें निःसन्देह कृष्णवर्ण, कनकवर्ण श्यामाङ्गी युवा सुन्दरी स्त्रियें प्राप्त होती हैं। जो लोग एक वर्षतक प्रतिदिन अग्निसे आहुति देते हुए नवें दिन एक बार भोजन करते हैं, वे सहस्र अश्वमेधका फल पाते हैं, और उन्हें पुण्डरीक सदृश प्रकाशमान विमान मिलता है,

प्रदीप्त सूर्य्य और अग्नि सदृश तेजस्विनी दिव्य माला धारिणी रुद्रकन्यावृन्द उन्हें सनातन स्वर्गलोकमें ले जाती हैं और वे मनुष्य अठारह हजार वर्ष और सौ हजार करोड़ कल्प तक रुद्रलोकमें प्रमुदित होते हैं। जो एक वर्ष तक अग्निमें होम करता हुआ दशवें दिन एक बार भोजन करता है, वह सर्व्वभूत-मनोहर ब्रह्म-कन्यागणोंके निवास स्थानमें निःसन्देह एक हजार अश्वमेध यज्ञका फल पाता है। नीलोत्पल और रक्तोत्पल वर्ण सदृश रूपवती स्त्रियें उस मनुष्यको प्रतिदिन प्रमुदित करती हैं, वह आवर्त्तगहनाकुल समुद्रकी तरङ्ग तुल्य मण्डलावर्त्त श्रेष्ठ विमान पाता है। विचित्र मणिमाला विराजित शंखके शब्दसे युक्त स्फटिक और हीरोंसे बने हुए वेदी स्तम्भ युक्त हंस-सारसोंके शब्दसे परिपूरित महायानमें चढ़ता और सौ हजार करोड़ वर्ष तक देवलोकमें प्रमुदित होता है। जो लोग बारह महीने तक अग्निमें आहुति देते हुए ग्यारहवें दिन घृत भोजन करते हैं, पराई स्त्रीके विषयमें मनसे भी अभिलाष नहीं करते, माता पिताके लिये भी कदापि झूठ नहीं बोलते, वे विमानपर चढ़के महाबली महादेवके समीप जाते और सहस्र अश्वमेध यज्ञका फल पाते हैं तथा स्वयम्भू विमानको सम्मुख पहुंचा हुआ देखते हैं और सुवर्ण आभायुक्त रूपवती क्वारीकन्या सुरलोकमें प्रकाशमान मनोहर रुद्रगणोंके स्थानमें उन्हें ले जाती हैं। वे प्रलयकालकी अग्नि समान और प्रभायुक्त होके अनन्त समय तक सौ हजार करोड़ और दो सौ करोड़ वर्ष तक देव-दानवोंके सङ्ग सदा महादेवको प्रणाम करते हैं; महादेव उन्हें प्रतिदिन दर्शन देते हैं। जो लोग एक वर्ष तक क्रमसे बारहवें दिन घृतप्राशन करते हैं, वे सर्व्वमेध यज्ञका फल पाते हैं; द्वादश आदित्योंके बीच उनका विमान जाता है, वह स्थान महार्ह मणि, मोती प्रवाल मणियोंसे शोभित, हंसपांतसे घिरा हुआ और नागश्रेणीसे परिपूर्ण कूंजनेवाले, मयूर और चक्रवाक पक्षियोंके व्यूहसे शोभायमान, उत्तम महत् अटारियोंसे युक्त, ब्रह्मलोकके प्रतिष्ठित नरनारियोंसे परिपूरित नित्य आश्रम है। हे महाराज! महाभाग धर्म्मवित् अङ्गिरा ऋषिने ऐसा कहा है, कि जो लोग एक वर्ष तक सदा तेरहवें दिन घृत-प्राशन करते हैं, उन्हें देव-सत्रका फल प्राप्त होता है। वे मनुष्य सुवर्णके बने हुए रत्नभूषित, देवकन्याओंसे परिपूरित दिव्य आभूषण और पवित्र सुगन्धियुक्त वायव्य अस्त्रसे सुशोभित रक्त पद्मोदय नाम विमान पाते हैं, वे वहांपर शंकु पताका युगान्त कल्प-अयुतायुत पद्म और समुद्र परिमित समयतक निवास करते हैं, वे देवकन्या और गन्धर्व्वोंके गीत तथा भेरी ढाल आदि बाजोंके शब्दसे प्रसन्न होके वहांपर अनुरक्त रहते हैं। बारह महीनेके बीच जो लोग चौदहवें दिन घृत प्राशन करते हैं, वे महामेध यज्ञका फल पाते हैं। अनिर्द्देश्य अवस्था रूपसम्पन्न भली भांति अलंकृत विशुद्ध तपे हुए सुवर्णभूषित पहरने-वाली देवकन्या गरुड़ विमानके सहारे उनके निकट उपस्थित होती हैं। वे वहांपर कल-हंस निनाद सदृश नूपुर-काञ्चीसे उत्तम रीतिसे सावधान हुआ करते हैं, वे मनुष्य गङ्गाके बालुकण- परिमाणके अनुसार पूर्ण सम्वत्सर पर्य्यन्त देवकन्याओंके स्थानमें निवास करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए पन्द्रह दिनके अनन्तर एक बार भोजन करते हैं, वे सहस्र राजसूय यज्ञका उत्तम फल पाते हैं, वे हंस-मयूरसेवित विविध मणिमण्डल मण्डित जातरूपसे परिपूरित, दिव्यभूषणोंसे विभूषित, वाराङ्गनाओंसे युक्त मणिमुक्ता, प्रवालसे अलंकृत, एक स्तम्भ चार द्वार सात भूमिका सम्पन्न उत्तम मङ्गलमय सहस्र वैजन्तीके द्वारा सुशोभित, गीतशब्दसे

निनादित, दिव्यगुणयुक्त बिजलीकी प्रभासदृश बिमानमें चढ़ते हैं, वे खड्ग और कुञ्जर वाहनसे युक्त होकर उस दिव्य यानमें सहस्र युगतक वास किया करते हैं। जो लोग एक वर्षतक सदा सोलहवें दिन एकबार भोजन करते हैं, उन्हें सोमयज्ञका फल मिलता है, वे लोग सोमकन्यागणोंके स्थानमें सदा निवास किया करते हैं, वे सौम्यगन्धसे अनुलिप्त और कामचारी गतिसे युक्त होते हैं। जब वे बिमान पर चढ़ते हैं, तब उत्तम दर्शनीय मीठे वचनवाली स्त्रियां उनकी पूजा करती हैं, वे बहुतसे कामभोगके द्वारा सेवित होते हैं, ऐसे व्रतपरायण मनुष्य एक सौ दश पद्म परिमित महाकल्प और चारों आवर्त्तन परिमित समयतक फल भोग करते हैं जो लोग एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए सत्तरहवां दिन उपस्थित होनेपर घृतप्राशन करते हैं, वे वरुण, इन्द्र और रौद्रलोकमें अधिरोहण किया करते हैं और वेही पुरुष मारुत उशनस तथा ब्रह्मलोकमें गमन करते हैं, वहांपर देवकन्यागण आसन देके उनकी सेवा करती हैं; भूलोक, भुवर्लोक और देवर्षि बिश्वरूपका दर्शन करते हैं। वहांपर बत्तीस भांतिकी रूपधारिणी दर्शनीय मृदु भली भांति अलंकृत देवाधिदेवकी कुमारीगण उनके सङ्ग क्रीड़ा करती हैं, हे प्रभु! जबतक काल आदित्य और चन्द्रमा आकाशमण्डलमें बिचरते हैं, तबतक उक्त बीर सुधा तथा देवभोज्य अमृतरस पीते हुए रुद्रलोकमें निवास किया करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक सदा एकबार भोजन करते हैं, ते सातो लोकोंका दर्शन किया करते हैं, देवकन्याधिरूढ़ भ्राजमान उत्तम रीतिसे अलंकृत बन्दिजनोंके शब्दसे युक्त रथ उनके पीछे पीछे चलते हैं, वे अत्यन्त सुखी होके सिंह-व्याघ्र युक्त बादलसदृश शब्दसे परिपूरित उत्तम दिव्य बिमानपर चढ़ते हैं। वहांपर वे सहस्र कल्पतक कन्यागणोंके सङ्ग प्रमुदित हुआ करते हैं और अमृतसदृश उत्तम अमृत रस भोजन करते हैं। जो लोग सदा बारह महीनेतक उन्नीसवें दिन एक बार भोजन करते हैं, वे सप्तलोकोंको देखनेमें समर्थ होते हैं और अप्सराओंसे सेवित उत्तम स्थान पाते हैं, उन्हें गन्धर्वोंके द्वारा सूर्य्यवर्चस बिमान मिलता है, वहांपर वे शोकरहित दिव्याम्बरधारी तथा श्रीमान होकर सौ सौ अयुत परिमित समयतक देवताओंको बाराङ्गनाओंके सहित प्रमुदित हुआ करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक सत्यवादी धृतव्रती अमांसाशी ब्रह्मचारी और सब जीवोंके हितमें रत होके बीसवां दिन पूरा होनेपर एक बार भोजन करते हैं, वे आदित्यगणोंके विपुल रमणीय लोकोंमें सुख भोग किया करते हैं। दिव्य मालाधारी गन्धर्व्व और अप्सरावृन्द तथा दिव्य सोनेके बिमान उनके पीछे पीछे चलते हैं। जो लोग एक वर्षतक सदा अग्निमें आहुति देते हुए बाइसवें दिन एक बार भोजन करते हैं और अहिंसामें रत धीमान सत्यवादी तथा अनसूयक हुआ करते हैं, वे सूर्य्यके सदृश प्रभायुक्त होके बसुलोकोंको पाते हैं, वे कामचारी सुधाहारी होकर श्रेष्ठ बिमानमें चढ़ते और दिव्याभरणोंसे बिभूषित होकर देवकन्याओंके सङ्ग क्रीड़ा करते हैं, जो मिताहारी और जितेन्द्रिय पुरुष बारह महीनेतक सदा तेइसवें दिन एक बार भोजन करता है, वह वायुलोक भार्गवलोक और रुद्रलोकमें गमन किया करता है, वह कामचारी और कामगामी अप्सराओंसे पूजित और दिव्याभरण भूषित बिबिध गुणोंसे युक्त बिमानपर चढ़के देवकन्याओंके सहित क्रीड़ा करता है। जो पुरुष बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए चौबीसवां दिन उपस्थित होनेपर घृतप्राशन करता है, वह दिव्य माला दिव्याम्बर धारण करके तथा दिव्यगन्धोंसे युक्त होकर आदित्यगणोंके निवासस्थानमें प्रमुदित

होके सदा वास करता है, हंसयुक्त मनोहर दिव्य बिमानमें सहस्र और अयुत देवकन्याओंके सहित क्रीड़ा करता है। जो लोग बारह महीनेतक सदा पच्चीसवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे पुष्कल बिमानमें चढ़ते और सिंहव्याघ्रयुक्त बादलसदृश शब्द तथा आनन्द बर्द्धक ध्वनिसे युक्त देवकन्याओंसे परिपूर्ण सौ सौ विमल सुवर्णके रथ उनका अनुगमन करते हैं, वे अत्यन्त मनोहर उत्तम दिव्य बिमानमें चढ़के उन सौ सौ स्त्रियोंसे परिपूरित स्थानमें अमृतसदृश सुधारस पीते हुए सहस्र कल्पतक निवास करते हैं। जो लोग सदा संयताहारी जितेन्द्रिय और रागरहित होके एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए छब्बीसवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे सब रत्नोंसे अलंकृत दिव्य स्फटिक बिमानके द्वारा सप्त मरुत और अष्टवसुके लोकोंको उपभोग करते हैं, दिव्य तेजसे युक्त होकर देवपरिमाणसे दो हजार युगतक गन्धर्व्व और अप्सराओंसे पूजित होकर प्रमुदित रहते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए सत्ताइसवें दिन सदा एकबार भोजन करते हैं, वे बिपुल फल पाके देवलोकमें पूजित हुआ करते हैं, वहां अमृताशी होकर वास करते हुए तृष्णारहित होके प्रमुदित होते हैं। हे महराज! वे दिव्य शरीरधारी मनुष्य श्रेष्ठ बिमानमें चढ़के देवर्षि चरित तथा राजर्षियोंसे अनुष्ठित लोकोंमें वास करते हैं, वे मनोरमा स्त्रियोंके सहित मदमत्त होके रमण करते हुए तीन सहस्र युग परिमित कल्पतक सुखसे निवास किया करते हैं। जो लोग जितचित्त और जितेन्द्रिय होके बारह महीनेतक सदा अट्ठाइसवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे देवर्षि चरित बिपुल फल भोग किया करते हैं, वे भोगवान मनुष्य निज तेजके सहारे निर्म्मल सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होते हैं। पीनस्तनयुक्त दिव्याभरण बिभूषित तेजस्विनी रमण करनेवाली सुकुमारी स्त्रियें सूर्य्यसदृश कामगामी मनोरम दिव्य बिमानमें एक सौ अयुत कल्प परिमित वर्षतक उनका मन प्रसन्न करती हैं। जो लोग सत्यव्रत परायण होके बारह महीनेतक सदा उन्तीसवें दिन एक बार भोजन करते हैं, उनके निमित्त देवर्षि और राजर्षियोंसे पूजित दिव्य पवित्रलोक तैयार रहते हैं, वे सब रत्नोंसे बिभूषित अप्सराओं और गन्धर्व्वोंकी गीतसे युक्त सूर्य्य तथा चन्द्रमासदृश सुबरणमय दिव्य बिमानमें चढ़ते हैं, वहां दिव्याभरण भूषित मनको प्रसन्न करनेवाली मदविह्वल कोमलाङ्गी पवित्र स्त्रियें उन्हें आनन्दित करती हैं। वे भोगवान तेजसम्पन्न अग्निप्रभासदृश मूर्त्ति धारण करके देवताओंकी भांति प्रकाशमान दिव्य पुरुष बसुगण मरुद्गण, साध्य, रुद्रगणके लोक और ब्रह्मलोकमें गमन करते हैं। जो शमगुणसे युक्त, पुरुष एक वर्षतक सदा एक मास बीतनेपर एक बार भोजन करता है, उसे ब्रह्मलोक मिलता है, वह सुधारस पीके श्रीमान् और सर्व्वजन मनोहर हुआ करता है। तेजस्वी और शोभासे सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होता है, वह दिव्य मालाम्बरधारी दिव्य गन्धयुक्त सुखमें रत योगी दुःख अनुभवमें अनभिज्ञ होके स्वयं प्रभायुक्त स्त्रियोंके सहित बिमानमें बिराजता है और रुद्र तथा देवर्षिकन्याओंके द्वारा सदा सब भांति पूजित होता है। बिविध रीतिसे बिनोद करनेवाली अनेक प्रकारकी स्त्रियोंके द्वारा बहुतसी भाषा तथा अनेक भांतिकी रति चातुरीसे सूर्य्य तथा वैदूर्य्यसदृश आकाश समान पृष्ठस्थानमें सोमसङ्काशके अभिमुख तथा अभ्रसदृश दक्षिणभागमें रक्तवर्ण आभायुक्त, अधोस्थानमें नील मण्डलाकार, ऊर्द्धमें बिचित्र सङ्काश बिमानमें पूजित होकर अनेक देवकन्याओंके सहित निवास करता है। सहस्र वर्षतक जम्बुद्वीपमें वर्षाकी जितनी बूंद बरसती हैं, उस बुद्धिशक्तिसे युक्त योगीका उतने

वर्षतक ब्रह्मलोकमें वास वर्णित है, वर्षाकालमें आकाशसे जितनी जलकी बूंद गिरती हैं, उतने समयतक वह अमरप्रभा अतिक्रम करके सुरपुरमें वास करता है। महीनेभर उपवास करनेवाला मनुष्य दश वर्षतक ऐसे ही कठोर व्रत प्रतिपालन करते हुए महर्षित्व पद पाके सशरीरसे ही उत्कृष्ट स्वर्गलोकमें गमन किया करता है। मननशील, दान्त, क्रोधविजयी; और सौ जित शिश्नोदर, तीनों अग्निमें आहुति देनेवाले, सदा सन्ध्या उपासना करनेवाले जो मनुष्य इस प्रकारके बहुतसे नियमोंसे पवित्र होके महीनेके शेषमें एक बार भोजन करते हैं, वे आकाशके अवकाशकी भांति निर्म्मल शीलसम्पन्न और सूर्य्यकान्ति सदृश तेजस्वी पुरुष सशरीर सुरपुरमें जाके देवताओंकी भांति इच्छानुसार पवित्र स्वर्गसुख उपभोग करते हैं। हे भरतश्रेष्ठ महाराज! यह तुम्हारे समीप उपवास फलात्मक श्रेष्ठ यज्ञकी विधि विस्तारपूर्व्वक कही गई। हे पार्थ! दरिद्र मनुष्य इन्हीं उपवासोंको करके यज्ञका फल पाते हैं तथा उन्हें परम गति मिलती है। हे भरतसत्तम! तुम देव और द्विजोंकी पूजामें रत हो, इसी लिये तुम्हारे समीप यह उपवासकी विधि विस्तारपूर्व्वक वर्णित हुई। हे भारत! सदा अप्रमत्त, पवित्रतायुक्त, दम्भद्रोहसे निवृत्त, कृतबुद्धि, अचञ्चल, असवधानरहित महान्भावोंके समीप इस विषयमें तुम्हें सन्देह न होवे।

१०७ अध्याय समाप्त।

———

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! सब तीर्थोंके बीच जो श्रेष्ठ है और जिससे पवित्रता होती हैं, उसे आप मेरे निकट वर्णन करिये।

भीष्म बोले, सब तीर्थ मनीषियोंके लिये फलदायक हैं, उनके बीच जो पवित्र तीर्थ है, समाहित होके उसे सुनो। अपरिच्छिन्न विमल शुद्ध सत्यजल और धैर्य्यरूपी तालाव युक्त मानसतीर्थमें शाश्वत सत्य अवलम्बन करके स्नान करना उचित है। अनर्थित्व, आर्ज्जव, मार्द्दव, सब जीवोंकी अहिंसा, अनृशंसता और शमदम, ही पवित्र तीर्थ है। जो लोग ममतारहित निरहङ्कारी, सुख दुःख आदि द्वन्द्व सहनेवाले और निष्परिग्रह हैं तथा जो लोग भिक्षान्न भोजन करते हुए जीवन बिताते हैं, वेही पवित्र तीर्थस्वरूप हैं। अहंज्ञानसे रहित तत्ववित् पुरुषश्रेष्ठ तीर्थ कहके वर्णित होते हैं; सर्व्वत्र समदर्शन ही पवित्रताका लक्षण है। जिनके चित्तसे रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण निवृत्त हुआ है, जो लोग शौचाशौच समायुक्त स्वकार्य्य निभानेमें सदा तत्पर, सर्व्वत्यागमें सब भांतिसे अनुरक्त, सर्व्वज्ञ, सर्व्वदर्शी और शौचके सहारे जिनमें पवित्रता उत्पन्न हुई है, वेही तीर्थ तथा वेही पवित्र हैं। जलसे शरीर धोनेवाले पुरुषको स्नात नहीं कहा जाता, जो लोग दमस्नात हैं, उन्होंने ही स्नान किया है, वेही बाहर और भीतरसे पवित्र हैं। जो लोग अतीत विषयोंमें अनपेक्ष, प्राप्तविषयमें ममतारहित तथा जिन्हें स्पृहा उत्पन्न नहीं होती, वेही परम पवित्र है। प्रज्ञान ही शरीरका विशेष शौच है और निष्किञ्चनत्व ही मनकी प्रसन्नता है। चरित्रशुद्धि, मनशुद्धि और तीर्थशुद्धि, इन तीनों शुद्धियोंकी अपेक्षा ज्ञानसे उत्पन्न हुई शुद्धि ही परम पवित्र मानी गई है। ज्ञानसे निर्म्मल हुआ मन और ब्रह्मज्ञान जलके सहारे जो लोग मानस तीर्थमें स्नान करते हैं, उनका नहाना ही स्नान है; तत्वदर्शियोंको ऐसा ही स्नान अभिमत है। शीलसम्पन्न, नियत भावसे समाहित गुणवान मनुष्य निश्चय ही सदा पवित्र हैं। हे भारत! ये सब शरीरस्थ तीर्थ कहे गये हैं, पृथ्वीके बीच जो सब पवित्र तीर्थ हैं, उसे भी सुनो। जैसे शरीरके अवयव पवित्र रूपसे वर्णित हुए हैं, वैसे ही पृथ्वीके सब अंश और जल

पवित्ररूपसे कहे गये हैं। जो लोग तीर्थोंके नाम लेते, तीर्थोंमें स्नान और पितृतर्पण करते हैं, वे तीर्थोंमें पाप धोके सहजमें ही सुरपुरमें गमन किया करते हैं। साधुओंके संसर्ग तथा पृथ्वी और जलके तेजके सहारे तीर्थ-सेवी मनुष्य अत्यन्त पुण्यभागी होते हैं। मनके तीर्थके अतिरिक्त पृथ्वीके तीर्थ स्वतन्त्र हैं, जो लोग दोनों तीर्थोंमें स्नान करते हैं, वे शीघ्र ही सिद्ध होते हैं। जैसे क्रियारहित बल और बलरहित क्रिया इस लोकमें कार्य्य साधन करनेमें समर्थ नहीं होती; परन्तु दोनोंके मिलनेपर कार्य्य सिद्ध होता है, वैसे ही शरीर शौच और तीर्थ शौचसम्पन्न पवित्र मनुष्यको दो प्रकारकी श्रेष्ठ शौचरूपी सिद्धि प्राप्त होती है।

१०८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, जो सब उपवासोंके बीच कल्याणकारी, महत् फलजनक और लोकसमाजमें संशयरहित हो, उसे ही आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! स्वयम्भूने स्वयं जिसका वर्णन किया है, जिसे करनेसे पशुओंको निवृत्ति प्राप्त होती है, उसका विषय सुनो। अगहन महीनेकी द्वादशी तिथिमें अहोरात्र केशवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है, तथा जो लोग पूजा करते हैं, उनके पाप नष्ट होते हैं। वैसे हो पौष महीनेमें नारायणकी पूजा करनेसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है और परम सिद्धि प्राप्त होती है। माघ महीनेकी द्वादशी तिथिमें अहोरात्र माधवकी पूजा करनेसे राजसूय यज्ञका फल मिलता है और पूजा करनेवाला निज कुलका उद्धार करता है। उसी भांति फाल्गुन महीनेकी द्वादशीमें जो लोग गोविन्दकी पूजा करते हैं, वे अतिरात्र यज्ञका फल पाते हैं और सोम लोकमें गमन किया करते हैं। चैत्र महीनेकी द्वादशीमें जो लोग अहोरात्र विष्णुको स्मरण करते हुए उनकी पूजा करते हैं, वे पुण्डरीक यज्ञका फल पाके देवलोकमें जाते हैं। वैसाख महीनेकी द्वादशी तिथिमें जो लोग मधुसूदनकी पूजा करते हैं, वे अग्निष्टोम यज्ञका फल पाते और सोमलोकमें गमन किया करते हैं। ज्येष्ठ महीनेकी द्वादशी तिथिमें जो लोग अहोरात्र त्रिविक्रमकी पूजा करते हैं, वे गोमेध यज्ञका फल पाते और अप्सराओंके द्वारा प्रमुदित हुआ करते हैं। आषाढ़ महीनेकी द्वादशीको जो लोग वामनदेवकी पूजा करते हैं, वे मनुष्य नरमेध यज्ञका फल पाते और अप्सराओंके द्वारा आनन्दित हुआ करते हैं। सावन महीनेकी द्वादशीमें जो लोग अहोरात्र श्रीधरकी पूजा करते हैं, वे पञ्च यज्ञका फल पाके देवलोकमें प्रमुदित होते हैं। भादों महीनेकी द्वादशीमें जो लोग हृषीकेशको पूजा करते हैं, वे सौत्रामणि यज्ञका फल पाके पवित्रचित्त होते हैं। आश्विन महीनेकी द्वादशी तिथिमें जो लोग माधवकी पूजा करते हैं, वे निःसन्देह सहस्र गोदानका फल पाते हैं। कार्त्तिक महीनेकी द्वादशी तिथिमें दामोदरकी पूजा करनेसे सब यज्ञोंके पवित्र फल प्राप्त होते हैं, इस विषयमें सन्देह नहीं है। जो लोग इसी प्रकार वर्ष दिनतक हृषीकेशकी पूजा करते हैं, वे जातिस्मर होते तथा उन्हें बहुतसा सुवर्ण प्राप्त होता है। जो लोग सदा विष्णुकी पूजा करते हैं, वे उनमें लीन होनेमें समर्थ होते हैं इस व्रतके समाप्त होनेपर ब्राह्मणोंको भोजन करावे अथवा घृत दान करे; यह निश्चय है, इसके अनन्तर उपवास नहीं होता। सनातन विष्णु भगवानने यह कथा कही है।

१०९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाप्राज्ञ युधिष्ठिरने शरशय्याशायी कुरुपितामह बूढ़े भीष्मके निकट जाके फिर प्रश्नकिया।

युधिष्ठिर बोले, मनुष्य लोगोंको रूप, सौभाग्य और प्रियत्व किस प्रकार हुआ करता है तथा धर्म्मार्थयुक्त पुरुष किसभांति सुखभागी होता है?

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! मार्गशीर्ष महीनेकी शुक्लप्रतिपदामें मूल नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर निज देवताके सहित मूल नक्षत्रका चन्द्रमाके सङ्ग दो पद कल्पना करे और रोहिणी नक्षत्रके सहित चन्द्रमाको जङ्घा कल्पना करे। अश्विनी नक्षत्रके सहित दोनों सक्थि; पूर्व्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ाके सहित दोनों उरुस्थल; उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रके सहित कटिकी कल्पना करे। पूर्व्व और उत्तर भाद्रपदके सहित नाभी; रेवती नक्षत्रके सहित दोनों नेत्र, धनिष्ठानक्षत्रके सहित पीठ, अनुराधा नक्षत्रके सहित उदर, विशाखा नक्षत्रके सहित दोनों भुजा और हस्त नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर दोनों हाथ निर्देश करे। हे महाराज! पुनर्व्वसु नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका सम्बन्ध होनेपर अङ्गुलियें और अश्लेषा नक्षत्रके योगसे नखोंकी कल्पना करे। हे राजेन्द्र! ज्येष्ठा नक्षत्रके योगसे ग्रीवा और श्रवणा नक्षत्रके संयोगसे दोनों कान, पुष्य नक्षत्रके योगसे नासिका, मृगशिरा नक्षत्रके योगसे दोनों नेत्र और चित्रा नक्षत्रके सहित ललाटकी कल्पना करे। भरणी नक्षत्रके योगसे सिर और आर्द्रा नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर उसके केशोंकी कल्पना करे। हे नरनाथ! इस चन्द्रव्रतके समाप्त होनेपर वेदपारग ब्राह्मणोंको घृत दान करे, इस प्रकार व्रत करनेसे मनुष्य सुभग दर्शनीय तथा ज्ञानभागी होकर जन्मता है और पूर्णिमाके चन्द्रमा सदृश परिपूर्णाङ्ग हुआ करता है।

११० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद पितामह! मनुष्योंकी श्रेष्ठ संसारविधि जाननेकी इच्छा करता हूं। हे राजेन्द्र नरपाल! पृथ्वीमण्डलपर मनुष्योंको किस प्रकार उत्तम व्यवहार करनेसे श्रेष्ठ स्वर्ग अथवा नरक प्राप्त होता है? पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश शरीरको त्यागके परलोकमें जाता है, तब उस समय कौन उनका अनुगमन किया करता है?

भीष्म बोले, ये उदार बुद्धिशक्तियुक्त वृहस्पति आरहे हैं, इन्हीं महाभागसे यह सनातन गोपनीय विषय पूछो। इस समय इनके अतिरिक्त कोई भी यह विषय नहीं कह सकता, वृहस्पतिके समान दूसरा वक्ता कहीं भी विद्यमान नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, युधिष्ठिर और भीष्म इसी प्रकार वार्त्तालाप कर रहे थे, उसी समय पवित्र-चित्तवाले वृहस्पति स्वर्गसे उतरके आये। अनन्तर धृतराष्ट्र आदि राजाओंके सहित सब सभासदोंने उठके उनकी अनुपम पूजा की। तब धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर भगवान् वृहस्पतिके निकट जाके न्यायपूर्व्वक यथार्थ रीतिसे प्रश्न करनेमें प्रवृत्त हुए।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद सर्व्वधर्म्मज्ञ भगवन्! पिता, माता, पुत्र, गुरु, स्वजन, सम्बन्धी और मित्रमण्डलीके बीच मनुष्योंका सहाय कौन है? पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश मृत शरीरको परित्याग करके गमन करता है, तब परलोकमें कौन उसका अनुगमन किया करता है?

वृहस्पति बोले, हे महाराज! पुरुष अकेला ही जन्मता और एकला ही मरता है, एकला ही दुर्गोंसे पार होता और अकेलेको ही दुःख भोगने पड़ते हैं। पिता, माता, पुत्र, मित्र, भ्राता, गुरु, स्वजन और सम्बन्धियोंमेंसे कोई भी इसका सहाय नहीं होता। पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश शरीर त्यागके मुहूर्त्त भरतक मानो रोदन करके

अन्तमें विमुख होकर चला जाता है, तब अकेला धर्म्म ही उस पिता मातासे परित्यक्त पुरुषका अनुगमन करता हैं, इसलिये धर्म्म ही पुरुषोंका सहाय है, धर्म्मकी ही मनुष्योंको सदा सेवा करनी उचित है। धर्म्मयुक्त प्राणियोंको स्वर्गमें श्रेष्ठ गति मिलती है और अधर्म्मयुक्त पुरुष नरकमें गमन किया करता है। इसलिये पण्डित पुरुष न्यायसे प्राप्त हुए धनसे धर्म्मकी सेवा करे। अकेला धर्म्म ही परलोकमें मनुष्योंका सहाय होता है; अल्प बुद्धिवाले मनुष्य पराये धनके लोभसे मोहित होके लोभ, मोह, अनुक्रोश और भय निबन्धनसे अकार्य्योंको किया करते हैं; धर्म्म, अर्थ और काम ये तीनों जीवित कालके फल हैं, इसलिये अधर्म्मको त्यागके इन त्रिवर्गोंको प्राप्त करना उचित है।

युधिष्ठिर बोले, आपके समीप मैंने धर्म्मयुक्त परम हितकर बचन सुना, अब शरीरको अवस्था जाननेके लिये अत्यन्त अभिलाष हुई है। मनुष्योंका मृत शरीर सूक्ष्म रीतसे अव्यक्तताको प्राप्त होनेसे नेत्रगोचर नहीं होता; तब धर्म्म किस प्रकार उसका अनुगामी होता है?

बृहस्पति बोले, पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, बुद्धि और आत्मा तथा साक्षीभूत रात्रि और दिन, ये सब मिलके इस लोकमें प्राणियोंके धर्म्मको सदा अवलोकन करते हैं, ये सब धर्म्म और जीवके अनुगामी होते हैं। हे महाबुद्धिमान्! त्वचा, हड्डी, मांस, शुक्र और रुधिर, ये जीवन रहित शरीरको छोड़ देते हैं, अनन्तर धर्म्मसंयुक्त जीव दूसरा शरीर धारण करता है, अन्तमें पञ्चतत्वोंके देवता उस जीवके शुभ वा अशुभ कर्म्मोंको देखते हैं। धर्म्मके सहित वह जीव इस लोक और परलोकमें सुख पाता है। पुनर्व्वार तुमसे और कौनसा विषय कहूं?

युधिष्ठिर बोले, धर्म्म जिस भांति अनुगमन करता है, उसे आपने कहा, अब किस प्रकार वीर्य्य प्रवृत्त होता है? मैं इसे जाननेकी इच्छा करता हूं।

बृहस्पति बोले, हे नरनाथ! जो अन्न पुरुष खाता है, शरीरमें रहनेवाले देवगण, पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि और छठवें मनके सन्तुष्ट होनेपर वही भोजन किया हुआ अन्न महत् वीर्य्यस्वरूप होता है। हे राजन्! अनन्तर स्त्री पुरुषोंके संयोगसे गर्भ उत्पन्न हुआ करता है। यह सब तुम्हारे समीप कहा गया, फिर क्या सुननेकी इच्छा है?

युधिष्ठिर बोले, जिस प्रकार गर्भ उत्पन्न होता है, वह आपके द्वारा वर्णित हुआ; अब जिस भांति पुरुषकी उत्पत्ति होती है, उसे कहिये।

बृहस्पति बोले, उत्पत्तियुक्त पुरुष पञ्चतत्त्वोंके गुणोंसे अभिभूत होता है और उन्हीं संयुक्त तत्त्वोंसे अपरागति प्राप्त हुआ करती है अर्थात् तदात्माभिमान रूप अभिभव हेतु यह सर्व्वभूतसम्पन्न होकर कर्त्तृत्वादि अभिमानी होता है, उस समय पञ्चतत्त्वोंके देवता जीवोंके शुभाशुभ कर्म्मोंको देखते हैं। फिर कौनसा विषय सुननेकी इच्छा है?

युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! त्वचा, हड्डी और मांस परित्याग करनेसे उन तत्त्वोंसे रहित होकर वह जीव किस स्थानमें रहके सुख दुःख भोग करता है?

बृहस्पति बोले, कर्म्मसे संयुक्त जीव शीघ्र ही वीर्य्यस्वरूप होकर स्त्रियोंके पुष्पको अवलम्बन करके यथा समयमें उत्पन्न होता है। यमके द्वारा बन्धन तथा क्लेश भोगके मनुष्य दुःखमय संसारचक्रमें क्लेशोंको भोगता है। हे महाराज! वह प्राणी इस लोकमें जन्मसेही धर्म्मफल अवलम्बन करनेसे सुकृत कर्म्मभोग किया करता है। जन्मसे ही यदि शक्तिके अनुसार धर्म्मको सेवा करे, तो वह पुरुष सदा सुख भोग किया करता है। और धर्म्मके बीच यदि अधर्म्मकी सेवा करे, तो वह जीव सुखके अनन्तर दुःखभोगनेमें

प्रवृत्त होता है। जो जीव अधर्म्मयुक्त हैं, वे यमलोकमें जाके दुःखके सहित तिर्य्यक्योनिमें जन्मते हैं। मोहयुक्त जीव इस लोकमें जिन कर्म्मोंके सहारे जिन योनियोंमें उत्पन्न हुआ करता है, उसे मैं कहता हूं, सुनो। इतिहासके सहित शास्त्रों और वेदोंमें यह वर्णित है, कि मर्त्यलोकवासी जीव घोर यमपुरीमें गमन करते हैं। हे पृथ्वीनाथ! वहांपर देवलोकसदृश पवित्रस्थान विद्यमान हैं, वहां तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न हुए जीव नहीं जासकते; इसके अतिरिक्त सब जीवोंकी ही उस स्थानमें गति हुआ करती है। ब्रह्मलोकसदृश दिव्य यमभवनमें जीव सदा कर्म्मगुणोंसे बद्ध होकर विविध दुःख भोग करता है। जैसे भाव और कर्म्मोंसे पुरुषको घोर कठोर गति प्राप्त होती है, इसके अनन्तर मैं तुमसे वह विषय कहता हूं। ब्राह्मण यदि चारों वेदोंको पढ़के मोहवश पतित पुरुषसे प्रतिग्रह लेवे, तो वह गर्दभयोनिमें जन्मता है। हे भारत! वह गधा होके पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, गधा मरनेपर बलवान बैल होता है, बलीवर्द्द सात वर्ष जीवित रहता है, बलीवर्द्द मरके ब्रह्मराक्षस रूपसे जन्मता है, ब्रह्मराक्षस तीन महीने जीवित रहके मरनेपर ब्राह्मण होता है। पतित पुरुषका याजन करनेसे कृमियोनिमें जन्म हुआ करता है। हे भारत! वह कृमियोनिमें पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, कृमियोनिसे छूटके गर्द्दभयोनिमें जन्मता है, गधा होके पन्द्रह वर्ष, फिर शूकर होके पांच वर्ष, पांचवर्ष तक कुक्कुट, पांच वर्ष तक सियार और एक वर्ष तक कुत्ता होके रहता है, अनन्तर मनुष्य होता है। जो निर्बुद्धि शिष्य उपाध्यायके निकट पाप करता है, वह जीव इसलोकमें तीनबार निःसन्देह तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न होता है। हे राजेन्द्र! वह पहले कुत्ता होता है, तिसके अनन्तर मांसभोजी हिंसक जन्तु होके जन्मता है, फिर गधा होके उत्पन्न होता है, अनन्तर प्रेतरूप होके पश्चात् ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न होता है, जो पापाचारी शिष्य मनसेभी गुरुपत्नी गमनकरता है, वह अधर्म्मयुक्त चित्त परलोकमें जाके इस लोकमें उग्र जन्म पाता है। वह पहले श्वयोनिमें उत्पन्न होकर तीस वर्ष तक जीवित रहता है, श्वान योनिमें मरके कृमियोनिमें जन्मता है। कृमि होके एक वर्ष तक जीवित रहता है, अनन्तर मरके ब्राह्मणयोनिमें जन्मता है। गुरु यदि अपनी इच्छानुसार पुत्रतुल्य शिष्यके ऊपर बिना कारणताकेही प्रहार करता है तो वह भी हिंसक जन्तु होके उत्पन्न हुआ करता है। हे महाराज! जो पुत्र पिता माताकी अवमानना करता है, वह मरके पहले गर्द्दभयोनिमें उत्पन्न होता है, गधा होके दश वर्ष तक जीवित रहता है, एक वर्ष तक कुम्भीर अर्थात् शतपदीयुक्त जन्तु विशेष होकर अन्तमें मनुष्य जन्म पाता है। जिस पुत्रके ऊपर माता पिता दोनों ही रुष्ट होते हैं, वह गुरुजनोंके असन्तोषवशसे मरके गर्द्दभयोनिमें जन्मता है, गधा होके दश महीनतक जीवित रहता, फिर कुत्ता होकर चौदह महीनेतक जीता है; अनन्तर बिड़ाल होकर सात महीना बिताके अन्तमें मनुष्य जन्म पाता है। जो पुरुष पितामाताके विषयमें आक्रोशप्रकाश करता है, वह सारिक अर्थात् शालिक पक्षी होके उत्पन्न होता है। हे महाराज! पितामाताके ऊपर प्रहार करनेसे पुरुष तीन वर्ष तक कच्छप होके जन्मता है। कछुआ तीन वर्ष तक शल्यक और छःमहीनेतक सांप होके जीवित रहता है, अन्तमें मनुष्य होके जन्मता है, जो लोग स्वामीका अन्न खाते हुए राजविषयोंकी सेवा करते हैं, वे मोहयुक्त मनुष्य मरके वानरयोनिमें जन्मते हैं। बन्दर होके दशवर्ष, चूहा होके पांच वर्ष अनन्तर कुत्ता होके छः मास समय बिताके मरनेपर मनुष्य जन्म पाते हैं। न्यस्त धन हरनेवाले

मनुष्य यमलोकमें जाकर सैकड़ों योनियोंमें भ्रमण करके शेषमें क्रमियोनिमें जन्मते हैं। हे भारत! वे उस क्रमियोनिमें पन्द्रह बर्ष जोवित रहते हैं अनन्तर पाप नष्ट होनेपर मनुष्ययोनिमें जन्मते हैं। असूयक मनुष्य मरके मृगयोनिमें जन्मता है। विश्वासघाती नीचबुद्धि मनुष्य मत्स्ययोनिमें उत्पन्न होता है। हे भारत! वह मछली होनेपर आठ बर्ष तक जीवित रहके मृगयोनिमें जन्मता है, मृग होके चार महीनेके अनन्तर छागयोनिमें उत्पन्न होता है। एक बर्ष पूरा होनेपर बकरा मरके कीटयोनिमें जन्मता है, अनन्तर वही जीव फिर मनुष्य योनि पाता है। हे महाराज! जो पुरुष मोहके वशमें अचेत होकर, धान्य, यव, कुलत्थ, सरसों, चना, उड़द, मूंग, गेहूं, तीसी वा अन्य शस्योंको हरता है, वह निलज्ज मूषिकयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। हे महाराज! अनन्तर वह मरके मृग होता है, फिर शूकर होके जन्मता और उत्पन्न होते ही रोगके वशमें होकर पञ्चत्वको प्राप्त होता है। हे राजन! अनन्तर वह निज कर्म्मवशसे श्वानयोनिमें जन्मता है, कुत्ता होके पांचवर्ष समय बिताके अन्तमें मनुष्यजन्म पाता है। पराई स्त्री हरनेसे मनुष्य वृकयोनिमें उत्पन्न होता है, क्रमसे वह कुत्ता, सियार, गिद्ध, सांप और बगुला होता है। हे महाराज! जो पापी मोहित होकर भाईकी स्त्री हरता है, उसी बर्ष भरतक पुंस्कोकिलत्व प्राप्त होता है। जो पुरुष कामके वशमें होकर मित्रभार्य्या, गुरुपत्नी और राजभार्य्या गमन करता है, वह मरनेपर शूकरयोनिमें उत्पन्न होता है, शूकर होके पांचवर्ष समय बिताके दश बर्ष तक भेड़िया होके रहता है। अनन्तर पांच बर्षतक बिड़ाल, दश बर्ष तक कुक्कुट, तीन महीनेतक चींटी और एक महीना कीट होनेके अनन्तर क्रमियोनिमें जन्मता है, उस कीटयोनिमें चौदह महीनेतक जीवित रहता है। अन्तमें धर्म्म नष्ट होनेपर फिर मनुष्ययोनिमें जन्मता है। हे भारत! बिवाह, यज्ञ अथवा दानके समय जो मनुष्य मोहवशसे उसमें बिघ्न करता है, वह मरके क्रमियोनिमें जन्मता है, क्रमि होके पन्द्रह बर्ष जीवित रहता है, अन्तमें अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्य शरीर पाता है। हे महाराज! पहले एक पुरुषको कन्यादान करके जो दूसरे पुरुषको दान करनेकी इच्छा करता है, वह जीव मरके क्रमियोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। हे युधिष्ठिर! क्रमियोनिमें तेरह बर्ष तक जीवित रहता है, अनन्तर अधर्म्म नष्ट होनेपर वह मनुष्ययोनिमें जन्मता है। जो पुरुष देवकार्य्य और पितर कार्य्य न करके स्वयं भोजन करता है, वह मरनेपर कौव्वा होता है, काग होके एक सौ बर्ष जीवित रहता है, अनन्तर कुक्कुट होता है, कुक्कुट जन्मके बाद एक महीनेतक काला सर्प होके रहता है, अन्तमें मनुष्य शरीर धारण करता है। जो पुरुष पितासदृश जेठे भाईको अपमानना करता है, वह मरके क्रौञ्चयोनिमें जन्मता है। क्रौञ्च होके चौबीस महीना जीवित रहता है, अन्तमें मरके मनुष्य तन पाता है। शूद्र ब्राह्मणी गमन करनेसे क्रमियोनिमें जन्मता है, अनन्तर फिर मरके शूकर होता है, हे महाराज! शूकर जन्म लेते ही रोगसे मरता है। हे राजन्! वह मूढ़ उक्त कर्म्मके वशमें होकर श्वानयोनिमें जन्मता है, कुत्ता होके कर्म्मफल भोगते हुए अन्तमें मनुष्य होता है। मनुष्य जन्ममें पुत्र उत्पन्न करके मरनेपर मूषिकयोनिमें जन्मता है।

हे महाराज कृतघ्न मनुष्य मरनेके अनन्तर यमपुरीमें जाकर क्रुद्ध यमदूतोंके द्वारा दारुण पीड़ा पाता है। हे भारत! वह यमके स्थानमें दण्ड, मुद्गर, शूल, दारुण अग्निकुण्ड, तरवारपत्रके घोर बन, बालू और कांटेयुक्त शाल्मली तथा और भी अनेक प्रकारकी उग्र यातना पाके अन्तमें बध्य हुआ करता है। हे भरत-

श्रेष्ठ! अनन्तर वह कृतघ्न वहांपर प्रचण्डदण्डके द्वारा नष्ट होकर संसारचक्रको अवलम्बन करके क्रिमियोनिमें जन्मता है। हे भारत! वह पन्द्रह वर्ष क्रिमि होके रहता है, अनन्तर गर्भमें जाता है, वह गर्भ शिशु अवस्थामें ही नष्ट होता है; फिर सैकड़ों बार गर्भमें उत्पन्न होके मरता है, बहुतसे जन्मके बाद तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न होता है, अनन्तर इस लोकमें कई वर्ष तक दुःख अनुभव करके पुनर्जन्म-रहित होके कूर्म्मयोनिमें जन्मता है। नीचबुद्धि मनुष्य दही हरनेसे बकपक्षी होता है और असंस्कृत मत्स्य हरनेसे प्लव अर्थात् कारण्डव पक्षी होके जन्मता है। जो दुर्ब्बुद्धि पुरुष मधु हरता है, वह दंश होके उत्पन्न होता है। फलमूल और अपूप हरनेसे मनुष्य चींटीयोनिमें जन्मता है; राजमाष हरनेसे हलगोलक अर्थात् लम्बी पूंछवाले गोलाकार कीटयोनिमें जन्म लेता है, पायस हरनेवाला तीतर पक्षी होता है, पिष्टमय पूप हरनेवाला उलूकयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। दुर्म्मति मनुष्य लोहा हरनेसे काग-योनिमें जन्मता है; नीचबुद्धि पुरुष कांसा हरनेसे हारीत पक्षी होता है; चांदीके पात्र हरनेवाला कपोतयोनिमें जन्म लेता है, स्वर्णपात्र हरनेवाला क्रिमियोनिमें जन्मता है। धोये हुए कौशेय वस्त्र हरनेवाला कयार पक्षी होके जन्मता है। क्रिमिकोशसे उत्पन्न हुए वस्त्रोंको हरनेसे मनुष्य वत्तक पक्षी होता है। साधारण वस्त्रोंका हरनेवाला मनुष्य मरके शुकपक्षी होता है; पट्टवस्त्र हरनेवाला पुरुष मरनेपर हंस होता है, सूती वस्त्र हरनेवाला मनुष्य मरनेके अनन्तर क्रौञ्चयोनिमें उत्पन्न होता है। हे भारत! पट्टवस्त्र तथा भेड़ प्रभृतिके रोमसे बने हुए कम्बल वा दुकूल वस्त्र हरनेसे मनुष्य शश-जन्तु होके जन्मता है, हरितालादि वस्त्र हरनेसे पुरुष मरके मयूरयोनिमें जन्मता है। लालवस्त्र हरनेवाला मनुष्य चकोरपक्षीयोनिमें जन्मता है। हे महाराज! लोभी मनुष्य इस लोकमें वर्णक (रङ्ग) प्रभृति तथा सुगन्धित वस्तु हरनेसे छछून्दर योनिमें जन्मता है। उस ही अवस्थामें पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, अनन्तर अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्य जन्म पाता है। दूध हरनेवाला पुरुष बगुला होता है। हे महाराज! जो पुरुष मोहके वशमें होकर तेल हरता है, वह मरके तैलपायीयोनिमें उत्पन्न होता है। धनकी इच्छासे अथवा वैरी होकर शस्त्रधारी अधम पुरुष अशस्त्र मनुष्यको मारनेसे मरनेके अनन्तर खरयोनिमें जन्मता है; गधा होके दो वर्ष जीवित रहता है, फिर शस्त्रसे मरके मृग होता और मृगयोनिमें सदा उद्विग्नरूपसे जन्म लेता है; एक वर्ष बीतनेपर वह मृग शस्त्रसे मरके मीनयोनिमें जालसे बद्ध होता है, अनन्तर श्वापद योनिमें जन्मता है, श्वापद होके दश वर्ष फिर द्वीपी होके पांच वर्ष जीवित रहता है, अनन्तर मरके कालक्रमसे अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्ययोनिमें जन्म लेता है। हे महाराज! नीचबुद्धि मनुष्य परस्त्री हरनेसे यमके स्थानमें जाकर अनेक प्रकारके क्लेश भोगता हुआ इक्कीस योनिमें भ्रमण करके कीटयोनिमें उत्पन्न होता है; बीस वर्ष क्रिमियोनिमें रहके तब मनुष्यजन्म पाता है। भोजनकी वस्तु हरनेसे मनुष्य मक्खी होके जन्मता है और कई महीनेतक मक्खीसमूहके वशमें रहता है, अनन्तर पाप नष्ट होनेपर मनुष्यत्व पाता है। धान्य हरनेवाला मनुष्य लोमश होके जन्मता है; पिन्याकयुक्त भोजनकी वस्तु हरनेसे मनुष्य बकरे सदृश बड़ा दारुण मूषिक होता है; वह पापात्मा मनुष्योंको दंशन करते हुए जीवित रहता है, दुर्बुद्धि मनुष्य घृत हरनेसे काकमद्गु अर्थात् शृङ्गवान जलपक्षी होता है, नीचबुद्धि मनुष्य मत्स्य हरनेसे कौवा होता है। नमक हरनेवाला चीरी-काकरूपसे उत्पन्न होता है। जो

मनुष्य विश्वासवशसे दूसरेके रखे हुए धनको हरता है, वह मरनेपर मत्स्ययोनिमें जन्मता है, मत्स्ययोनि पाके मरनेके अनन्तर मनुष्य-जन्म पाता है, मनुष्यत्व पाके चीणायु होता है। हे भारत! मनुष्य अनेक प्रकारके पाप-कर्म्म करके तिर्य्यक् योनिमें जन्मते हैं, वे आत्म-प्रमाणके अनुसार कुछ भी धर्म्म नहीं जानते, जो सब मनुष्य अनेक प्रकारके पापाचरण करके व्रत अवलम्बनपूर्व्वक निवास करते हैं, वे सुख दुःखसे संयुक्त होके सदा रोगी रहते हैं। लोभ मोहसे युक्त पापी मनुष्य म्लेच्छतुल्य हैं, वे लोग निःसन्देह सहवासके योग्य नहीं हैं। जो मनुष्य जन्मसे ही पाप नहीं करते, वे रूप-वान, रोगरहित तथा धनवान होते हैं। स्त्रियें इन उपरोक्त कार्य्योंके करनेसे पापग्रस्त होके इन्हीं जन्तुओंकी भार्य्या हुआ करती हैं। हे भारत! परस्व हरनेसे जो सब दोष होते हैं, वे वर्णित हुए, यह विषय मैंने तुम्हारे समीप संक्षेपमें ही कहा है। हे भारत! अन्य कथाप्र-संगमें फिर सुनोगे। हे महाराज! मैंने पहले समयमें देवर्षियोंके बीच यह विषय ब्रह्माके मुखसे सुना था और तुम्हारे पूछनेपर पूरी रीतिसे वर्णन किया। हे महाराज! इसे सुन-कर तुम सदा धर्म्ममें मन स्थित करो।

१११ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे अनघ वक्तृवर ब्रह्मन्! आपने मेरे समीप अधर्म्मको गति वर्णन की; अब मैं धर्म्मको गति सुननेकी इच्छा करता हूं। पापकर्म्म करनेसे किस प्रकार उत्तम गति मिलती है और कैसे कार्य्य करनेसे शुभ गति प्राप्त होती है?

बृहस्पति बोले, पुरुष अधर्म्मके वशमें होकर पापकर्म्म करता है और विपरीत ज्ञानसे नरक प्राप्त होता है। जो पुरुष मोहके वशमें होकर अधर्म्म करके शोक करता और मनको संयत रख सकता है, वह पापफल नहीं भोगता। जिसका अन्तःकरण जिस प्रकार पापकर्म्मकी निन्दा करता है, उस ही भांति उसी शरीरसे वह पुरुष अधर्म्मसे छूटता है। यदि पुरुष अपना किया हुआ पाप धर्म्मज्ञ ब्राह्मणसे कहे, तो वह उस ही समय अधर्म्मयुक्त अपवादसे छूट जाता है; मनुष्य अपने किये हुए पापोंको जिस प्रकार वर्णन करेगा, सावधानचित्त होके उस ही भांति मुक्त होगा। जैसे सर्प पुरानी केचुली छोड़ देता है, वैसे ही समाहित चित्तसे ब्राह्मणोंको विविध दान देकर मनुष्य सद्गति पाता है। हे युधिष्ठिर! जो सब दान करना होता है, वह तुमसे कहता हूं, जिसे करनेसे मनुष्य धर्म्मके सहारे अधर्म्मसे छूट जाता है। सब दानके बीच अन्न दान ही श्रेष्ठ है, इसलिये धर्म्मकी इच्छा करनेवाला सरल भावसे पहले अन्न दान करे। अन्न ही मनुष्योंका प्राण है, अन्नसे ही प्राणियोंका जन्म होता है, जीव उत्पन्न होके अन्नसे प्रतिष्ठित रहते हैं; इस ही निमित्त अन्न प्रशंसनीय है। देवर्षि, पितर और मनुष्यवृन्द अन्नकी ही प्रशंसा किया करते हैं; रन्तिदेवने अन्नदान करके स्वर्गलोक पाया है। शुद्धचित्तसे वेद पढ़नेवाले ब्राह्मणोंको न्यायसे प्राप्त हुआ अन्न दान करना चाहिये, एक सौ दश ब्राह्मण जिसके यहां शुद्धचित्तसे दिया हुआ अन्न भोजन करते हैं, उसका तिर्य्यग् योनिमें जन्म नहीं होता; और एक हजार दश ब्राह्मण जिसके दिये हुए अन्नको भोजन करते हैं वह पुरुष अधर्म्मसे छूटकर सदा योगशील होता है। जो ब्राह्मण वेदपाठी ब्राह्मणोंको श्रद्धापूर्व्वक अन्नदान करता है, वह सुखी होता है। हे पाण्डव! जो क्षत्रिय ब्राह्म-णके धनमें लोभ न करके निज उपार्ज्जित धनके सहारे वेदवेत्ता ब्राह्मणोंको पवित्र और समा-हित होकर अन्न दान करता है, वह उस ही

धर्मके सहारे सब पाप कर्म्मोंका नाश करता है। वैश्य यदि निज उपार्ज्जित कृषिकार्य्यका छठवां भाग ब्राह्मणोंको दान करे, तो वह सब पापोंसे छूट जाता है। ब्राह्मणकी प्राणसंशय उपस्थित होनेपर शूद्र अत्यन्त कठिनाईसे प्राप्त हुआ धन दान करनेसे पापरहित होता है। जो अहिंसक, मनुष्य निजबलसे अन्न उत्पन्न करके ब्राह्मणोंको दान करता है, उसे दुःख नहीं मिलता। मनुष्य हर्षयुक्त होके वेदवृद्ध ब्राह्मणोंको न्यायसे प्राप्त अन्नदान करनेसे पापोंसे छूट जाता है। सत्पथकी अनुवृत्ति करनेसे पुरुषके सब पाप नष्ट होते हैं। इस लोकमें उर्ज्जस्कार अन्न दान करके पुरुष उर्ज्जस्वी होता है। दातृगणके द्वारा जो मार्ग बना हुआ है, मनीषि लोग उस ही पथसे गमन करते हैं, वेही प्राणदाता हैं, उन्होंसे सनातन धर्म्म रचित हुआ करता है। मनुष्योंको उचित है, कि सब समयमें न्यायसे उपार्ज्जित अन्न ही सत्पात्रोंको दान करें, क्योंकि अन्न ही परम गति है। अन्नदानके सहारे मनुष्य भयङ्कर विषयोंकी सेवा नहीं करता, इसलिये अन्यायरहित अन्नदान करना योग्य है। गृहस्थ मनुष्य पहले ब्राह्मणोंको भोजन कराके तब स्वयं अन्न भोजन करनेमें यत्नवान होजावे, अन्नदानसे मनुष्य दिन पूरा करे, हे महाराज! मनुष्य न्यायपूर्व्वक दश सौ ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे घोर नरकमें नहीं जाता वा बार बार संसारमें भ्रमण नहीं करता; परलोकमें सर्व्वकाम युक्त होकर सुख भोग करता वा शोकरहित होके विलास करनेमें प्रवृत्त होता है, वही पुरुष रूपवान्, कीर्त्तिमान् और धनवान् हुआ करता है। हे भारत! यह तुम्हारे निकट उत्तम अन्नदानका महत् फल कहा, यही समस्त धर्म्म और दानका मूल है।

११२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, अहिंसा, वैदिककर्म्म, ध्यान, इन्द्रियसंयम, तपस्या और गुरुसेवा इन सबके बीच पुरुषके पक्षमें कल्याणकारी क्या है?

बृहस्पति बोले, हे भरतश्रेष्ठ! ये छहों विषय ही धर्म्मसङ्गत हैं, ये प्रत्येक ही पृथक् पृथक् धर्म्मके द्वार स्वरूप हैं, इसलिये इनका विषय वर्णन करता हूं, सुनो। जो मनुष्य हिंसामय धर्म्मसाधन किया करता है, वह जीवोंको निरर्थक ही नष्ट करता है, इसलिये मैं उस धर्म्मको श्रेष्ठ नहीं कहता। पुरुष काम क्रोध और लोभरूपी तीनों दोषोंको सब भूतोंमें अर्पण करके अपनेमें उक्त दोषोंको संयत करनेसे सिद्धिलाभ करता है। जो पुरुष अपने सुखकी इच्छासे अहिंसक जीवोंको दण्डसे मारता है, वह परलोकमें जाके सुखी नहीं होता। जो मनुष्य सब जीवोंके विषयमें आत्मसदृश दण्डरहित और जितक्रोध हैं, वे परलोकमें जाके सुखी होते हैं। जो निज दुःखकी भांति दूसरोंके दुःखसे व्याकुल होते हैं, सब प्राणियोंको आत्मरूपसे तत्त्वदृष्टिके द्वारा देखते हैं, उन गति विषयमें अत्यन्त हीनत्व हेतु मार्ग सूचकरहित स्थानान्वेषी पुरुषके पथदर्शन विषयमें देवता लोग भी मुग्ध होते हैं। जो विषय अपने प्रतिकूल हो वह दूसरेके विषयमें सन्धान न करे; संक्षेपरीतिसे यही धर्म्म है, कामवशसे अन्य धर्म्म भी प्रवर्त्तित हुआ करता है। पुरुष प्रत्याख्यान, दान, प्रिय, अप्रिय, सुख और दुःखमें अपनी उपमाके द्वारा प्रमाण पाता है। अन्य पुरुष दूसरेके विषयमें जैसा व्यवहार करता है अर्थात् हिंसित होकर हिंसा किया करता है और पाले जानेपर पालन करता है; इसलिये जीवोंको पालना चाहिये, हिंसा करनी योग्य नहीं है। जीव लोकमें इस ही उपमाके द्वारा जो धर्म्म हुआ करता है, वह निपुण पुरुषोंके सहारे उपदिष्ट हुआ है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिशक्तिसे युक्त

देवगुरु वृहस्पति धर्म्मराज युधिष्ठिरसे इतनी कथा कहके हम लोगोंके देखते ही स्वर्गलोकमें चले गये ।

११३ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर वक्तृवर महातेजस्वी राजा युधिष्ठिरने शरशय्यामें सोये हुए पितामहसे फिर प्रश्न किया ।

युधिष्ठिर बोले, हे महाबुद्धिमान् ! वेद प्रमाण दर्शननिबन्धसे ऋषि ब्राह्मण और देवगण अहिंसालक्षण धर्म्मकी ही प्रशंसा किया करते हैं । हे राजसत्तम ! मनुष्य वचन मन और कर्म्मसे हिंसा करते हुए किस प्रकार क्लेशोंसे मुक्त होता है ?

भीष्म बोले, हे शत्रुसूदन ! ब्रह्मवादी ऋषि लोग अहिंसाको मन, वचन, कर्म्म और भक्षण भेदसे चारप्रकार कहा करते हैं, उसकेबीच एकके व्यक्तहोनेसे भी सब भांतिसे अहिंसा नहीं होती, हे महाराज ! जैसे सब चौपाये जीव तीन पांवसे स्थित नहीं होते, वैसे ही यह अहिंसा तीन कारणोंसे वर्णित नहीं होती । जैसे पैरसे चलनेवाले जीवोंके क्षुद्र पदचिन्ह हाथीके पदचिन्हमें लीन होते हैं, वैसे ही अहिंसामें सब धर्म्म समाविष्ट हुआ करते हैं ; इसलिये पहले समयसे ही सब धर्म्मोंके बीच अहिंसा श्रेष्ठरूपसे वर्णित हुई है । जीव वचनमन और कर्म्म द्वारा लिप्त होता है, पहले मन ही मन त्याग करके अनन्तर वचन और कर्म्मसे परित्याग करते हुए जो लोग तीन प्रकारके मांसभक्षण नहीं करते, वे मुक्त होते हैं । ब्रह्मवादियोंने मन वचन और आनन्द, इन तीनोंको ही कारण कहे हैं, ऐसा सुना जाता है, कि इन तीनोंमें ही सब दोष प्रतिष्ठित हैं । तपयुक्त मनीषि पुरुष इन्हीं कारणोंसे मांस भक्षण नहीं करते । हे राजन् ! अब मेरे निकट मांस भक्षणके दोष सुनो । हे महाराज ! जो मोहयुक्त मूढ़ पुरुष पुत्र मांससदृश मांस भक्षण करते हैं, वे अधम पुरुष कहाते हैं । जैसे सदा पितामाताके संयोगसे पुत्र जन्मता है, वैसे ही अवश पापाचारी हिंसा करके बार बार पापयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है । प्रति जिह्वामें जिस प्रकार रसका ज्ञान होता है, वैसे ही अस्वादिष्ट वस्तुओंसे राग उत्पन्न होता है, ऐसा शास्त्रोंमें वर्णित है । असंस्कृत नमकीन अथवा विना लवणके जिस प्रकार भोजनकी वस्तु तैयार होती हैं, चित्त भी उसी भांति उसमें निरुद्ध हुआ करता है, मांस भक्षण करनेवाले नीच पुरुष परलोकमें भेरी, मृदङ्ग तथा अत्यन्त मधुरतन्त्रीके शब्दको किस प्रकार सुनेंगे ; जो लोग अचिन्तित अनिर्द्दिष्ट और असङ्कल्पित रसकी आकांक्षासे अभिभूत होते हैं, वे फलार्थी पुरुष ही प्रशंसा किया करते हैं । मांसकी प्रशंसा भी दोषकर्म्मयुक्त है, बहुतेरे साधु पुरुष अपना जीवन त्यागके निज मांससे दूसरोंके जीवनकी रक्षा करके स्वर्गमें गये हैं । हे महाराज ! यह तुम्हारे निकट सर्व्वधर्म्मानुसंहिता चारों कारणोंसे परिभूत अहिंसाका विषय कहा गया ।

११४ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, अहिंसाको आपने बार बार परम धर्म्म कहा है, परन्तु यह भी वर्णन किया है, कि श्राद्धमें पितर लोग मांसके अभिलाषी होते हैं । पहले आपने अनेक प्रकारके मांससे श्राद्धानुष्ठानका विषय कहा है, बिना हिंसाके मांस कहां मिलेगी इसलिये इस वाक्यके साथ पूर्व्व वाक्यसे विरोध होता है, इससे मांस परित्यागरूपी धर्म्ममें हम लोगोंको सन्देह उत्पन्न हुआ है ; मांस खानेवालोंको क्या दोष होता है ? और न खानेसेही कौनसे गुण हुआ करते हैं ? स्वयं मारके खानेसे अथवा दूसरेके द्वारा

मरे हुए जीवका मांस भक्षण करनेसे क्या दोष होता है? जो दूसरेके लिये पशु मारते हैं और जो लोग मोललेके भक्षण करते हैं, उन्हें क्या दोष होता है? हे पापरहित! इस विषयको आप यथार्थ रीतिसे वर्णन करिये, मैं इस सनातन धर्मको निश्चय करनेकी इच्छा करता हूं। पुरुषको किस प्रकार परमायु प्राप्त होती है? किस प्रकार मनुष्य बलवान हुआ करता है? किस लिये अव्यङ्ग होता है और किस कारणसे लक्षण सम्पन्न होके जन्मता है?

भीष्म बोले, हे कुरुनन्दन महाराज! मांस भक्षण न करनेसे जो धर्म होता है और इस विषयमें जो श्रेष्ठ विधि है, उसे मेरे निकट यथार्थ रीतिसे सुनो। जो लोग सौन्दर्य्य, अव्यङ्गता, आयु, बुद्धि, सत्त्व, बल और स्मृति प्राप्त करनेकी कामना करते हैं, उन महानुभावोंके द्वारा हिंसा परित्यक्त हुआ करती है। हे कुरुनन्दन युधिष्ठिर! इस विषयमें ऋषियोंके बहुतसे सम्वाद हैं, इसलिये उन लोगोंका मत सुनो। हे युधिष्ठिर! जो लोग यतव्रती होके प्रति महीने अश्वमेध यज्ञ करते हैं, वे समकालमें ही मधुमांस परित्याग करें। हे महाराज! सप्तर्षि, बालखिल्य मुनि और मरीचिप मनीषिवृन्द मांस भक्षण करनेकीही प्रशंसा किया करते हैं। जो लोग मांस भक्षण नहीं करते और पशुओंको नहीं मारते, स्वायम्भुव मनुने उन्हें ही सब प्राणियोंका मित्र कहा है। जो लोग मांस परित्याग करते हैं, वे सर्व्वभूतोंके अधर्षणीय, सब जीवोंके विश्वसनीय और सदा साधुसम्मत होते हैं। धर्म्मात्मा नारद मुनि कहते हैं, कि जो पुरुष दूसरेके मांससे निज मांसकी वृद्धि करनेकी इच्छा करते हैं, वे सदा अवसन्न होते हैं। बृहस्पति कहते हैं, मद्य पीने और मांस भक्षणसे निवृत्त होना दान, यज्ञ तथा तपस्याके तुल्य है। जो लोग एक सौ वर्षतक प्रति महीने अश्वमेध यज्ञ करते और जो लोग मांस भक्षणसे निवृत्त रहते हैं, मेरे मतमें वे दोनों ही समान हैं। मद्यमांस त्यागनेसे पुरुष सदा सत्र द्वारा यज्ञ करता है, सदा दान करनेका फल पाता और सदा तपस्वी हुआ करता है। हे भारत! जो पुरुष मांस भक्षण करके पश्चात् निवृत्त होता है, उससे जो फल हुआ करता है, उस फलको वेद प्रदान नहीं करसकते और यज्ञ भी उस फलको प्रदान करनेके योग्य नहीं है। रसज्ञान होनेपर मांस परित्याग करना अत्यन्त दुष्कर कर्म्म है, सब प्राणियोंको अभयप्रद यह व्रताचरण अत्यन्त श्रेष्ठ है। जो विद्वान् पुरुष सब जीवोंको अभय दक्षिणा दान करता है, वह लोकमें निःसन्देह प्राणदाता होता है। मनीषिवृन्द इस परम धर्म्मकी प्रशंसा करते हैं, जैसे अपना प्राण सबको प्रिय जीवोंका प्राण भी वैसा ही है; शुद्धचित्तवाले बुद्धिमान् मनुष्योंको आत्म उपमाके सहारे मनन करना योग्य है। जब ऐश्वर्य्यके अभिलाषी विद्वानोंको भी मृत्युसे भय है, तब मांस-उपजीवी पापी पुरुषोंके द्वारा हन्यमान रोगहीन निष्पाप जीवोंको तो मृत्युका भय होही सकता है। हे महाराज! इसलिये मांस त्यागको धर्म्म, अर्थ और सुखका उत्तम स्थान जानो, अहिंसा ही परम तपस्या और अहिंसा ही परम सत्य है अर्थात् अहिंसासे ही सत्य प्रवृत्त होता है। तृण, काष्ठ और पत्थरसे मांस नहीं उत्पन्न होता, जीवहिंसा करनेसेही मांस प्राप्त होता है, इसीसे उसके भक्षण करनेमें दोष हुआ करता है। सत्य और सरलताप्रिय देववृन्द स्वाहा और स्वधा मन्त्रोंसे प्रदान किया हुआ अमृत भोजन करते हैं और जिह्वा रसपरायण मांसाशियोंको राजस प्रकृति जानो, हे महाराज! दुर्गम पथ, घोर दुर्ग गहन वन रात्रि-दिन और सन्ध्याके समय, चौराहे, सभा, उद्यतशस्त्रमण्डली तथा सर्प भयमें मांस भक्षण न करनेसे दूसरोंके द्वारा भय नहीं होता। जो लोग मांस भक्षण नहीं करते, वे सब

जीवोंके शरण्य, सबके विश्वासी, सब लोगोंके उद्वेगकर होते और स्वयं भी सदा व्याकुल नहीं होते। यदि खानेवाला न रहे, तो घातक नहीं होता; खानेवालेके निमित्त ही घातक होता है; मनुष्य मांस-भक्षकके लिये पशुओंका बध किया करते हैं, यह अभक्ष्य है, इसी निमित्त हिंसाकी निवृत्ति होती है; इसलिये खानेवालोंके ही लिये मृगादिकोंकी हिंसा प्रवर्त्तित हुई है। हे महाद्युति! हन्यमान जीव हिंसकोंकी आयु ग्रास करता है, इसलिये जो लोग निज उन्नतिकी अभिलाष करते हैं, वे मांस भक्षण न करें, प्राणि हिंसक रौद्रकर्म्म करनेवाले मनुष्योंकी किसी स्थानमें भी पवित्रता नहीं प्राप्त होती, वे मांसभक्षी जीवोंकी भांति सब जीवोंके ही उद्वेगजनक होते हैं। लोभ, बुद्धि, मोह, बलवीर्य्य अथवा पापियोंके संसर्गसे मनुष्योंकी अधर्म्ममें रुचि होती है। पराये मांससे निज मांसकी वृद्धि करनेकी इच्छा करनेवाला मनुष्य व्याकुल होके निवास करता और जहां तहां जन्म लिया करता है। संयतचित्तवाले परमर्षिगण मांसत्यागको धन, यश और आयुकी वृद्धि करनेवाला स्वर्गजनक तथा महत् स्वस्त्ययन कहते हैं। हे कौन्तेय! मांस भक्षणसे जो सब दोष होते हैं, पहले समयमें महामुनि मारकण्डेयके मुखसे मैंने उसे सुना था। जीनेकी इच्छा करनेवाले मृत वा मारे हुए जीवोंका जो पुरुष मांस भक्षण करता है, वह मारनेवालेके सदृश है; कोई धनसे मांस क्रय करते हैं, कोई उपभोगके लिये भक्षण करते हैं, कोई बध और बन्धनादिसे पशुओंको मारते हैं। मांस क्रय करना, भक्षण और मारना, ये तीन प्रकार बध हैं। जो पुरुष स्वयं मांस भक्षण न करके भक्षकका अनुमोदन करता अथवा मारनेवालेका अनुमोदन करनेमें प्रवृत्त होता है, वह पुरुष भी दोषोंसे लिप्त होता है, जो लोग मांस भक्षण न करके प्राणियोंके विषयमें दयावान् होते हैं, वे सब जीवोंके अनभिभवनीय, आयुष्मान्, रोगरहित और सुखी हुआ करते हैं। मैंने सुना है, कि हिरण्यदान, गोदान और भूमिदानकी अपेक्षा मांस भक्षण न करनेसे अधिक धर्म्म होता है। अपरोक्षित विधिसे रहित वृथा मांस भक्षण न करे; यदि मनुष्य वैसा मांस भक्षण करता है, तो निःसन्देह नरकमें जाता है। प्रोक्षित अथवा अभ्युक्षित अथवा ब्राह्मणोंकी कामनासे यदि मांस भक्षण करे, तो उसमें अल्प दोष जानना चाहिये और यदि इसके विपरीत किया जाय, तो मनुष्य दोषोंसे लिप्त हुआ करता है। जो अधम पुरुष खानेवालोंके लिये पशुओंको मारता है, उस विषयमें घातक ही महादोषसे लिप्त होता है, खानेवाले उसकी भांति दोषयुक्त नहीं होते। जो यज्ञोपनिषद-बाधसे रहित मनुष्य अश्वमेध आदि यज्ञ तथा वेदमें कहे हुए उपायको अवलम्बन करके जीवहिंसा करते हैं, उस यज्ञच्छलसे मांसके अभिलाषी पुरुष नरकगामी होते हैं। जो पुरुष मांस खाके पश्चात् उसे भक्षण करनेसे विरत होता है, उसे भी महान् धर्म्म हुआ करता है; क्यों कि वह पापसे निवृत्त होता है। आहर्त्ता, अनुमन्ता, घातक और क्रय-विक्रय करनेवाले, संस्कारकारक और उपभोक्ता, ये सब कोई खादक हैं, प्राचीन ऋषियोंसे सेवित वेदोंमें प्रतिष्ठित विधिके अनुसार एक दूसरा प्रमाण कहता हूं। हे नृपश्रेष्ठ! प्रजार्थी पुरुषोंने जो प्रवृत्तिलक्षणयुक्त धर्म्मका वर्णन किया है, वह मोक्षके अभिलाषी मनुष्योंका धर्म्म नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! वेदोक्त प्रमाण और पितरोंके श्राद्धके समयमें जो मांस मन्त्रसे संस्कारयुक्त प्रोक्षित और अभ्युक्षित होता है, वही पवित्र हविस्वरूप है; इसके विपरीत वृथा मांसको मनुने अभक्ष्य, अस्वर्ग्य, अयशस्य तथा राक्षसोंका भक्ष्य कहा है। हे महाराज! पहले मनुष्य अवैध मांस भक्षण न

करे, क्यों कि अप्रोक्षित अवैध मांस मनुष्योंको भक्षण करना उचित नहीं है। सुखकी इच्छा करनेवाला पुरुष सब प्रकारसे प्राणियोंके मांस भक्षण न करे। सुना जाता है, कि पहले समयमें मनुष्योंके व्रीहिमय पशु थे, पुण्यलोकपरायण यज्ञ करनेवाले उन्हींके सहारे यज्ञ करते थे। पहले समयमें ऋषियोंने चदीपति वसुसे सन्देहयुक्त होकर प्रश्न किया था; अभक्ष्य मांसको भी भक्ष्य कहनेवाले राजा स्वर्गसे पृथ्वीपर आगमन करते हैं, वह भी ऐसा कहनेसे फिर पृथ्वीतलमें प्रविष्ट हुए थे। प्रजाकी हितकामना करनेवाले महाभाग अगस्त्यने तपस्याके सहारे सर्व्व दैवत आरण्यक मृगोंको प्रोक्षण किया था, पितर और देवसम्बन्धीय कार्य्य मांसके द्वारा किये जानेपर निकृष्ट नहीं होते। पितर लोग न्यायपूर्व्वक मांससे तृप्त होकर प्रीतियुक्त होते हैं। हे नरनाथ पापरहित राजेन्द्र! मांस भक्षण न करनेसे जो सुख होता है, उसे कहता हूं, सुनो। जो लोग एक सौ वर्षतक दारुण तपस्या करते और जो लोग मांस परित्याग किया करते हैं, मेरे मतमें वे दोनों ही समान हैं। हे नरनाथ! कौमुदीमय शुक्लपक्षमें मधुमांस परित्याग करे, क्यों कि उससे धर्म्म होता है। जो लोग वर्षके बीच चार महीनेतक मांस त्यागते हैं, उन्हें कीर्त्ति, आयु, यश और बल प्राप्त होता है। अथवा जो लोग एक महीना मांस भक्षण नहीं करते, वे सब क्लेशोंको अतिक्रम कर निरामय होके परम सुखसे जीवनका समय बिताते हैं। जो लोग एक महीना वा एक पक्ष मांस नहीं खाते, उन हिंसानिवृत्त लोगोंके लिये ब्रह्मलोक विहित है। हे पार्थ! जिन्होंने सदसत् वस्तुओंको जाना है और सब जीवोंको आत्मस्वरूप जानते हैं, वे राजा लोग शुक्लपक्षमें मांस भक्षण नहीं करते। नाभाग, अम्बरीष, महानुभाव गय आयु, अनरण्य, दिलीप, रघु, पुरु, कार्त्तवीर्य्य, अनिरुद्ध, नहुष, ययाति, नृग, विष्वक्सेन, शशबिन्दु, युवनाश्व, शिवि, उशीनर, मुचुकुन्द, मान्धाता और हरिश्चन्द्र, इन सब राजाओंने शरत्कालके शुक्लपक्षमें मांस भक्षण नहीं किया था। सत्य वचन कहो, झूठी बात मत कहो, सत्य ही सनातन धर्म्म है; राजा हरिश्चन्द्र सत्यके सहारे सुरपुरमें चन्द्रमाकी भांति विहार करते हैं।

हे राजेन्द्र! श्येनचित्र, सोमक, वृक, रैवत, रन्तिदेव, वसु, सृञ्जय, कृप, भरत, दुष्मन्त, करुष, राम, अलर्क, नल, विरूपाश्व, निमि, धीमान् जनक, ऐल, पृथु, वीरसेन, इक्ष्वाकु, शम्भु, श्वेत, सगर, अज, धुन्धु, सुबाहु, हर्य्यश्व, क्षुप और भरत, ये सब तथा दूसरे राजा लोग शरत्कालके शुक्लपक्षमें मांस त्याग करनेसे स्वर्ग लोकमें गये हैं और श्रीसम्पन्न तथा दीप्यमान होके ब्रह्मलोकमें निवास करते हुए सहस्रों स्त्रियोंसे युक्त होकर गन्धर्व्वोंसे पूजित हुआ करते हैं। इसलिये जो महात्मा इस अहिंसा धर्म्मलक्षणयुक्त उत्तम धर्म्माचरण करते हैं, वे स्वर्गमें वास किया करते हैं। इस लोकमें जो धार्मिक पुरुष जन्मसे ही मधुमांस परित्याग करते और मद्य नहीं पीते, वेही मुनिरूपसे स्मृत होते हैं। जो लोग यह अमांसाद धर्म्माचरण करते अथवा दूसरोंको सुनाते हैं, वे यदि अत्यन्त दुराचारी भी हों, तौभी नरकमें नहीं जाते। हे महाराज! जो लोग इस ऋषिपूजित पवित्र अमांसभक्षण धर्म्मका सदा पाठ करते अथवा निरन्तर सुनते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त होकर सर्व्वकामके द्वारा पूजित होते और उन्हें स्वजनोंके बीच विशिष्टता प्राप्त होती है, इस विषयमें सन्देह नहीं है। विपदयुक्त पुरुष आपदोंसे मुक्त होता है, बद्ध पुरुष कारागारसे छूट जाता है, आतुर मनुष्य रोगरहित हुआ करते और दुःखित पुरुषोंको दुःखसे छुटकारा मिलता है। हे कुरुश्रेष्ठ! जो मनुष्य मांस भक्षण नहीं करता, उसे तिर्य्यक्योनि प्राप्त

नहीं होती, वह रूपवान् और समृद्धिमान् होके महत् यश पाता है। हे महाराज! यह तुम्हारे निकट मांस परित्याग विषयमें प्रवृत्ति और निवृत्तियुक्त ऋषियोंकी कही हुई विधि वर्णित हुई।

११५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, जगत्के बीच ये मांसभोजी मनुष्य विविध भक्ष्य त्यागके महाराक्षसमूहकी भांति नृशंस होते हैं। ये लोग जिस प्रकार मांसभक्षणकी अभिलाष किया करते हैं, अनेक प्रकारके अपूप, शाक और खाण्डव वस्तुओंको भोजन करनेमें वैसी इच्छा नहीं करते; इसलिये इस विषयके विचारनेमें मेरी बुद्धि अत्यन्त मुग्ध होती है। मेरी समझमें मांससे बढ़के उत्तम मधुर रसयुक्त वस्तु और कुछ भी नहीं है। हे प्रभु भरतश्रेष्ठ! मांसके न खानेसे जो फल होता तथा भक्षण करनेसे जो दोष होते हैं, उसे भी सुननेकी इच्छा करता हूं। हे धर्म्मज्ञ! कौन वस्तु भक्ष्य है, कौनसी अभक्ष्य है, उसे धर्म्मपूर्व्वक पूरी रीतिसे कहिये। हे पितामह! यह विषय जैसा है, तथा इसके त्यागनेसे जो फल मिलते और भक्षण करनेसे जो दोष हुआ करते हैं, उसे मेरे समीप वर्णन करो।

भीष्म बोले, हे महाबाहो भरतश्रेष्ठ! तुमने जो कहा, वह यथार्थ है; भूलोकमें मांससे बढ़के परम रस और कुछ भी नहीं है। क्लिष्ट, चीण, सन्तप्त, ग्राम्य धर्म्ममें रत और मार्गसे थके हुए मनुष्योंके पक्षमें मांससे बढ़के श्रेष्ठ भक्ष्य दूसरा कुछ भी नहीं है। हे शत्रुतापन! मांस सदा ही बलको बढ़ाता तथा उत्तम पुष्टिका विधान करता है; इसलिये कोई भक्ष्य भी मांससे श्रेष्ठ नहीं है। हे कौरवनन्दन! मांस न खानेसे जो सब फल प्राप्त होते हैं, उसे मैं कहता हूं, सुनो। जो मनुष्य दूसरेके मांससे निज मांस बढ़ानेकी अभिलाष करता है, उससे अत्यन्त चुद्र तथा नृशंस पुरुष दूसरा कोई भी नहीं है। जगत्के बीच प्राणसे अधिक प्रियपदार्थ और कुछ भी विद्यमान नहीं है, इसलिये जिस प्रकार मनुष्य अपने प्राणको बचाता है, दूसरोंके विषयमें भी उसी भांति दया करे। हे तात! शुक्रसे मांस उत्पन्न होता है, इस विषयमें सन्देह नहीं है; इसलिये उसे भक्षण करनेसे महान् दोष और भक्षण निवृत्तिको ही पुण्य कहा जाता है; परन्तु इस लोकमें वेदविहित विधिके अनुसार मांस भक्षण करनेसे दोष नहीं होता; ऐसी जनश्रुति है, कि "यज्ञके लिये पशुवृन्द उत्पन्न हुए हैं।" वेदविधिसे अन्यथा आचरणमें प्रवृत्त मनुष्योंके अनुष्ठानको राक्षसधर्म्म कहते हैं; क्षत्रियोंकी जो विधि दीख पड़ती है, उसे भी सुनो। क्षत्रियको बाहुबलसे प्राप्त हुए मांसको भक्षण करनेसे दोषयुक्त नहीं होता। हे महाराज! पहली समयमें अगस्त्य मुनिके द्वारा सर्व्व देवताओंके उद्देश्यसे जङ्गली पशु सब प्रकारसे प्रोक्षित हुए, इसहीसे मृगया प्रशंसनीय हुआ करता है, अपने प्राणकी आशाको बिना त्यागे मृगया नहीं होता। हिंसक पशुओंसे अपने प्राणनाशकी सम्भावना रहती है, इसलिये प्राणपणसे होनेवाला मृगया दोषका कारण नहीं है; समतायुक्त होके मनुष्य मृगयामें पशुओंको मारता है अथवा पशुओंके द्वारा मारा जाता है। हे भारत! इस ही लिये राजर्षि लोग मृगयाके निमित्त जाते हैं, इसमें वे पापसे लिप्त नहीं होते और मृगयाको पाप नहीं समझते। हे कौरवनन्दन! सब जीवोंके विषयमें दया करनेके सदृश धर्म्म इस लोक और परलोकमें दूसरा कुछ भी नहीं है, दयावान मनुष्योंको कदापि भय नहीं होता, दयावान् तपस्वियोंको इस लोक और परलोकमें

जय होती है। धर्म्मज्ञ पुरुष अहिंसाको ही धर्मका लक्षण जानते हैं; जो कर्म्म अहिंसायुक्त हो, आत्मवान् पुरुष उसे ही करे; पितृ यज्ञ और दैवयज्ञमें प्रोक्षित मांस ही हवि रूपसे वर्णित हुई है। मैंने सुना है, कि जो लोग दयावान् होके सब जीवोंको अभयदान करते हैं, सब जीव भी उन्हें अभय प्रदान करते हैं। घायल, स्खलित, क्षत, पतित, और क्लेशित पुरुषोंको सम विषम स्थलमें सब जीव ही रक्षा किया करते हैं। जो पुरुष भयके समयमें दूसरोंका भय छुड़ाता है, उसे हिंसक जीव और पिशाच राक्षस भी नहीं मारते; वह भय उपस्थित होनेपर उससे छुटकारा पाता है। प्राणदानसे बढ़के परम दान न हुआ और न होगा। यह निश्चय है, कि आत्मासे अधिक प्रिय और कुछ भी नहीं हैं। हे भारत! मरना सब जीवोंका ही अनभिलषित है, जीवको मृत्युके समय सदा ही दुःख होता है, सब जीव गर्भवास और जन्म जरा दुःखके सहारे सदा संसार-सागरमें परिभ्रमण करते हैं और मरनेसे डरते हैं। सब प्राणी गर्भवासके समय मूत्र, श्लेष्म और पुरीष प्रभृतिको अत्यन्त दारुण उत्कट, क्षार खट्टे और कड़वे रसोंसे पच्यमान हुआ करते हैं, मांसलोभी पुरुष जन्म लेके भी उस समय अवश तथा विवश रहनेसे बार बार छिद्यमान और पच्यमान् दीख पड़ते हैं, वे लोग उन्हीं योनियोंमें जन्म लेके फिर कुम्भीपाक नरकमें पकते हैं, वे आक्रान्त तथा मृयमाण होके बार बार भ्रमण करते हैं। पृथ्वीपर खोजनेसे आत्मासे अधिक प्रिय पदार्थ और कुछ भी नहीं दिखा जाता, इसलिये आत्मावान् पुरुष सब प्राणियोंमें ही दयावान् होवे। हे महाराज! जो लोग जन्मसे ही मांस भक्षण नहीं करते, उन्हें निःसन्देह सुरपुरमें उत्तम महत् स्थान प्राप्त होता है। जो लोग जीनेकी इच्छा करनेवाले जीवोंका मांस भक्षण करते हैं, वे उन्हीं जीवोंके द्वारा भक्षित होते हैं, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है, हे भारत! जब कि वह मुझे भक्षण करता है, तब मैं भी उसे भक्षण करूंगा, 'मांस' शब्दका यही मांसत्व मालूम करो। हे महाराज! घातक सदा ही बध्य होता है, अनन्तर भक्षक पुरुष बध्य हुआ करता है; आक्रोष्टा पुरुष सदा ही आक्रुष्ट होता और द्वेष करनेवालेको द्वेषत्व प्राप्त हुआ करता है। जो पुरुष जिस शरीरसे जैसा कर्म्म करता है, वह उस ही शरीरसे उन फलोंको भोगता है। अहिंसा परमधर्म्म, अहिंसाही परम दम, अहिंसाही परमदान अहिंसाही परम तपस्या है, अहिंसा परम यज्ञ, अहिंसाही परम तप, अहिंसा परम बल, अहिंसा ही परम मित्र, अहिंसा परम सुख, अहिंसा परम सत्य और अहिंसा ही परम श्रुत है। सब यज्ञोंमें जो दान किया जाता है, सब तीर्थोंके स्नान तथा सब दानोंके फल अहिंसाके सदृश नहीं हैं। अहिंसक मनुष्योंको तपस्या अक्षय होती है, अहिंसक पुरुष सदा ही यज्ञ करता और हिंसारहित मनुष्य सब जीवोंके पितामाता सदृश है। हे कुरुपुङ्गव! यह मैंने अहिंसाका फल कहा; इसकी अपेक्षा और जो सब अत्यन्त अधिक फल हैं, वे एक सौ वर्षमें भी नहीं कहे जा सकते।

११६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! जो लोग अकाम अथवा सकाम होकर महाध्वरमें मरते हैं, उन्हें कौनसी गति प्राप्त होती है? हे महाप्राज्ञ! महासमरमें मनुष्योंका प्राणत्यागना अत्यन्त दुःखकर है। समृद्धि, असमृद्धि शुभ वा अशुभ समयमें प्राण परित्याग करना जो अत्यन्त दुष्कर है, उसे आप जानते हैं; इसलिये उस विषयका कारण मेरे समीप वर्णन करिये। मैं आपको सर्व्वज्ञ जानता हूं।

भीष्म बोले, हे पृथ्वीपति युधिष्ठिर! समझ अथवा असमझ शुभ वा अशुभकर्ममें इस संसारके बीच उत्पन्न हुए प्राणिवृन्द जिस भावसे रत रहते हैं, मेरे समीप उसका कारण सुनो; तुमने यह उत्तम प्रश्न किया है। हे राजन युधिष्ठिर! इस विषयमें द्वैपायन और कीटके सम्वादयुक्त पुराना इतिहास कहता हूं। पहले समयमें विप्रवर कृष्णद्वैपायन ब्रह्मरूपसे विचर रहे थे, उस समय उन्होंने शकटके मार्गमें शीघ्रताके सहित दौड़ते हुए एक कीटको देखा सब जीवोंके गतिज्ञ और शरीरधारी मात्रको भाषा जाननेवाले सर्व्वज्ञ वेदव्यासने उस समय कीटको देखकर यह वचन कहा,—

व्यासदेव बोले, हे कीट! तुम अत्यन्त भयभीत और आतुर दीख पड़ते हो, तुम दौड़के कहां जाओगे? तुम्हें किससे भय हुआ है?

कीट बोला, हे महाबुद्धिमान! इस वृहत् शकटका शब्द सुनके मुझे भय हुआ है, यह अत्यन्त दारुण शब्द सुननेमें आता है, परन्तु उसने मेरा जीवन नष्ट नहीं किया, इसी लिये इस स्थानसे जाता हूं। प्रहार करनेमें जिस प्रकार निश्वासयुक्त गऊके बछड़ोंका शब्द होता है, वैसे ही इस शब्दको सुनता हूं। बहुत सा भार ढोनेवाले मनुष्योंके सन्निकर्षनिबन्धनसे शकटके अनेक प्रकारके शब्द कानके छिद्रमें प्रवृष्ट होते हैं। मेरे सदृश कीटयोनिमें उत्पन्न हुए जीव ऐसे शब्दको नहीं सुन सकते, इस ही निमित्त अत्यन्त दारुण भयसे इस स्थानको छोड़के दूसरे स्थानमें जाता हूं, जीवोंको मृत्यु से ही दुःख है, जीवन अत्यन्त दुर्लभ है, इसीलिये मैं डरके भागता हूं और सुख छोड़के दुःखमें भी नहीं जाता हूं।

भीष्म बोले, व्यासदेवने कीटका ऐसा वचन सुनके उससे कहा, हे कीट! किस प्रकार तुम्हें सुख होता है, तुम शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध और अनेक भांतिकी भोज्यवस्तुओंको भोगना नहीं जानते। हे कीट! इसलिये तुम्हारा मरना ही कल्याणकारी है।

कीट बोला, हे महाप्राज्ञ! जीव सब ठौर रत रहता है, इसलिये इस योनिमें भी मुझे सुख है, ऐसा जानके ही मैं जीवित रहनेकी अभिलाष करता हूं। इस कीटशरीरमें भी देहके अनुसार सब विषय प्रवर्त्तित हुए हैं, जङ्गम और स्थावर जीवोंके भाग पृथक् पृथक् हैं। हे प्रभु! मैं पहले जन्ममें अधिक धनवाला शूद्र जातीय मनुष्य था, मैं ब्रह्मनिष्ठ न होकर नृशंस कृपण, वृद्धिजीवी, तीक्ष्णवादी, अतिनिकृतिप्रज्ञ और सब भांतिसे लोगोंका द्वेषी था। परस्परमें छल करके परधन हरनेमें रत रहता था, गृहके बीच सेवकों और अतिथियोंको परित्याग करके स्वयं पहले भोजन करता और मत्सरतासे स्वादुकाम तथा नृशंस होकर भोजन करनेकी इच्छा करता, अर्थ काम होके देव और पितृ यज्ञके लिये श्रद्धापूर्व्वक अन्न प्रदान नहीं करता था; पहले अन्न दान करनेकी इच्छा करके भी फिर उससे विमुख रहता था। गुप्तभावसे जो लोग शरणागत होनेके लिये मेरा आसरा करते और जो लोग डरके मेरे शरणागत होते थे, मैं अकस्मात् उन्हें परित्याग करता था और जो लोग अभय प्रार्थना करते थे, उनका परित्राण नहीं करता था। दूसरोंके धन, धान्य, सोनेकी वस्तु, अद्भुत वस्त्र और सम्पत्ति देखके मैं निरर्थक डाह करता था, मैं दूसरेके ऐश्वर्य्यकी इच्छा न करके लोगोंके सुखको देखनेसे ही ईर्षा करता था। अपने प्रयोजनके लिये दूसरोंका भी धर्म्म, अर्थ और काम, नष्ट करता था, पूर्व्व जन्ममें मैंने नृशंस तथा बहुतसे गुणयुक्त कार्य्य किये थे; मैं जिस प्रकार अपने पुत्रको परित्याग करनेसे दुःख होता है, मैं इस समय उन कर्म्मोंको स्मरण करके उसी भांति शोक करता हूं। मैंने जो कुछ सत्कर्म्म किया था, उसका कुछ भी फल नहीं जानता; मैं बूढ़ी

जननीका सत्कार करता तथा ब्राह्मण लोग भी मेरे द्वारा पूजित हुए थे। हे ब्रह्मन्! एकबार जाति-गुणसे युक्त कोई अतिथि सङ्गतिक्रमसे मेरे गृहपर आया था, मैंने उसकी पूजा की थी, इसही लिये स्मरणशक्तिने मुझे परित्याग नहीं किया। हे तपोधन! मैं कर्म्मके सहारे भविष्यत सुख देखता हूं, इसलिये आपके समीप उस कल्याणके विषयको सुननेकी अभिलाष करता हूं।

११७ अध्याय समाप्त।

व्यासदेव बोले, हे कीट! तू जो तिर्य्यक् योनिमें जन्म लेके शुभकर्म्मके सहारे भ्रष्ट नहीं होता है, वह मेरा ही कार्य्य है, मैं तपबलसे देखते ही तेरा उद्धार करूंगा, तपोबलसे प्रबल और कुछ भी नहीं है। मैं जानता हूं कि तू अपने किये हुए पापकर्म्मोंसे कीटानुकीट हुआ है, यदि धर्म्मको मानो, तो फिर धर्म्म प्राप्त होगा। देव और तिर्य्यक् प्रभृति सब कोई कर्म्म-भूमिमें अपने किये हुए पाप पुण्यका फल भोग किया करते हैं। मनुष्योंका धर्म्म और गुण कामका हेतु हुआ करता है। बचन बुद्धि हाथ पांवसे रहित विपश्चित अथवा मूर्ख जो जीवित रहते हैं, उनका लोग उपहास करते हैं; श्रेष्ठ विप्र जीवित रहके सूर्य्य चन्द्रमाकी पूजा करते और उत्तम कथा कहा करते हैं। हे कीट! इसलिये मैं तुझे उस ही ब्राह्मणयोनिमें प्रेरण करूंगा, तू ब्राह्मणत्व पानेसे कर्म्मोंका फल भोगेगा और सब जीवोंको परित्याग करेगा, तब मैं तुझे परब्रह्ममें लीन करूंगा अर्थात् तुझे ब्रह्मविद्या दान करूंगा। वह कीट 'ऐसा ही हो,' यह बचन कहके मार्गमें ही स्थित हुआ, इतने ही समयमें यदृच्छाक्रमसे वृहत् शकटसमूह आ पहुंचा, पहियेके नीचे दबकर उस कीटने उसी समय प्राण परित्याग किया, अत्यन्त तेजस्वी व्यासदेवकी कृपासे वह कीट अनेक योनियोंमें जन्म लेकर अन्तमें क्षत्रियवंशमें उत्पन्न हुआ; वह श्वावित, गोधा, वराह, मृग, पक्षी, चाण्डाल, शूद्र और क्रमसे वैश्यजातीय होकर जब जिस योनिमें जन्मता था, तभी उस ऋषिसत्तमका दर्शन करनेके लिये जाता था। वह कीट उस सत्यवादी ऋषिके द्वारा इसी प्रकार उपदिष्ट होके प्रतिजन्ममें ही स्मरण करते हुए दोनों हाथ जोड़के सिरसे उनका चरण छूता था। अनन्तर वह कीट क्षत्रिय होके बोला, मैंने दशजन्ममें यह अभिलषित अतुल पद पाया है, क्यों कि मैं कीटत्व प्राप्त करके राजपुत्र हुआ हूं; मैं सुवर्णमालासे युक्त अत्यन्त बलवान हाथियोंपर चढ़ता हूं। रथमें जुते हुए काम्बोज देशीय घोड़े, ऊंट और अश्वतरी मुझे ले चलनेके लिये तय्यार हैं; मैं बान्धवों और सेवकोंके सहित पक्वान्न भक्षण करता हूं। हे महाराज! मेरे समीप वायुयुक्त पंखे चल रहे हैं और मैं महामूल्यवान् शय्यापर उत्तम रीतिसे पूजित होकर सुखसे सोता हूं। जिस प्रकार देववृन्द इन्द्रकी स्तुति करते हैं, वैसे ही रात बीतनेपर सूत, मागध और बन्दीजन मेरी स्तुति किया करते हैं। आप अत्यन्त तेजस्वी और सत्यसन्ध हैं, आपकी कृपासे मैंने कीट होके भी राजपुत्रत्व पाया है। हे महाप्राज्ञ! इसलिये मैं आपको प्रणाम करता हूं, कहिये कौनसा कार्य्य करूं? मैंने आपके तपोबलके सहारे यह निर्द्दिष्ट पद पाया है।

व्यासदेव बोले, हे राजन्! आज मैं तुम्हारे यदृच्छा बचनसे पूजित हुआ, कीटत्वकी प्राप्त होके भी तुम्हें इस समय जुगुप्सित स्मृतिशक्ति उत्पन्न हुई है। पहले तुमने अत्यन्त आततायी धनी शूद्र होके जिन पापोंको किया था, उसका विनाश नहीं है। तुमने जो तिर्य्यक्योनिमें जन्म लेकर मेरी पूजा की थी, उस ही सुकृतके सहारे मेरा दर्शन पाया है। तुम रणभूमिमें ब्राह्मणके निमित्त अपना प्राण देके राजपुत्रत्व त्यागके

ब्राह्मणत्व पाओगे । हे राजपुत्र ! तुम सहजमें ही आप्त दक्षिणयज्ञ पूरा करके स्वर्गलोकमें सुखी तथा अव्यय ब्रह्ममय होके प्रमुदित होगे। तिर्य्यक्‌योनिसे शूद्रत्व प्राप्त होता है, शूद्रत्वसे वैश्यत्व और वैश्यत्वसे क्षत्रियत्व प्राप्त हुआ करता है, साधुवृत्त क्षत्रिय ब्राह्मणत्व पाते और सत्स्वभाव सुशील ब्राह्मणोंको स्वर्गलोक मिलता है।

११८ अध्याय समाप्त ।

भीष्म बोले, हे महाराज ! उस वीर्य्यवान कीटने क्षत्रियत्व पाके पूर्व वृत्तान्त स्मरण करते हुए विपुलतपस्या की थी ; उस धर्म्मार्थवेत्ताकी वैसी महत् तपस्या देखकर उस समय कृष्णद्वै-पायन उसके समीप गये ।

व्यासदेव बोले, हे कीट ! क्षात्रधर्म्म सब प्राणियोंकी प्रतिपालन करनेसे देवव्रत है, इस-लिये क्षत्रियधर्म्मको देवव्रतरूपसे ध्यान करते हुए मरनेपर तुम्हें विप्रत्व प्राप्त होगा। तुम शुभाशुभवेत्ता और आत्मवान् होकर पूरीरीतिसे प्रजाका पालन करो । पवित्र शुभकार्य्योंसे अशुभ कर्म्मोंका सम्विभाग करो ; स्वधर्म्माचरणमें रत रहके आत्मवान् तथा प्रसन्न रहो, अनन्तर क्षत्रिय शरीर त्यागनेपर ब्राह्मणत्व पाओगे।

भीष्म बोले, हे नरसत्तम युधिष्ठिर ! वह कीट महर्षि कृष्णद्वैपायनका वचन सुनके धर्म्म-पूर्व्वक प्रजा पालन करके अन्तमें वनवासी हुआ और प्रजा पालन करनेसे परलोकमें जाकर ब्राह्मणत्व पाया। अनन्तर महायशस्वी महा-प्राज्ञ कृष्णद्वैपायन मुनि उस समय उसे ब्राह्मण देखकर फिर उसके निकट गये ।

वेदव्यास बोले, हे श्रीमान् विप्रवर ! तुमने शुभयोनिमें शुभकर्म्म किया और पापयोनिमें पापाचरण किया है, तथापि तुम किसी प्रकार व्यथित न होना ; यदि तुम्हें धर्म्म लोपका भय हो, तो उत्तम धर्म्माचरण करो ।

कीट बोला, हे भगवन् ! आपकी कृपासे ही मैंने सुखसे भी अधिक सुख पाया है ; धर्म्ममूल सम्पत्तियोंको पानेसे अब मेरा पाप नष्ट हुआ है।

भीष्म बोले, हे महाराज ! कीटने भगवान् व्यासदेवके वचनानुसार दुर्लभ ब्राह्मणत्व पाके पृथ्वीको सैकड़ों यज्ञयूपोंसे अङ्कित किया। हे पार्थ ! अनन्तर उस ब्रह्मवित्तम कीटने ब्रह्म सालोक्य पाके व्यासदेवके वाक्य अनुसार उस समय स्वकर्म्म फल निर्वृत्त सनातन ब्रह्मपद पाया । हे तात ! तुम्हारे प्रभावसे जो सब क्षत्रिय युद्धमें मरे हैं, उन्होंने भी पवित्र गति पाई है, इसलिये तुम शोक मत करो ।

११९ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे साधुश्रेष्ठ पितामह ! विद्या तपस्या और दान, इन तीनोंके बीच श्रेष्ठ क्या है ? इस विषयकी आप मेरे समीप वर्णन करिये ।

भीष्म बोले, इस विषयमें प्राचीन लोग मैत्रेय और कृष्णद्वैपायनके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। हे महाराज! कृष्णद्वैपायन मुनि अज्ञातरूपसे विचरते हुए काशीपुरीमें मुनिमण्डलीके बीच मैत्रेयके समीप उपस्थित हुए । मुनिसत्तम मैत्रेयने उन्हें समा-गत और समासीन जानकर उनकी पूजा की और उत्तम भोजन कराया। महात्मा वेद-व्यास मुनि उस श्रेष्ठ सुगन्धियुक्त सार्व्वकामिक उत्तम अन्न भोजन करके प्रस्थान करते हुए प्रसन्न तथा विस्मित हुए। मैत्रेय ऋषि उस कृष्णद्वैपायन मुनिको विस्मययुक्त जानके बोले, हे धर्म्मात्मन् ! आप किस निमित्त विस्मित हुए? उसका कारण कहिये। हे विद्वन् ! आप तपस्वी और धृतिमान् हैं, तब आपको किस लिये प्रमोद हुआ ? मैं आपको प्रणाम करके पूछता हूं, कि यह आपका तपोभाग्य अथवा

सुखभाग्य है ? क्यों कि आसर्य्य दर्शनके अतिरिक्त विस्मय नहीं होता। उपाधिपरिच्छिन्न जीव और अनुपाधिक ब्रह्म पृथक् आचरण करनेपर भी जीवन्मुक्त और मुक्तामुक्त उभयात्मक आत्माकी अपेक्षा मैं आत्माको अत्यान्तर जानता हूं, क्यों कि आप मेरा भाग्य देखकर विस्मित हुए हैं; इसलिये मैं आपकी अपेक्षा आत्माको अत्यान्तर रूपसे अनुमान करता हूं और मित्रवंशसे आपको विशिष्ट समझता हूं।

व्यासदेव बोले, समुद्र शोषणरूप अत्यन्त अशक्य विषय अतिच्छन्न और अतिवादके द्वारा यह विस्मय पूरी रीतिसे उत्पन्न हुआ है, यह कैसे सम्भव हो सकता है, कि वेद वचन सत्य नहीं है ? वेद किसलिये मिथ्या कहेगा ? पुरुषके इन तीनों विषयोंको पण्डित लोग उत्तम व्रत कहते हैं,—किसीसे द्रोह न करना, दान और सत्य वचन कहना। ऋषियोंके द्वारा यह वेदोक्त विधि पहले ही परिकल्पित हुई है, इस समय इसे ही करना चाहिये और पहले भी ऐसा ही सुना गया था। अवश्य कर्त्तव्य दान अल्प होनेपर भी महाफलजनक हुआ करता है। तुमने असूयारहित हृदयसे प्यासे पुरुषको जल दान किया है, तुमने स्वयं तृषित होके भी मुझे प्यासा जानकर यह अन्न दान किया है, इसलिये महायज्ञके सहारे जिन लोकोंकी जय किया जाता है, तुमने इस अन्नके सहारे उन महत् लोकोंकी जय किया है, इसी लिये मैं तुम्हारे पवित्र दान और तपस्यासे विस्मित हुआ हूं। तुम्हारे सत्त्व पुण्यसे तुम्हारा दर्शन भी पुण्यसापेक्ष है, तुम्हारा विधानज कर्म्म भी पुण्य गन्धयुक्त मालूम होता है। हे तात! तीर्थ और वेद व्रत समाप्त करनेकी अपेक्षा तुम्हारे दर्शनादि अत्यन्त पवित्र हैं। हे द्विज! सब पवित्र विषयोंके बीच दान ही परम शुभ है, यदि सब पवित्र विषयोंसे दान श्रेष्ठ न होवे, तब तुम जिन उत्तम वेदोक्त विधानोंकी प्रशंसा करते हो, उन सबसे दान ही उत्तम है, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है। दाहगणने जो मार्ग बनाया है, मनीषि लोग उस ही मार्गसे गमन किया करते हैं, वेही प्राणदाता हैं, उन दातागणमें ही सबके धर्म्म प्रतिष्ठित हैं। उत्तम रीतिसे पढ़ा हुआ वेद जिस प्रकार श्रेष्ठ है, इन्द्रिय संयम और सर्व्वत्याग जैसा विशिष्ट है, दान भी उसी भांति अत्यन्त श्रेष्ठ है। हे तात! तुम सहजमें ही उत्तम सुख पावोगे, बुद्धिमान् मनुष्य सुखसे भी अधिक सुख पाता है। हमारे प्रत्यक्षमें निःसन्देह इसके मिलनेपर अर्थ, दान और समस्त यज्ञोंके फल श्रीमान् पुरुषको सुखसे प्राप्त होते हैं। हे महाप्राज्ञ! सुखके अनन्तर दुःख और दुःखके बाद सुख सदा स्वभाविकही दिखाई देते हैं। पण्डित लोग मनुष्योंके तीन प्रकारके व्रत वर्णन करते हैं,—पुण्य, पाप और पुण्यपातक; इन तीनोंके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, स्वकर्म्मसे निवृत्त पुण्य-पापकी भांति ब्रह्मनिष्ठ पुरुषका पुण्यपाप नहीं गिना जाता यज्ञ, दान तथा तपस्या करनेवाले मनुष्य ही पुण्यात्मा हैं और जो लोग जीवोंके विषयमें द्रोह करते, वेही पापी हैं; जो लोग दूसरेका द्रव्य लेते, वे दुःखी तथा पतित होते हैं; इसके अतिरिक्त अन्य जो सब कर्म्म हैं, वे न पुण्य हैं और न पाप ही हैं। क्रीड़ा करो, वृद्धिवान् हो, आनन्दित रहो दान और यज्ञ करो, तो वैद्य तथा तपस्वीवृन्द तुम्हें अभिभव करनेमें समर्थ न होंगे।

१२० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अत्यन्त श्रीसम्पन्न कुलमें उत्पन्न बुद्धिमान् बहुदर्शी कर्म्मको प्रशंसा करनेवाले मैत्रेय ऋषिने ऐसा वचन सुनके उत्तर दिया।

मैत्रेय बोले, हे महाप्राज्ञ! आपने जैसा कहा, वह निःसन्देह वैसा ही है। हे विभु!

परन्तु मैं आपकी अनुमतिसे कुछ कहनेकी इच्छा करता हूं।

व्यासदेव बोले, हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! आप जिस विषयको जहांतक कहनेकी इच्छा करते हैं, उसे यथार्थ रीतिसे कहिये, मैं तुम्हारा बचन सुननेकी अभिलाष करता हूं।

मैत्रेय बोले, दानसम्बन्धीय विद्या और तपस्यासे भी निर्म्मल है, आपने निःसन्देह आत्मज्ञान लाभ किया है, आपको आत्मज्ञान निबन्धनसे महत् लाभ हुआ है, मैं फिर सुसमृद्ध तपस्यायुक्तकी भांति न्यायबुद्धिसे आलोचना करके देखता हूं,—आपके दर्शनसे हम लोगोंका अभ्युदय होता है। ये जो स्वभाविक कार्य्य होते हैं, उसे मैं आपकी कृपासे ही हुआ समझता हूं। तपस्या, शास्त्रज्ञान और योनि, ये सभी ब्राह्मणत्वको हेतु हैं,—इन तीनों गुणोंके समुदित होनेपर पुरुष द्विज हुआ करता है। ब्राह्मणोंके तृप्त होनेपर पितर और देववृन्द तृप्त होते हैं, शास्त्रज्ञानयुक्त ब्राह्मणसे श्रेष्ठ और कोई भी नहीं है; अन्न ही तपस्वरूप है, अन्नके बिना कुछ भी मालूम नहीं होता, चारों वर्णोंके विधान, धर्म्माधर्म्म और सत्य मिथ्या कुछ भी नहीं रहते। जैसे मनुष्यको उत्तम रीतिसे जुते हुए खेतमें फल प्राप्त होते हैं, वैसे ही दाता शास्त्रसम्पन्न ब्राह्मणोंको दान करनेसे उसका फल भोग किया करता है। शास्त्रज्ञान और सचरित्रयुक्त दानका प्रतिग्रहीता ब्राह्मण यदि विद्यमान न रहे, तो धनियोंका धन निरर्थक होता है। अविद्वान् पुरुष अन्न भक्षण करके अर्थको नष्ट किया करता और अद्यमान अन्न भी उसे नष्ट करता है। जो अन्न रक्षा करता है, उसे ही अन्न कहते हैं; जो अन्नको नष्ट करता है, वह मूर्ख पुरुष नष्ट होता है। विद्वान् पुरुष ही अन्न भोजन करनेमें समर्थ है, वेही ईश्वर होके अन्न उत्पन्न करते और अन्नसे उत्पन्न हुआ करते हैं; यह व्यतिक्रम अत्यन्त सूक्ष्म है। दाता को जैसा पुण्य होता है, प्रतिग्रहीताको भी उस ही प्रकार पुण्य हुआ करता है; ऋषियोंने ऐसा कहा है, कि दाता और प्रतिग्रहीता दोनों ही लोकतन्त्र निभाते हैं। शास्त्रज्ञान और सचरित्र युक्त ब्राह्मण जिस स्थानमें निवास करते हैं, उसी स्थानमें पवित्र दानका फल इस लोक और परलोकमें भोग किया जाता है। जो लोग शुद्धयोनिमें उत्पन्न होके सदा तपस्या करनेमें रत रहते हैं और जो लोग दान तथा अध्ययनयुक्त हैं, वे सदा पूजने योग्य हैं, उन साधुओंने जो पथ तय्यार किया है, उस ही मार्ग से गमन करनेपर मनुष्य मुग्ध नहीं होता, वे लोग सनातन यज्ञवाह स्वर्गमार्गके प्रदर्शक हैं।

१२१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, भगवान् वेदव्यासने मैत्रेयका ऐसा बचन सुनके उत्तर दिया; कि भाग्यसे ही तुम ऐसे ज्ञानवान् हुए हो, भाग्यसेही तुम्हारी ऐसी बुद्धि हुई है, लोग आर्य्य पुरुषोंके गुणोंकी भली भांति प्रशंसा करते हैं। भाग्यसे ही रूपमान, बयोमान और श्रीमान तुम्हें निःसन्देह अभिभव नहीं किया, यह तुम्हारे ऊपर दैवकी कृपा है। दानसे बढ़के जो कुछ श्रेष्ठवस्तु है, उसे तुम्हारे समीप कहता हूं। इस लोकमें जो सब आगम शास्त्र तथा जो कुछ प्रवृत्ति हैं, वे वेदको अगाड़ी करके यथारीतिसे प्रवृत्त हुई हैं। मैं दानकी प्रशंसा किया करता हूं, आप तपस्याज्ञानकी प्रशंसा करते हैं; तपस्या ही पवित्र और तपस्या ही वेद तथा स्वर्गको साधन है। तपस्या और विद्यासे मनुष्यको महत्व मिलता है, मैंने ऐसा सुना है, कि जितने दुष्कृत हैं, वे तपस्यासे नष्ट होते हैं। दुरन्वय, दुष्प्रधर्ष दुष्प्राप्य और दुरतिक्रम जो कुछ विषय हैं, वे सब तपस्यासे प्राप्त होते हैं, इसलिये तपस्या ही बलवान् है। सुरापीनेवाले, परधनहारी, भ्रूणहत्यारे और गुरुतल्पगामी मनुष्य तपस्याके सहारे सब पापोंसे

उत्तीर्ण होते तथा समस्त पापोंसे मुक्त हुआ करते हैं। जो लोग सर्वज्ञ होकर ज्ञानेनेत्रसे सब विषयोंको अवलोकन करते हैं और जो लोग किसी प्रकारके तपस्वी हों, उन्हें नमस्कार करना उचित है। शास्त्रज्ञानयुक्त तथा तपस्वी मनुष्य सबके ही पूजनीय हैं; दान देनेवाले मनुष्य इसलोकमें श्रीसम्पन्न होकर परलोकमें सुख पाते हैं। जो लोग यहांपर सुकृत कर्म्म करते हैं, वे अन्नदानके सहारे इसलोक, ब्रह्मलोक तथा बलवत्तर लोकोंको पाते हैं। पूजित पुरुष इनकी पूजा करते और सम्मानित मनुष्य सम्मान करते हैं; वे दाता पुरुष जिन स्थानोंमें जाते हैं, उन्हीं स्थानोंमें सब भांतिसे प्रशंसित होते हैं। चाहे अकर्त्ता हो, चाहे कर्त्ता ही होवे, जिसका जैसा कर्म्म है, वह वैसा ही फल पाता है। चाहे ऊर्द्ध में हो, चाहे अधोभागमें ही होवे, तुम निजलोकमें ही जाओगे और वहां खाने पीनेकी अथवा जो कुछ इच्छा करोगे, उसे ही पाओगे। तुम मेधावी सद्वंशमें उत्पन्न हुए हो, शास्त्रज्ञानसम्पन्न, अनृशंसतायुक्त, कौमार ब्रह्मचारी और व्रतवान् हो, इसलिये जीवोंके सुहृद बनो; गृहमेधियोंका यह पहला धर्म्म ग्रहण करो। जो पति भार्य्यासे प्रसन्न रहता है और जो भार्य्या पतिसे सन्तुष्ट रहती है, जिस कुलमें सब कोई इसी प्रकार हैं, उसी वंशमें कल्याण विद्यमान रहता है। जैसे जलसे शरीर निर्म्मल रहता है और जिस प्रकार सूर्य्यके प्रकाशसे अन्धकार दूर हो जाता है, वैसे ही दान और तपस्यासे सब पाप नष्ट हुआ करते हैं। हे मैत्रेय! तुम्हारी स्वस्ति होवे, मैं निज स्थानपर जाता हूं, इस विषयको मनमें रखना, ऐसा करनेसे तुम्हारा कल्याण होगा। अनन्तर मैत्रेयने प्रणाम करके उनकी प्रदक्षिणाकी और हाथ जोड़के बोले, कि "आपको स्वस्ति प्राप्त होवे।"

१२२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वधर्म्मज्ञ पितामह! मैं आपके समीप सती स्त्रियोंके समुदाचार सुननेकी इच्छा करता हूं, इसलिये आप मेरे समीप इस विषयको वर्णन करिये।

भीष्म बोले, सुमना नामी केकयराजकी पुत्रीने देवलोकमें सर्व्वज्ञा सब तत्त्वोंको जाननेवाली मनस्विनी शाण्डिलीसे प्रश्न किया। हे कल्याणि! तुम कैसे चरित्र और कैसे आचारसे देवलोकमें आई हो? तुम अग्निशिखाकी भांति निज तेजसे प्रज्वलित होती हो और ताराधिपकी पुत्रीसदृश अपने प्रभावसे द्युलोकमें आई हो; क्लान्तिहीन होके तुमने रजोरहित श्वेत वस्त्र धारण किया है। हे शुभे! विमानमें रहके अपने तेजके द्वारा तुम्हें सहस्र गुण शोभा प्राप्त हुई है। तुम अल्प तपस्या, दान और नियमके सहारे इसलोकमें नहीं आई हो; इसलिये मुझसे तुम अपना यथार्थ वृत्तान्त कहो। चारुहासिनी शाण्डिलीने सुमनाका ऐसा प्रश्न सुनके मधुर भावसे उत्तर दिया। मैं गेरुआवस्त्र धारण करनेवाली तथा बल्कलधारिणी नहीं हूं, मैंने सिर मुड़ाने अथवा जटायुक्त होनेसे स्वर्गलोक नहीं पाया; मैंने अप्रमत्त रहके कदाचित पतिको अहित वा कठोर बचन नहीं कहा है। देवताओं, पितरों और ब्राह्मणोंकी पूजामें सदा सावधान रहती और सास-ससुरकी सेवा करनेमें सदा नियुक्त रहती थी। चुगलीके कार्य्यमें कभी प्रवृत्त नहीं होती थी और न यह मुझे अभिमत है, घरके बाहर कदापि निवास नहीं करती थी और बहुत समयतक किसीके साथ बार्त्तालाप भी नहीं करती थी। किसी असत्कर्म्म, हांसी अथवा कार्य्यसे अहित किम्वा रहस्य वा अरहस्य किसी विषयमें ही सर्व्वथा प्रवृत्त नहीं होती थी। कार्य्यके निमित्त घरसे निकलके फिर जब मेरे पति गृहपर आते थे तब उन्हें बैठाके सावधान होकर उनकी पूजा करती थी। मेरे पति जिस अन्नको उत्तम

नहीं जानते और जिसका अभिनन्दन नहीं करते थे, वैसो भच्य वा लेह्य वस्तुओंको मैं परित्याग करती थी। परिवारके निमित्त जो कुछ वस्तु लाई जाती तथा जो कुछ कर्त्तव्यकार्य्य रहता था, भोरके समय उठके मैं स्वयं उन कार्य्योंको करती तथा दूसरोंसे कराती थी; किसी कार्य्यसे यदि मेरे पति विदेशमें जाते थे, तो उस समय में मांङ्गलिक सूत्र धारण करके संयत होके रहती थी। पतिके विदेश जानेपर मैं अञ्जन, महावर, स्नान, माला धारण, उबटन और प्रसादनका अभिनन्दन नहीं करती थी। पतिके सुखसे शयन करनेपर मैं आन्तरिक कार्य्य रहनेपर भी उठके उन्हें परित्याग करके नहीं जाती थी, उससे मेरा मन सन्तुष्ट रहता था। कुटुम्बके निमित्त स्वामीको सदा आयासयुक्त नहीं करती थी, गोपनीय विषयोंको गुप्त रखती और सदा हर्षयुक्त रहती थी। जो स्त्री सावधान होकर इस धर्म्मपद्धतिको पालन करती है, वह स्त्रियोंके बीच अरुन्धतीकी भांति स्वर्गलोकमें निवास किया करती है।

भीष्म बोले, महाभागा तपस्विनी शाण्डिली देवी सुमनासे यह पतिधर्म्म कहके उस समय अन्तर्द्धान हुई। हे पाण्डव! जो लोग प्रतिपर्व्वमें यह आख्यान पाठ करते हैं, वे देवलोक पाके नन्दनकाननमें सुखी हुआ करते हैं।

१२३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! साम और दान इन दोनोंमेंसे आपके मतमें कौनसा श्रेष्ठ है? इन दोनोंके बीच जो उत्तम हो, आप उसे ही कहिये।

भीष्म बोले, कोई पुरुष सान्त्वनावाक्यसे प्रसन्न होते और कोई दानसे प्रसन्न हुआ करते हैं; इसलिये पुरुष प्रकृतिको मालूम करके साम और दानकी सेवा करे। हे भरतश्रेष्ठ! प्रचण्ड प्राणी भी जिस प्रकार सान्त्ववादसे आराधना करते हैं, उस सामवादके समस्त गुण मेरे समीप सुनो।

किसी वनमें एक ब्राह्मण राक्षस द्वारा पकड़े जानेपर जिस प्रकार छूटा था, इस विषयमें प्राचीन लोग उस ही पुरातन इतिहासको कहा करते हैं। किसी वाग्बुद्धियुक्त ब्राह्मणने वनके बीच भूखे राक्षसके द्वारा पकड़े जानेपर क्लेश पाया था; उस बुद्धिशक्तिसे युक्त, शास्त्रज्ञान निपुण ब्राह्मणने मुग्ध वा व्यथित न होकर अत्यन्त भयङ्कर राक्षसको देखके उसके विषयमें सान्त्ववाक्य प्रयोग किया। राक्षसने उस ब्राह्मणको वचनसे सम्मानित करके कहा, कि मेरे प्रश्नका उत्तर देनेसे तुम्हें छुटकारा मिलेगा। मैं किसलिये पाण्डुवर्ण तथा कृश हुआ हूं? मेरे इस ही प्रश्नका उत्तर दो। अनन्तर ब्राह्मणने मुहूर्त्त भर सोचके अव्यग्रभावसे इस गाथाके सहारे निशाचरके प्रश्नका उत्तर दिया।

ब्राह्मण बोला, तुम विदेशमें रहके अन्य स्थानोंमें रहनेवाले सुहृदोंके अतिरिक्त अकेले ही विपुल ऐश्वर्य्य भोगते हो, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण तथा कृश हुए हो। हे निशाचर! तुम्हारे मित्रगण उत्तम रीतिसे सेवा करनेपर भी निज दोषसे तुम्हारे विषयमें विरक्त हुए हैं, इस ही लिये तुम पाण्डुवर्ण वा कृशित होते हो। बोध होता है, कि तुम गुणवान् होकर अन्य सम्मानयुक्त मनुष्योंको निर्गुण देखते हो और तुम विनीतचित्त तथा प्राज्ञ होकर अन्य पुरुषोंको मूर्ख जानते हो, इसीसे पीले वा कृश होते हो। समान अथवा अधिक धन ऐश्वर्य्ययुक्त तथा तुम्हारे गुणोंको अपेक्षा अत्यन्त निकृष्ट मूर्ख लोग बोध होता है, तुम्हारी अवज्ञा करते हैं, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि तुम वृत्तिके बिना क्लेशित होके भी वृत्तप्राप्तिको निन्दा करते हुए महानुभावताके कारण दुःखित

होनेसे पीले और दुबले हुए हो। हे साधु! श्रेष्ठत्वके वशमें होकर आपको पीड़ित करके कोई पुरुष तुम्हारे द्वारा मरके तुम्हें पराजित समझता है, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मुझे बोध होता है, कि काम क्रोधके वशमें रहनेवाले पुरुष कुपथमें पड़के क्लेश पाते हैं, तुम उनके निमित्त सोच करते हो, इसीसे पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, तुम बुद्धिमान् होके भी मूर्खोंसे मिलकर दुर्वृत्त लोगोंसे क्लियमान होनेसे पीले और दुबले हुए हो। बोध होता है, कि मित्रसुख शत्रुने साधुकी भांति आचरण करके तुम्हें ठगा है, इसीसे तुम पाण्ड़वर्ण और कृश होते हो। जान पड़ता है, तुम प्रकाशार्थं गति और रहस्य विषयमें निपुण तथा ज्ञाती होनेपर भी तत्त्वज्ञ पुरुषोंसे पूजित नहीं होते, इसी निमित्त पाण्डु-वर्ण और कृश होते हो। अभिनिविष्ट असत् पुरुषोंके निकट तुम्हारे संशयरहित विषयोंके कहनेपर भी तुम्हारे गुणका विकाश नहीं हुआ, उसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि तुम धन बुद्धि और शास्त्र-ज्ञानसे रहित होके केवल तेजस्वितासे ही महत्पदकी इच्छा करते हो, उसीसे तुम पाण्ड्-वर्ण और कृश होते हो। मैं तुम्हें तपस्याके सहारे प्राणिहित चित्त और वनवासका अभि-लाषी जानता हूं, बान्धवगण तुम्हें अभिनन्दित नहीं करते हैं, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो दृढ़रूपसे हृदयप्रिय श्रुतपूर्व्व क्रुद्ध मूर्खको बिनयपूर्व्वक मनानेमें समर्थ नहीं हुए, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुम भार्य्याके विषयमें प्रीति किया करते हो, कोई तुम्हारा प्रतिवेशी महाधनशाली युवा पुरुष सुन्दर और कामी है, इसीलिये तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। अर्थवान पुरुषोंके बीच यथासमयमें अभिहित तुम्हारा उत्तम वचन शोभित नहीं हुआ, इस ही निमित्त तुम पाण्डु-वर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, कि किसी इच्छित कार्य्यमें कोई तुम्हें आसक्त करके सदा तुम्हारे समीप प्रार्थना करता है, इस ही हेतु तुम पाण्ड्वर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, तुम्हें सुन्दर गुणयुक्त और पूज्यमान जानके कोई सुहृद अपना अर्थज्ञान करता है, इस ही निमित्त तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। भीतरी अभिप्राय रहनेपर भी बोध होता है, कि तुम लज्जापूर्व्वक अभिप्रेत विषयकी इच्छा नहीं कर सकते, और प्राप्त विषयोंमें शिथिलता निबन्धनसे विचार करनेमें असमर्थ हो, इसीलिये पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। जगत्में अनेक प्रकारकी बुद्धि और रुचियुक्त मनुष्योंको तुम निज गुणोंके सहारे ग्रहण कर-नेकी इच्छा करते हो, बोध होता है, इस ही हेतु तुम कृश तथा पाण्डुवर्ण हुए हो। तुम मूर्ख और भीरु होके अल्प धन, बिद्या, बिश्राम तथा दानसे यशकी इच्छा करते हो, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुमने किसी चिरभिलषित फलको नहीं पाया और अन्य पुरुषोंने तुम्हारी बुराई की है, इस ही कारण तुम पाण्ड्वर्ण और कृश हुए हो। बोध होता है, तुम अपने किये हुए दोषोंको न देखकर अकारण ही अभिशप्त होनेसे पाण्ड्वर्ण और कृश होते हो। तुमने सुहृदों और आर्त्त पुरु-षोंको पीड़ा तथा दुःख दूर नहीं किया, तुम अत्यन्त अर्थहीन और गुणरहित हो, इस ही लिये पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुम साधु-ओंको गृहस्थ, दुष्टोंको बनवासी और मुक्त पुरुषोंको आश्रममें देखके पाण्ड्वर्ण तथा कृश होते हो। लोग तुम्हारे यथा समयमें अभिहित धर्म्म, अर्थ और कामयुक्त वचनमें बिश्वास नहीं करते मालूम होता है, इस ही लिये तुम पाण्डु-वर्ण और कृश होते हो। तुम मनीषी तथा जिज्ञासु होकर अनिपुण लोगोंके द्वारा धन देके उसे पाकर जीविका निर्व्वाह करते हो,

बोध होता है इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि वृद्धियुक्त मनुष्योंके पाप और अवसन्न मनुष्योंके कल्याणको देखकर तुम सदा निन्दा किया करते हो, इस ही लिये पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। तुम सुहृदोंके अनुरोधसे परस्पर विरुद्ध पुरुषोंके प्रियकार्य्यको करनेकी इच्छा किया करते हो, बोध होता है, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। तुम श्रोत्रिय पुरुषोंको विकर्म्मस्थ और ज्ञानियोंको अजितेन्द्रिय समझते हो, मालूम होता है, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो, इसही प्रकार राक्षसने अत्यन्त पूजित होकर उस ब्राह्मणकी पूजा करके उसके सङ्ग मित्रता की और बहुतसा धन देके उसे बिदा किया।

१२४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह गङ्गानन्दन! अत्यन्त दुर्लभ कर्म्मक्षेत्रमें मनुष्यजन्म पाके कल्याणकी इच्छा करनेवाले दरिद्र पुरुषोंका जो कर्त्तव्य हो सब दानोंके बीच जो उत्कृष्ट तथा मान्य हो और पूज्य पुरुषोंको जो वस्तु जिस प्रकार देनी योग्य है, आप उस रहस्यविषयको वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! यशस्वी पाण्डुपुत्रका प्रश्न सुनके भीष्मने उनसे सब धर्म्मोंका परम गोपनीय विषय कहना आरम्भ किया।

भीष्म बोले, हे भरतवंशावतंस महाराज! पहले समयमें भगवान् व्यासदेवने मेरे समीप जिन गोपनीय धर्म्मोंका वर्णन किया था, तुम सावधान होके उसे ही सुनो। हे महाराज! यह विषय देवताओंके समीप भी गोपनीय है। पहले अक्लिष्टकर्म्मा यमने नियुक्त होके इसे पाया था। हे अनघ! जिसके सहारे देव, पितर, ऋषि, राक्षसगण, श्री, चित्रगुप्त और सब दिग्गज प्रीतियुक्त होते हैं, जिसमें सरहस्य महाफलजनक ऋषि धर्म्म सूत हुआ करता है और जिसमें महादान तथा समस्त यज्ञोंके फल सूत होते हैं; चाहे लोग दोषयुक्त हों वा निर्दोष होवें, जो इस विषयको जानते हैं अथवा जानके इसका आचरण करते हैं, वे उन सब गुणोंसे युक्त होते हैं। जिस स्थानमें दश पशु मारे जाते हैं, उस स्थान और पशुघाती जातिको दशसूना कहते हैं, एक चक्रवान तैलिक दशसूनाके तुल्य है, ध्वज अर्थात् सुरा पीनेवाला दश चक्र अर्थात् तेलीके सदृश है, एक वेश्या दश सुरा पीनेवालेके समान है और एक क्षुद्र राजा दश वेश्याके तुल्य है। राजा इन सबको अर्द्ध रूपसे तुलना करते हुए अधिक कहा गया है, प्रतिग्रहके निमित्त यह सब तारतम्य वर्णित हुआ करता है। दुष्प्रतिग्रहसे विमुख मनुष्योंको पुण्य लक्षणयुक्त पवित्र धर्म्मार्थ काम शास्त्रको जानना उचित है; देवताओंके द्वारा विहित हुआ पवित्र धर्म्म व्याकरण महत् रहस्य और धर्म्मसंयुक्त आख्यान सुनना चाहिये। श्राद्धकर्म्ममें जो पितरोंका गुप्त विषय और समस्त देवताओंका अखिल रहस्य कहा जाता है; जिसमें सरहस्य महाफलजनक ऋषिधर्म्म सूत होता है। जो मनुष्य इसे पाठ करते हैं, उन्हें महायज्ञ और समस्त दानोंके फल प्राप्त होते और उनके समीप सब शास्त्र पूरी रीतिसे स्फुरित हुआ करते हैं, जो लोग सुनके फल कहते हैं, वे स्वयं नारायण स्वरूप हैं। जो मनुष्य अतिथियोंकी पूजा करते हैं, उन्हें गोदान, तीर्थफल और यज्ञोंका फल मिलता है। जो लोग शास्त्र सुनते और श्रद्धायुक्त होके कार्य्य करते हैं, जिनका अन्तःकरण पवित्र है, उन श्रद्धावान् साधु पुरुषोंके द्वारा सब लोक विजित होरहे हैं। श्रद्धावान् साधु पुरुष पापोंसे छूट जाते, वे कभी किसी पापमें लिप्त नहीं होते, परलोकमें जानेपर उन्हें सदा धर्म्म प्राप्त होता है। कुछ

समयके अनन्तर देवदूतने अन्तर्हित होके इन्द्रसे पूछा, उस काम गुणसे युक्त भिषग्वर दोनों अश्विनीकुमारोंकी आज्ञासे मैं मनुष्यों, पितरों और देवताओंके समीप उपस्थित हुआ हूं; किसलिये श्राद्ध विषयमें कर्त्ता और भोक्ता मैथुन विवर्ज्जित हुए हैं और किसलिये तीन पिण्ड पृथक् पृथक् प्रविभक्त हुए हैं। पहला पिण्ड किसे देना चाहिये, मध्यम पिण्ड किसे मिलता है और पिछला पिण्ड किसके लिये स्मृत हुआ है? इसे मैं जाननेकी इच्छा करता हूं। श्रद्धावान् दूतका यह धर्म्मसङ्गत वचन सुनके पूर्व्व दिशामें स्थित देवताओं और पितरोंने उस खेचरकी पूजा करके कहा।

पितृगण बोले, हे खेचरोत्तम! तुमने सुखसे आगमन किया है न? तुम्हारा मङ्गल हो, तुमने गूढ़अर्थयुक्त परम उत्तम प्रश्न किया है, उसका उत्तर सुनो। जो पुरुष श्राद्ध करके वा श्राद्धमें भोजन करके स्त्रीके समीप जाता है, उसके पितर उस महीनेमें उस हो वीर्य्यके बीच शयन किया करते हैं। अब तीनों पिण्डोंके विभागको विस्तारके सहित कहता हूं। जो पिण्ड नीचेको गमन करता है, उसे जलमें आविष्ट हुआ जाने, मध्यम पिण्डको पत्नी भोग किया करती है, उनमेंसे जो तीसरा पिण्ड है, उसे अग्निमें डाले, यह धर्म्मपूर्व्वक कही गई श्राद्धविधि कदापि लुप्त नहीं होती। जो लोग श्राद्ध करते हैं, उनके पितर प्रसन्नचित्त और सदा सन्तुष्ट रहते हैं, उनकी सन्तान वृद्धि होती तथा उसका धन अक्षय होता है।

देवदूत बोला, आप लोगोंने विस्तारपूर्व्वक क्रमसे सब पिण्डोंके पृथक् पृथक् विभागके विषय कहे और तीनों पिण्डोंमें पितरोंका निरुक्त भी वर्णन किया; एक मात्र समुद्धृत पिण्ड अधःप्रदेशमें किसके समीप जाता है और वह किस प्रकार देवताओंको प्रसन्न करता तथा पितरोंका उद्धार किया करता है? पत्नी अनुज्ञात मध्यम पिण्ड भोजन करती है, पितरगण किस निमित्त उसका कव्य भोग किया करते हैं? इसके बीच जो अन्तिम पिण्ड अग्निके निकट जाता है, उसकी क्या गति होती है और वह किसके निकट गमन किया करता है? तीनों पिण्डोंकी जो गति होती है और पिण्डदाताको जो फल व्यवहार तथा पथ प्राप्त होता है, उसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

पितृगण बोले, हे गगनेचर! तुमने जो प्रश्न किया वह अत्यन्त महत् रहस्ययुक्त और अद्भुत है, हम लोग इससे प्रसन्न हुए हैं, देवता तथा मुनिगण ऐसे ही प्रश्नकी प्रशंसा किया करते हैं, वेभी इसी प्रकार पितृकार्य्यका विशेष निर्णय नहीं जानते। केवल महानुभाव चिरजीवी मारकण्डेय मुनि जो कि पितृभक्तिसे वर पाके महायशस्वी हुए हैं, उनके अतिरिक्त दूसरे लोग इस विषयको नहीं जानते। भगवान्‌के समीप तीनों पिण्डोंकी गति सुनके देवदूतने श्राद्धविधिके विषयमें जो प्रश्न किया था, सावधान होकर मेरे समीप उन तीनों पिण्डोंकी गति सुनो। जो पिण्ड जलमें समर्पण किया जाता है, वह चन्द्रमाको प्रसन्न करता है। हे महाबुद्धिमान्! चन्द्रमा देवताओं और पितरोंको प्रीतियुक्त करते हैं। पुत्र-कामनावाली पत्नी पितरोंकी आज्ञानुसार जो मध्यम पिण्ड भोजन करती है, उससे पितामहगण पुत्र प्रदान किया करते हैं। जो पिण्ड अग्निमें डाला जाता है, उसका विषय सुनो; उससे पितरवृन्द परितृप्त होते और प्रसन्न होके अभिलषित दान किया करते हैं। तीनों पिण्डोंके बीच जैसी गति होती है, वह विषय तुम्हारे समीप कहा गया। श्राद्ध भोक्ता ब्राह्मण यजमानके पितृत्वको प्राप्त होता है। श्राद्धके दिन मैथुन न करना साधुसम्मत है, हे खेचरोत्तम! सदा पवित्र होकर श्राद्ध भोजन करना चाहिये, मैंने जिन सब दोषोंकी कथा कही है, वे उस ही प्रकार होते हैं,

अन्यथा नहीं होते इसलिये ब्राह्मण स्नान करके पवित्र और क्षमाशील होकर श्राद्धान्न भोजन करे; जो लोग पूरीरीतिसे इस ही प्रकार अनुष्ठान करते हैं, उनकी पूजाकी वृद्धि होती है। अनन्तर विद्युतप्रभ नामक महातपस्वी ऋषि जिनका रूप सूर्य्यके तेजसदृश प्रकाशमान था, वह धर्म्म रहस्योंको सुनके देवराजसे बोले, मनुष्य मोहित होकर तिर्य्यक्योनिके समस्त कीट, चींटी, सर्प, मेढ़े, मृग और पक्षियोंको हिंसा किया करते हैं, इस कार्य्यसे वे लोग अत्यन्त ही पापभाजन होते हैं, इसलिये इन लोगोंकी प्रतिक्रिया किस प्रकार होसकती है? अनन्तर देवताओं, तपस्वियों, ऋषियों और महाभाग पितरोंने उस मुनिकी पूजा की।

इन्द्र बोले, कुरुक्षेत्र, गया, गङ्गा, प्रभास और पुष्कर प्रभृति सब तीर्थोंका मन ही मन ध्यान करके अन्तमें जलसे स्नान करनेपर पुरुष इस प्रकार पापोंसे छूट जाता है, जैसे राहुके मुखसे चन्द्रमा मुक्त हुआ करता है, वह मनुष्य तीन दिन स्नान करके निराहारी रहे और गौवोंकी पीठ स्पर्श करके बालधीको नमस्कार करे।

अनन्तर विद्युत्प्रभने इन्द्रसे कहा, हे देवराज! यह अत्यन्त सूक्ष्म धर्म्म है, इसलिये इसे सुनो। वटजटाकषाय द्वारा घृष्ट और प्रियङ्गुसे अनुलिप्त होकर मनुष्य चीरके सहित साठ रात्रितक पके धान्यको भक्षण करनेसे सब पापोंसे रहित होता है, ऋषियोंका विचारा हुआ और एक गोपनीय रहस्य सुनो। इसे मैंने महादेवके समीप उनके सङ्ग वार्त्तालाप करते हुए बृहस्पतिके मुखसे सुना है, हे देवेश शचिपति! तुम उसे सुनो, मनुष्य पहाड़पर चढ़के एक पांवसे स्थित होकर निराहारी ऊर्द्ध्वबाहु तथा हाथ जोड़के सूर्य्यको देखे इस ही प्रकार महत् तपस्यायुक्त पुरुष उपवासका फल पाता है और सूर्य्यकिरणोंसे परितापित होकर सब पापोंसे रहित होता है, ग्रीष्मकाल और शीतके समय ऐसा आचरण करनेसे सब पाप नष्ट होते हैं। अनन्तर पापहीन पुरुषोंकी शाश्वती द्युति हुआ करती है, तब वे निज तेजसे सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होके फिर चन्द्रमा समान शोभित होते हैं। अनन्तर देवताओंके बीच देवराज शतक्रतु बृहस्पतिसे अत्युत्तम मधुर वचन बोले, मनुष्योंके गोपनीय धर्म्म और रहस्यके सङ्ग जो सब दोष हैं, उसे आप यथावत् वर्णन करिये।

बृहस्पति बोले, हे शचिपति! जो लोग सूर्य्यकी ओर मल मूत्र परित्याग करते, वायुके विषयमें द्वेष करते, जलती हुई अग्निमें समिध होम नहीं करते, जो लोग दूधके निमित्त बाल वत्सा गऊ दूहते हैं, उनके दोषोंको कहता हूं, सुनो। हे इन्द्र! सूर्य्य, वायु, अग्नि और लोकमाता गौवोंको ब्रह्माने उत्पन्न किया है, ये सब देववृन्द तथा मनुष्योंके परित्राण करनेमें समर्थ हैं। आप सब कोई एक एक धर्म्मनिश्चय सुनिये जो सब दुर्व्वृत्त पुरुष और दुर्व्वृत्ता स्त्रियें सूर्य्यकी ओर मल-मूत्र परित्याग करती हैं, वे छियासी वर्ष कुल पांशन हुआ करती हैं। हे देवराज! जो लोग वायुसे द्वेष करते हैं, उनकी गर्भस्थ प्रजा च्युत होती है। जो लोग महाप्रदीप्त अग्निमें समिध होम नहीं करते, उनके अग्निकार्य्यमें पावकदेवता हव्य भक्षण नहीं करते। इस लोकमें जो मनुष्य बालवत्सा गौवोंका दूध पीता है, उसके दुग्धपोषण कुलबर्द्धन सन्तान नहीं जन्मती। इसलिये प्रजाक्षय निबन्धनसे उसका कुल और वंश नष्ट होता है, कुलवृद्ध द्विजातियोंने पहले समयमें इसे देखा था; इसलिये मैं सत्य कहता हूं, कि ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाला मनुष्य त्यागने योग्य विषयोंको परित्याग करे और कर्त्तव्य विषयोंका अनुष्ठान करनेमें सदा यत्नवान् रहे।

अनन्तर मरुद्गणके सहित देवताओं और

महाभाग ऋषियोंने पितरोंसे प्रश्न किया, कि अल्पबुद्धिवाले मनुष्योंके किन कार्य्योंसे पितर लोग प्रसन्न होते हैं और उर्द्धदैहिक दान किस प्रकार अक्षय होता है ? मनुष्य लोग कैसे कार्य्यों द्वारा पितरोंके अऋण होते हैं, इसे हम लोग सुननेकी इच्छा करते हैं, इस विषयमें हम लोगोंको अत्यन्त कौतूहल हुआ है।

पितृगण बोले, हे महाभाग ! आप लोगोंने न्यायपूर्व्वक यह सन्देहका विषय पूछा है, उत्तम कार्य्य करनेवाले मनुष्योंके जिस कर्म्मोंसे हम लोग प्रसन्न होते हैं, उसे सुनो। मनुष्य अमावस्या तिथिमें कालेरङ्गका वृषभ छोड़के तिलोदकसे तर्पण करे और वर्षाकालमें दीपक दान करनेसे पितरोंके निकट अऋण होता है, यह दान अक्षय निर्म्मलोक और महाफल दायक है, इससे हम लोगोंको सन्तोष होता है, इसीसे यह अक्षय रूपसे वर्णित हुआ है। जो मनुष्य श्रद्धावान होकर सन्तान उत्पन्न करते हैं, वे प्रपितामहगणको दुर्गम नरकसे उद्धार किया करते हैं। महातेजस्वी तपस्वी गर्ग पितरोंका वचन सुनके पुलकित होकर उनसे बोले, हे तपोधनगण ! नीलवर्ण वृषभ छोड़ने, वर्षाकालमें दीपदान करने तथा तिलोदकसे तर्पण करनेसे क्या फल होता है ?

पितृगण बोले, काले बैलको पूंछसे यदि जल उठे, तो उससे पितृगण साठ हजार वर्ष तक तृप्त हुआ करते हैं। यदि वृषभ तटसे उठङ्गत कीचड़ उद्धार करके स्थित हो, तो पितरगण उसके सहारे निःसन्देह सोमलोकमें गमन करते हैं। वर्षाकालमें दीप दान करनेसे मनुष्य चन्द्रमाकी भांति शोभित होता है, जो लोग दीपक दान करते हैं, वे तमोरूप नहीं होते। हे तपोधन ! जो मनुष्य अमावस्या तिथिमें उडुम्बपात्रके द्वारा मधुयुक्त तिलोदक दान करते हैं, उनका यथार्थमें रहस्यके सहित श्राद्धकार्य्य सिद्ध होता है, उनकी सन्तान सदा हृष्टचित्त हुआ करती है। पिण्डदाताको कुल और वंश वृद्धिरूपी फल प्राप्त होता है, जो लोग श्रद्धावान् होके श्राद्ध करते हैं, वे पितरोंके समीप अऋण होते हैं, इस ही प्रकार श्राद्धका समय और श्राद्धकी विधि निर्द्दिष्ट हुई है, इसलिये विधि पात्र और फल पूरीरीतिसे कही गई।

१२५ अध्याय समाप्त।

———

भीष्म बोले, अनन्तर युवराजने विष्णुसे पूछा, किनकार्य्योंसे आप प्रसन्न होते और किस प्रकार आपको सन्तोष होता है ?

विष्णु बोले, ब्राह्मणोंका परिवाद मुझे अत्यन्त ही विद्विष्ट है, ब्राह्मणोंके सदा पूजित होनेपर मैं निःसन्देह पूजित होता हूं। ब्राह्मण लोग सदा प्रणाम करनेके योग्य हैं, भोजनके अनन्तर सन्ध्याके समय शिष्टाचारके हेतु अपने दोनों पग अभिवादनीय हैं, जो मनुष्य गोमयसे लीपकर सुदर्शन मन्त्रके द्वारा पूजा करते हैं, मैं उन सब मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न होता हूं। बामन ब्राह्मण और बिलसे निकले हुए बराहको देखके जो लोग उद्धत धरतीपर सिर रखते हैं, उन्हें कोई अशुभ वा पाप नहीं होता। जो मनुष्य सदा अश्वत्थ, रोचना और गऊकी पूजा करता है, उसके द्वारा देव, असुर तथा मनुष्योंके सहित समस्त जगत् पूजित होता है, मैं अपना रूप प्रकाशित करके यथार्थ रीतिसे उसकी पूजा ग्रहण करता हूं। जबतक सब लोग प्रतिष्ठित रहते हैं, तबतक यह मेरी ही पूजा है, दूसरेकी न जानना ; अल्पबुद्धि मनुष्य इसे अन्यथा समझकर वृथा पूजा किया करते हैं, मैं उसे प्रतिग्रह नहीं करता, वह मुझे सन्तुष्ट नहीं करती।

इन्द्र बोले, चुक्र, दोनों चरण, बराह, बामन और उद्धृत धरतीको आप किसलिये प्रशंसा करते हैं ? आपने सब जीवोंको उत्पन्न किया

है, आप ही सब प्राणियोंका संहार करते हैं, आप ही सब जीवों और मनुष्योंकी सनातनी प्रकृति हैं ।

भीष्म बोले, अनन्तर विष्णुने हंसके यह बचन कहा, कि चक्रसे दैत्यदलका नाश हुआ है और पदसे वसुन्धरा आक्रान्त हुई थी, बराह रूप धरके मैंने हिरण्याक्ष दैत्यको मारा और वामनरूप धरके राजा बलिको जय किया था ; इसलिये मैं इस ही प्रकार महानुभाव मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न होता हूं ; जो लोग मेरी पूजा करते हैं, उनकी पराभव नहीं होती । ब्राह्मण वा ब्रह्मचारीको आया हुआ देखके अगाड़ी ब्राह्मणको आहुति प्रदान करनेसे उसका अमृत भोजन होता है । जो लोग सूर्य्यकी ओर मुख करके प्रातःसन्ध्या उपासना करते हैं, उन्हें सब तीर्थोंके स्नानका फल प्राप्त होता और वे सब पापोंसे छूट जाते हैं । हे तपोधनगण ! आप लोगोंने जो सन्देहयुक्त होके प्रश्न किया था, उसका गुप्त विषय कहा गया, फिर क्या कहूं ?

बलदेव बोले, मनुष्योंको सुख देनेवाला परम गुह्य विषय सुनो ; जिसे मूढ़ लोग न जाननेसे प्राणियोंके द्वारा पीड़ित होके क्लेश पाते हैं । भोरके समय उठके जो मनुष्य गऊ, घृत, दही, सरसों और प्रियङ्गु फल स्पर्श करते हैं, वे पापरहित हुआ करते हैं । तपस्वी लोग अगाड़ी और पश्चात् भागमें समस्त प्राणियों तथा शूद्र विषयक उच्छिष्टको परित्याग करते हैं ।

देववृन्द बोले, उत्तर दिशाकी ओर मुंह करके जल भरे उडुम्बर पात्र लेकर जो मनुष्य व्रतसङ्कल्प तथा उपवास करता है, उससे देवता लोग प्रसन्न होते और उसकी कामना सिद्ध होती है, इसके बिपरीत मूर्ख लोग वृथा उपवास करते हैं । उपवास और पूजाके कार्य्यमें ताम्रपात्र श्रेष्ठ है । ताम्रपात्रसे ही बलि, भिक्षा, अर्घ और पितरोंको तिलोदक देना योग्य है, अन्यथा करनेसे अल्प फल होता है । देववृन्द जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं, वह गुप्त बिधि बर्णित हुई ।

धर्म्म बोले, राजपुरुषोंके कार्य्य करनेवाले श्रेष्ठ ब्राह्मण, घण्टा बजानेवाले सेवक, गोरक्षक, बाणिज्य करनेवाले, कारुकुशीलव, मित्रद्रोही, अपढ़ और वृषलीपतिको देव तथा पितृकार्य्यमें किसी प्रकार दान देना उचित नहीं है, उन्हें दान देनेसे पिण्डदाताकी हीनता होती है और वह पितरोंको प्रसन्न नहीं कर सकता । अतिथि आशारहित होकर जिसके घरसे लौट जाता है, उसके पितर, देवता और तीनों अग्नि अतिथिके अप्रतिग्रह निबन्धनसे निराश होकर उसके गृहसे प्रस्थान करते हैं । जिसके गृहपर आके अतिथि अपूजित होकर चला जाता है, वह स्त्रीघ्न, गोघ्न, कृतघ्न, ब्रह्मघाती और गुरुतल्पग पुरुषके सदृश दोषभागी होता है ।

अग्निदेव बोले, जो नीचबुद्धि मनुष्य पैरसे गौवों, महाभाग ब्राह्मणों और दीप्यमान अग्निको छूते हैं, उनके दोषोंको कहता हूं, सुनो । जो पुरुष ऐसा कार्य्य करता है, उसका नाम-बाचक शब्द स्वर्गको स्पर्श नहीं करता, उसके पितर भयभीत होते हैं और उससे देवताओंकी अधिक अप्रसन्नता होती है, महातेजस्वी अग्निदेव उसका हव्य ग्रहण नहीं करते । वह एकसौ जन्म नरकमें पड़ता है, किसी स्थानमें भी उसकी निष्कृति नहीं है ; इसलिये गौवोंको कदापि पांवसे छूना उचित नहीं है और महातेजस्वी ब्राह्मणों तथा दीप्यमान अग्निको पैरसे स्पर्श न करना चाहिये । जो श्रद्धावान् मनुष्य अपने हितकी कामना करें, वे गऊ ब्राह्मण और अग्निको पांवसे स्पर्श न करें । जो पुरुष इन तीनोंको पैरसे छूता है, उसके विषयमें ये सब उपरोक्त दोष मेरे द्वारा बर्णित हुए ।

विश्वामित्र बोले, धर्म्मसंहता सम्बन्धीय परम गोपनीय रहस्य सुनो । भादों महीनेके कृष्णपक्षमें मघा नक्षत्रकी त्रयोदशी तिथिमें गजच्छाया योग होनेपर जो लोग दक्षिण ओर मुंह

करके कुतपके समय परम अन्नसे पितरोंकी पूजा करते हैं, उस दानसे जैसा अधिक फल होता है, उसे सुनो। पूर्व्वोक्त रीतिसे जो लोग पितरोंका उपहार दान करते हैं, उनके द्वारा इस लोकमें तेरह वर्षमें होनेवाला उत्तम महत् श्राद्ध कर्म्म सिद्ध होता है।

गौवोंने कहा, पहले समय ब्रह्मपुरमें इन्द्रके यज्ञ विष्णुपद और विभावसुके पथमें स्थित गौवोंका बहुला, समङ्गा, अतोंतुभया, क्षेमासखी और भूयसी नाम हुए थे। अनन्तर नारदके सहित सब देवताओंने सर्व्वसहा नाम रखा था। जो लोग इस मन्त्रके सहारे गौवोंको अभिनन्दित करते हैं, उनके सब पापकर्म्म नष्ट होते और उन्हें इन्द्रलोक मिलता है, इसलिये गौवोंकी सेवा करनेसे चन्द्रमाकी भांति द्युति प्राप्त होती है। जो लोग पर्व्वके समय गोसमूहके बीच इस देवगण सेवित मन्त्रको पढ़ते हैं, उन्हें न पाप है, न भय है, न शोक है और वे लोग इन्द्रलोकमें गमन किया करते हैं।

भीष्म बोले, अनन्तर लोकविख्यात वशिष्ठ प्रभृति महानुभाव सप्तर्षिगण पद्मयोनि प्रजापतिकी प्रदक्षिणा करके हाथ जोड़कर खड़े हुए तब उनके बीच ब्रह्मवित् वशिष्ठदेव यह वक्ष्यमाण वचन कहनेमें प्रवृत्त हुए। यह प्रश्न सब प्राणियोंको विशेष करके ब्राह्मण और क्षत्रियोंको हितकर है। द्रव्यहीन सच्चरित्र दरिद्र मनुष्य किस प्रकार किसी कर्म्मके सहारे इस लोकमें यज्ञका फल पाते हैं? प्रजापति उनका वचन सुनके कहने लगे।

ब्रह्मा बोले, हे महाभागगण! तुम लोगोंने जो प्रश्न किया है, उसका अर्थ अत्यन्त गूढ़ और सूक्ष्म है, यह मनुष्योंके लिये परम शुभ तथा कल्याणकारी है। हे तपोधनगण! जिस प्रकार मनुष्योंको निःसन्देह यज्ञका फल प्राप्त होता है, उसे मैं विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सुनो। पौष महीनेके शुक्लपक्षमें जिस दिन रोहिणी नक्षत्रका योग हुआ करता है, उस नक्षत्रयोगमें मनुष्य सूने स्थानमें शयन करे और एक वस्त्रधारी पवित्र स्नात श्रद्धायुक्त तथा समाहित होकर सोमरश्मि पान करनेसे महायज्ञका फल पा सकेगा। हे सूक्ष्मतत्त्वार्थदर्शी द्विजसत्तमगण! तुम लोगोंने मुझसे जो प्रश्न किया, मैंने तुम्हारे समीप उसका यह परम गुह्य विषय कहा है।

१२६ अध्याय समाप्त।

विभावसु बोले, जो मनुष्य पौर्णमासी तिथिमें उदय होते हुए चन्द्रमाकी ओर मुंह करके उसे अञ्जली भरके जल और घृतयुक्त अक्षत बलि उपहार रूपसे प्रदान करता है, उसका अग्निकार्य्य सिद्ध होता अर्थात् अग्निमें होम करनेसे जो फल हुआ करता है, वह सिद्ध होता है। जो मूर्ख मनुष्य अमावस्या तिथिमें वनस्पतियोंकी शाखा-पल्लव काटता है, वह एक पत्ता तोड़नेसे भी ब्रह्महत्या दोषसे लिप्त होता है। जो मूर्ख मनुष्य अमावस्यामें दतून करता है, उससे चन्द्रमा हिंसित होते और उसके पितर व्याकुल हुआ करते हैं; पर्व्वके समय सुपर्णगण उसके हव्यको ग्रहण नहीं करते, उसके पितरवृन्द क्रुद्ध होते हैं और उसका कुल वंशहीन होजाता है।

लक्ष्मी बोली, जिस पापयुक्त गृहमें जल पीनेके पात्र, आसन तथा अन्य भाजन इधर उधर पड़े रहते हैं और स्त्रियें आहत होती हैं, उस पाप युक्त गृहसे उत्सव और पर्व्वके समय देवता तथा पितृगण निराश होके गमन करते हैं।

अङ्गिरा बोले, जो पुरुष एकवर्षतक सुवर्च्चलालताकी जड़ हाथमें लेकर करञ्जक वृक्षके समीप दीपदान करता है, उसकी प्रजा बढ़ती है।

गार्ग्य बोले, मनुष्य सदा अतिथिसेवा करे, यज्ञशालामें दीपदान करे, दिनको न सोवे और

मांस भक्षण न करे। गऊ ब्राह्मणोंकी हिंसा न करे, तीर्थोंका नाम लेवे; यह महाफलजनक सरहस्य धर्म्म श्रेष्ठ है। सैकड़ों यज्ञ करनेवालेका हवि क्षययुक्त होता है, परन्तु श्रद्धावान् मनुष्योंके आचरित धर्म्मका नाश नहीं होता, इसके अतिरिक्त श्राद्धविधि, तीर्थसम्बन्धीय देवकार्य्य और पूर्व्वकालका यह परम गोपनीय विषय सुनो। रजस्वला, श्वित्ररोगवाली और बन्ध्या स्त्री जिस हविको देखती हैं, उसे देववृन्द भक्षण नहीं करते; जिसके हविको पूर्व्वोक्त स्त्रियें देखती हैं, उसके पितर तेरह बर्षतक असन्तुष्ट रहते हैं। श्वेतवस्त्र पहरके पवित्र होकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन और महाभारतका पाठ करावे, तो हवि अक्षय होती है।

धौम्य बोले, टूटे पात्र, खाट और कुक्कुट तथा गृहमें जो वृक्ष रहते हैं, वे सब अप्रशस्त हैं। पहलेके आचार्य्योंने कहा है, कि फूटे बरतन रहनेसे कलह होता है, टूटी खाट रहनेसे धनका नाश हुआ करता है, कुक्कुट अथवा कुत्ता रहनेपर देवगण हविभक्षण नहीं करते, वृक्षकी जड़में निश्चय ही सर्प बिच्छू आदि प्राणी रहते हैं; इसलिये घरके बीच वृक्ष लगाना उचित नहीं है।

जमदग्नि बोले, जो पुरुष सैकड़ों अश्वमेध बाजपेय यज्ञ करता है अथवा अवाक्‌शिरा होके लटकता है, तथा बहुतसे सत्र करता है, परन्तु यदि उसका हृदय शुद्ध न रहे, तो वह निश्चय ही नरकमें गमन किया करता है, यज्ञ, सत्र और अन्तःकरणकी शुद्धि ये तीनों ही तुल्य हैं। किसी पुरुषने शुद्धचित्तसे ब्राह्मणको एक प्रस्थ सत्तू दान करके ब्रह्मलोकमें गमन किया था, इस विषयमें उसहीका प्रमाण पर्य्याप्त है।

१२७ अध्याय समाप्त।

मनु बोले, मनुष्योंके लिये सुखदायक कुछ धर्म्मविषय कहता हूं और रहस्यके सहित जो सब दोष हैं, उसे सावधान होकर सुनो! जो लोग वर्षभरके बीच चार महीनेतक वेदजाननेवाले ब्राह्मणोंको तिलोदक दान करते और शक्तिके अनुसार भोजन कराते हैं, अवश्य कर्तव्य अग्निकार्य्य निभाते, परम अन्नके सहारे भोजन कराते, पितरोंको तिलोदक देते और दीपदान करते हैं, वे श्रद्धावान् समाहित मनुष्य इस ही विधिसे एक सौ पशुबन्ध यज्ञका पुष्कल फल पाते हैं। इसे भी परम गोपनीय और अप्रशस्त जानो कि शूद्र यदि अरिणीकी अग्निको देशान्तरमें ले जाय और यदि स्त्रियें सोमाज्यपय प्रभृति यज्ञसे बचे हुए हविके द्वारा मूढ़ होवें, उसे जो ब्राह्मण धर्म्म समझता है, वह अधर्म्मसे लिप्त हुआ करता है। तीनों अग्नि उसपर क्रुद्ध होती, उसे शूद्रयोनि प्राप्त होती है, विशेष करके देव और पितृगण उसके विषयमें प्रसन्न नहीं रहते। उस विषयमें जो प्रायश्चित्त है, जिसे करनेसे मनुष्य भली भांति सुखी और शोकरहित होता है, उसे कहता हूं, सुनो। मनुष्य निराहारी और समाहित होकर तीन दिन गोमूत्र, गोमय, दूध और घृतसे अग्निकार्य्य करे; अनन्तर एक वर्ष पूरा होनेपर देवगण उसकी दान की हुई वस्तु प्रतिग्रह करते हैं और श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर उसके पितर हर्षित होते हैं। यह रहस्यके सहित अधर्म्म और धर्म्मविषय कहा गया, स्वर्गकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंके परलोकमें गमन करनेपर यह स्वर्गमें सुखदायक हुआ करता है।

१२८ अध्याय समाप्त।

लोमश बोले, जो लोग दारपरिग्रह न करके पराई स्त्रीमें आसक्त होते हैं, श्राद्धकाल उपस्थित होनेपर उनके पितृगण निराश हुआ करते हैं। जो पुरुष पराई स्त्रीमें रत रहता, जो बन्ध्याकी उपासना करता और जो मनुष्य

ब्रह्मस्व हरता है, वे तीनों ही तुल्य दोषभागी होते हैं; उनके पितर निःसन्देह असन्तुष्ट हुआ करते हैं; देवता और पितृगण उनके दिये हुए हविको आदरपूर्व्वक ग्रहण नहीं करते; इसलिये परस्त्री तथा बन्ध्या नारीको परित्याग करे। जो लोग अपने ऐश्वर्य्यकी इच्छा करें, उन्हें ब्रह्मस्व हरना उचित नहीं है; धर्म्मसम्बन्धीय एक और गुप्त रहस्य सुनो। जो श्रद्धावान् मनुष्य सदा गुरुजनोंकी आज्ञा प्रतिपालन करता और प्रतिमहीनेकी द्वादसी और पूर्णिमासीके दिन ब्राह्मणोंको घृत अक्षत दान करता है, उसके द्वारा चन्द्रमा तथा महोदधि समुद्रकी वृद्धि होती है, इन्द्र उस प्रदाताको अश्वमेध यज्ञका चौथा भाग फल स्वरूप प्रदान करते हैं। एक दूसरा रहस्ययुक्त महाफलजनक धर्म्म सुनो, यह इस कलियुगमें मनुष्योंको सुखदेनेवाला है। जो मनुष्य अत्यन्त भोरके समय उठके स्नान करता और समाहित होके ब्राह्मणोंको सफेद वस्त्र दान किया करता तथा जो मधुके सहित पितरोंको तिलोदक, दीप और कृशर प्रदान करता है, उसका फल सुनो। भगवान् इन्द्रने तिलपात्र दानका फल कहा है, कि जो लोग गोदान तथा शाश्वत भूमि प्रदान करते हैं तथा जो लोग बहुतसी दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ करते हैं, देवगण तिलपात्र दानके सहित उन सब दानों और यज्ञके फलोंको तुल्य समझते हैं। पितर लोग श्राद्धके समय तिलोदकको सदा अक्षय जानते हैं, दीपदान कृशर दान करनेसे दाताके पितामहगण प्रसन्न होते हैं। स्वर्गलोक और पितृलोकमें देवताओं तथा पितरोंसे पूजित यह ऋषिदृष्ट पुरातन विषय मैंने कहा है।

१२९ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर सब ऋषियों देवताओं और पितरोंने सावधान होकर तपोवृद्धा अरुन्धतीसे प्रश्न किया। अरुन्धती तपोवृद्धा समान व्रतचारिणी हैं और जैसा महानुभाव वसिष्ठका प्रभाव है, इसका चरित्र भी वैसा ही है; इसलिये ऋषि लोग इसी भांति निश्चय करके अरुन्धतीसे बोले, हे भद्रे! हम लोग तुम्हारे समीप धर्म्मरहस्य सुननेकी अभिलाष करते हैं, तुम्हारे समीप जो धर्म्म अत्यन्त गोपनीय भावसे विद्यमान हो, तुम्हें उसका विषय वर्णन करना योग्य है।

अरुन्धती बोली, हे तपोधनगण! आप लोगोंके स्मरण करनेसे ही मेरे तपकी वृद्धि हुई, आप लोगोंकी कृपासे मैं रहस्यके सहित शाश्वत धर्म्म कहती हूं, उसे पूरी रीतिसे सुनिये। श्रद्धावान् मनुष्य तथा जिनका मन पवित्र हो, उन्हींके समीप इसे कहना योग्य है। अश्रद्धावान्, अहङ्कारी, ब्रह्महत्यारे और गुरुतल्पगामी, इन चारों पुरुषोंके सङ्ग बार्त्तालाप करना योग्य नहीं है। इसलिये इनके निकट धर्म्म प्रकाश न करे। जो लोग बारह बरसतक प्रतिदिन एक एक कपिला गऊ प्रदान करते, जो मनुष्य प्रति महीने सदा सत्र किया करते और जो लोग ज्येष्ठ पुष्करमें सहस्र गो दान करते हैं, उनके धर्म्मका फल जिसके गृहमें अतिथि सन्तुष्ट होते हैं, उसके सदृश नहीं है। मनुष्योंको सुख देनेवाला दूसरा धर्म्म सुनो। श्रद्धावान मनुष्योंको यह रहस्ययुक्त धर्म्म प्रतिपालन करना उचित है। भोरके समय उठके जलयुक्त दाभ ग्रहण करके वही जल गोशृङ्गमें सेचन करे और निराहारी रहके वही जल माथेपर चढ़ावे, उससे जो फल होता है, उसे सुनो। तीनों लोकोंके बीच जो सब सिद्ध चारणों और महर्षियोंसे सेवित तीर्थ हैं, उनमें स्नान करनेसे जो फल होता है, गौओंके शृङ्गोदकसे अभिषिक्त होनेपर उसके समान फल हुआ करता है। अरुन्धतीका ऐसा बचन सुनके देवताओं, पितरों और सब प्राणियोंने सन्तुष्ट होकर धन्य धन्य कहके उसकी पूजा की।

ब्रह्मा बोले, हे महाभागे ! तुमने जो रहस्ययुक्त धर्म्म कहा, वह अत्यन्त आश्चर्य्ययुक्त है। हे धन्ये ! मैं तुम्हें वर देता हूं, सदा तुम्हारे तपकी वृद्धि हो।

यम बोले, तुम्हारे समीप मैंने जो दिव्य कथा सुनी, वह अत्यन्त रमणीय है। अब हमारे प्रिय चित्रगुप्तका वचन सुनो। यह धर्म्मयुक्त रहस्य महर्षियोंको भी सुनना योग्य है, जो श्रद्धावान् मनुष्य अपने हितकी इच्छा करते हैं, उनका किया हुआ पाप पुण्य कुछ भी विनष्ट नहीं होता। पर्व्वके समय जो कुछ आदित्यके समीप पहुंचता है, मनुष्यके परलोकमें जानेपर भगवान् सूर्य्य उन सब विषयोंको जानते हैं और पुण्यात्मा मनुष्य उन्हीं विषयोंको भोग किया करते हैं। चित्रगुप्तका कुछ पवित्र मत कहता हूं, जल, दीपक, पादुका और कपिला गऊ सदा दान करना योग्य है; पुष्कर तीर्थमें वेद जाननेवाले ब्राह्मणको कपिला (कामधेनु) गऊ दान करना उचित है। सब भांतिसे यत्नपूर्व्वक अग्निहोत्र करे, इसके अतिरिक्त दूसरे धर्म्म भी चित्रगुप्तके द्वारा वर्णित हुए हैं। हे सत्तमगण! इसके फल पृथक् पृथक् रीतिसे सुनने योग्य हैं। कालक्रमसे सब प्राणी ही प्रलयको प्राप्त होंगे, उस समयमें वे दुर्गम स्थानोंमें पहुंचके भूख प्याससे पीड़ित तथा दह्यमान होकर परिपाकावस्था लाभ करेंगे, वहां भागनेका उपाय नहीं है, अल्पबुद्धि मनुष्य घोर अन्धकारमें प्रवेश करेंगे। उस समय जिसके सहारे पुरुष दुर्गम स्थानोंसे पार होता है, वह धर्म्म कहता हूं। थोड़े व्ययसे होनेवाले महत् प्रयोजन साधक कार्य्यसे परलोकमें सुख मिलता है, जलदानके दिव्य फल परलोकमें विशेष रीतिसे उपकारक हुआ करते हैं, वहांपर जलदाताके लिये पुण्योदका नदी विहित है, उसमें अक्षय शीतल जल अमृतरूपसे हुआ करता है। जो लोग इस लोकमें जलदान करते हैं, वे परलोकमें उस नदीके जलको पीनेके अधिकारी हैं। दीपकदानसे जो फल होता है, उसे सुनो। दीपदाता मनुष्यको सदा अन्धकार नहीं दिखाई देता, उसे चन्द्रमा अग्नि और सूर्य्य प्रभा प्रदान करते हैं, देववृन्द उसका सम्मान किया करते और सब दिशा उसके समीप निर्म्मल होती हैं। दीपदान करनेवाला मनुष्य परलोकमें जाकर सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होता है, इसलिये दीपदान और विशेष रीतिसे जलदान करना चाहिये। जो लोग पुष्कर तीर्थमें वेदपारग ब्राह्मणको कपिला गऊ प्रदान करते हैं, उनका उस विषयमें विशेष फल सुनो। जो लोग पुष्करमें कामधेनु दान करते हैं, उन्हें वृषभके सहित एक सौ गऊका फल मिलता है, जो कोई पाप ब्रह्महत्याके सदृश भी हो, उसे भी वह दान की हुई एक सौ गौवोंके सदृश कपिला गऊ दूर करती है, इसलिये पुष्करतीर्थमें जाके शुक्लपक्षमें कपिला गऊ अवश्य दान करना चाहिये। जो लोग सत्पात्र ब्राह्मणको दो पादुका दान करते हैं, उन्हें किसी विषयमें कुछ दुःख तथा कांटेका भय नहीं होता। छत्र दान करनेवाले मनुष्यको परलोकमें जानेपर सुखकरी छाया प्राप्त होती है, इस लोकमें दान करनेसे कदापि उसका विनाश नहीं होता, चित्रगुप्तका मत सुनके महातेजस्वी भगवान् सूर्य्य पुलकित होकर सब देवताओं और पितरोंसे बोले, कि जो श्रद्धावान् मनुष्य महानुभाव ब्राह्मणोंको यह सब वस्तु दान करते हैं, उन्हें किसी प्रकारका भय नहीं होता। कर्म्मदोषयुक्त नीचे कहे हुए इन पांचों पुरुषोंकी निष्कृति नहीं है, वे असम्भाष्य अनाचारी अधम मनुष्य परित्याज्य हैं,—ब्रह्महत्यारे, गोघाती, परस्त्री रत, अश्रद्धावान् और जो पुरुष स्त्रीको उपजीव्य किया करता है। ये सब पापकर्म्म करनेवाले प्रेतलोकमें जाकर रुधिरपीप खानेवाली मछलियोंकी भांति परिपाक लाभ करते

हैं। पितर, देवता, स्नातक ब्राह्मण और इनके अतिरिक्त जो सब तपस्वी हैं, उन्हें योग्य है, कि उक्त पांच पुरुषोंसे वार्त्तालाप न करें।

१३० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर महाभाग देवताओं, पितरों और ऋषियोंने राक्षसोंसे कहा। हे निशाचरगण! तुम सब कोई महाऐश्वर्यशाली अपरोक्ष निशाचर हो, तुम किस प्रकार जूठे अपवित्र और शूद्र मनुष्योंकी हिंसा किया करते हो? ऐसा रक्षोघ्न उपाय क्या है, जिसके सहारे तुम लोग गृहके बीच ही प्रनष्ट होजाओ, हम लोग इस विषयको तुम्हारे समीप सुननेकी इच्छा करते हैं।

निशाचरोंने कहा, मनुष्य मैथुनके द्वारा सदा जूठे होते हैं और जो लोग हीन पुरुषोंको श्रेष्ठ करते उत्तम जनोंका अपमान किया करते हैं, वे सदा जूठे हैं। जो मनुष्य मोहवश होकर मांस भक्षण किया करते, वृक्षकी जड़में सोते सिरपर मांस रखके शयन किया करते तथा शय्यापर पांवके स्थानमें सिर रखके सोते हैं, वे सभी जूठे हैं, इसलिये मनुष्योंके बहुतसे छिद्र हैं। जो लोग जलके बीच अपवित्र वस्तु और श्लेष्म परित्याग करते हैं, वे सब मनुष्य निःसन्देह हम लोगोंके भक्ष्य और बध्य हैं, जिनके इसी प्रकार स्वभाव और ऐसे ही व्यवहार हैं, उन्हीं मनुष्योंको हम लोग धर्षण किया करते हैं और जिसके कारणसे हम हिंसा करनेमें असमर्थ होते हैं, उन प्रतिघात विषयोंको सुनो। जो पुरुष गोरोचन समालम्भन और हाथमें वचा धारण करता है और उसमें रत होके माथेपर घृत अक्षत लगाता है तथा जो लोग मांसभक्षण नहीं करते, हम उनकी हिंसा करनेमें समर्थ नहीं हैं। जिसके गृहमें रातदिन अग्नि जलती रहती है, जिन गृहस्थोंके घरमें तरक्षु व्याघ्रके चमड़े तथा दांत रहते हैं, पर्व्वतकी गुफामें शयन करनेवाले स्थूल कच्छप, घृतका धूआं, बिड़ाल और काले तथा पीले बकरे विद्यमान रहते हैं, महाघोर राक्षसगण उन गृहोंमें जानेमें समर्थ नहीं हैं। हमारे समान पुरुष सुखपूर्व्वक सब लोकोंमें विचरते हैं, इसलिये गृहमें इन सब विषयोंके रहनेपर राक्षस लोग उन गृहोंमें उपद्रव नहीं कर सकते। जिसमें तुम लोगोंको महान् सन्देह हुआ था, वह विषय तुम्हारे समीप वर्णित हुआ।

१३१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर पद्म प्रतीकाश कमलयोनि ब्रह्मा देवताओं तथा शचिपति इन्द्रसे यह वचन बोले, यह रसातलचारी महाबली पराक्रमी रेणुक नाम तेजस्वी नाग है। इसके अतिरिक्त अत्यन्त तेजस्वी महाबलवान महा हस्तीगण पर्व्वत और बनके सहित समस्त पृथ्वीमण्डलको धारण कर रहे हैं; रेणुक तुम लोगोंकी अनुमतिके अनुसार वहां जाकर उन महागजोंसे गोपनीय धर्म्म पूछे। देवताओंने पितामहका वचन सुनके उस समय जिन स्थानोंमें वे धरणीधर दिग्गज अव्यक्त प्रभावसे वर्त्तमान थे, वहां रेणुकको भेजा।

रेणुक बोले, हे महाबली गजगण! मैं आप लोगोंके समीप गोपनीय धर्म्मोंको सुननेके लिये देवताओं और पितरोंकी आज्ञासे आया हूं। हे महाभागगण! इसलिये आप लोग समाहित होकर धर्म्मविषय कहिये।

दिग्गजगण बोले, कार्तिक महीनेमें कृष्णपक्षके अश्लेषा नक्षत्रयुक्त अष्टमी तिथिमें लोग श्राद्धके समय यताहारी और क्रोधरहित होकर नीचे कहे हुए मन्त्रको जपकर गुड़ोदन दान करें। बलदेव प्रभृति जो सब बलवान अनन्त अक्षय नित्यभोगी महाबली नाग हैं और

उनके कुलमें उत्पन्न हुए जो महाभुज सर्प हैं, वे बल और तेजकी वृद्धिके लिये मेरे बलको प्रतिग्रह करें। जिस समय श्रीमान् नारायणने वसुन्धराका उद्धार किया था, पृथ्वीका उद्धार करनेवाले उस ही विष्णुके सदृश बल होवे, इस मन्त्रको पढ़के बिलके बीच बलि निवेदन करे; जब सूर्य्य अस्त होजाय, तब गजेन्द्र पुष्पसे युक्त काले वस्त्रसे ढकी हुई बलिको बिलमें डाले। इसके प्रभावसे रसातलमें हम लोग भारसे अत्यन्त पीड़ित होनेपर भी सन्तुष्ट होते हैं और पृथ्वीको धारण करनेका परिश्रम मालूम नहीं होसकता, हम लोग इस ही प्रकार भारार्त्त और निरपेक्ष होकर सब विषयोंको जानते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यदि उपवासी होकर एक वर्षतक इस ही प्रकार दान करें, तो उन्हें बहुत फल होता है। वाल्मीकमें बलि प्रदान करनेपर हमारे मतसे अत्यन्त फल हुआ करता है, तीनों लोकोंमें जो सब महापराक्रमी नाग हैं, एक सौ वर्षतक यथार्थ रीतिसे उनका आतिथ्य होता है। देवताओं, पितरों और महाभाग ऋषियोंने दिग्गजोंका ऐसा वचन सुनके रेणुकाकी विधिवत् पूजा की।

१३२ अध्याय समाप्त।

महेश्वर बोले, तुम लोगोंने सारतत्त्व उद्धार करके साधु-धर्म्म वर्णन किया, अब मेरे समीप सब कोई गोपनीय धर्म्म सुनो। जिन मनुष्योंकी बुद्धि धर्म्मयुक्त है और श्रद्धावान हैं, उन्हें यह महाफल जनक रहस्ययुक्त धर्म्म उपदेश करना चाहिये। जो लोग सावधान होकर एक महीनेतक गवाह्निक नाम गो सेवा करते और दिनमें एकबार भोजन किया करते हैं, उन्हें जो फल मिलता है, उसे सुनो। ये सब महाभाग गौवें परम पवित्र रूपसे कही गई हैं, ये देव, असुर और मनुष्योंके सहित तीनों लोकोंको धारण कर रही हैं, इनकी सेवा करनेसे महापुण्य और महाफल मिलता है। गौओंकी सेवा करनेवाले पुरुष प्रतिदिन धर्म्म उपार्जन किया करते हैं; पहिले सत्ययुगमें गोगण मेरे द्वारा अनुज्ञात हुई थी, अनन्तर पद्मयोनि प्रजापतिने मुझसे विनय की, उस ही निमित्त वृषभ मेरे ध्वजस्थानमें निवास करता है, मैं गौओंके सहित क्रीड़ा करता हूं, इस ही निमित्त वे सदा पूजनीय हैं। महाप्रभावयुक्त वर देनेवाली गौवें उपासित होनेपर वरदान करती हैं, मनुष्य सब कर्म्मोंके करनेसे जो फल पाता है, गौवें वह सब अनुमोदन किया करती हैं। जो लोग एक महीनेतक गौओंकी सेवा करते हैं उन्हें उस फलका चौथा भाग प्राप्त होता है।

१३३ अध्याय समाप्त।

स्कन्द बोले, सब कोई सावधान होके मेरा अनुमित धर्म्म सुनो। काले वृषभके दोनों सींगोंसे मृत्तिका लेकर जो लोग तीन दिन अभिषेक करते हैं, उस धर्म्मका फल कहता हूं। वे सब पापोंसे रहित होकर परलोकमें आधिपत्य पाते हैं और वे मनुष्य जन्म लेनेपर शूर होते हैं। और भी एक दूसरा गोपनीय रहस्य सुनो। उडुम्बरपात्रमें मधुके सहित पक्वान्न रखके पौर्णमासी तिथिमें उदय होते हुए चन्द्रमाको बलि प्रदान करे। हे श्रद्धावान् तपोधनगण! उस विषयका नित्य धर्म्मफल सुनो। साध्यगण रुद्रगण आदित्यगण विश्वदेवगण दोनों अश्विनीकुमार मरुद्गण और वसुगण उस बलिको प्रतिग्रह करते हैं, उससे चन्द्रमा और महोदधि समुद्रकी वृद्धि होती है। यह रहस्ययुक्त सुखदायक धर्म्म मेरे द्वारा वर्णित हुआ।

विष्णु बोले, जो पुरुष असूयारहित श्रद्धावान् और सावधान होकर प्रतिदिन देवताओं

तथा ऋषियोंके गोपनीय धर्म्मोंका पाठ करता अथवा सुनता है, उसे कुछ भी विघ्न नहीं प्राप्त होते और न किसी भांतिका भय रहता है। जो सब रहस्ययुक्त शुभ और पवित्र धर्म्म वर्णित हुए हैं, जो पुरुष विशेष रीतिसे जितेन्द्रिय होके उसका पाठ करता है, उसे उन्हीं धर्म्मोंका फल प्राप्त होता है, उसके पाप छूट जाते और वह पापोंसे लिप्त नहीं होता। यह सब धर्म्म रहस्य पढ़के सुनानेवालोंको भी फल मिलता है, पितर और देवगण उनका अक्षय हव्यकव्य भोग करते हैं। जो मनुष्य पर्व्वके समय सावधान होके ब्राह्मणोंको यह विषय सुनाते हैं, वे ऋषियों देवताओं और पितरोंके अभिमत श्रीमान् और धर्म्मविषयमें सदा प्रवृत्त हुआ करते हैं; मनुष्य महापातकके अतिरिक्त सब पाप कर्म्म करके भी यह रहस्य धर्म्म सुननेसे पापहीन होता है।

भीष्म बोले, हे नरनाथ! व्यासदेवके कहे हुए सर्व्वदेव नमस्कृत देवताओंका यह धर्म्म रहस्य मेरे द्वारा वर्णित हुआ, यह रत्नपूरित पृथ्वीमें अत्यन्त उत्तम ज्ञानस्वरूप है; इसलिये धर्म्मज्ञ मनुष्योंको यह विषय अवश्य सुनना चाहिये। अश्रद्धावान्, नास्तिक, नष्टधर्म्म, नीच कर्म्म करनेवाले दुष्ट, अनात्मभूत पुरुषों और गुरुद्रोहियोंके निकट यह कथा न कहे।

१३४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भारत! इस संसारमें ब्राह्मणोंका भोज्य अन्न क्या है? क्षत्रिय किसका अन्न भोजन करें? वैश्यका भोज्य क्या है और शूद्र लोग किसका अन्न खायेंगे।

भीष्म बोले, ब्राह्मणोंको ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यका अन्न भोजन करनेमें कुछ हानि नहीं है, केवल शूद्रका अन्न ब्राह्मणोंके लिये वर्ज्जित है। क्षत्रियके विषयमें ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यका अन्न भोज्य है। केवल नीचकर्म्म करनेवाले सर्व्वभक्षी शूद्रोंका अन्न परित्याज्य है। वैश्योंके लिये ब्राह्मण और क्षत्रियोंका अन्न भोज्य है; जो लोग सदा अग्निहोत्र किया करते, विविक्त और चातुर्म्मास्य व्रतमें रत हैं, उन वैश्योंको ब्राह्मण और क्षत्रियोंका अन्न खाना योग्य है। जो ब्राह्मण शूद्रका अन्न खाता है, वह पृथ्वीका मल भोग किया करता है, वह मनुष्यों तथा सब लोगोंका मल-भोजन किया करता है। जो ब्राह्मण शूद्रोंका अन्न खानेवाले हैं, वे पृथ्वीका मल भोजन करते तथा पृथ्वीका सारा मल भोग किया करते हैं। सन्ध्यावन्दन आदि श्रेष्ठकर्म्मोंसे युक्त ब्राह्मण लोग यदि शूद्रकी सेवा करें, तो वे सब कोई नरकगामी होते हैं। ब्राह्मणगण स्वाध्यायपाठ और मनुष्योंके स्वस्त्ययनमें रत रहें। क्षत्रिय लोगोंकी रक्षा और वैश्य मनुष्योंके पुष्टिकार्य्यमें प्रवृत्त होवे। प्राचीन ऋषियोंने कहा है, कि वैश्य जो कार्य्य करके धनप्राप्त करता है, उसीसे दान करनेसे जीवित रहता है, खेती गोरक्षा और वाणिज्य वैश्योंके कर्म्म हैं, इसलिये इसमें कुछ निन्दा नहीं है। जो पुरुष अपना कार्य्य छोड़के शूद्रका कर्म्म करता है, उसे शूद्रसदृश जानो, उसका अन्न किसी प्रकार भोजनके योग्य नहीं है। वैद्य, शस्त्रजीवी, पुराध्यक्ष, पुरोहित और बरस दिनतक वृथाध्यायी,—ये सब कोई शूद्रके समान हैं। इनके यहां जो पुरुष निरपत्रप होकर शूद्रकर्म्ममें भोजन करता है, उसे अभोज्य भोजन करनेसे दारुण भय प्राप्त होता है, उसका कुल वीर्य्य और तेज नष्ट होजाता है और वह धर्म्मसे रहित होके कुत्तेकी भांति क्रियाहीन होनेसे मरके तिर्य्यक्योनिमें जन्मता है। जो पुरुष वैद्यका अन्न भोजन करता है, वह पुरीष भक्षण किया करता है, पुंश्चलीका अन्न मूत्र स्वरूप है, शिल्पीका अन्न रुधिरके तुल्य है। जो साधुसम्मत ब्राह्मण विद्या उपजो-

वीका अन्न भोजन करता है, उसे शूद्रान्न भोजनका फल मिलता है, इसलिये साधु ब्राह्मण वैसे अन्नको भोजन न करे । प्राचीन लोग कहा करते हैं, कि निन्दनीय पुरुषका अन्न खाना रुधिरहृदन्न भक्षणसदृश है। पण्डित लोग खलान्ध भोजनको ब्रह्महत्यासदृश जानते हैं, असत्कृत तथा बिना निमन्त्रणके कदापि भोजन न करना चाहिये ; यदि ब्राह्मण इस प्रकार भोजन करे तो वह शीघ्र ही व्याधियुक्त होता और उसका कुल नष्ट होता है । नगररचकका अन्न भोजन करनेसे चाण्डालत्व प्राप्त हुआ करता है । गोघाती, ब्रह्मघाती, सुरा पीनेवाले और गिमातृगामीका अन्न भोजन करनेसे ब्राह्मण राचसोंके कुलकी वृद्धि करता है। नस्त धन हरनेवाले क्लीत और कृतघ्नका अन्न भोजन करनेसे मध्यदेशसे बाहर सवरस्थानमें जन्म हुआ करता है । हे कुन्तीपुत्र ! यह मैंने अभोज्य और भोज्यका विषय विधिपूर्व्वक वर्णन किया, अब मेरे समीप तुम दूसरे किस विषयको सुननेकी इच्छा करते हो ?

१३५ अध्यायं समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! आपने जिसका अन्न भोज्य है और जिसका अभोज्य है, उसे वर्णन किया, परन्तु मुझे इस विषयमें सन्देह होता है ; इसलिये आप उस संशयको दूर करिये । ब्राह्मणोंका हव्यकव्य प्रतिग्रहमें विशेष करके अनेक प्रकारके भोज्य विषयोंमें जो सब प्रायश्चित्त हैं, वह विषय आप मेरे समीप कहिये ।

भीष्म बोले, हे महाराज ! महानुभाव ब्राह्मण लोग प्रतिग्रह और भोज्य विषयोंमें जिसके सहारे पापोंसे छूटते हैं, वह तुम्हारे समीप कहता हूं । हे युधिष्ठिर ! घृत प्रतिग्रह करनेसे सावित्री मन्त्रके द्वारा समिध होम करना होता है, तिल प्रतिग्रहको भी घृतके समान जानो । मधुमांस और नमक प्रतिग्रह करनेसे सूर्य्यके उदयकाल पर्य्यन्त खड़ा रहके ब्राह्मण पवित्र होता है । काञ्चन प्रतिग्रह करनेसे ब्राह्मण गुरुस्तुति जप करते हुए लोगोंके सम्मुख कृष्णायस धारण करके सब पापोंसे मुक्त हुआ करता है। हे पुरुषश्रेष्ठ ! इस ही प्रकार स्त्रियोंके धन और वस्त्र प्रतिग्रह करनेसे ब्राह्मण उपरोक्त जप करनेसे पापरहित होता है। अन्न प्रतिग्रह करने और पायस ऊखका रस, ऊख, तेल तथा पवित्र वस्तुओंको लेनेसे त्रिसन्ध्या जलमें निमज्जन करना होगा । धान्य, फूल, जल पिष्टमय वस्तु, यावक और दही, दूध प्रतिग्रह करनेसे एक एक सौ बार गायत्री जप करे । ऊर्द्ध दैहिक कार्य्य सम्बन्धीय पादुका और वस्त्र प्रतिग्रह करनेसे समाहित होकर एक सौ बार गायत्री जपने पर पापोंसे मुक्ति होती है । ग्रहण और अशौचकालमें क्षेत्र प्रतिग्रह करनेसे त्रिरात्र उपवास करके उस पापसे छूटेगा । जो ब्राह्मण कृष्णपक्षमें पितरोंका श्राद्धान्न भोजन करता है, वह उस अन्न भोजनके निमित्त रात दिन उपवास करनेसे पवित्र हुआ करता है ; बिना स्नान किये सन्ध्या उपासना न करे, जप करनेमें प्रवृत्त न होवे और दिनमें दूसरी बार भोजन न करे, तो ब्राह्मण पवित्र होगा । अपराह्नमें चुद्रोधके हेतु पितरोंका श्राद्ध कहा गया है, उस समय पहले निमन्त्रित लोग अन्न भोजन करें । मृत पुरुषके घरमें तीसरे दिन जो ब्राह्मण अन्न भोजन करता है, वह त्रिसन्ध्या स्नान करते हुए बारहवें दिन पवित्र होता तथा द्वादशाह बीतनेपर विशेष रीतिसे पवित्र होकर ब्राह्मणोंको घृतदान करनेसे पापरहित होगा । दश रात्रितक मृत पुरुषके घरमें अन्न भोजन करनेसे निम्नलिखित प्रायश्चित्त करना होगा, गायत्री जप रैवत साम पवित्रेष्टि यद्दे वा-देव ईशान यह अनुवाक पञ्चक और अघमर्षण

मन्त्र जप करे। जो लोग मृत पुरुषके गृहमें विरात्र भोजन करते हैं, वे ब्राह्मण सप्त-विषवण स्नान करनेसे पवित्र होकर विपुल सिद्धि लाभ करते तथा पाप ग्रस्त नहीं होते। जो ब्राह्मण शूद्रके सङ्ग एकत्र भोजन करता है, उसका विधिपूर्व्वक अशौच ग्रहणके सहारे शुद्धि विहित है। जो ब्राह्मण वैश्यके साथ एकत्र भोजन करता है, विरात्र भिक्षा करके जीवन व्यतीत करनेसे उस पापसे मुक्त होगा। जो ब्राह्मण क्षत्रियके सहित एकत्र भोजन करता है, वह वस्त्रके सहित नहानेसे उस पापसे रहित हुआ करता है; एकत्र भोजन शूद्रके कुलको नष्ट करता, वैश्योंके पशु और बान्धवोंको विध्वंश करता, क्षत्रियोंको श्रीभ्रष्ट और ब्राह्मणोंका तेज नष्ट करता है; इसलिये उसके प्रायश्चित्त और शान्तिके लिये होम गायत्री जप, रैवत नामदृष्टि और अघमर्षण प्रभृति जप करे। यदि परस्परमें जूठा भोजन किया जावे, तो रोचना दूब और हरिद्रादि मङ्गल समालम्भन करे, इस विषयमें सन्देह नहीं है।

१३६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरत पितामह! दान और तपस्यामेंसे कौन विषय श्रेष्ठ है? उसे कहके आप हमारे मनका दुःख दूर करिये

भीष्म बोले, जिन दान पुण्यमें रत धर्म्ममें तत्पर तपस्याके सहारे शुद्धचित्त राजाओंने सन्देहरहित होकर श्रेष्ठ लोकोंको पाया है, उसे सुनो। हे महाराज! अत्रेय मुनिने शिष्योंसे सत्कृत होकर उन्हें निर्गुण ब्रह्मका उपदेश करके उत्तम लोकोंको पाया था। उशीनर शिवि राजा ब्राह्मणके लिये अपना पुत्र प्रदान करके इस लोकसे स्वर्गमें गये थे। काशीपति प्रतर्द्दन ब्राह्मणके निमित्त अपना पुत्र दान करनेसे इस लोक और परलोकमें अतुल कीर्त्ति भोगते हैं। सांकृतिपुत्र रन्तिदेवने महानुभाव वसिष्ठको विधिपूर्व्वक अर्घ प्रदान करके उत्तम लोकोंको पाया है। देवावृध राजाने यज्ञके निमित्त ब्राह्मणोंको एक सौ बलाकायुक्त दिव्य सुवर्णमय शुभ छत्र प्रदान करके सुरपुरमें गमन किया है। भगवान् अम्बरीष राजाने अत्यन्त ब्राह्मणोंको समस्त राज्य दान करके सुरलोक पाया है। सूर्य्यवंशीय जनमेजय राजाने ब्राह्मणको दिव्य कुण्डल और गज दान करके उत्तम लोकोंमें गमन किया है। राजर्षि वृषादर्भि ब्राह्मणोंको विविध रत्न और रमणीय आश्रम दान करके अमरलोकमें गये हैं। महायशस्वी जामदग्न्य रामने ब्राह्मणोंको भूमिदान करनेसे और मन सङ्कल्पसे भी अधिक अक्षय भूदेवराज वसिष्ठको प्राणियोंके जीवित रखनेसे अक्षय गति प्राप्त हुई है। दशरथ पुत्र राम जिसका जगत्के बीच महत् यश विख्यात् है, उन्होंने यज्ञोंमें धनदान करके अक्षयलोकोंमें गमन किया है। राजर्षि कक्षसेन महानुभाव वशिष्ठको विधिपूर्व्वक न्यस्त धन प्रदान करनेसे अत्यन्त यशस्वी होकर स्वर्गमें गये हैं। करन्धम अविक्षितका पुत्र मरुत्त अङ्गिराको कन्या दान करके शीघ्र ही स्वर्गलोकमें गया। धार्म्मिकश्रेष्ठ पाञ्चालदेशीय राजा ब्रह्मदत्तने शङ्खरत्न दान करके परम गति पाई है। मित्तसह राजा महात्मा वसिष्ठको दमयन्ती नामी प्रिय भार्य्या दान करके देवलोकमें गया है। मनुके पुत्र सुद्युम्नने महात्मा लिखितको धर्म्मपूर्व्वक चौरयोग्य हस्तच्छेदरूपी दण्डसे उद्धार करके उत्तम लोकोंको पाया है। महायशस्वी राजर्षि सहस्रचित्तने ब्राह्मणोंके लिये प्रिय प्राण परित्याग करके उत्तम लोकोंमें गमन किया है। शतद्युम्न राजा मौद्गल्य मुनि सर्व्वकामयुक्त स्वर्णमय गृह दान करके स्वर्गमें गया है। पहली समयमें सुमन्यु राजा शाण्डिल्य मुनिको पर्व्वतसदृश भक्ष्य भोज्य वस्तुओंको राशि दान करके

स्वर्गलोकमें गये। द्युतिमान नाम महातेजस्वी शाल्वराज ऋचीक ऋषिको राज्य दान करके अत्यन्त उत्तम लोकोंमें गमन किया है। राजर्षि मदिराश्वने हिरण्यहस्त मुनिको सुमध्यमा कन्या दान करके देवताओंके अधिष्ठित लोकोंमें गमन किया है। लोमपाद राजर्षि ऋष्यशृङ्गको शान्तानामी कन्या दान करके सर्व्वकामयुक्त हुए। राजर्षि भगीरथने कौत्सऋषिको हंसी नामी यशस्विनी कन्यादान करके अक्षयलोकोंमें गमन किया है, राजा भगीरथने कोहल मुनिको सात हजार सवत्सा गऊ दान करके उत्तम लोकोंको पाया है।

हे युधिष्ठिर! ये सब तथा दूसरे बहुतेरे राजा दान तथा तपस्याके सहारे स्वर्गमें गये हैं और बार बार निवृत्त होते हैं; जबतक पृथ्वी है, तबतक उनकी कीर्त्ति प्रतिष्ठित रहेगी। हे युधिष्ठिर! जिन गृहस्थोंने दान और तपस्याके सहारे सब लोकोंको जय किया है, यह उन शिष्ट पुरुषोंका चरित मैंने वर्णन किया, इन्होंने दान यज्ञ और पुत्रोत्पादनके द्वारा स्वर्गलोक पाया है। हे कुरुकुलधुरन्धर! पूर्व्वोक्त राजा लोग सदा दान करते हुए धर्म्मयुक्तबुद्धिको दान तथा यज्ञकार्य्यमें नियुक्त रखा था। हे नृपश्रेष्ठ! जिस विषयमें सन्देह हो, उसे कल्ह भोरके समय कहना क्यों कि, अब सन्ध्याका समय उपस्थित हुआ है।

१३७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सत्यव्रत सत्यपराक्रमी पितामह! उत्तम महत् दानधर्म्मके सहारे जो सब राजा देवलोकमें गये हैं, मैंने वह सब आपके समीप सुना। हे धार्म्मिकश्रेष्ठ! अब कितने प्रकारके दान देने योग्य हैं और उससे क्या फल प्राप्त होता है? किस प्रकार किन लोगोंको धर्म्मपूर्व्वक दान करना उचित है, यह सब धर्म्मविषय यथार्थ रीतिसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

भीष्म बोले, हे पापरहित भरत वंशावतंस कुन्ती पुत्र! सब वर्णोंको जिस प्रकार दान करना होता है, वह मेरे समीप यथार्थ रीतिसे सुनो। हे भारत! धर्म्म, अर्थ, मोक्ष, काम और कारणवशसे दानको पांच प्रकारका जानो, जिस कारणसे जो दान किया जाता है, उसे सुनो। असूयारहित होके ब्राह्मणोंको दान करना योग्य है, दान करनेसे मनुष्य इसलोकमें परम कीर्त्तिवान होकर परलोकमें सुख पाता है। यह पुरुष मुझे दान करता है, करेगा अथवा किया है,—अर्थियोंको ऐसा वचन सुनके उन्हें सब वस्तु दान करनी योग्य है। न मैं इसका हूं और न यह पुरुष मेरा है, परन्तु यह अवमानित होनेपर पापकार्य्य करेगा, ऐसा समझके पण्डित लोग दृढ़ भयसे मूढ़ मनुष्योंको दान करते हैं। यह मेरा प्यारा है और मैं भी इसे प्रिय हूं, बुद्धिमान पुरुष ऐसा जानके साव-धान होकर मित्र पुरुषको दान करते हैं। यह पुरुष अत्यन्त दीन है, इसलिये जांचता है और थोड़ेमें ही सन्तुष्ट होगा, ऐसा बिचार कर करु-णावशसे दरिद्रोंको दान करे। प्रजापतिने कहा है, कि ये पांच प्रकारके दान पुण्य और कीर्त्तिकी वृद्धि करते हैं; इसलिये शक्तिके अनु-सार दान करना योग्य होता है।

१३८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद महा-प्राज्ञ पितामह! आप हमारे इस श्रेष्ठवंशमें अनेक प्रकारके शास्त्रज्ञानसे युक्त हैं। हे अरि-दमन! आपके समीप उत्तरकालमें सुखदायक लोगोंके लिये आश्चर्य्य स्वरूप धर्म्मार्थ युक्त वचन सुननेकी अभिलाष करता हूं। यह समय स्वजनों और बान्धवोंके लिये दुर्लभ है। हे पुरु-

श्रेष्ठ! आपके अतिरिक्त हम लोगोंके लिये दूसरा कोई भी उपदेष्टा नहीं है। हे पापरहित! मैं भाइयोंके सहित यदि आपका कृपापात्र होऊं, तो मैं जो पूंछता हूं उसका आपको उत्तर देना उचित है। ये सब राजाओंके सम्मानभाजन श्रीमान् नारायण आपका बहुमान और विनयके सहित सेवा करते हैं, इनके और सब राजाओंके सम्मुख मेरे और भातृगणोंकी प्रीतिके निमित्त आप इस विषयको वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गङ्गानन्दन भीष्मने युधिष्ठिरका वचन सुनके प्रीतिपूर्व्वक सम्भ्रमयुक्त होकर यह वच्चमाण वचन कहा।

भीष्म बोले, पहिले समयमें मैंने विष्णुका जो प्रभाव सुना था, वह अत्यन्त मनोहर कथा तुम्हारे समीप कहूंगा। वृषभध्वजका जैसा प्रभाव सुना है उसे और रुद्र रुद्राणीको जिस प्रकार संशय हुआ था, वह कथा भी मेरे समीप सुनो। पहिले समयमें धर्म्मात्मा कृष्णने बारह वर्षका व्रताचरण किया था, दोक्षित होनेपर पर्व्वत, नारद, कृष्णद्वैपायन, जापकश्रेष्ठ धौम्य देवल, काश्यप और दूसरे दीक्षा दमयुक्त शिष्योंके सहित साधु महर्षिगण तथा देवकल्प सिद्ध तपस्वियोंने उनका दर्शन करनेके लिये आगमन किया। देवकीपुत्र कृष्णने उन लोगोंके आनेसे प्रसन्न होकर देवतुल्य पूजनीय अतिथियोंका यथायोग्य कुलके अनुसार सत्कार किया, महर्षिगण हरे और सुवर्ण वर्णवर्हि निर्म्मित नवीन आसनोंपर कृष्णके समीप बैठे। अनन्तर वे तपस्वी और राजर्षि लोग देवताओंके धर्म्मयुक्त मधुर कथा कहने लगे। अनन्तर अद्भुत कर्म्म करनेवाले कृष्णके सुखमण्डलसे व्रतचर्य्यारूपी इन्धनके सहारे नारायण तेजस्वरूप अग्नि निकलकर वृक्ष लता क्षुद्र तरु, पक्षी, मृग, श्वापद और सरीसृपोंके सहित उस पर्व्वतको जलाने लगी। अनेक प्रकारके मृगसमूह हाहाकार करते हुए अचेत हुए, उस पर्व्वतकी शिखरस्थान दीनदशायुक्त और मथित होने लगा; उस महाज्वालायुक्त अग्निने निःशेष रूपसे सबको जलाकर विष्णुके निकट आके शिष्यकी भांति उनके दोनों चरणोंको स्पर्श किया। अरिकर्षण नारायणने उस पर्व्वतको निःशेष रीतिसे जलते हुए देखकर सौम्यदृष्टिके सहारे फिर उसे प्रकृतिस्थ किया। वह पर्व्वत पहिलेकी भांति वृक्ष लता पुष्प और पक्षियोंके शब्द और श्वापद सरीसृपोंसे परिपूरित हुआ, मुनिगण उस समय उस अद्भुत और अचिन्त्य व्यापारको देखकर अश्रुपूरित नेत्रयुक्त हुए। अनन्तर वक्तृवर नारायण उन ऋषियोंको विस्मित देखकर विनयपूर्व्वक नम्र मधुर तथा स्निग्ध वचन बोले,। सदा आसक्ति और ममतारहित वेद जाननेवाले ऋषियोंको किस निमित्त विस्मय उपस्थित हुआ? हे तपोधनगण! आप लोग सब कोई अनिन्दित ऋषि हैं, इसलिये आप लोगोंको मेरे इस सन्दिग्ध विषयका निश्चित अर्थ कहना उचित है।

ऋषिगण बोले, हे मधुसूदन! आपने ही सब लोकोंकी सृष्टि की है, फिर आपही सबका संहार करते हैं, तुम्ही शीत हो, तुम ही उष्ण हो और तुम ही वर्षा करते हो। पृथिवीपर जो सब स्थावर जङ्गम जीव हैं, आप ही उनके पिता, माता, प्रभु और प्रभव हो। हे कल्याणरूप मधुसूदन! इससे जिस हेतु तुम्हारे मुखसे अग्नि निकलनेसे हम लोगोंको विस्मययुक्त सन्देह हुआ है, तुम हो उस सन्देहके विषयको कह सकते हो। हे हरि! हे अरिकर्षण! अनन्तर हम लोग त्रासरहित होके जो देखा तथा सुना है, वह सब कहेंगे।

वासुदेव बोले, मेरे शरीरसे जो यह वैष्णव तेज निकला था, वह प्रलयकालकी अग्नि सदृश आभायुक्त था, जिसके सहारे यह महापर्व्वत मथित हुआ और क्रोधविजयी जितेन्द्रिय देवकल्प तपस्वी ध्यानयुक्त आपलोग भी पीड़ित

तथा व्यथित हुए थे। तपस्विव्रत सेवन तथा व्रताचरणयुक्त होनेसे मेरे शरीरसे अग्नि प्रकट हुई थी; इसलिये आप लोग व्यथित न होवें। मैं व्रताचरण करनेके लिये इस पवित्र पर्व्वतपर आके वीर्य्यबलसे अपने सदृश पुत्र पानेके लिये तपस्या कर रहा हूं। अनन्तर मेरी देहमें जो आत्मा है, वही अग्निरूपसे निकलकर सर्व्वलोक पितामह बरददेवका दर्शन करनेके लिये गया था। हे मुनिसत्तमगण! वृषभध्वजने कहा "मेरा आत्मा अर्द्ध तेजसे तुम्हारा पुत्र होगा,"— ऐसा कहके उन्होंने पुत्रके निमित्त अपने आत्माको मेरे समीप भेजा है। यह वही अग्नि परिचर्य्याके निमित्त शिष्यकी भांति मेरे चरण-मूलपर पहुंचके शान्त और प्रकृतिको प्राप्त हुई है। हे तपोधनगण! यह बुद्धिमान पद्मनाभका रहस्यविषय मैंने आप लोगोंके समीप वर्णन किया, इसलिये आप लोग भय न करिये। आपलोग दीर्घदर्शी हैं, आपलोगोंको ज्ञानविज्ञान शोभित तपस्वी व्रत सन्दीप्त सर्व्वत्र अव्यग्र गति विद्यमान है, इसलिये आप लोगोंने द्युलोक वा भूलोकमें जो परम आश्चर्य्य सुना वा देखा हो, उसे मेरे समीप वर्णन करिये, आपलोग तपोवननिवासी महर्षि हैं, आप लोगोंके कहे हुए अमृत सदृश वचन-मधु आस्वादन करनेको मुझे अभिलाष हुई है। हे अमरदर्शन तपस्वीवृन्द! यदि मैं द्युलोक अथवा भूलोकमें आप लोगोंके अतिरिक्त कोई अद्भुत दर्शन दिव्य विषय देखूं, तो वह मेरी परम प्रकृति है, वह सर्व्वस्व अप्रतिहत मेरी आत्माका ऐश्वर्य्य आश्चर्य्य रूपसे मालूम नहीं होता। श्रद्धापूर्व्वक कहा हुआ विषय सज्जनोंके श्रवणगोचर होनेपर पर्व्वतमें अर्पित लेखकी भांति पृथ्वीमण्डलपर सदा स्थिति करता है; इसलिये मैं आप लोगोंके समागम समयमें सज्जनोंके मुखसे निकले हुए मनुष्योंकी बुद्धि उद्दीपनकारी विषयोंका वर्णन करूंगा। अनन्तर मुनिगण कृष्णके निकट विस्मित होकर कमलदल सदृश नेत्रोंसे उन्हें देखने लगे। कोई मधुसूदनकी प्रशंसा करनेमें प्रवृत्त हुए, कोई पूजा करने लगे; कितने ही ऋक् मन्त्रविभूषित वचनसे उनकी स्तुति करने लगे। अनन्तर मुनियोंने उस समय वाक्यको विद नारद मुनिको कथा कहनेके लिये नियुक्त किया। मुनियोंने कहा, हे मुनि! तीर्थयात्रामें रत मुनियोंने हिमालयमें चिन्तनीय आश्चर्य्य अनुभव किया है, ऋषियोंके हितके निमित्त हृषीकेशके निकट वह सब जिस प्रकार देखा गया था, उसे आदिसे अन्ततक वर्णन करो। देवर्षि नारदमुनिने इन मुनियोंका वचन सुनके पहले समयका वृत्तान्त कहना आरम्भ किया।

१३८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर नारायणके सुहृद भगवान नारद ऋषि उमाके सङ्ग महादेवका जो वार्त्तालाप हुआ था, उसे कहने लगे।

नारद मुनि बोले, सिद्ध चारणोंसे सेवित, ओषधियों, पुष्पों, अप्सराओं और भूतोंसे परिपूरित रमणीय हिमालय पर्व्वतपर धर्म्मात्मा देवताओंके ईश्वर वृषभध्वजने तपस्या की थी। महादेव उस स्थानमें सैकड़ों भूतसमूहोंके बीच घिरके हर्षित थे, प्रेतगण अनेक रूप, धारण करते थे, कोई विकटरूप, कोई दिव्यरूप, कोई अद्भुतदर्शन, कोई सिंह व्याघ्रसदृश, कोई सर्व्वगतियुक्त, कोई शृगालवदन, कोई चीतेके सदृश रूपवाले, कोई ऋक्षमुख, कोई उलूकानन, कोई भयङ्कर, कोई वृक और वाजपेयपक्षीकी भांति मुखयुक्त, अनेक प्रकारके मृगमुखवाले, सर्व्वजातियुक्त किन्नर यक्ष गन्धर्व्व राक्षस और भूतों तथा दिव्य पुष्पोंसे परिपूरित दिव्य ज्वाला और दिव्य चन्दनयुक्त दिव्य धूपसे धूपित वृषभध्वजकी सभा मृदङ्ग, ढोल, शंख तथा भेरी आदि दिव्य बाजोंके शब्दसे परिपूरित थी; नाचनेवाले

भूतों और मयूरोंके सहित वहांपर अप्सरायें नृत्य कर रही थीं, देवर्षिगण वहांपर सदा निवास करते थे; वह सभा अत्यन्त दर्शनीय, अनिर्देश्य, दिव्य और अद्भुत थी। वह पर्व्वत महादेवकी तपस्यासे सुशोभित हुआ था, स्वाध्यायपाठमें रत ब्राह्मणोंके वेदध्वनिसे निनादित था। हे माधव! वह पर्व्वत षट्पदगणोंके उपस्थित होनेसे अप्रतिम हुआ था। हे जनार्दन! महोत्सव सदृश भीमरूपधारी शङ्करको देखकर मुनियोंके मनमें परम प्रीति उत्पन्न हुई। महाभाग मुनिगण, ऊर्द्धरेता सिद्धगण, इन्द्रके सहित विश्वदेवगण, यक्ष, सर्प, पिशाचगण, सब लोकपाल अग्नि, वायु और सब महद्भूत वहांपर उपस्थित थे। सब समयके छहों ऋतुके फल वहां फूल रहे थे, औषधियें प्रज्वलित होकर उस वनको प्रकाशित करती थीं, पक्षिसमूह हर्षित होके नाचते और गाते थे, रमणीय पर्व्वतके शिखरपर जनप्रिय पक्षीवृन्द विचर रहे थे। उस दिव्य धातुविभूषित गिरिपर महात्मा महादेव पर्य्यङ्कपर बैठे हुएकी भांति विराजमान थे। उस समय वे व्याघ्रचर्म्मधारी तथा बाघम्बर ओढ़े व्याल यज्ञोपवीतयुक्त लोहिताङ्गसे भूषित थे। हरिश्मश्रु जटी भीम देवद्वेषियोंको भयभीत करनेवाले, सब जीवोंके अभयदाता, भक्तोंकी भयसे परित्राण करनेवाले वृषभध्वज उस स्थानमें विराजमान थे।

महर्षिगणने उन्हें देखकर सिर झुकाकर पृथ्वीपर गिरके साष्टाङ्ग प्रणाम किया, प्रणाम करते ही वे लोग क्षमाशील होकर सब पापोंसे मुक्त हुए; वह भूपतिका आश्रम उस समय भीमरूप धारण करके शोभित हुआ, वह उस समय अप्रधृष्य और महोरगोंसे परिपूर्ण होगया। हे मधुसूदन! क्षण भरके बीच उस स्थानमें आश्चर्य दीख पड़ा; वह वृषभध्वजकी सभा भयङ्कर रूप धारण करके शोभित होने लगी। हरके सदृश अम्बरधारिणी समान व्रतचारिणी शैलनन्दिनीने भूत भामिनियोंके बीच घिरकर उनके समीप गमन किया। वह उस समय सब तीर्थोंके जलसे युक्त सुवर्ण कलश धारण करके गिरि निर्झरिणियोंके द्वारा पश्चाद्भागमें अनुगत होकर शोभित होने लगीं; उन्होंने अनेक प्रकारकी सुगन्ध और फूलोंकी वर्षा करती हुई हिमवत् पार्श्व सेवापूर्व्वक हरके पार्श्वमें आगमन किया। अनन्तर उस चारुदर्शना देवीने हंसकर कौतुकके निमित्त अपने हाथोंसे सहसा महादेवके दोनों उत्तम नेत्र मूंद लिये। महादेवके नेत्र बन्द होनेपर सहसा जगत् तमोमय और अचेतन हुआ और निर्मोह तथा वषट्काररहित होगया; सब प्राणी मन मलिन और भयभीत हुए, महादेवके नेत्र बन्द होनेपर मानो सूर्य्य छिप गया। अनन्तर क्षण भरके बीच सब लोक अन्धकाररहित हुए, महादेवके मस्तकसे महत् प्रदीप्त ज्वाला निकली और प्रलयकालके प्रज्वलित सूर्य्यके समान उनका तीसरा नेत्र प्रकट हुआ, जिसके सहारे वह पर्व्वत मथित होने लगा। अनन्तर विशालनयनी शैलाधिराजपुत्रीने प्रदीप्त अग्नि सदृश नेत्रवाले त्रिलोचनको सिर झुकाके प्रणाम किया। शाल, सरल, वृक्ष रमणीय चन्दनवन और दिव्य औषधियोंसे प्रकाशमान उस वनके जलनेपर मृगगण भयभीत होके दौड़े और किसी स्थानमें ठहरनेका आश्रय न पाकर महादेवके निकट उपस्थित हुए, वह सभा सन्नाटायुक्त होके शोभित होने लगी। अनन्तर गगनस्पर्शी ज्वालामालायुक्त तड़िल्लता सदृश उज्ज्वल द्वितीय प्रलयाग्निकी भांति द्वादशादित्य सङ्काश उत्कट अग्निके द्वारा क्षण भरके बीच हिमालय निःशेष होकर जल गया। धातु, शिखर, झरने, वन और सब ओषधियें जल गईं। अनन्तर शैलपुत्री उस पर्व्वतको भस्म हुआ देखकर हाथ जोड़के भगवानकी शरणमें गईं। महादेव उस समय उमाको स्त्री स्वभाव सुलभ मार्द्दवशालिनी और

पिताकी विपद देखनेकी अनभिलाषिणी देखकर प्रीतिपूर्व्वक हिमालयकी ओर देखा। क्षणभरके बीच हिमालय प्रकृतिस्थ और दर्शनीय हुआ, पक्षिसमूह प्रमुदित और बनके वृक्ष उत्तम पुष्पोंसे युक्त हुए। अनिन्दिता उमाने उस समय हिमवान्को प्रकृतिस्थ देखकर प्रसन्न होके सर्व्वलोक प्रभु गिरिशपति महादेवसे कहा।

उमा बोली, हे सर्व्वभूतेश महाव्रती शूलधारी भगवन्! मुझे अत्यन्त ही सन्देह हुआ है, इसलिये आप उस विषयको वर्णन करिये। हे देव! किसलिये आपके माथेमें तीसरा नेत्र प्रकट हुआ? किस निमित्त पक्षियों और बनके सहित पर्व्वत भस्म हुआ, किस हेतु आपने मेरे पिताको प्रकृतिस्थ और पहलेकी भांति वृक्षोंसे परिपूरित किया।

महेश्वर बोले, हे अनिन्दिते देवि! तुमने जो बालस्वभावसे मेरे नेत्रोंको मूंद लिया, उससे क्षणभरके बीच सब लोक प्रकाशरहित हुए। हे नगनन्दिनि! जब सब लोक आदित्यरहित होनेसे तमोमय हुए, तब मैंने प्रजा समूहकी रक्षा करनेके लिये अपना तीसरा प्रदीप्त नेत्र प्रकट किया, उस ही नेत्रके महत् तेजसे यह पर्व्वत मथित हुआ। हे देवि! तुम्हारी प्रीतिके निमित्त मैंने फिर शैलराजको प्रकृतिस्थ किया।

उमा बोली, हे भगवन्! किस निमित्त आपका चन्द्रमा सदृश शोभायुक्त प्रियदर्शन आनन पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और ऊर्द्धमुख हुआ और किस कारणसे रौद्ररूप धारण किया? किस हेतु कपिल वर्णकी जटाजूट हुई? किसलिये आपने अपने कण्ठको बर्हिवर्ह सदृश नीलवर्ण किया। हे देव! किसलिये आप हाथमें सदा पिनाक धनुष धारण किया करते हैं। हे प्रभु! हे वृषभध्वज! मैं आपकी सहधर्म्मचारिणी तथा आपके विषयमें भक्तिमती हूं, इसलिये आपको मेरे सन्देहके विषयोंकी विधिपूर्व्वक वर्णन करना उचित है।

नारद मुनि बोले, भगवान् पिनाकपाणि शैलपुत्रीका ऐसा बचन सुनके उसके धैर्य्य और बुद्धिसे प्रसन्न हुए, अनन्तर उससे बोले, हे सुमुखि सुभगे! जिन कारणोंसे मेरे ये सब रूप हुए हैं, उसे सुनो।

१४० अध्याय समाप्त।

श्रीभगवान बोले, पहले समयमें ब्रह्माकी तिलोत्तमा नामी एक उत्तम कन्या थी, सब रत्नोंका सार भाग निकालकर वह शुभाङ्गी निर्म्मित हुई थी। हे देवि! भूलोकमें अप्रतिम सुन्दरताई युक्त वह सुमुखि मेरी प्रदक्षिणा करके प्रलोभित करती हुई सम्मुख आई। वह सुन्दरी जिस जिस दिशामें मेरी ओर आई, उस ही ओर मेरे मनोहर मुख बाहिर हुए। उसे देखनेके लिये अभिलाषी होकर मैंने चार मूर्त्तियां धारण कीं और उत्कृष्ट योगके द्वारा चतुर्म्मुख हुआ। मैं पूर्व्व शरीरसे इन्द्रत्वका अनुशासन करता हूं। हे अनिन्दिते! उत्तर शरीरसे तुम्हारे सङ्ग क्रीड़ा करता हूं, मेरा पश्चिम मुख अत्यन्त प्रियदर्शन है, यह सब प्राणियोंको सुखी करता है और दक्षिणमुख अत्यन्त भयङ्कर तथा रौद्र होकर प्रजाका संहार किया करता है। मैं सब लोकोंको हितकामनासे जटिल और ब्रह्मचारी हुआ हूं। देवकार्य्यसिद्धिके निमित्त मैंने हाथमें पिनाक धारण किया है। पहले समय इन्द्रने श्रीकामना करते हुए मेरे ऊपर बज्र चलाया था, उस बज्रने मेरा कण्ठ जला दिया, उसीसे मैं श्रीकण्ठ हुआ हूं।

उमा बोली, हे सत्तम! इस स्थानमें दूसरे श्रीमान् बाहनोंके रहते भी वृषभ आपका बाहन क्योंकर हुआ।

महादेव बोले, ब्रह्माने दूध देनेवाली देवधेनु सुरभीको उत्पन्न किया, सुरभी उत्पन्न होकर दूधरूपी अमृत प्रदान करती हुई अनेक हुई, उसके बछड़ेके मुखसे फेन मेरे शरीरपर

गिरा था। अनन्तर गौवें मेरे द्वारा जलके अनेक वर्षोंकी होगईं ; अन्तमें अर्थवित्ता लोकगुरु ब्रह्माने मुझसे शान्त किया और उन्होंने मुझे ध्वजाके निमित्त यह वृषवाहन प्रदान किया।

उमा बोली, हे भगवन्! स्वर्गके बीच सब भांतिकी सुन्दरतासे युक्त अनेक प्रकारके निवासस्थान हैं, उन सबको परित्याग करके आप केश हड्डीसे परिपूरित भयङ्कर कपाल और कलसंकुल बहुतेरे गिद्ध सियारोंसे सेवित सैकड़ों चितानलयुक्त अपवित्र मांस चर्ब्बी रुधिर अन्नावली और हड्डियोंसे भरे सियारोंके शब्दसे निनादित श्मशानमें किसलिये क्रीड़ा करते हैं?

महादेव बोले, मैं पवित्र स्थान खोजते हुए इस पृथ्वीमण्डलपर भ्रमण करता हूं, परन्तु श्मशानसे बढ़के उत्तम और कुछ भी नहीं दीखता ; इस ही निमित्त समस्त निवास स्थानोंके बीच वटशाखासे परिपूरित विच्छिन्न स्रग्विभूषित श्मशानमें मेरा मन रत होता है। हे शुचिस्मिते! ये सब भूत उस श्मशानमें ही क्रीड़ा करते हैं। हे देवि! भूतगणके बिना मैं निवास करनेका उत्साह नहीं करता। हे शुभे! मेरा यह श्मशानवास ही पवित्र और स्वर्गीय है, पवित्रताकी अभिलाष करनेवाले इस परम पवित्र स्थानकी उपासना किया करते हैं।

उमा बोली, हे सर्व्वधर्म्मभृताम्बर सर्व्वभूतेश पिनाकपाणि भगवन्! मुझे इन मुनियोंके तपस्या विषयमें महान् सन्देह है, नख लोम जटाधारी तपस्वीविषवाले अनेक भांतिके लोग जगत्के बीच भ्रमण करते हैं। हे अरिन्दम! इन ऋषियोंकी तथा मेरी प्रिय कामनासे आपको मेरा यह महत् सन्देह दूर करना उचित है। धर्म्मका क्या लक्षण है और जो मनुष्य धर्म्मज्ञ नहीं हैं, वे किस प्रकार धर्म्माचरण करनेमें समर्थ होंगे? हे धर्म्मज्ञ! आप इसे ही मेरे समीप वर्णन करिये।

नारद मुनि बोले, अनन्तर उन मुनियोंने ऋग्विभूषित वाक्यों और अर्थविशारद स्तोत्रोंसे उमादेवीकी पूजा की।

महादेव बोले, अहिंसा, सत्यवचन, सब जीवोंके विषयमें दया, शम और शक्तिके अनुसार दान ही गृहस्थोंका श्रेष्ठ धर्म्म है। पराई स्त्रियोंमें आसक्त न होना, स्त्रीकी रक्षा करनी, अदत्त दानसे विरत रहना और मधुमांसको परित्याग करना, ये पांच प्रकारके धर्म्म अनेक शाखायुक्त तथा सुखदायक हैं, धर्म्मपरायण देहधारियोंको शरीरसाध्य धर्म्माचरण करना योग्य है।

उमा बोली, हे भगवन्! मैं आपसे सन्देहका विषय पूछती हूं, इसलिये आपको मेरे समीप वह विषय कहना उचित है। चारों वर्णोंके बीच निज निज धर्म्म ही सुखदायक है, ब्राह्मणका धर्म्म कैसा है और क्षत्रिय किस प्रकार धर्म्माचरण करेगा, वैश्योंके धर्म्मलक्षण क्या हैं और शूद्रोंका कैसा धर्म्म है?

श्रीभगवान् बोले, हे महाभागे! तुमने न्यायपूर्व्वक यह संशयका विषय पूछा है, महाभाग द्विजातिगण जगत्के बीच सदा भूमिदेव कहके विख्यात हैं, ब्राह्मणोंके लिये हर समयमें निःसन्देह उपवास ही धर्म्म है, धर्म्मार्थयुक्त ब्राह्मण ब्रह्मत्व लाभके योग्य हैं। हे देवि! न्यायपूर्व्वक ब्रह्मचर्य्या ही उनकी धर्म्मक्रिया, व्रत और उपनयन ही उनका धर्म्म है, जिससे कि ब्राह्मणत्वकी प्राप्ति होती है। गुरु और देवताओंकी पूजाके निमित्त धर्म्मपरायण पुरुषोंको धर्म्म और स्वाध्याय पाठ करना चाहिये।

उमा बोली, हे भगवन! मुझे कुछ सन्देह है, आपही उसे दूर करनेके योग्य हैं, इसलिये चारों वर्णोंके धर्म्म आप निपुणभावसे वर्णन करिये।

महेश्वर बोले, रहस्य सुनना, वेदव्रतका सेवन, अग्नि कर्म्म और गुरुकार्य्यका निभाना ही धर्म्म है, सदा यज्ञोपवीत धारण और भैक्षचर्य्या परम धर्म्म है, सदा स्वाध्याय पाठ और

ब्रह्मचर्य्य व्रत करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है। ब्राह्मण गुरुकी अनुमतिसे समावर्त्तन संस्कार करके विधिपूर्व्वक अनुरूप भार्य्या परिग्रह करे, ब्राह्मणके लिये शूद्रान्न त्याग, सन्मार्ग सेवन, उपवास और ब्रह्मचर्य्य धर्म्म हैं। गृहस्थ मनुष्य आहिताग्नि अध्ययनशील संयतेन्द्रिय, सदा होम करनेवाला विघसाशी, यताहारी, सत्यवादी और पवित्र होवे। अतिथिसेवा करना गृहस्थका धर्म्म है। दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आव-हनीय अग्निको धारण करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है। सब यज्ञों और यज्ञोंमें पशुबन्धन कार्य्यको ब्राह्मण विधिपूर्व्वक न करे। जीवोंकी अहिंसा-मय यज्ञ करना परम धर्म्म है, अपूर्व्व भोजन और विघसाशित्व धर्म्म है; परिजनोंके भोजन करनेके अनन्तर पश्चात् भोजन करना धर्म्म कहके वर्णित हुआ है, गृहस्थों वा विशेष करके श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको अवश्यही यह धर्म्मा-चरण करना चाहिये। गृहमेधियोंके लिये समान शीलत्व धर्म्म हुआ करता है। गृह देवताओंकी सदा पुष्प आदिसे पूजा करनी योग्य है। सदा उपलेपन और उपवास धर्म्म कहा गया है। उत्तम रीतिसे लिपे पुते गृहमें घृत धूम रहेगा। द्विजगणके लोक धारण इस गार्हस्थ धर्म्ममें साधु ब्राह्मण सदा प्रवृत्त होते हैं। हे देवि! तुमने क्षत्रिय धर्म्मके विषयमें जो प्रश्न किया है, मैं तुमसे उसका विवरण कहता हूं, सावधान होके सुनो। प्रथम क्षत्रि-योंके लिये प्रजा पालन धर्म्म स्मृत हुआ है। निर्द्दिष्ट फलभोक्ता राजा धर्म्मयुक्त होता है, जो राजा धर्म्मपूर्व्वक प्रजापालन करता है, उसे प्रजापालन रूपी सञ्चित धर्म्मसे पुण्यलोक प्राप्त होते हैं। इन्द्रिय दमन, स्वशाखोक्त, वेदपाठ, अग्निहोत्र दान और अध्ययन क्षत्रियका परम धर्म्म है। यज्ञोपवीत धारण, यज्ञ करना, सेव-कोंकी पालना और कृत कर्म्मोंकी सफलता ही धर्म्म है; दण्डविधान पूरी रीतिसे मर्य्यादाकी रक्षा करनी, वेदोक्त यज्ञ कर्म्मोंका व्यवहार स्थिति और सत्य वचनमें रति क्षत्रियका धर्म्म है। प्रीतिपूर्व्वक हाथसे दान करनेवाले क्षत्रिय इसलोक और परलोकमें पूजित होते हैं, अश्व-मेध यज्ञ करनेसे लोगोंको जो लोक मिलते हैं, ब्राह्मणके निमित्त युद्ध करने तथा संग्राममें मरनेवाले, क्षत्रिय उन्हीं लोकोंमें जाते हैं।

सदा पशुओंको पालना और कृषिकर्म्म करना वैश्योंका धर्म्म है। अग्निहोत्र, दान, अध्ययन, वाणिज्य, सत्पथमें स्थिति, अतिथिसेवा प्रशम, दम, ब्राह्मणोंका स्वागत प्रश्न और धन-दान करना वैश्योंका सनातन धर्म्म है। सन्मा-र्गमें स्थित वैश्य वाणिज्यकार्य्यमें नियुक्त होकर सुगन्ध, तिल और चर्व्वी न बेचे; सब प्रकारसे अतिथि सत्कार करके शक्तिके अनुसार यथा-योग्य धर्म्मार्थ कामको सेवा करे।

द्विजातियोंकी सदा सेवा करनीही शूद्रोंका परम धर्म्म है, जो पुरुष संशितव्रती, सत्यवादी और जितेन्द्रिय होकर उपस्थित अतिथिकी सेवा करते हुए महत् तपस्या सञ्चय करता है, वही शूद्र है, देवताओं और ब्राह्मणोंकी पूजा करनवाला शुभाचारी बुद्धिमान् शूद्र अभिल-षित फल पाता है। हे सुन्दरि! हे सुभगे! मैंने तुम्हारे समीप चारो वर्णोंके धर्म्म कहे और अब क्या सुननेकी इच्छा करती हो?

उमा बोली, हे भगवन्! आपने चारों वर्णोंके हितकर तथा शुभकर पृथक् पृथक् धर्म्म कहे, अब जो धर्म्म सर्व्वव्यापी हो उसे ही मेरे समीप वर्णन करिये।

महेश्वर बोले, गुणाभिलाषित विधाताने सब लोगोंका उद्धार करनेके निमित्त मनुष्योंके बीच भूदेव ब्राह्मणोंको सर्व्वलोकोंके सारत-त्वांसे बनाया है; उनका धर्म्म, कर्म्म फलोदय कहता हूं। ब्राह्मणोंके धर्म्मही परम धर्म्म हैं, लोगोंके धर्म्मके हेतु सृष्टिके समय ब्रह्माने जोचे कहे हुए तीन धर्म्म प्रकट किये थे, उसे सुनो।

वेदोक्त धर्म्म, स्मृति शास्त्रोंमें वर्णित धर्म्म और शिष्टाचार ये तीनों धर्म्म ही सनातन कहे गये हैं। तीनों विद्यामें विद्वान् ब्राह्मण ऋक् मन्त्र अध्ययन करके जीवन बिताते हुए दान अध्ययन और यजन, इन तीनों कर्म्मोंसे युक्त होवे, त्रिपुरा क्रान्त अर्थात् काम, क्रोध और लोभ इन तीनोंको परित्याग करनेवाले और सर्व्वभूतोंमें समदर्शी पुरुषको द्विज कहा जाता है। लोकेश्वर प्रजापतिने ब्राह्मणोंकी वृत्तिके निमित्त निम्नलिखित छः धर्म्मोंका वर्णन किया है।

यजन, याजन, दान, परिग्रह, अध्ययन और अध्यापन, इन षट् कर्म्मोंको करनेवाले ब्राह्मण धर्म्मभागी होते हैं। सदा स्वाध्याय पाठ, और सनातन यज्ञोंको करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है, ब्राह्मण शक्तिके अनुसार विधिपूर्व्वक उत्तम दान करे; साधुओंमें नित्य प्रवृत्त शान्ति ही परम धर्म्म है। शुद्धाचरणवाले गृहस्थोंका उत्तम नाम ही महान् धर्म्म है, जो यज्ञ करनेवाला शुद्धचित्त, सत्यवादी, असूयारहित, दाता, ब्राह्मणोंका सम्मानकर्त्ता, उत्तम स्वच्छ गृहमें निवास करनेवाला, अभिमान हीन, सदा सरल और कोमल वचन कहनेवाला, अतिथि तथा अभ्यागतोंके विषयमें अनुरक्त रहता तथा शेषमें बचे हुए अन्नको भोजन करता है और जो पुरुष ब्राह्मणोंको पाद्य, अर्घ, आसन, शय्या, दीपक और गृह प्रदान करता है, वही धार्म्मिक है। जो लोग प्रातःकालमें उठनेपर आचमन करके भोजनके निमित्त ब्राह्मणोंको निमन्त्रण करते और उनका सम्मान पूर्व्वक अनुगमन करते हैं, उन्हें सनातन धर्म्म होता है। सब भांतिसे अतिथि सत्कार और शक्तिके अनुसार धर्म्म, काम, अर्थको सेवन करना शूद्रोंका विख्यात धर्म्म है। गृहस्थोंके विषयमें प्रवृत्ति लक्षणयुक्त धर्म्मविहित है, इसलिये सब प्राणियोंके हितके लिये उसे प्रवृत्ति लक्षणयुक्त धर्म्मका वर्णन करता हूं। शक्तिके अनुसार बार बार यज्ञ तथा दान करना चाहिये और ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंको पुष्टि कार्य्यका विधान करना उचित है। धर्म्मसे धन पैदा करे, धर्म्मसे प्राप्त हुआ धन तीन प्रकारका है; मनुष्य यत्नपूर्व्वक धर्म्मार्थके हेतु धन वितरण करे। ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाला मनुष्य एक अंश धनके सहारे धर्म्मार्थ आचरण करे, एक भागसे काम भोग करे और एक हिस्सेसे धर्म्मकी वृद्धि करनी चाहिये।

हे देवि! एक निवृत्तिलक्षण धर्म्म ही मोक्षका हेतु हुआ करता है, उसका वृत्तान्त मैं यथार्थ रीतिसे कहता हूं, सुनो, मोक्षको आकांक्षावाले पुरुषोंके लिये सब जीवोंमें दया, सदा एक गांवमें बास न करना और आशापाशसे रहित होना ही श्रेष्ठ धर्म्म है। मोक्षार्थी मनुष्य गृह, जल, वस्त्र, आसन, त्रिदण्ड, शय्या, अग्नि और रक्षकके स्थानमें आसक्त न होवे। जिसका चित्त अध्यात्मपथमें विचरता है, वह उसहीमें मन लगावे, उसहीमें तत्पर होकर योग और समाधिमें सदा अनुरक्त रहे। वृक्षके मूलमें निवास करनेवाले, सूने स्थान, नदी-पुलिनशायी तथा नदीके तटपर रहनेवाले जो ब्राह्मण सर्व्व आसक्ति तथा स्नेहबन्धनसे रहित हैं, वे आत्मामें ही निज भावसे समासक्त होवें; मोक्ष-इष्ट कर्म्मके सहारे स्थाणुस्वरूपसे निराहारी होके रहें। जो लोग योगी होके परिव्रज्या करते हैं, उन्हें सनातन धर्म्म होता है। एक स्थानमें आसक्त न होवे, एक गांवमें सदा बास न करे और एक ही पुलिनमें शयन करना योग्य नहीं है, मुक्त पुरुष निर्मुक्त होकर भ्रमण करे; यही मोक्षवित् साधुओंका वेदोक्त सत्यस्वरूप धर्म्म है; जो लोग इस पथके अनुगामी होते हैं, उनके लिये कोई व्यवसाय नहीं रहता। कुटिचक, बहूदक, हंस और परमहंस भेदसे चार प्रकारके संन्यासी हैं, जो पहलेके पीछे कहे गये हैं, वे उनको अपेक्षा श्रेष्ठ हैं। कुटिचक

और बहूदक, ये दोनों ही दण्ड धारण करते हैं, उनके बीच पहले कहे हुए भिक्षु गृहमें निवास करते हैं, दूसरे तीर्थोंमें पर्य्यटन किया करते हैं, तीसरे पुरुष संन्यासाश्रम धर्म्ममें रत रहते हैं, और चौथे पुरुष निरुद्ध गुणपथमें विचरते हैं। परमहंसाश्रमसे बढ़के सुख दुःखहीन, प्रियदर्शन, अजर, अमर और अव्यय आश्रम दूसरा नहीं है, अत्यन्त रोगके भयसे लोग इसका आचरण नहीं करते।

उमा बोलीं, गार्हस्थ्य और सज्जनोंसे आचरित मोक्षधर्म्म जो जीवलोकका महान् कल्याणकारी पथ है, उसे आपने वर्णन किया। हे धर्म्मज्ञ! इसके अनन्तर मैं ऋषिधर्म्म सुननेकी इच्छा करती हूं, तपोवन निवासी ऋषियोंके धर्म्मको सुननेके निमित्त मुझे सदा अभिलाष हुआ करती है। हे महेश्वर! घृतके धूएंसे परिपूरित तपोवनको देखनेसे मेरा मन सदा प्रसन्न होता है। हे प्रभु! हे सब धर्म्मार्थ तत्त्वज्ञ देवेश! मुनि धर्म्मविषयमें मुझे सन्देह हुआ है। हे महादेव! इसलिये मैंने जो विषय पूछा, आप यथार्थ रीतिसे उसे वर्णन करिये।

श्रीभगवान् बोले, हे शुभे! संन्यासी मुनिगण जैसा आचरण करके निज तपस्याके सहारे सिद्धि लाभ करते हैं, मैं तुम्हारे समीप वह उत्तम मुनिधर्म्म कहता हूं। हे धर्म्म जाननेवाली महाभागे! धर्म्मवित्ता फेनप साधु ऋषियोंका जो धर्म्म है, उसे ही तुम मेरे समीप पहले सुनो। जो लोग ब्रह्म-सजातीय सम्बन्धमें श्रेष्ठ फेनवृत्त अग्रान्न समूह क्रमसे आदान करते हैं, वेही उस अविनाशी ब्रह्माके द्वारा यज्ञस्थल, पीतअध्वर तथा वृष्टि प्रभृति यज्ञाङ्गस्वरूप और स्वर्गमें दिव्य भोगके निमित्त उत्पन्न हुए हैं। हे तपस्विनि! यह उन्हीं पवित्र फेनपायी ऋषियोंके धर्म्मचर्य्याका मार्ग कहा गया, अब बालखिल्यगणका धर्म्म सुनो। धर्म्मज्ञ तपसिद्ध बालखिल्य मुनिगण सूर्य्यमण्डलमें माकुनी वृत्ति अवलम्बन करके उञ्छवृत्तिसे निवास करते हैं, वे मृगचर्म्मचीर अथवा वल्कलवस्त्र पहरते हैं; तपस्वी बालखिल्य मुनिगण निर्द्वन्द्व होकर सत्पथको अवलम्बन किया करते हैं। वे लोग अंगुष्ठपर्व्व समान होकर निज निज धर्म्ममें निवास कर रहे हैं और तपश्चरणकी चेष्टा किया करते हैं, उनका धर्म्मफल अत्यन्त महत् है, सुरकार्य्य सिद्धिके निमित्त उन्हें देवताओंकी समता प्राप्त होती है और वे लोग तपस्याके सहारे पापकर्म्मोंको जलाकर दशों दिशाको प्रकाशित किया करते हैं। दूसरे जो सब शुद्धचित्तवाले दया धर्म्मपरायण ऋषिवृन्द निवास स्थानसे रहित होकर चक्रकी भांति घूमते हैं और पवित्र होकर चन्द्र लोकमें विचरण किया करते हैं, वे पितृलोकके निकट पहुंचकर चन्द्रकिरण पान करते हैं। जो लोग भली भांति पात्रोंको धोते, दूसरे दिनके लिये कुछ भी सञ्चय करके नहीं रखते तथा सम्प्रक्षाल अश्मकूट और दन्तोलूखलिक जो सब ऋषि हैं, वे सब कोई तथा सोमप और उष्मप मुनिगण देवताओंके निकटवर्त्ती होके सस्त्रीक और नियतेन्द्रिय होकर उञ्छवृत्ति अवलम्बन किया करते हैं। अग्नि परिचर्य्या, पितरोंको पूजा और पञ्चयज्ञ करना उनका धर्म्म कहा गया है। हे देवि! चक्रकी भांति भ्रमण करनेवाले देवलोकचारी द्विजोंके द्वारा यह ऋषिधर्म्म सदा आचरित हुआ करता है; इसके अतिरिक्त और जो सब धर्म्म हैं, वह भी मेरे समीप सुनो। सबको ऋषिधर्म्ममें संयतेन्द्रिय होकर आत्मज्ञान साधन करना योग्य है; अनन्तर काम-क्रोधको जीतना चाहिये। मेरे विचारमें अग्निहोत्र, सनातन धर्म्मका सदा अनुष्ठान, सोमयज्ञ, दान, पञ्चयज्ञ, दक्षिणा, सदा यज्ञकार्य्य, पितरों और देवताओंकी पूजामें अनुराग और उञ्छवृत्तिसे प्राप्त हुए अन्नके सब प्रकार अतिथि द्वारा सेवा ही धर्म्म है। सब प्रकारके गोरस उपभोगमें निवृत्ति

शम विषयमें रति, स्थण्डिल शयनमें योग, शाक पत्ते और फलमूलके भोजन, वायु, जल और शैवाल भक्षण ये ऋषियोंके नियम हैं, इन्हींके सहारे वे लोग अजित गतिको जय किया करते हैं। धूआं, अग्नि और मूषल ध्वनिसे रहित समय, युद्ध, सब लोगोंके भोजन करने और पात्र सञ्चाररहित होने तथा भिक्षुगणके चले जानेपर भी जो लोग अतिथि-कामना करते और शेष अन्न भोजन किया करते हैं, वेही सत्यधर्म्ममें रत शान्त पुरुष मुनि धर्म्मयुक्त होते हैं। जड़ता और अभिमानयुक्त न होवे, अप्रसन्न तथा विस्मित न होना चाहिये; मित्रशत्रुमें समदर्शी और सर्व्व भूतोंमें दयावान् पुरुष ही श्रेष्ठ धर्म्मज्ञ हैं।

१४१ अध्याय समाप्त।

——

उमा बोली, रमणीय स्थानों, नदीतट, झरनों पहाड़ों, बनोंमें फलयुक्त पवित्र स्थानों और मूलविशिष्ट मध्यदेशमें उत्तम रीतिसे समाहित सदा व्रत करनेवाले मुनिगण निवास किया करते हैं। हे शङ्कर! मैं उन लोगोंका विविध पुण्य सुननेकी इच्छा करती हूं। हे देवेश! स्वशरीरोपजीवी वाणप्रस्थ धर्म्मको भी सुननेकी मुझे इच्छा है।

महेश्वर बोले, हे देवि! सावधान होके वाणप्रस्थोंका धर्म्म सुनो और एकाग्रचित्तसे सुनके तुम्हें धर्म्मबुद्धि परायण होना योग्य है। नियमोंके द्वारा पूरी रीतिसे सिद्ध हुए बनवासी साधु वाणप्रस्थ पुरुषोंको जैसा कर्म्म करना चाहिये, उसे कहता हूं। सबेरे, मध्यान्ह और सन्ध्या, इन तीनों समयमें स्नान, पितरों और देवताओंकी पूजा, अग्निहोत्र इष्टि और होमका अनुष्ठान, नीवारग्रहण, फलमूल निषेवन चिकनाईके लिये इङ्गुद और एरण्डका तेल मलना कर्त्तव्यरूपसे निर्द्दिष्ट हुआ है। योगचर्य्या करनी, काम क्रोधको त्यागना सिद्ध वीरस्थान और महारण्यमें निवास करना चाहिये। वीरशय्या उपासक योगरत साधु योगीगण जो ग्रीष्मकालमें पञ्चतपा किया करते हैं और जो लोग हर्षयोगमें रत होके सब कार्य्योंको निभाते हैं, सदोपवेशन रूप वीरासनसे बैठते हैं और स्थण्डिल पर शयन किया करते हैं, वे धर्म्मबुद्धियुक्त मनुष्य शीतजल और अग्निसे योगयुक्त होके वर्त्तमान रहें। उपवासी, वायुभक्षी, शैवालभोजी, अश्म-कूट, दान्त, रुम्मशाल तथा दूसरे चीरवल्कल और मृगचर्म्म पहरनेवाले मुनिवृन्द यथा समयमें विधिपूर्व्वक यथायोग्य धर्म्मयात्रा करें। बनके बीच सदा निवास करनेवाले बनचर बनस्थ बनगोचर बनवासी मुनि लोग बनको गुरुकी भांति पाके वहांपर वास करें। उन लोगोंके लिये होमकर्म्म, पञ्चयज्ञ भाग और अनुपालन ही धर्म्म है; अष्टमी यज्ञपरता, चातुर्म्मास निषेवन, पौर्णमास प्रभृति सब यज्ञ तथा नित्य यज्ञ धर्म्मरूपसे विहित है। जो लोग दार परिग्रहसे रहित हुए हैं और सब सङ्क-टोंसे छूटे हैं, वे मुनिगण पापहीन होके बनमें विचरते हैं। जो लोग सदा स्रुक्भाण्ड सञ्चयमें रत रहते, जिनके गृहमें तीनों अग्नि विद्यमान रहती हैं, जो सब साधुलोग सदा सत्पथमें निवास करते हैं, वेही परम गति पाते हैं। सत्य धर्म्माव-लम्बी सिद्ध मुनिगण महापवित्र ब्रह्मलोक और शाश्वत सोमलोकमें गमन किया करते हैं। हे शुभे देवि! मैंने वाणप्रस्थाश्रित धर्म्म जो स्थूलरूपसे सम्पन्न होता है, उसे विस्तारपूर्व्वक वर्णन किया।

उमा बोली, हे सर्व्वलोक नमस्कृत सर्व्व भूतेश भगवन्! जो धर्म्म मुनियोंको सिद्धिके सम्बन्धमें है, उसे वर्णन करिये। जो लोग सिद्ध-वादमें सुसिद्ध बनवासी स्वेच्छाचारी और कदा-चित दारपरिग्रहकारी हैं, उनका धर्म्म किस प्रकार स्मृत हुआ करता है?

महादेव बोले, जो लोग तपस्याके सहारे यथेष्ट आचरण किया करते हैं, उन्हें मुण्डन तथा गेरुआ वस्त्र धारण करना उचित है; जो

लोग दारपरिग्रह करके विहार करते हैं, उन्हें कहीं भी रात्रिवास करना योग्य नहीं है; खेरिगणकी भांति इन लोगोंके लिये स्वेच्छा-विहार विहित नहीं होता। प्रातः, मध्यान्ह और सन्ध्याके समय स्नान, ऋषिकृत महत् अग्निहोत्र, समाधि, सत्पथमें निवास और यथा-योग्य कार्य्योंको पूरा करना ही वनवासी मुनि-योंका धर्म्म है। पहले जो सब धर्म्म वर्णित हुए हैं, वही वनवासी ऋषियोंके धर्म्म हैं; यदि मनुष्य इन धर्म्मोंकी सेवा करे, तो महत् फल पाता है। जो लोग निज स्त्रीमें रत और नियतेन्द्रिय होकर दम्पति धर्म्मके अनुसार कार्य्य करते हैं, उन धार्म्मिकोंका ऋषियोंके द्वारा आचरित धर्म्म सिद्ध होता है। धर्म्मदर्शी मनुष्योंको स्वेच्छाचारी होकर कामसेवन करना योग्य नहीं है। जो मनुष्य हिंसारहित चित्तसे सब जीवोंको भली भांति अभयदक्षिणा दान करता है, वही धार्म्मिक है। सब वेदोंको पढ़के स्नान करना और सर्व्वभूतोंमें सरलता प्रदर्शित करनी ये दोनों ही समान हो सकते हैं, अथवा वेद स्नानसे सरलता श्रेष्ठ है। जो लोग सब प्राणियोंके विषयमें दयावान् हैं, सब जीवोंके सम्बन्धमें सरलता प्रकाशित करना जिनका व्रत है और सर्व्वभूतोंको आत्मस्वरूप जानते हैं, वेही धार्म्मिक हैं। प्राचीन लोग सर-लताको धर्म्म कहते और कुटिलताको अधर्म्म कहा करते हैं, मनुष्य इस लोकमें सरलतायुक्त होनेसे धार्म्मिक होता है। जो लोग सदा सरल-तामें रत रहते हैं, वे देवताओंके समीप निवास करते हैं, इसलिये जो लोग धार्म्मिक होनेकी इच्छा करें, वे सरल होवें। क्षान्त, दान्त, क्रोध जीतनेवाले, धर्म्ममय अहिंसक और नित्य धर्म्ममें चित्त लगानेवाले मनुष्य धर्म्मयुक्त हुआ करते हैं। जो धर्म्मात्मा मनुष्य आलस्यरहित होके शक्तिके अनुसार सत्पथको अवलम्बन करता और निज चरित्रकी उत्तम रीतिसे रक्षा करता है, वह बुद्धिमान् मनुष्य ब्रह्मस्वरूप लाभ कर-नेमें समर्थ होता है।

उमा बोली, हे देव! जो सब तपोधन तप-स्वीवृन्द आश्रमधर्म्ममें अनुरक्त हैं, वे कैसे आच-रणसे दीप्तिमान होते हैं, हे भगवन्! निर्धन, महाधनी, राजा और राजपुत्रगण किन कर्म्मोंके सहारे महाफल पाते हैं? हे देव! वे लोग नित्यस्थानमें गमन करते हुए दिव्य चन्दनसे भूषित होकर किन कर्म्मोंसे वनवासी होते हैं। हे देव! हे त्रिपुरनाशन त्रिलोचन! मेरे इस तप-श्चर्य्याश्रित शुभ सन्देहके विषयोंको आप विस्तार पूर्व्वक वर्णन करिये।

महादेव बोले, अहिंसारत सत्यवादी दमन-शील मनुष्य अनामय और सम्यक्‌सिद्ध होके परलोकमें जाकर गन्धर्व्वोंके सहित आनन्द भोग किया करते हैं। जो धर्म्मात्मा मनुष्य यथा रीतिसे विधिपूर्व्वक मण्डूक योग शय्यामें शयन करके दीक्षा आचरण करते हैं, वे नागगणके सहित प्रमुदित होते हैं। जो लोग दीक्षित और समाहित होके मृगगणोंके सहित मृगके द्वारा उत्सृष्ट शस्योंको सेवन करते हैं, वे अम-रावती पुरीमें गमन किया करते हैं। जो लोग शैवाल अथवा सूखे पत्तोंको खाके तपस्या करते और सदा शीलवान रहते हैं, उन्हें परम गति प्राप्त होती है। वायु, जल और फल मूलाशी योगी लोग यक्षलोकमें ऐश्वर्य्य लाभ करके अप्स-राओंके सहित आनन्द करते हैं, ग्रीष्मकालमें विधिविहित कर्म्मोंके सहारे बारह वर्ष पञ्च-तपा करनेसे मनुष्य राजा होता है; बारह वर्षतक मौनावलम्बन पूर्व्वक आहारका नियम करके यतके सहित मरुसाधन अर्थात् जल पर्य्यन्त परित्याग करनेसे मनुष्य पृथ्वीपति राजा होता है। स्थण्डिलमें बिना आसनके बैठकर शुद्ध आकाशमें हर्ष पूर्व्वक प्रवेश करके जो लोग द्वादश वार्षिकी दीक्षाग्रहण करते और अनशन व्रत अवलम्बन करके शरीर त्यागते हैं,

वे स्वर्गमें सुख समृद्धि भोग किया करते हैं। हे भामिनी! ऋषि लोग यान, शय्या और महामूल्य चन्द्रमाकी भांति सफेद रुईकी स्वच्छिल शयनका फल कहते हैं, जो लोग सदा आत्माको उपजीव्य करके नियताहारी होकर अथवा अनशन व्रतके सहारे देह परित्याग करते हैं, वे स्वर्गभोग किया करते हैं, आत्मउपजीवी द्वादशवार्षिकी दीक्षा ग्रहण करके महासर्वगामें शरीर परित्याग करनेवाले वरुणलोकमें सुख भोगते हैं। जो आत्मोपजीवी पुरुष द्वादशवार्षिकी दीक्षा अवलम्बन करते और पापकेद्वारा दोनों चरण भेदते हैं, वे गुह्यक लोकमें प्रमुदित होते हैं, जो लोग निर्द्वन्द्व और निष्प्रतिग्रह होकर आत्माके सहारे आत्मसाधन करके द्वादशवार्षिकी इस मनोहर दीक्षाको अवलम्बन करके स्वर्गलोक पाते हैं, वे देवताओंके सङ्ग आनन्द भोग करते हैं और जो आत्मोपजीवी पुरुष द्वादशवार्षिकी दीक्षा ग्रहण करके अग्निमें देह परित्याग करते हैं, वे ब्रह्मलोकमें निवास किया करते हैं। हे देवी! जो द्विज यथारीतिसे दीक्षित और संयत होकर आत्मामें आत्मसाधन करते हुए ममता रहित होके धर्मको अभिलाष करता है और बारह वर्षतक इस मनोगत दीक्षाका अनुष्ठान करके तरुस्कन्धमें अरणीके सहित अग्नि परित्यागकर अनावृत्त होकर गमन करता है, वह वीरपथसे गमन करते हुए सदा वीरासन गतिसे युक्त होके वीर लोकमें निवास करता और उसी वीरगति प्राप्त होती है; वह इन्द्रलोकमें जाकर सदा सर्व्वकामके सहारे पुरस्कृत होता और दिव्य पुष्पोंसे युक्त तथा दिव्य चन्दनसे विभूषित होता है, वह धर्मात्मा देवलोकमें देवताओंके सहित सुखसे निवास करता है, वीरलोकमें गये हुए वीर पुरुष सदा वीरयोग युक्त हुआ करते हैं। जो लोग सतोगुणी होकर सब वस्तुओंको त्यागके सदा पवित्र रहके दीक्षित होते और वीरपथसे गमन करते हैं, उन्हें सनातन लोक मिलता है, वे इच्छानुसार कामगामी विमानपर विचरते तथा वे श्रीमान मनुष्य निरामय होके इन्द्रलोकमें जाकर प्रमुदित होते हैं।

१४२ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, हे भगनेत्रनाशी सूर्यदन्त विनाशन दक्षयज्ञ विध्वंशी त्रिलोचन भगवन्! मुझे यह महान सन्देह है, कि ब्रह्माने पहले चारों वर्णोंकी सृष्टि की है। उनके बीच वैश्य किस कर्म्म विपाकसे शूद्रत्व पाता है। क्षत्रिय वैश्य हुआ करते और ब्राह्मण, क्षत्रिय होते हैं, हे देव! प्रतिलोमगत धर्म्म किस प्रकार निभ सकते हैं? हे विभु! ब्राह्मण किस कर्म्मके सहारे शूद्रयोनिमें जन्मता है और क्षत्रिय कैसे कर्म्मके द्वारा शूद्रत्व लाभ करता है? हे भूतपति अनघदेव! आप मेरे इस सन्देहको दूर करिये इस लोकमें ब्राह्मण आदि तीनों वर्ण स्वभाविक हैं, तब किस प्रकार ब्राह्मणत्व प्राप्त करते हैं।

महादेव बोले, हे देवि! ब्राह्मणके स्वभावके अतिरिक्त ब्राह्मण्य प्राप्ति अत्यन्त दुष्प्राप्य है। मेरे विचारमें क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र स्वभावके अनुसार हुआ करते हैं। ब्राह्मण श्रेष्ठवर्ण लाभ करके भी दुष्कृत कर्म्मोंसे स्थानभ्रष्ट होता है, इसलिये ब्राह्मणको सदा रक्षा करनी उचित है, क्षत्रिय अथवा वैश्य ब्राह्मणधर्म्ममें स्थित रहके यदि ब्राह्मण्य-उपजीवी होवें, तो उन्हें ब्रह्मत्व प्राप्त होता है। जो लोग ब्राह्मणत्व परित्यागके क्षत्रिय धर्म्मकी सेवा करते हैं, वे ब्राह्मणत्वसे परिभ्रष्ट होकर क्षत्रिययोनिमें उत्पन्न हुआ करते हैं, जो अल्पबुद्धि ब्राह्मण दुर्लभ ब्राह्मणत्व पाके लोभ मोहके वशमें होके सदा वैश्योंका कर्म्म करता है, उसे वैश्यत्व प्राप्त होता है और वैश्य भी शूद्रकर्म्म करके शूद्र हुआ करता है। ब्राह्मण निज धर्म्मसे भ्रष्ट होनेपर शूद्रत्व लाभ करता है, शूद्र होके वर्णभ्रष्ट होनेपर सर्व्व-

बहिष्कृत तथा नरकगामी होता है। ब्राह्मण लोग ब्रह्मलोकसे परिभ्रष्ट होकर शूद्रयोनिमें जन्म लेते हैं। हे महाभागे धर्म्मचारिणि! क्षत्रिय अथवा वैश्य यदि अपने कर्म्मको त्यागके शूद्रका कर्म्म करते हैं, तो वे निज स्थानसे च्युत होकर वर्णसङ्कर होते हैं। वैसे ब्राह्मणों, अथवा वैश्योंको शूद्रत्व प्राप्त होता है। जो लोग निज धर्म्मसे बोधयुक्त हुए हैं, जो लोग ज्ञान-विज्ञानयुक्त पवित्र, धर्म्मज्ञ और सदा धर्म्ममें रत हैं, वेही धर्म्मफल भोग करते हैं। हे देवि! मैंने जो कहा उसे तथा अन्यान्य विषयोंको ब्रह्माने स्वयं वर्णन किया है। धर्म्मकी इच्छा करनेवाले साधु पुरुष इस नैष्ठिक अध्यात्म विषयका अनुष्ठान किया करते हैं। हे देवि! उग्र जातिका अन्न अत्यन्त निन्दनीय है। गणान्न, श्राद्धीय अन्न, सूतकान्न तथा दुष्टोंका अन्न भोजन करना उचित नहीं है और शूद्रोंका अन्न कदापि भोजन न करे। हे देवि! महानुभाव देवगण शूद्रान्नको सदा निन्दित जानते हैं, इसमें पितामहके मुखके कहे हुए प्रमाण हैं, मुझे ऐसी विवेचना होती है, कि ब्राह्मण आहिताग्नि और याज्ञिक होके जठरमें अवशिष्ट शूद्रान्न रहनेसे पशुत्व लाभ करता और उसे शूद्रगति प्राप्त होती है। अवशिष्ट शूद्रान्न जठरमें रहनेसे ब्राह्मण ब्रह्मस्थानसे च्युत होकर शूद्रत्व पाता है, उस विषयमें कुछ भी विचार नहीं है, जिसका अवशिष्ट अन्न जठरमें विद्यमान रहनेसे ब्राह्मण प्राण परित्याग करता है, वह जिसके अन्नको उपजीव्य करता था, उस ही योनिको प्राप्त होता है। जो लोग दुर्लभ पवित्र ब्राह्मणत्व पाके उसकी अवज्ञा करते तथा अभोज्य अन्न भोजन करते हैं, वे पतित होते हैं। सुरा पीनेवाले ब्रह्मघाती, शूद्र, चोर, भग्नव्रती, अपवित्र, स्वाध्यायरहित, पापाचारी, लोभी, शठतायुक्त, शठ, अव्रती, वृषलीपति, कुण्डाशी अर्थात् जो पुरुष पाकपात्रमें भोजन करता है, सोम बेचनेवाले और नीचोंकी सेवा करनेवाले ब्राह्मण ब्रह्मयोनिसे पतित होते हैं। गुरुतल्पगामी, गुरुके विषयमें द्वेष करनेवाला और गुरुकी निन्दा करनेमें अनुरक्त ब्राह्मण ब्रह्मवित् तथा ब्रह्मवित्तम होनेपर भी पतित होता है।

हे देवि! इन्हीं पवित्र कार्य्यों और पवित्र आचरणोंसे शूद्रभी ब्राह्मण हुआ करता और वैश्यभी क्षत्रियत्व पाता है। शूद्र सदा सत्पथमें निवास करते हुए खिन्नचित्त न होकर न्याय तथा विधिपूर्व्वक यत्नके सहित ज्येष्ठ वर्णकी सेवा तथा टहल करे यही शूद्रोंका निर्दिष्ट कर्म्म है। देवताओं और ब्राह्मणोंका सम्मान करनेवाला, सबका आतिथ्य करनेमें व्रतयुक्त, ऋतुकालमें भार्य्यागामी, सदा नियमित भोजी, स्वयं मनोहर और मनोहर लोगोंका अन्वेषी, तथा शेषान्नभोजी शूद्रको वैश्यत्व प्राप्त होता है।

सत्यवादी, अहङ्कार रहित निर्द्वन्द्व, शमयुक्त, स्वाध्यायरत और पवित्र होकर जो वैश्य यज्ञके द्वारा देवार्चना करता है, जो दान्त द्विजोंका सम्मान करके सब वर्णोंको भूषित किया करता है और जो गृहस्थ व्रत अवलम्बन करके दोबार भोजन करता है, जो शेषान्नभोजी नियताहारी, निष्काम और अहङ्कार रहित है, जो अग्निहोत्रकी उपासना करते हुए विधिपूर्व्वक आहुति प्रदान करता है, सबका आतिथ्य किया करता, बचा हुआ अन्न भोजन करता और दक्षिणाग्नि गार्हपत्य तथा आवहनीय अग्निकी परिचर्य्यामें सावधान रहता है, वह पवित्र वैश्य महत् क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न होता है। जन्मविधि संस्कृत वह वैश्य क्षत्रिय और उपनीत व्रतयुक्त तथा सत्कृत होकर द्विज हुआ करता है।

जो लोग दान करते और समृद्ध आप्रदक्षिण यज्ञके सहारे योग किया करते हैं और अध्ययन करते हुए सदा तीनों अग्नियोंके शरणापन्न होते हैं, आर्त्त पुरुषोंको धीरज देते, धर्म्मके

अनुसार प्रजापालन किया करते हैं, जो सुखदर्शन तथा सत्यवादी होके सत्य कार्य्योंको सदा निभाते हैं, धर्म्म दण्डके द्वारा धर्म्म कार्य्योंका अनुशासन करते हैं, कार्य्य और कारणके द्वारा निमन्त्रित होके राज्यग्राह्य छठवां भाग ग्रहण करते हैं, वह अर्थशास्त्र जाननेवाले धर्म्मात्मा राजा स्वच्छन्दता पूर्व्वक ग्राम्य धर्म्मको सेवा न करें और ऋतुकालमें सदा भार्य्याके समीप शयन करें। सर्पोपवासी, सदा स्वाध्यायमें रत, पवित्र कर्म्मसे युक्त अग्निगृहमें सदा शयन करनेवाला, प्रसन्नचित्तसे धर्म्मार्थ कामके अनुसार सबका आतिथ्यकर्त्ता, अन्न चाहनेवाले शूद्रोंको सदा अन्न देनेवाला मनुष्य अर्थ अथवा कामवशसे किञ्चितमात्र अहङ्कार प्रकाश न करे। जो लोग पितरों, देवताओं और अतिथियोंके सत्कारके लिये उपाय विधान करते, निज गृहमें यथा रीतिसे भिक्षादान करते हैं, तीनोंकालमें विधि पूर्व्वक अग्निहोत्रमें आहुति प्रदान किया करते हैं, गो-ब्राह्मणके निमित्त संग्राममें मरते हैं, वे क्षत्रिय त्रेताग्नि मन्त्रपूत वस्त्र पहरके द्विज हुआ करते हैं। ज्ञान विज्ञान तथा संस्कारयुक्त वेदपारग धर्म्मात्मा क्षत्रिय निज कर्म्मोंके सहारे ब्राह्मण होते हैं। हे देवि! इन कर्म्मफलोंके द्वारा न्यूनजाति कुलमें उत्पन्न हुआ शास्त्र सम्पन्न शूद्र भी संस्कारयुक्त द्विज होता है और ब्राह्मणभी असद्वृत्त तथा सब सङ्कर जातिवालोंका अन्न भोजन करनेसे ब्राह्मणत्व परित्यागके शूद्र हुआ करता है। हे देवि! शुद्धचित्तवाला जितेन्द्रिय शूद्रभी पवित्र कर्म्मोंके सहारे ब्राह्मणकी भांति सम्मानित होता है, ब्रह्माकी आज्ञा तथा मेरे मतसे पवित्र स्वभाव और पवित्र कर्म्म करनेवाले शूद्रको द्विजातियोंसे श्रेष्ठ जानना चाहिये। ब्राह्मणत्वके विषयमें योनि कारण नहीं है, संस्कार, शास्त्रज्ञान और सन्ततिभी कारण नहीं है, केवल पवित्र चरित्रही कारण है, जगतमें चरित्रसेही लोग ब्राह्मण जाने जाते हैं; उत्तम चरित्रयुक्त शूद्रकोभी ब्राह्मणत्व मिल सकता है। हे कल्याणि! निर्गुण निर्म्मल ब्रह्म जिसमें निवास करे वही ब्रह्मस्वरूप ब्राह्मण है। हे देवि! प्रजाकी सृष्टि करनेवाले वरदाता ब्रह्माने स्वयं इस स्थानमें भागनिर्दृष्ट योनिफलोंका वर्णन किया है, जगत्‌में सबकी गतिस्वरूप ब्राह्मण लोग क्षेत्ररूपसे विचरण किया करते हैं, उस क्षेत्रमें जो लोग बीज बोते हैं, परलोकमें उनका वह कृषिकार्य्य सफल होता है। श्रेष्ठ ब्राह्मण सदा विघसाशी तथा सत्यावलम्बी होवे और जो लोग ऐश्वर्य्यकी कामना करते हैं, उन्हें ब्राह्मपथ अवलम्बन करके समय बिताना चाहिये। गृहमेधी मनुष्योंको गृहमें संहित अध्ययन करना योग्य है, सदा स्वाध्यायरत होना चाहिये; किन्तु अध्ययन मात्रको ही उपजीव्य न करे। इसी प्रकार जो विप्र सत्पथमें स्थित रहता और आहिताग्नि होकर अध्ययन करता है, वह ब्रह्मस्वरूप लाभ करनेमें समर्थ हुआ करता है। हे शुचिस्मिते! यतचित्त ब्राह्मण ब्राह्मणत्व लाभ करके योनि परिग्रह आदान और कर्म्मसे उसकी रक्षा करे, शूद्र जिस प्रकार ब्राह्मण होता और ब्राह्मण धर्म्मच्युत होकर जिस भांति शूद्रत्व लाभ करता है; मैंने उस गोपनीय विषयको तुम्हारे समीप वर्णन किया।

१४३ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, हे सुरासुर नमस्कृत सर्व्वभूतेश देव भगवन्! हे विभु! मनुष्योंका धर्म्म अधर्म्म वर्णन करिये, इस विषयमें मुझे सन्देह है। मनुष्य वचन, मन और कर्म्महेतु विविध बन्धनपाशसे बद्ध होता है, अथवा उससे मुक्त हुआ करता है। हे देव! मनुष्य लोग इसलोकमें किस भांतिके चरित्र, कैसे कर्म्म और किन गुणोंके सहारे स्वर्गमें गमन करते हैं।

महादेव बोले, हे धर्म्मार्थतत्वकी जाननेवाली धर्म्म और दममेंरत देवि ! तुमने जो प्रश्न किया, वह सब प्राणियोंके लिये हितकर और बुद्धिवर्द्धन है, इसलिये उसका उत्तर सुनो। सत्यधर्म्ममें रत सर्व्वलिङ्ग विवर्ज्जित जो सब साधुजन धर्म्मलब्ध अर्थ भोग करते हैं, वे सब मनुष्य ही स्वर्गमें गमन किया करते हैं ; जिन लोगोंका सन्देह छूटा है, वे धर्म्म अथवा अधर्म्मसे बद्ध नहीं होते । प्रलय और उत्पत्तिके तत्त्वोंको जाननेवाले सर्व्वज्ञ सर्व्वदर्शी रागरहित पुरुष कर्म्मबन्धनसे मुक्त होते हैं ; जो लोग बचन, मन और कर्म्मसे किसीकोभी हिंसा नहीं करते हैं। तथा मनहीमन किसी विषयमें भी आसक्त नहीं होते, वे कर्म्मसे बद्ध नहीं होते । इन्द्रियविषयोंसे जो लोग विरत हुए हैं और जो लोग शीलवन्त तथा दयावान् हैं, शत्रु मित्रको समान जाननेवाले दमनशील पुरुष कर्म्मबन्धनोंसे छूट जाते हैं। जो लोग सर्व्वभूतोंमें दयावान् सब प्राणियोंमे विश्वासी और हिंसावृत्तिसे रहित हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें गमन किया करते हैं। जो लोग सदा परधनमें ममता रहित, परस्त्रीसे विरत रहते और धर्म्मसे प्राप्त हुआ अन्न भोजन करते हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो मनुष्य परस्त्रीके विषयमें मातृवत् स्वसृवत् और दुहितृवत् व्यवहार करते हैं। वे भी स्वर्गगामी होते हैं ; जो लोग सदा चोरीकार्य्यसे विरत रहते हैं, निजधनसे सन्तुष्ट और स्ववीर्य्यभाग्य उपजीव्य करके जीवन बिताते हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग सदा पराई स्त्रीके विषयमें चरित्रके सहारे नेत्रको छिपा रखते हैं, जो लोग संयतेन्द्रिय और शीलपरायण हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गमें गमन किया करते हैं, पण्डितोंको इस देवपथमें विचारना चाहिये, यह अकषाय कृतमार्ग विद्वान् मण्डलीका सदा सेवनीय है, जो लोग निज स्त्रीमें रत तथा ऋतुकालमें गमन करनेवाले हैं और जो लोग ग्राम्यसुख नहीं भोगते, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। दान, धर्म्म, तप, शील शौच और दयायुक्त पथवृत्तिके निमित्त तथा धर्म्महेतुसे बुद्धिमानको सदा सेवनीय है, जो लोग स्वर्गवासकी अभिलाष करते हैं, उन्हें उक्तपथके अतिरिक्त धर्म्मसेवा करनी योग्य नहीं है।

उमा बोली, हे अनघ भूतनाथ ! जिन वाक्योंके सहारे मनुष्य बद्ध होता है और जिन कर्म्मोंके द्वारा मुक्त होता है, आप मेरे समीप उसे वर्णन करिये ।

महादेव बोले, अपने लिये अथवा दूसरोंके निमित्त वा परिहासके छलसे भी जो लोग इस लोकमें मिथ्या नहीं कहते, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। वृत्तिके निमित्त अथवा धर्म्मके लिये वा स्वेच्छापूर्व्वक जो लोग मिथ्यावचन नहीं कहते, वे सब पुरुष स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग निठुर और कड़वेवचन नहीं कहते, जो पिशुनता रहित तथा साधु हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग कठोरबचन और परद्रोह परित्याग करते तथा जो सब जीवोंमें समदर्शी और दान्त हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग मित्रभेदकारी चुगलीयुक्त वचन नहीं कहते, सत्य तथा हितकर बात कहा करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग असत् प्रलापसे विरत रहते, विरुद्ध कार्य्योंको नहीं करते और प्रिय बचन कहा करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग क्रोधपूर्व्वक हृदयविदारक बचन नहीं कहते, क्रुद्ध होके भी शान्त वाणी बोलते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। हे देवि ! मनुष्योंको इस ही प्रकार वाक्यजनित धर्म्म सदा सेवन करना योग्य है ; यह शुभकर और सत्य फलप्रद है ; इसलिये विद्वान् मनुष्योंको मिथ्यावचन कदापि न कहना चाहिये।

उमा बोली, हे महाभाग देवोंके देव पिनाकधारी ! पुरुष मनहीमन जिन कर्म्मोंको करके बद्ध होता है, आप मेरे निकट उसे वर्णन करिये।

महादेव बोले, हे कल्याणि! इस लोकमें मनुष्य सदा मानसधर्म्मोंसे संयुक्त होकर स्वर्गमें गमन करता है, उसे मैं कहता हूं, सुनो। हे शुभानने! दुष्टचित्तसे अन्तरात्मा भी दूषित होता है, इस लोकमें जिन कर्म्मोंसे मन बद्ध होता है, उसे सुनो, जनरहित बनके बीच यदि पराया धन दीख पड़े, उस समय जो मनुष्य उसे हरनेके लिये मनसे भी कामना नहीं करते वे स्वर्गगामी होते हैं। ग्राम, गृह वा निर्जन बनमें जो धन रहता है, जो लोग उसे अभिनन्दन नहीं करते, वे स्वर्गमें जाते हैं। जो लोग निर्जनमें स्थित कामहत्त पराई स्त्रीको मनसे कामना नहीं करते, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो मनुष्य शत्रु वा मित्रको देखकर समान भावसे बार्त्ता करते हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग श्रुतवन्त दयावान् पवित्र और सत्यसङ्कल्प हैं और निज धनसे सन्तुष्ट रहते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जिनका कोई बैरी नहीं है, जो लोग किसी कार्य्यको करके आसक्तियुक्त नहीं होते, जिनके चित्तमें सदा मित्रभाव रहता है। तथा जो सब जीवोंमें दयावान् हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग श्रद्धावान् दयावान् मनोज्ञ और मनोज्ञ जनप्रिय तथा हर एक धर्म्मोंको जाननेवाले हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। हे देवि! जो मनुष्य शुभाशुभ कर्म्मोंके फल सञ्चय विषयमें विपाकज्ञ हैं, वे लोग स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग सदा न्यायपूर्व्वक गुणयुक्त देव-द्विजपरायण और सदा सावधान रहते हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गमें गमन करते हैं। हे देवि! शुभकर्म्मोंसे जो अत्यन्त फल मिलता है, उसे मैंने तुम्हारे समीप बर्णन किया। स्वर्गमार्ग पराभव करके अब फिर तुम कौनसा विषय सुननेकी इच्छा करती हो?

उमा बोली, हे महेश्वर! मनुष्योंके विषयमें मुझे एक महत् सन्देह है, इसलिये आप मेरे समीप निपुण भावसे उस सन्दिग्ध विषयको व्याख्या करिये। हे प्रभु! पुरुषको किन कर्म्मोंसे दीर्घायु प्राप्त होती है? हे देवेश! किस तपस्यासे महत् परमायु मिलती है? भूमण्डलमें मनुष्य किन कर्म्मोंसे क्षीणायु हुआ करता है? हे अनिन्दित देव! आपको कर्म्मोंका बिपाक बर्णन करना उचित है। कोई कोई महाभाग्यशाली और कोई मन्दभागी हुआ करते हैं, कोई कुलीन और कोई अकुलीन होते हैं। कोई कोई मनुष्य दुर्दशापन्न होकर मानो काष्ठमय रूपसे मालूम होते हैं, कोई प्रियदर्शन और कोई देखते ही दुर्व्वुद्धिरूपसे मालूम होते हैं। कोई पण्डित, कोई महाबुद्धिमान्, कोई कोई ज्ञानविज्ञानसम्पन्न और कोई अल्प बाधायुक्त हैं, कितने ही महापीड़ाग्रस्त दिखाई देते हैं। हे देव! पुरुषोंमें ऐसी विशेषता किसलिये होती है, उसे आपको यथार्थ बर्णन करना उचित है।

महादेव बोले, हे देवि! अच्छा मैं तुमसे कर्म्मफलोदय कहता हूं, मर्त्यलोकमें सब मनुष्य जिसके सहारे निज कर्म्म फल भोगते हैं, उसे सुनो। हे देवि! जो पुरुष प्राणवध करनेमें सदा दण्डहस्त होकर भयङ्कर भावसे उद्यत रहता और शस्त्रसे सदा प्राणियोंको मारता है और जो मनुष्य निर्दयी तथा सर्व्व भूतोंके विषयमें उद्वेगजनक हैं, कीट चींटी प्रभृतिके भी अशरण्य तथा अत्यन्त निकृष्ट हैं, वे मनुष्य नरकमें डूबते हैं और इसके बिपरीत पुरुष धर्म्मात्मा तथा रूपवान् होकर जन्मते हैं। हिंसक मनुष्य नरकमें जाता और अहिंसक पुरुष स्वर्गमें गमन करता है। नरकमें पड़के मनुष्य घोर कष्टयुक्त यातना भोग करता है; जो कोई पुरुष कदाचित उस नरकसे बाहिर होता है, वह मनुष्य जन्म पाके हीनायु हुआ करता है। हे देवि! हिंसामें रत मनुष्य पाप कर्म्मसे बद्ध होते और वे लोग सर्व्व भूतोंके अप्रिय तथा अल्पायु होके

जन्मते हैं। और जो लोग पवित्र वंशमें जन्म ग्रहण करते हैं, वे प्राणिहिंसा वर्ज्जित, शास्त्र-रहित और दण्डहीन होकर कदापि हिंसा नहीं करते; न वे आघात कराते न स्वयं आघात करते हैं और मारनेवालेका अनुमोदन करनेमें विरत रहते हैं, वे सब जीवोंके विषयमें स्नेहवान् हुआ करते हैं, वे अपने समान दूसरेको भी जानते हैं। हे देवि! ऐसे श्रेष्ठ पुरुष देवोंत्व सम्भोग करते हैं, वे हर्षित होकर उपपन्न सुख भोगोंको उपभोग किया करते हैं, अनन्तर यदि कदाचित वे मनुष्य लोकमें जन्मलेते हैं, तो दीर्घायु होकर सुख भोग किया करते हैं। दीर्घायु सच्चरित्र सुकर्म्मशील मनुष्योंका प्राणिहिंसा विमोक्ष वशसे यह पथ ब्रह्माके द्वारा वर्णित हुआ है।

१४४ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, पुरुष कैसे स्वभाव, किस प्रकारके आचार और व्यवहारसे युक्त होकर किन कर्म्मों तथा कैसे दानके सहारे स्वर्गलोक पाता है?

महादेव बोले, हे देवि! जो लोग दाता और ब्राह्मणोंका सम्मान करते हैं, दीन, अन्धे और कृपण आदिको भक्ष्यभोज्य अन्न, वस्त्र, तथा भूषण प्रदान करते हैं, निवासस्थान, गृह, सभा, कूप, तालाव तलाई आदि तैयार कराते और नित्य प्रयोजनीय वस्तुएं तथा जो मनुष्य जिस वस्तुके लिये प्रार्थना करता उसे देते। आसन, शय्या, सवारी, धन, रत्न, गृह सब प्रकारके शस्य गऊ, क्षेत्र स्त्री प्रभृतिको जो मनुष्य प्रसन्नचित्त होकर सदा प्रदान करता है, वह देवलोकमें विराजता है, वह वहांपर बहुत समयतक उत्तम भोगोंको भोग करते हुए अप्सराओंके सङ्ग प्रमुदित होकर नन्दन प्रभृति वनोंमें क्रीड़ा करता है; स्वर्गलोकसे च्युत होनेपर वह पुरुष मनुष्यलोकमें धन धान्ययुक्त होकर महाकुलमें जन्मता है। हे देवि! वहां समस्त कामगुणयुक्त और हर्षित होकर वह महाभाग मनुष्य महाकोष सम्पन्न तथा धनवान होता है। ब्रह्माने पहले ही कहा है, कि दानशील महाभाग प्राणिगण सबको ही प्रिय हैं। हे देवि! दूसरे निर्बुद्धि मनुष्य दान विषयमें कृपण होकर द्विजोंको यांचनेपर धन विद्यमान रहते भी दान नहीं करते, वे जिह्वा लाभयुक्त होकर दीन, अन्ध, कृपण, भिक्षुक और अतिथियोंको यांचनेपर भी देनेसे विमुख हुआ करते हैं। वे लोग धन, वस्त्र, भोग्यवस्तु, सुवरण, गऊ तथा अन्नविकार कदाचित किञ्चित मात्र प्रदान नहीं करते, वे लोग दान विषयमें निवृत्त, लोभी नास्तिक तथा दान रहित होते हैं। हे देवि! ऐसे अल्पबुद्धिवाले मनुष्य नरकमें गमन करते हैं, कालक्रमसे जब उन्हें फिर मनुष्यत्व प्राप्त होता है, तब वे अल्पबुद्धि मनुष्य धनहीन कुलमें जन्मते हैं। वे लोग भूख-प्याससे युक्त सब भोगोंसे पृथक् और सब भोगोंसे रहित होकर अधमजीविकाके सहारे जीवित रहते हैं। हे देवि! इन्हीं कर्म्मोंसे मनुष्य अल्पभोगयुक्त कुलमें जन्मते और अल्पभोगमें रत तथा निर्द्धन हुआ करते हैं। हे देवि! जो मनुष्य धनगर्व्वसे अभिमानी और स्तम्भित होते हैं, जो लोग अचेत होकर आसन देने योग्य माननीय पुरुषोंको आसन प्रदान नहीं करते, जो अल्पबुद्धि मनुष्य पथप्रदानके योग्य पुरुषोंको मार्ग नहीं देते, जो तुच्छबुद्धि पुरुष पाद्य देने योग्य मनुष्यको पाद्यप्रदान नहीं करते, अर्घयोग्य पुरुषका सत्कार करके विधिपूर्व्वक पूजा नहीं करते अथवा जो मूर्ख मनुष्य पूजनीय पुरुषको अर्घ वा आचमनके लिये जल नहीं देते, गुरुको आया हुआ देखकर प्रीतिपूर्व्वक उसके सङ्ग गुरुयोग्य व्यवहार नहीं करते, अभिमान और लोभसे परिपूरित हुआ करते, माननीय लोगोंकी अवज्ञा करते और वृद्धोंको परिभव किया करते हैं, वे सारे मनुष्य नरकगामी होते हैं। वे मनुष्य अनेक वर्षोंके अनन्तर

कदाचित महानरकसे बाहिर होकर अत्यन्त निन्दित नीचकुलमें जन्मते हैं। जो लोग गुरु और वृद्ध लोगोंकी अवज्ञा करते हैं, वे चाण्डाल पुक्कश प्रभृति निर्बुद्धि लोगोंके निन्दित कुलमें उत्पन्न हुआ करते हैं। जो लोग अभिमानी तथा अहंकारी नहीं हैं और देव ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं, वे लोगोंके बीच पूज्य होते हैं। जो लोग गुरुजनोंको नमस्कार करते और बिनययुक्त होके मधुरबचन कहते हैं, वे सब वर्णोंको प्रिय तथा सर्वभूतोंके हितकर हुआ करते हैं। हे देवि! द्वेष न करनेवाले महासुखशाली, अत्यन्त मृदुभाषी और जो लोग स्वागतप्रश्नसे सदा कोमल बचन कहते हैं, सब जीवोंकी हिंसा न करनेवाले अतिथियोंको यथायोग्य सत्कारसे पूजा करते हैं, पथप्रदान करने योग्य पुरुषको पथ देते हैं, बड़े लोगोंको गुरुकी भांति पूजा किया करते हैं; जो लोग अतिथिसेवामें अनुरक्त रहते और अभ्यागतोंकी पूजा करते हैं, स्वर्गगति प्राप्त होती है। अनन्तर मनुष्यत्व पाके श्रेष्ठकुलमें जन्म लेते हैं, वहांपर वेही पुरुष सब रत्नोंसे युक्त विपुल भोगके द्वारा पूज्य पुरुषोंको यथा योग्य दान करते और धर्म्मचर्य्यापरायण होते हैं। ऐसे मनुष्य श्रेष्ठकुलमें जन्मते और सदा उत्तम महत् कुलको प्रकाशित किया करते हैं। मैंने जो यह धर्म्म विषय कहा है, इसे स्वयं बिधाताने वर्णन किया था। हे सुन्दरि! जिस पुरुषका व्यवहार अत्यन्त भयङ्कर है, जिसको देखके सब प्राणी भयभीत होते हैं, जो पुरुष हाथ, पांव, रसरी वा दण्ड लोष्ट स्तम्भ अथवा दूसरे किसी उपायसे प्राणियोंको मारनेके लिये दौड़ता है, जिसको बुद्धिवृत्ति हिंसाके निमित्त निकृष्ट पथमें भ्रमण करती है, जो सब जीवोंको व्याकुल करता है, सदा प्राणियोंको उद्वेगजनक होकर उन्हें आक्रमण करता है, ऐसे व्यवहारोंसे युक्त पुरुष नरकमें गमन किया करता है। कालक्रमसे वह पुरुष मानुषत्व पाके अनेक प्रकारकी बाधा और क्लेशोंसे युक्त होकर अधमवंशमें उत्पन्न होता है। जगत्में हेषी मनुष्य सब पुरुषोंसे अधम है। हे देवि! यह जान रखो कि, अपने किये हुए कर्म्मोंसेही मनुष्य स्वजनों तथा बान्धव प्रभृतिके बीच अधम हुआ करते हैं। दयावान्, ममता रहित नियतेन्द्रिय मैत्रदृष्टि मनुष्य पिताकी भांति सब भूतोंको समदृष्टिसे देखता है, वह जोवोंको व्याकुल तथा दुःखित नहीं करता; उत्तम नियमित हाथ पांवके सहारे सब प्राणियोंका विश्वास पात्र होता है। मृदुकर्म्म करनेवाला दयावान् मनुष्य रसरी, दण्ड, लोष्ट वा अस्त्रोंसे जोवोंको उद्वेगयुक्त नहीं करता, ऐसे स्वभाव और व्यवहारसे युक्त पुरुष स्वर्गलोकमें जाकर सुरपुरके दिव्य स्थानोंमें देवताओंकी भांति निवास किया करता है। वह मनुष्य कर्म्मक्षय होनेपर मनुष्यलोकमें जन्म लेकर अल्प बाधायुक्त और निरातङ्क होकर सुखसमृद्धि भोग किया करता है, वह सुखभागी निरायास और सदा निरुद्वेगयुक्त होता है। हे देवि! यही साधु पुरुषोंका पथ है, इसमें कुछ भी बाधा नहीं है।

उमा बोली, ये सब पूर्व्वपक्ष तथा सिद्धान्त विशारद ज्ञानविज्ञानयुक्त अर्थज्ञ मनुष्य जन्मते हुए दोख पड़ते हैं। हे देव! दूसरे लोग दुर्बुद्धि और ज्ञान-विज्ञानसे रहित होके उत्पन्न होते हैं। हे विरूपाक्ष! किन विशेष कर्म्मोंसे पुरुष प्रज्ञावान होता और किस प्रकार अल्पबुद्धि हुआ करता है? हे सर्व्वधर्म्मज्ञ श्रेष्ठ! आप मेरा यह सन्देह दूर करिये। हे देव! मनुष्योंके बीच कोई कोई अन्धे हो उत्पन्न होते हैं, कितने ही रोगी और कितने ही क्लीव दोखते हैं; इस विषयका कारण वर्णन करिये।

महादेव बोले, निपुण लोग वेदजाननेवाले धर्म्मज्ञ बुद्धिमान ब्राह्मणोंको प्रतिदिन कुशल पूछते और उनको सदा शुभ सेवा करते हुए

अशुभ कर्म्मोंको परित्याग किया करते हैं; इसीसे वे लोग इसलोकमें सुख भोगकर स्वर्ग-गति प्राप्त करते हैं। यदि वे फिर मनुष्यजन्म पाते तो बुद्धिमान होते और उनका शुभ प्रज्ञानुयायी कल्याण होता है। जो महामूढ़ मनुष्य पराई स्त्रीकी ओर दृष्टि करते हैं, वे उस ही दुष्ट स्वभावसे जन्मान्ध होते हैं, जो लोग दुष्टचित्तसे नङ्गी स्त्रीको देखते हैं, वे पापी मनुष्य इस लोकमें रोगार्त्त हुआ करते हैं। जो सब दुर्ब्बुद्धि दुराचारी मूढ़ मनुष्य विरुद्धयोनियों और पुरुषोंसे मैथुन करनेमें रत होते हैं, वे नपुंसक हुआ करते, हैं। जो लोग पशुहत्या करते, जो गुरुपत्नी गमन करते और जो लोग सङ्कीर्ण मैथुन करते हैं, वे सब मनुष्य नपुंसक हुआ करते हैं।

उमा बोली, हे देवसत्तम! कैसे कर्म्म बुरे और कौनसे उत्तम हैं? किन कर्म्मोंके करनेसे मनुष्योंका कल्याण होता है?

महादेव बोले, जो लोग कल्याणयुक्त पथको खोज करते हुए उस विषयमें ब्राह्मणोंसे प्रश्न करते हैं, वे धर्म्मान्वेषी गुणके अभिलाषी स्वर्ग भोग करते हैं। हे देवि! वैसे मनुष्य यदि कदाचित मनुष्यत्व लाभ करें, तो वे मेधावी धारणायुक्त और बुद्धिमान होके उत्पन्न होते है। हे देवि! इसे ही साधुओंका ऐश्वर्य्ययुक्त कर्म्म जानो; मनुष्योंके हितके निमित्त मैंने तुम्हारे समीप इस धर्म्मको वर्णन किया।

उमा बोली, कितने ही धर्म्मद्वेषी अल्प विज्ञानयुक्त मनुष्य वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंके समीप जानेकी इच्छा नहीं करते; कोई कोई मनुष्य व्रतयुक्त और कोई श्रद्धा धर्म्म परायण हैं। कोई कोई अव्रती, कोई भ्रष्ट नियमवाले और कोई राक्षसके सदृश हैं। कोई विधिपूर्व्वक यज्ञ करते, कितने ही होमरहित हैं; इसलिये कैसे कर्म्मविपाकके सहारे इस लोकमें मनुष्यगण ऐसे नैमित्तिक धर्म्मोंसे आक्रान्त हुआ करते हैं? आप मेरे समीप इस विषयको वर्णन करिये।

महादेव बोले, आगम शास्त्रोंमें लोगोंके कर्म्म और समस्त मर्य्यादा पहलेसे ही वर्णित है; दृढ़व्रती मनुष्य प्रमाणका अनुसरण करके दृढ़ हुआ करते हैं; जो लोग मोहके वशीभूत होते हैं, वे अधर्म्मको ही धर्म्म कहते हैं, वेही अव्रती मर्य्यादाभ्रष्ट और ब्रह्मराक्षस कहाते हैं, वे अधम मनुष्य समयके अनुसार इसलोकमें उत्पन्न होके होम तथा वषट्कार रहित हुआ करते हैं। हे देवि! मैंने तुम्हारा सन्देह दूर करनेके लिये मनुष्योंके हितायुक्त समस्त धर्म्मसागर वर्णन किया।

१४५ अध्याय समाप्त।

नारदमुनि बोले, सर्व्वशक्तिमान् महादेवने इतनी कथा कहके स्त्रीधर्म्म सुननेकी इच्छासे पार्श्ववर्त्तिनी अनुकूल प्रियासे प्रश्न किया।

महादेव बोले, हे परावरज्ञ धर्म्म जाननेवाली तपोवन निवासिनी साध्वि उत्तमकेशवाली हिमपर्व्वतात्मजा! हे दक्षे शम-दमयुक्त ममतारहित धर्म्मचारिणी वरारोहे! मैं तुमसे प्रश्न करता हूं, तुम पूछनेपर मेरे अभिलषित विषयको वर्णन करो। ब्रह्माकी साध्वी भार्य्या सावित्री, इन्द्रकी पत्नी शची, मार्कण्डेयकी सत भार्य्या धूम्रोर्णा, कुबेरकी पत्नी ऋद्धि, वरुणकी भार्य्या गौरी, सूर्य्यकी स्त्री सुवर्णला, चन्द्रमाकी साध्वी पत्नी रोहिणी, अग्निकी भार्य्या स्वाहा और काश्यपकी पत्नी अदिति, ये सभी स्त्रियें पतिको देवता समझती थीं। हे देवि! इन पतिव्रताओंसे तुमने सदा प्रश्न किया और उनकी उपासना की है। हे धर्म्मवादिनी धर्म्मज्ञे! इस ही निमित्त मैं तुमसे यह विषय पूछता हूं, तुम पहले स्त्रीधर्म्म वर्णन करो, इसेही मैं सुननेकी इच्छा करता हूं। तुम मेरी सहधर्म्मिणी समशीला और समव्रतधारिणी

हो, तुम्हारा प्रभाव तथा बल मेरे समान है और तुमने तीव्र तपस्या की है। हे देवि! इसलिये तुम जो स्त्रीधर्म्म कहोगी वह विशेष रीतिसे श्रेष्ठ होगा और जगत्‌के बीच प्रमाण स्वरूप हुआ करेगा। स्त्रीही स्त्रियोंके लिये परमगति हैं,—यह गति परम्परा क्रमसे सदा भूलोकमें गमन किया करती है। हे सुश्रोणि! मेरा शरीर तुम्हारे अर्द्धशरीरसे बना है, तुम लोक विस्तारकारिणी होकर सुरकार्य्य सिद्ध किया करती हो। हे शुभे! सब शाश्वत स्त्रीधर्म्म तुम्हें भलीभांति विदित है; इसलिये उत्तम रीतिसे विस्तार पूर्व्वक तुम निजधर्म्मका वर्णन करो।

उमा बोली, हे सर्व्वभूतेश भूतभव्य भवोद्भव भगवन्! तुम्हारी कृपासे ही मेरा यह वचन प्रकाशित होगा। हे देवेश! ये सब तीर्थ तथा नदियें जलयुक्त होकेभी तुम्हें स्पर्श करनेके लिये तुम्हारे समीप गमन करती हैं; इसलिये मैं इनके सङ्ग विचार करके विस्तार पूर्व्वक सब विषयोंको कहूंगी। हे भगवन्! जो व्यक्ति अनहंवादी है, वही पुरुष कहाता है। हे भूतेश! स्त्रियें सदा स्त्रियोंकाही अनुधावन किया करती हैं। ये नदियें सबके बीच श्रेष्ठ हैं, पुण्यनदी सरस्वती सब नदियोंकी अग्रगण्या समुद्रगामिनी विपाशा, वितस्ता, चन्द्रभागा, ऐरावती, शतद्रु, देविका, सिन्धु, कौशिकी, गोमती और सब तीर्थोंसे घिरी हुई सब नदियोंमें श्रेष्ठ देवनदी गङ्गादेवी जो आकाशसे पृथ्वी पर आई हैं, ये सब मुझसे सम्मानित होवें। धर्म्मवत्सला देवमहिषी धर्म्मधारिणी महादेवकी पत्नी उमाने इतनी कथा कहके हंसकर उन स्त्रीधर्म्म जाननेवाली नदियोंमें श्रेष्ठ गङ्गा प्रभृतिसे स्त्रीधर्म्म विषय पूछा।

उमा बोली, ये भगवान स्त्रीधर्म्म सम्बन्धीय प्रश्न किये हैं, मैं तुम लोगोंके सङ्ग परामर्श करके शङ्करके समीप वह विषय कहनेकी अभिलाष करती हूं। हे सागरगामिनीगण! भूमण्डल अथवा स्वर्गलोकमें कोई विद्वान एक व्यक्तिसाध्य नहीं दीखता, इस ही निमित्त मैं तुम्हारी सम्माननना करती हूं।

इसही प्रकार जब उमाने कल्याणदायिनी सब पवित्र नदियोंसे प्रश्न किया, तब देवनदी गङ्गा प्रत्युत्तर देनेमें नियुक्त हुई। अनेक भांतिकी बुद्धिसे युक्त, स्त्रीधर्म्म की जाननेवाली शुचिस्मिता, पुण्य पाप भयापहा बुद्धिके सहित बिनय सम्पन्न, सर्व्वधर्म्म विशारदा बहुबुद्धिशालिनी गङ्गा शैलराजपुत्रीकी पूजा करके मुसकुराकर बोलीं। हे धर्म्मपरायणे देवि! हम सब कोई धन्या और अनुग्रहकी पात्री हुई हैं; क्यों कि तुम समस्त जगत्‌की माननीय होकर भी नदी स्वरूपिणी हमारी सम्माननना करती हो। जो लोग जिज्ञासु जनोंका सम्मान करते हैं, मेरे मतसे वे धर्म्मज्ञ पण्डित कहे जाने योग्य हैं, जो ज्ञानविज्ञान युक्त ऊहापोहविशारद प्रवक्ताओं तथा अन्यान्य पुरुषोंसे पूछके कार्य्य करते हैं, वे कदापि आपदग्रस्त नहीं होते, अत्यन्त बुद्धिमान मनुष्य यदि सभाके बीच वचन कहे तो वह अहंवादी होनेसे दुर्ब्बल वाक्य कहा करता है। हे दिव्यज्ञानयुक्त द्युलोकमें मुख्य दिव्य पुण्यसम्पन्न देवि! तुमही हमारे निकट स्त्रीधर्म्म वर्णन करने योग्य हो। अनन्तर सुरसुन्दरी पार्व्वती गङ्गाके द्वारा अनेक प्रकारसे प्रशंसित होकर पूरी रीतिसे स्त्रीधर्म्म विषयोंको कहनेके लिये उद्यत हुई।

उमा बोली, विधिपूर्व्वक स्त्रीधर्म्म मुझे जिस प्रकार मालूम है, उसे कहती हूं, सावधान होके सुनो। पहले विवाहके समय बान्धवोंके द्वारा यह स्त्रीधर्म्म विहित हुआ है, कि स्त्रियें अग्निके समीप पतिकी सहधर्म्मचारिणी होती हैं। उत्तम स्वभाव तथा श्रेष्ठवचनवाली सुशीला सुखदर्शना सीमन्तिनी सदा पुत्रके मुखसदृश पतिका मुख देखनेवाली और नियताचारी साध्वी स्त्री धर्म्मचारिणी होती हैं। सहधर्म्मव्रत

शुभदम्पती धर्म्म सुनके जो नारी धर्म्मपरायण होती है और पतिके सदृश व्रताचरण करती है, वह पतिव्रता पतिको सदा देवतुल्य देखा करती है। जो देवतासदृश पतिकी सेवा टहल करती है, पतिके वशमें होकर सब भांति अन्तःकरणसे प्रसन्नचित्त, उत्तमव्रतवाली और सुखदर्शना होती है; तथा जो नारी अनन्यचित्तवाली तथा प्रसन्न-मुखी है, वही धर्म्मचारिणी हुआ करती है। पतिके निठुर वचन कहने और क्रुद्ध नेत्रसे देखनेपर भी जो नारी स्वामीके सम्मुख प्रसन्न मुख होके स्थित रहती है, वही पतिव्रता है। जो स्त्री चन्द्र, सूर्य्य तथा पुरुष नामधारी वृक्षोंकी ओर भी नहीं देखती, वह पतिव्रता वरारोहा स्त्री धर्म्मचारिणी होती है। जो स्त्री दरिद्र, रोगी, पथसे थके हुए पतिकी पुत्रकी भांति सेवा करती है, वह धर्म्मचारिणी होती है। जो नारी सावधान और गृहकार्य्योंमें दक्ष हो, जो पुत्रवती हो, जो नारी पतिव्रता तथा पतिप्राणा हो, वही धर्म्मचारिणी है। जो नारी प्रसन्न, विनयवती और अनन्यमना होकर सदा पतिकी सेवा टहल करती है, वह धर्म्मभागिनी है। जो प्रतिदिन अन्न देकर कुटुम्बका प्रतिपालन करती है, जो पतिके अनुरागके अनुसार काम, भोग, ऐश्वर्य्य और सुखकी अभिलाष करती है, वह नारी धर्म्मभागिनी होती है। भोरके समय उठनेका जिसे अनुराग है, गृहके कार्य्यको करनेमें जिसका मन लगता है, जो गृहको उत्तम रीतिसे धोती और गोमयसे लीपती है, जो सदा कार्य्योंमें तत्पर रहती, सदा पुष्प बलि प्रदान करती, पतिके सहित देवताओं अति-थियों और सेवकोंकी यथा रीतिसे दान करके विधिपूर्व्वक शेषान्न भोजन करती है, जिसके परिजन सदा सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रहते हैं, वह नारी धर्म्मभागिनी होती है। जो गुणवती सती सास ससुरकी चरणवन्दना करती और माता पिताके विषयमें भक्ति किया करती है, वही तपस्विनी है। जो नारी ब्राह्मण, निर्बल, अनाथ, दीन, अन्धे और कृपापात्रोंको अन्न देकर प्रति-पालन करती है, वह पतिव्रतभागिनी होती है, जो अल्पप्राण होके भी सदा दुश्चर व्रतोंको करती है तथा जो पतिमें चित्त लगाती वा पतिकी हितकारिणी है, वही पतिव्रतभागिनी होती है। जो नारी पतिको परम श्रेष्ठ जानती है, जो सती पतिव्रता होती है, उसके लिये पतिकी सेवा ही पुण्य है, पतिसेवा ही तपस्या और वही सनातन स्वर्ग है। स्त्रियोंके लिये पति ही देवता है, पति ही बन्धु, पति ही गति है पतिके समान गति नहीं है; जैसा पति है, देवता भी वैसे नहीं हैं. स्त्रियोंके विषयमें पतिकी प्रसन्नता और स्वर्गवास समान नहीं होसकता। हे देव महेश्वर! तुम्हारे प्रसन्न रहते मैं स्वर्ग-वासकी अभिलाष नहीं करती। पति यदि दरिद्र किसी प्रकारकी व्याधिसे ग्रस्त, दुःखी, शत्रुके वशीभूत अथवा ब्रह्मशापयुक्त होके भी किसी अकार्य्य अधर्म्म अथवा प्राण नाश करनेकी भी आज्ञा करे, उसे भी आपद्धर्म्म अवलोकन करके निशङ्क भावसे करना योग्य है। हे देव! यह मैंने तुम्हारे कथा क्रमसे स्त्रीधर्म्म कहा है, जो नारी इन आचरणोंसे युक्त हो, वह पतिव्रता है।

नारद मुनि बोले, देवेश्वर महादेवने ऐसी कथा सुनके पार्व्वतीका समादर करते हुए अनु-चरोंके सहित सब लोगको बिदा किया। अन-न्तर भूतगणों, नदियों, गन्धर्व्वों और अप्सरा-ओंने सिर झुकाके महादेवको प्रणाम करके अपने अपने स्थानोंपर गमन किया।

१४६ अध्याय समाप्त।

ऋषिवृन्द बोले, हे पिनाकधारी भगनेत्र-[illegible]री सर्व्वलोक नमस्कृत शङ्कर! हम लोग आपके समीप वासुदेवका माहात्म्य सुननेकी इच्छा करते हैं।

महेश्वर बोले, शाश्वत पुरुष हरि पितामह ब्रह्मासे भी श्रेष्ठ अभ्रशून्य अम्बरमें उदित सूर्य्यकी भांति कृष्णवर्ण होनेपर भी सुवरणसदृश प्रभाशाली हैं, वह महातेजस्वी दशबाहुयुक्त और देवताओंके आधि निसूदन हैं; श्रीवत्स चिन्हधारी हृषीकेश सब देवताओंके पूज्य हैं। ब्रह्मा उनके उदरसे उत्पन्न हुए और मैं उनके सिरसे प्रकट हुआ हूं; उनके केशोंसे अग्नि और रोमावलीसे समस्त सुरासुर उत्पन्न हुए, ऋषिगण और समस्त शाश्वत लोकोंकी उनके देहसे उत्पत्ति हुई है। वह त्रिभुवनेश्वर स्वयं साक्षात् पितामहकी गृह तथा इस समस्त पृथिवीकी सृष्टिकर्त्ता हैं और वही स्थावर-जङ्गम समस्त भूतोंके संहर्त्ता हैं। वही देवश्रेष्ठ स्वयं देवनाथ तथा परन्तप हैं; वह सर्व्वज्ञ, सर्व्वसंश्लिष्ट, सर्व्वग और सर्व्वतोमुख हैं। वह परमात्मा हृषीकेश सर्व्वव्यापी महेश्वर हैं, त्रिभुवनमें उससे श्रेष्ठ और कोई भी नहीं है, वह सनातन भगवान् मधुसूदन नामसे प्रसिद्ध है। वह मानव मनुष्य शरीर धारण करके देवकार्य्यके निमित्त युद्धमें सब राजाओंको मारेगा। देवगण त्रिविक्रमके बिना किसी कार्य्यको करनेमें समर्थ नहीं हैं, देववृन्द नायकहीन होके सुरकार्य्योंको सिद्ध करनेमें समर्थ नहीं होते, वह सब भूतोंका नायक है और वहीसब भूतोंका नमस्कृत है। उस ही देवकार्य्यरत देवनाथ ब्रह्मर्षि शरण्य ब्रह्मस्वरूपी शरीरमें सुखसंस्थित और गर्भस्थ होकर ब्रह्मा निवास किया करते हैं, सर्व्वसुख संस्थित होके उसके शरीरमें सुखसे संस्थित हुए हैं। देवता लोग सुखपूर्व्वक उसके शरीरमें निवास करते हैं। वह देव पुण्डरीकाक्ष श्रीगर्भ लक्ष्मीके सहित निवास किया करता है; शार्ङ्ग धनुष और चक्र उसके आयुध हैं और वह खड्गी तथा गरुड़ध्वज है। वह उत्तम शील, पवित्रता, दम, पराक्रम, वीर्य्य, वपु, दर्शन, आरोह, प्रमाण, धैर्य्य, आर्ज्जव, सम्पत्ति, अनृशंसता रूप और बलसे युक्त है। अद्भुतदर्शन, दिव्यास्त्रधारी योगमायायुक्त, सहस्राक्ष, निरवद्य और महामना है। वह वीर मित्रकी श्लाघा करनेवाला, स्वजनों तथा बन्धुजनोंको प्रिय, क्षमावान् अनहंवादी ब्रह्मण्य और ब्रह्मनायक है। वह भयार्त्तोंका भयहर्त्ता तथा मित्रोंके आनन्दको बढ़ानेवाला है; वह सब जीवोंका शरण्य तथा सबको पालन करनेमें अनुरक्त है। वह श्रुतवान् अर्थसम्पन्न और सब भूतोंका नमस्कृत है; वह समाश्रितोंका बहुत ही उपकारक और शत्रुओंके भी धर्म्मको जाननेवाला है। वह नीतिज्ञ, नीतिसम्पन्न, ब्रह्मवादी, जितेन्द्रिय है; इस लोकमें देवताओंकी उत्पत्तिके निमित्त परम बुद्धियुक्त धर्म्मसंहित प्रजापति सम्बन्धीय शुभ मनुष्यपथ तथा महानुभाव मनुके वंशमें उस ही गोविन्दकी उत्पत्ति होगी।

मनुका पुत्र अङ्ग, उसका पुत्र अन्तर्द्धामा और उसका पुत्र हविर्धामा अनिन्दित प्रजापति रूपसे वर्णित होगा, हविर्धामाका महान् पुत्र प्राचीन बर्हि नामसे विख्यात होगा, उससे प्रचेता प्रभृति दश पुत्र होंगे, प्रचेतासे इस लोकमें दक्ष प्रजापतिकी उत्पत्ति होगी, दक्षकी कन्या अदितिसे आदित्यकी उत्पत्ति होगी, आदित्यसे मनुका जन्म होगा, मनुके वंशमें इला और सुद्युम्न जन्मेंगे, बुधके द्वारा इलाके गर्भसे पुरुरवाका जन्म होगा, उससे आयुकी उत्पत्ति होगी, आयुसे नहुषका जन्म होगा, नहुषका पुत्र ययाति, ययातिके महाबलवान यदु नाम पुत्र होगा, उससे क्रोष्टा जन्मेगा, क्रोष्टाके महाबली पुत्रका वृजिनीवान नाम होगा, वृजिनीवानसे अपराजित उषङ्गु नाम पुत्र जन्मेगा, उषङ्गुका पुत्र चित्ररथ और चित्ररथका कनिष्ठ पुत्र शूर नामसे विख्यात होगा। विख्यात वीर्य्य, चरित्र गुणसम्पन्न, विधिपूर्व्वक यज्ञ करनेवाले, अत्यन्त पवित्र ब्राह्मणसम्मत, यदुवंशमें क्षत्रियश्रेष्ठ, महावीर्य्य, महायशस्वी,

मानदाता, शूर निज वंशकी वृद्धि करनेवाले वसुदेव नामसे विख्यात् आनक दुन्दुभी नामक पुत्र उत्पन्न करेगा। चतुर्व्वाहु वासुदेव उसके पुत्र होंगे, वह दाता ब्राह्मणोंका सत्कारकर्त्ता ब्रह्मस्वरूप और ब्राह्मण प्रिय होकर मगधराज जरासन्धके द्वारा कैद हुए राजाओंको छुड़ावेंगे। वह बीर्य्यवान् वासुदेव गिरिगह्वरके बीच राजा जरासन्धको पराजित करके सब राजाओंकी रत्नराजिके सहारे समृद्धवान् होंगे और वह निजपराक्रमसे पृथ्वीके बीच अप्रतिहत तथा विक्रमयुक्त होकर सब राजाओंके ऊपर आधिपत्य करेंगे। नीतिज्ञ भगवान् शूरसेन देशमें पूर्णरीतिसे वृद्धियुक्त होकर द्वारकामें निवास करके जयलक्ष्मी वसुन्धरा देवीका सदा पालन करेंगे। आप लोग जिस प्रकार उत्तम अर्हण द्रव्य और वचनरूपी मालासे शाश्वत ब्रह्मकी पूजा करते हैं, वैसे ही उनके निकट जाकर विधिपूर्व्वक पूजा करिये। जो लोग मेरे अथवा पितामह ब्रह्माके दर्शनकी अभिलाष करते हैं, उन्हें प्रतापवान् भगवान् वासुदेवका दर्शन करना उचित है; उनका दर्शन होनेसे ही मेरा और देवेश पितामहका दर्शन हुआ करता है, इस विषयमें मैं कुछ भी विचार नहीं करता। हे तपस्वीवृन्द! तुम लोग यह जान रखो, कि वह पुण्डरीकाक्ष जिसपर प्रसन्न होंगे, ब्रह्मादि देवगण भी उसके विषयमें प्रसन्न रहेंगे। लोकमें जो मनुष्य उस केशवका आसरा करेगा, उसकी जय तथा कीर्त्ति होगी और उसको स्वर्ग मिलेगा। वह धर्म्मभागी मनुष्य साक्षात् सब धर्म्मोंका उपदेशक होगा। धर्म्म जाननेवाले पुरुष सदा उद्योगी होकर उस देवेश्वरको नमस्कार करें, उस सर्व्वशक्तिमान् वासुदेवके पूजित होनेसे परमधर्म्म होता है। उस महातेजस्वी देवेशने प्रजाकी हितकामनासे धर्म्मके निमित्त कोटि ऋषियोंकी सृष्टि की है। वे सनत्कुमार प्रभृति ऋषिगण उसके द्वारा उत्पन्न होके गन्धमादन पर्व्वतपर तपयुक्त होकर निवास करते हैं। हे द्विजश्रेष्ठगण! इस ही निमित्त वह वाग्मी धर्म्मज्ञ वासुदेव सबके ही नमस्य हैं। सर्व्वलोकके बीच सर्व्वशक्तिमान् भगवान् नारायण ही श्रेष्ठ हैं, वह वन्दित होनेपर वन्दना पूजित होनेसे पूजा, सम्मानित होनेसे सम्मान और सदा अर्च्चित होनेपर प्रतिपूजा किया करते हैं। वह दृष्ट होनेसे दिनरात देखते और संश्रित होनेसे आश्रय किया करते हैं। हे द्विजसत्तमगण! वह देव अत्यन्त पूजित होनेपर सदा पूजा करता और उस अनन्दनीय विष्णुका यही परमव्रत है, महानुभाव आदिदेवके चरितोंका सज्जन लोग सदा आचरण किया करते हैं, वही सनातन देवलोकके बीच सदा देवताओंके द्वारा पूजित होता है। जो लोग उसपर अनुरक्त रहते, वे अनुरूप अभययुक्त हुआ करते हैं; इसलिये द्विजगण सदा उसे वचन, मन और कर्म्मसे नमस्कार करें। यत्नवान मनुष्य उपासनाके सहारे देवकीनन्दनका दर्शन करें। हे मुनिसत्तमगण! यह मेरे द्वारा आप लोगोंका पथ वर्णित हुआ। उसका सब भांतिसे दर्शन करनेपर सब देवताओंका दर्शन होता है। उस महावराहरूपी सर्व्वलोक पितामह जगत्पति देवेश्वरको मैं भी सदा नमस्कार किया करता हूं। उसमें तुम लोगोंको निःसन्देह त्रिवर्ग दीखेगा, हम सब देवताओंके सहित उन्हींके शरीरमें निवास करते हैं उनके जेठे भाई श्वेतशैल सदृश प्रभायुक्त धराधारी बलदेव नामसे विख्यात होंगे। उस देवकी स्वर्णमय तृणराज त्रिशिरा तालवृक्ष चिन्हयुक्त रथकी ध्वजा होगी, उस सर्व्वलोकेश्वर महाबाहुका सिर महाभोग युक्त महानुभाव नागगणसे परिवेष्टित रहेगा। सब अस्त्र शस्त्र ध्यान करते ही उनके निकट उपस्थित होंगे, वह भगवान हरि ही अनन्त नामसे वर्णित होते हैं, जिनके प्रतापसे कश्यपके पुत्र बलवान् सुपर्ण

(गरुड़) देवताओंकी आज्ञासे उन्हें प्रदर्शन करते हुए उस देव परमात्माका अन्त देखनेमें समर्थ न हुए। वह भोगके द्वारा वसुन्धराको आलिङ्गन करके उसके अन्तर निवास करता है, वह शेष परम हर्षयुक्त होके विचरता है, वेही विष्णु, वेही अनन्त और वेही भगवन् धरणीधर हैं। जो राम सोई हृषीकेश, जोई अच्युत सोई बलदेव हैं। वे दोनों पुरुष श्रेष्ठ दिव्य तथा दिव्य पराक्रमशाली हैं, वे चक्र और हलधारी दोनों देव दर्शनीय तथा माननीय हैं। हे तपोधनगण! आप लोग यदुश्रेष्ठ राम और कृष्णकी यत्नपूर्व्वक पूजा करिये, इस ही निमित्त आप लोगोंके लिये अनुग्रह स्वरूप यह पवित्र विषय वर्णन किया है।

१४७ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, अनन्तर आकाशमें बिजलीके सहित बादलयुक्त महान् शब्द प्रकट हुआ और नीलवर्णवाली निविड़ घनघटासे आकाशमण्डल परिपूरित होगया। प्रावट्कालकी भांति पर्जन्यदेव जलकी बर्षा करने लगे, घोर अन्धकार प्रकट हुआ, सब दिशा प्रकाशसे रहित होगईं। अनन्तर उस रमणीय पवित्र सनातन सुरशैलपर मुनिगण महेश्वर वा भूतगणका दर्शन करनेमें समर्थ न हुए। क्षण भरके बीच आकाशमण्डल निर्म्मल हुआ, तब ब्राह्मणोंने तीर्थयात्राके निमित्त गमन किया, सब कोई अपने अपने अभिलषित स्थानपर चले गये। उमाके सहित महादेवके सम्वादके सम्बन्धमें यह अद्भुत अचिन्तनीय विषय देखकर वे सब मुनिवृन्द विस्मित होकर बोले। हे पुरुषश्रेष्ठ! आप सनातन ब्रह्मस्वरूप हैं, पर्व्वतके ऊपर जिस भांति महादेवके द्वारा हम लोग उपदिष्ट हुए थे, उस ही भांति यह दूसरा अद्भुत व्यापार आपके तेजसे प्रकट हुआ। हे कृष्ण! इस अद्भुत कर्म्मको देखकर हम लोग विस्मित हुए और पहला विषय हमें स्मरण हुआ है। हे विभु महाबाहो जनार्द्दन! यह देवोंके देव कपर्द्दी गिरीशका माहात्म्य कहा गया। तपोवननिवासी मुनियोंके द्वारा देवकीनन्दन कृष्णने उस समय इतनी कथा सुनके उन सब मुनियोंका सम्मान किया।

अनन्तर वे मुनिगण हर्षित होकर कृष्णसे बोले,, हे मधुसूदन! आप सदा हम लोगोंको दर्शन दीजिये। हे बिभो! आपका दर्शन करनेके लिये हमें जैसा अनुराग है, वैसी स्वर्गमें निवास करनेकी रुचि नहीं होती। हे अरिकर्षण महाबाहो! भगवान् भवने आपका जो यथार्थ्य कहा, यह वही सब रहस्य वर्णित हुआ। आप अर्थतत्त्वज्ञ हैं, पूछने पर हम लोगोंसे ही जिज्ञासा करते हैं, इसलिये आपकी प्रीतिके लिये यह गोपनीय विषय उदाहृत हुआ, तीनों लोकोंके बीच आपको कुछ भी अविदित नहीं है। हे बिभो! उत्पत्ति तथा प्रसूति अथवा दूसरे जो कुछ कारण हैं, वे सब आपसे छिपे नहीं हैं, हम लोग बहुतसी चपलता गोपनीय विषयोंको धारण करनेमें असमर्थ हैं। हे प्रभु! इसलिये आपके रहते हम लोग जो विषय कहें, वह लघुता हेतुसे प्रलाप मात्र है। आप जिसे न जानें, वैसा अद्भुत विषय इस लोकमें कुछ भी नहीं है। हे देव! द्युलोक वा भूलोकमें जो कुछ आश्चर्य हैं, वे सब आपको मालूम हैं। हे कृष्ण! अब हम लोग जाते हैं, आप बुद्धि और पुष्टिलाभ करिये। हे तात! आपके सदृश अथवा तुमसे भी उत्कृष्ट, महाप्रभाव, दीप्तिमान् कीर्त्तियुक्त सर्व्वशक्तिमान् तुम्हारे एक पुत्र होगा।

भीष्म बोले, अनन्तर उन महर्षियोंने पुरुषश्रेष्ठ यदुवंशधर देवेशको प्रणाम और प्रदक्षिण करके प्रस्थान किया। ये वही श्रीमान् नारायण परम दीप्तिमान होकर व्रत पूरा करके द्वारकामें आये, दश महीना पूरा होने पर

रुक्मिणीके गर्भसे परमाश्चर्य्य शूरवीर सर्व्वसम्मत वंशधर पुत्र उत्पन्न हुआ। हे महाराज! वही काम सब प्राणियोंके अन्त:करणमें स्थित है, वह सुरासुरोंके अन्तर्गत होकर सदा विचरता है। ये वही घनश्याम चतुर्भुज पुरुषश्रेष्ठने प्रेमवशसे पाण्डवोंको अवलम्बन किये हैं, आप लोग भी इनका आसरा कर रहे हैं। कीर्त्ति, लक्ष्मी, धृति और यह स्वर्ग मार्ग जिस स्थानमें संस्थित होता है, भगवान् त्रिविक्रम वासुदेव वहां सन्निहित रहते हैं और इन्द्रके सहित तैंतीस देवता वहां निवास करते हैं, इस विषयकी चर्चा करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है। महात्मा मधुसूदन आदिदेव महादेव सर्व्वभूतोंके अवलम्ब हैं। वेही अनादि अनन्त और अव्यक्त हैं। ये महातेजस्वी देवताओंको प्रयोजन सिद्धिके निमित्त उत्पन्न हुए हैं। माधव अत्यन्त दुस्तर अर्थतत्त्वोंके वक्ता और कर्त्ता हैं। हे तात! नारायणके अवलम्बसे ही तुम्हारी जय और अतुल कीर्त्ति हुई तथा सब पृथ्वी तुम्हारे हस्तगत होरही है। ये अचिन्तनीय नारायण तुम्हारे नाथ और गति हैं, इस ही निमित्त तुमने अध्वर्य्यु के निकट रहके राजाओंको युद्धरूपी अग्निमें प्रलयानल सदृश कृष्णरूपी स्रुवासे आहुति प्रदान की है। जिस दुर्ब्बुद्धिने क्रोधवशसे हरिको गाण्डीवमूर्त्ति धारण कराई थी, उस दुर्य्योधनको ही पुत्र, भ्राता और बान्धवोंके सहित शोचनीय दशा हुई है। महाकाय महाबली दैत्य और दानवेन्द्रगण दावानलमें शलभ समूहकी भांति जिसके चक्राग्निके बीच नष्ट होगये; पराक्रम, शक्ति और बलहीन मनुष्योंके बीच उसके सङ्ग प्रतियुद्ध करनेवाला कोई भी नहीं है। हे महाराज! जयरूपी धनञ्जय सव्यसाचीने प्रलयकालकी अग्निसदृश युद्धमें अग्रगामी होकर निज तेज प्रभावसे दुर्योधनकी सारी सेनाका नाश किया है।

हिमालय पर्व्वतपर वृषभध्वजने मुनियोंसे जो पुराण कहा था, उसे मैं कहता हूं, सुनो। तेज, वीर्य्य और पराक्रमसे यदुवंशकी तुष्टि होती है; प्रभाव, सन्तति और जन्म, ये तीनों गुण कृष्णमें विद्यमान हैं, यदि ऐसा हो, तो कौन इसे अन्यथा करनेमें समर्थ होगा, इसलिये उस विषयको सुनो। जिस स्थानमें भगवान् कृष्ण निवास करते हैं, वहांपर उत्तम पुष्टि विद्यमान रहती है। हम अल्पबुद्धि, पराधीन और अत्यन्त विह्वल हैं, इसलिये ज्ञानपूर्व्वक मृत्युके अक्षयपथमें शरणागत हुए हैं। तुम अत्यन्त ही सरलचित्त हो, पहले प्रतिज्ञा करके अन्तमें उस प्रतिज्ञाको पूरी करनेमें रत होकर राज्य लेनेसे विमुख हुए थे। हे अरिन्दम महाराज! इस लोकके बीच तुम अपने वचनका बहुमान किया करते हो; तथापि जो प्रतिज्ञा करते हो, उसे अन्यथा नहीं कर सकते। ये सब लोग कालके सहारे रणभूमिमें मारे गये हैं, हम भी कालसे ही हत हुए हैं, इसलिये काल ही परमेश्वर है। तुम कालज्ञ हो, इसलिये कालसे स्पृष्ट होकर तुम्हें शोक करना उचित नहीं है। कालरक्तसदृश लालनेत्र कृष्णवर्ण दण्डधारी है और सबको हरता है, इस ही लिये उसका हरि नाम है। हे कौरववंशवर्द्धन कुन्तीनन्दन! इसलिये अब तुम स्वजनोंके लिये शोक मत करो; सदा शोकरहित रहो। यह माधवका माहात्म्य जो मैंने कहा, उसे तुमने सुना, सज्जनोंके निदर्शनमें वह पर्य्याप्त है। हे महाराज! व्यासदेवका वचन तथा बुद्धिमान नारद मुनिके उपदेशके अनुसार और पूजनीय कृष्णकी कथा सुनके मैंने ऋषिसमूहका उत्तम महान् प्रभाव वर्णन किया है। हे भारत! शैलसुताके सहित महादेवका सम्वाद भी कहा गया। हे राजन्! जो मनुष्य इस महापुरुष सम्भव विषयको कहता, सुनता अथवा धारण करता है, उसका परम कल्याण होता है। उसकी यथाभिलषित सब कामना

पूरी होती और वह मनुष्य परलोकमें जाकर निःसन्देह स्वर्ग सुख भोगता है। कल्याणकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंको चाहिये, कि जनार्दनको जानें, हे महाराज! ब्राह्मण लोग इस अक्षय जनार्द्दनकी स्तुति किया करते हैं। हे कुरुराज! जो सब धर्म्म महेश्वरके मुखसे बाहिर हुए थे, तुम अहोरात्र मन ही मन उन धर्म्मोंको धारण करना। इस ही प्रकार तुम पूरी रीतिसे दण्डधारी होके वर्तमान रहने और दृढ़ता प्रकाशित करनेपर स्वर्गलोकमें गमन करोगे। हे महाराज! तुम धर्म्मपूर्व्वक प्रजाकी रक्षा करनेमें समर्थ हो, प्रजाकी रक्षाके लिये जो विपुल दण्ड विहित होता है, वही सम्यक् धर्म्मरूपसे वर्णित हुआ करता है। हे महाराज! मैंने सज्जनोंके निकट जो यह उमाके सहित महादेवका धर्म्मसंयुक्त सम्वाद वर्णन किया है, उसे सुनकर तथा सुननेके अभिलाषी होके जो लोग अपनी उन्नतिकी इच्छा करते हैं, वे पवित्र चित्तसे वृषभध्वजकी पूजा करें। हे पाण्डव! यह उस अनिन्दित महानुभाव नारदमुनिका देवपूजाई सन्देश बा .य है, इसलिये तुम उसे प्रतिपालन करो। हे महाराज कुन्तीनन्दन! पवित्र हिमालयमें वासुदेव और महादेवकी यह अप्राकृतिक घटना अत्यन्त अद्भुत हुई थी; इस शाश्वत वासुदेवने बदरिकाश्रममें दश सहस्र वर्षतक विपुल तपस्या करी थी। हे महाराज! ये पुण्डरीकाक्ष वासुदेव और धनञ्जय त्रेतायुगसे नारद तथा व्यासदेवके द्वारा मुझे विदित हैं। इस महाबाहु महातेजस्वी पुण्डरीकाक्षने बाल्य अवस्थामें ही स्वजनोंके परित्राणके निमित्त कंसका महत् बधकार्य्य साधन किया था। हे कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर! मैं इस शाश्वत पुराण पुरुषके कर्म्मोंकी संख्या करनेका उत्साह नहीं करता। हे तात! ये पुरुषपुङ्गव जनार्द्दन जब तुम्हारे सखा हैं, तब अवश्य ही तुम्हारा परम मङ्गल होगा। और दुर्ब्बुद्धि दुर्योधन स्वर्गमें गया है, तौभी मैं उसके निमित्त शोक करता हूं, जिसके कारण यह समस्त महिमण्डल घोड़ों और हाथियोंके सहित विनष्ट हुआ है, दुर्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासन, इन चारोंके अपराधसे सारा कुरुकुल निर्म्मूल हुआ है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुष श्रेष्ठ गङ्गानन्दन भीष्मके ऐसा कहनेपर युधिष्ठिर उन सब महात्माओंके बीच चुप हो रहे। धृतराष्ट्र प्रभृति सब राजा इस कथाको सुनके विस्मित हुए और मनही मन हाथ जोड़के कृष्णकी पूजा की। नारद प्रभृति ऋषियोंने भीष्मका वचन प्रतिग्रह करके उनका सम्मान तथा अभिनन्दन किया। पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित यह उत्तम महाश्चर्य्य पवित्र भीष्मानुशासन इस ही प्रकार सुना था। बहुतसी दक्षिणा देनेवाले भीष्मदेवके विश्राम करनेके अनन्तर पृथ्वीपति महाबुद्धिमान् युधिष्ठिरने उनसे फिर प्रश्न किया।

१४८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, युधिष्ठिरने अशेष रीतिसे सब धर्म्मों और पवित्र विषयोंको सुननेके अनन्तर शान्तनुनन्दनसे फिर प्रश्न किया।

युधिष्ठिर बोले, मनुष्य वृन्द किस देव वा किस परम आश्रयकी स्तुति तथा पूजा करते हुए इस लोकमें शुभ लाभ करते हैं? सब धर्म्मोंके बीच कौन सा धर्म्म परम श्रेष्ठरूपसे आपको सम्मत है? किसका जप करनेसे जीव संसाररूपी बन्धनसे छूटते हैं?

भीष्म बोले, पुरुष सदा जाग्रत होके देवोंके प्रभु अनन्त पुरुषोत्तमको सहस्र नामसे स्तुति करते हुए उस अव्यय पुरुषकी भक्तिपूर्व्वक पूजा करे। यजमान मनुष्य उस अनादिनिधन सर्व्वलोक महेश्वर विष्णुका ध्यान स्तुति करते हुए उन्हें नमस्कार करे। उस लोकाध्यक्ष नारायणकी सदा स्तुति करते हुए पुरुष सब दुःखोंको

अतिक्रम करता है। ब्रह्मण्य सर्व्वज्ञ, सर्व्वलोकोकीर्त्तिवर्द्धन, लोकनाथ, महद्भूत और सर्व्वभूतोंकी उत्पत्तिके कारण नारायणकी स्तुति करे; यह धर्म्म ही सब धर्म्मोंसे श्रेष्ठ और यही मुझे अभिमत है; जिस धर्म्मके विषयमें मनुष्य सदा भक्ति पूर्व्वक स्तुति करते हुए भगवानका पूजन करते हैं। जो परम महत् तेज, जो परम महत् तप, जो परम महत् ब्रह्म तथा जो परम परायण है, जो सब पवित्र पदार्थोंके बीच पवित्र, जो सब मङ्गलोंका मङ्गल, जो देवताओंका देवता और भूतोंका अव्यय पिता है। हे पृथ्वीनाथ ! जिससे आदियुगमें सब प्राणी उत्पन्न होके युगक्षयमें जिसमें फिर लीन होते हैं, उस लोकप्रधान जगन्नाथ विष्णुका सहस्र नाम सुनो, महान्भाव नारायणके जो गौण नाम विख्यात हैं तथा ऋषियोंके द्वारा वर्णित हुए हैं, वे सब नाम चतुर्व्वर्ग फल प्राप्तिके हेतु हैं; उन्हीं नामोंका वर्णन करता हूं,—

वह विश्वको सृष्टि करके उसमें अनुप्रविष्ट है, इन्होंसे विश्व १, सर्व्वव्यापी होनेसे विष्णु २, वषट्कार मन्त्रस्वरूप ३, भूत भविष्य और वर्त्तमान-कालके प्रभु ४, भूत कर्त्ता होनेसे भूतकृत ५, भूतोंका पालन करता है, इसही निमित्त भूतभृत ६, भावस्वरूप ७, भूतोंका अन्तर्य्यामी होनेसे भूतात्मा ८, भूतोंका उत्पादक होनेसे भूतभावन ९, निर्गुण होनेसे पूतात्मा १०, परमात्मा ११, मुक्त पुरुषोंकी परमगति १२, अव्यय १३, अखिल कर्म्मफलदाता है, इसलिये पुरुषसाक्षी १४, द्रष्टा है, इसलिये क्षेत्रज्ञ १५, क्षर १६, मनके सहित ज्ञानेन्द्रियोंको संयत करके क्षेत्रज्ञ और परमात्माके एकत्व भावना योगसे प्राप्य है, इसही हेतु योग १७, योगवित्जनोंका नेता १८, प्रकृति और पुरुषका नियन्ता है, इसही निमित्त प्रधान पुरुषेश्वर १९, नरसिंहवपु २०, श्रीमान् २१, लम्बे केशोंसेयुक्त है, इसही निमित्त केशव २२, चराचर दोनोंसे उत्तम है, इसीलिये पुरुषोत्तम २३,। कारण रूपसे अनुगत है, इसीलिये सर्व्व २४, सबको हिंसा करता है, इसही हेतु शर्व्व २५, सब कोई उसमें शयन करते हैं, इसही निमित्त शिव २६, स्थिर है इसहीसे स्थाणु २७, भूतादिकोंकी अव्ययनिधि २८, धर्म्मस्थापन करनेके लिये प्रति युगमें उत्पन्न होता है, इसही लिये सम्भव २९, सब भोक्ता पुरुषोंको फल देनेवाला है, इसी हेतु भावन ३०, प्रपञ्चजगतके अधिष्ठान रूपसे भर्त्ता ३१, जगदुत्पत्तिके कारण होनेसे प्रभव ३२। सर्व्वशक्तिमान होनेसे प्रभु ३३, सबका नियन्ता होनेसे ईश्वर ३४, स्वयम्भू ३५, भक्तोंके सुखका विधान करता है, इसहीलिये सम्भु ३६, अदितके पुत्रहोनेसे आदित्य ३७, कमलके समान नेत्र हैं, इसीसे पुष्कराक्ष ३८, मेरे भक्त विनष्ट न हों इत्यादि वेद उसका वचन है, इस ही निमित्त महास्वन ३९, उसका जन्म और विनाश नहीं है, इसीलिये अनादिनिधन ४०, अनन्तरूपसे जगतको धारण करनेसे धाता ४१, कर्म्म और कर्म्मफलोंका विधान करनेसे विधाता ४२, विरञ्चिसेभी श्रेष्ठ है, इसलिये ईधातुरुत्तम ४३, प्रत्यक्ष अनुमान और उपमान अर्थापत्ति अनुपलब्धि प्रभृति शास्त्रीय प्रमाणोंसे उसे जाना नहीं जाता इसही निमित्त अप्रमेय ४४, इन्द्रियोंका ईश्वर होनेसे हृषीकेश ४५, जगत्कारण पद्म उसके नाभीमें विद्यमान है, इसहीं लिये पद्मनाभ ४६, अमरणधर्म्म विशिष्ट देवताओंका ईश्वर होनेसे अमरप्रभ ४७, जगतकी रचना करता है, इसलिये विश्वकर्म्मा ४८, मननशील होनेसे मनु ४९, प्रलयके समय जगतका नाश करता है, इसीसे त्वष्टा ५०, अत्यन्त स्थूल होनेसे स्थविष्ट ५१, स्थिरत्व प्रयुक्त स्थविर ५२, निश्चय है, इसलिये ध्रुव ५३, मनके सहित वचनसे अथवा बलपूर्व्वक उसे ग्रहण नहीं किया जाता, इसही निमित्त अग्राह्य ५४, शाश्वत् अर्थात् सब समयमें स्थायी रहनेसे

शाश्वत् ५५, देखते ही स्त्रियोंका मन हरता अथवा कृष्णवर्ण है, इसीलिये कृष्ण ५६, लोहितनेत्र होनेसे लोहिताक्ष ५७, प्रलयकालमें विश्वसंसारका नाश करता है, इस ही निमित्त प्रतर्द्दन ५८, ज्ञान ऐश्वर्य्य आदि गुणोंसे युक्त है, इस ही निमित्त प्रभूत ५९, ऊर्द्ध, अध और मध्यभेदसे तीनों धाम है, इस ही हेतु त्रिककुद्धाम ६०, पवित्र ६१, परम मङ्गल ६२, सर्व्वभूतोंका नियन्ता होनेसे ईशान ६३, प्राणप्रदाता होनेसे प्राणद ६४, सब प्राणियोंको जीवन स्वरूपहोनेसे प्राण ६५, अत्यन्त वृद्ध है, इस ही निमित्त जेष्ठ ६६, अत्यन्त प्रशस्त होनेसे श्रेष्ठ ६७, प्रजापति ६८, विरञ्चिस्वरूपसे अथवा हिरण्मयान्तर्व्वर्त्ती होनेसे हिरण्यगर्भ ६९, पृथिवीका कारण है अर्थात् पृथिवी उसके गर्भमें है, इसलिये भूगर्भ ७०, माधव ७१, मधुसूदन ७२, अणिमा आदि आठ प्रकारके ऐश्वर्य्योंसे युक्त है, इसलिये ईश्वर ७३, विक्रमी ७४, धन्वी ७५, मेधावी ७६, वि अर्थात् गरुड़पक्षीके द्वारा गमन करता है, इसलिये विक्रम ७७, जगत्को आक्रमण कर रहा है, इसही निमित्त क्रम ७८, उससे दूसरा कोई उत्तम नहीं है, इसीसे अनुत्तम ७९, शत्रुओंसे दुराक्रमणीय होनेसे दुराधर्ष ८०, प्राणियोंके पुण्य पाप-जनित सब कर्म्मोंको जाननेसे कृतज्ञ ८१, पुरुष प्रयत्नस्वरूप है, इस ही हेतु कृति ८२, निज महिमासे प्रतिष्ठित है, इसलिये आत्मवान् ८३, सुरेश ८४, दुःख नाश करनेसे शरण ८५, सुखस्वरूप होनेसे शर्म्म ८६, विश्व ही उसका वीर्य्यस्वरूप कार्य्य है, इसलिये विश्वरेता ८७, प्रजाको उत्पत्तिका कारण है, इसलिये प्रजाभव ८८, दिनकी भांति प्रकाशरूप है, इसही निमित्त अह ८९, अखण्ड कालरूप होनेसे सम्वत्सर ९०, बन्धनहीन है, इस ही हेतु व्याल ९१, ज्ञानस्वरूप होनेसे प्रत्यय ९२, अपने भक्तोंको देखता है, इसलिये सर्व्व दर्शन ९३, जन्मरहित होनेसे अज ९४, ईश्वरोंका भी ईश्वर है, इसलिये सर्व्वेश्वर ९५, नित्य निष्पन्नरूप होनेसे सिद्ध ९६, ज्ञप्तिरूप होनेसे सिद्धि ९७, सर्व्वभूतोंका कारण है, इस ही निमित्त सर्व्वादि ९८, निज रूपसे च्युत नहीं होता, इस ही लिये अच्युत ९९, समस्त कामनाओंकी वर्षा करता है, इस ही लिये वृष अर्थात् धर्म्म और वराह अवतार रूपसे कपि है, इस ही लिये वृषाकपि १००, उसका स्वरूप बुद्धिसे जाना नहीं जाता, इस ही हेतु अमेयात्मा १०१, सब सम्बन्धोंसे पृथक् असङ्ग पुरुष है, इसलिये सर्व्वयोगोविनिःसृत १०२, वसु सब भूतोंमें वास करता है, इसलिये वसु १०३, सङ्ग आदि क्लेशोंसे उसका मन दूषित नहीं होता, इस ही निमित्त वसुमना १०४, सत्यरूप होनेसे सत्य १०५, एकात्मा होनेसे समात्मा १०६, अपरिच्छिन्न है, इसलिये असम्मित १०७, सब समयमें विकाररहित होनेसे सम १०८, सत्यसङ्कल्प होनेसे अमोघ १०९, हृदयाख्य पुण्डरीकमें व्याप्त है, इसलिये पुण्डरीकाक्ष ११०, उसके सब कर्म्म धर्म्ममय हैं, इस हेतु वृषकर्म्मा १११, धर्म्म अर्थ ग्रहण करनेसे ही वृषाकृति ११२, शिवके सहित अभिन्न है तथा संहारके समय प्रजा समूहको रुलाता है, इस ही निमित्त रुद्र ११३, सहस्र शीर्षा पुरुष है, इस ही हेतु बहुशिरा ११४, सब लोकोंको धारण कर रहा है, इस ही निमित्त बभ्रु ११५, विश्वयोनि ११६, उसके सब नाम पवित्र हैं, इसलिये शुचिश्रवा ११७, उसकी मृत्यु नहीं होती, इसलिये अमृत ११८, सब समय और सब स्थानोंमें रहनेसे शाश्वत ११९, स्थाणु १२०, उसमें आरोहण करना ही श्रेष्ठ है, क्यों कि उसे पानेसे पुनरावृत्ति नहीं होती, इस ही निमित्त वरारोह १२१, सब विषयोंका उसे ज्ञान है, इसलिये महातपा १२२, सर्व्वग १२३, हरएक विषयोंको जाननेवाला तथा प्रकाशमान होनेसे सर्व्व विद्वान् १२४, जरासन्ध प्रभृतिकी सेना उसकी

द्वारा सब दिशाओंमें भगाई गई थी, इस ही निमित्त विष्वक्सेन १२५, दस्युओंको पीड़ित करनेसे जनार्द्दन १२६, ज्ञानदीपस्वरूप होनेसे वेद १२७, अर्थ और पाठक्रमसे वह वेदोंको जानता है, इसलिये वेदवित् १२८, वह सर्व्वावयव सम्पन्न है, इसलिये अव्यङ्ग १२९, वेदाङ्ग स्वरूप १३०, वेद लाभ करनेसे वेदवित् १३१, अतिक्रान्त दर्शी होनेसे कवि १३२, लोकोंको प्रत्यक्ष करता है, इसलिये लोकाध्यक्ष १३३, इन्द्र आदि देवताओंका अधिपति है, इसलिये सुराध्यक्ष १३४, धर्म्माध्यक्ष १३५, कार्य्य कारणरूपसे कृताकृत १३६, सृष्टिके प्रारम्भमें पृथक् पृथक् चतुर्व्विध ब्रह्मा दक्षादिरूपसे चतुरात्मा १३७, वासुदेव, सङ्कर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध रूपसे चतुर्व्यूह १३८, नृसिंहरूपसे चतुर्दंष्ट्र १३९, चतुर्भुज १४०। अत्यन्त दीप्तिमान होनेसे भ्राजिष्णु १४१, भोज्यरूपसे भोजन १४२, भोजनकर्त्ता होनेसे भोक्ता १४३, सहनशील होनेसे सहिष्णु १४४, हिरण्यगर्भ रूपसे जगत्के आदिकालमें जन्म लेनेसे जगदादिज १४५, निष्पाप होनेसे अनघ १४६, ज्ञान वैराग्य प्रभृति ऐश्वर्य्योंके द्वारा जययुक्त होनेसे विजय १४७, सबसे उत्कृष्ट है, इसलिये जेता १४८, विश्वयोनिमें बार बार अवतार लेके वास करता है, इसलिये पुनर्व्वसु १४९। उपेन्द्र १५०, वामन १५१, वामनरूपसे तीनों लोकोंको आक्रमण किया, इसलिये प्रांशु १५२, अमोघ १५३, अत्यन्त पवित्र होनेसे शुचि १५४, गोवर्द्धनादि धारण करनेसे ऊर्ज्जित १५५, कल्पवृक्ष हरण आदि कार्य्योंमें इन्द्रको अतिक्रम करनेसे अतीन्द्र १५६, भक्तोंका संग्रह करता है, इसलिये संग्रह १५७ कार्य्यरूपसे उत्पन्न होता है, इस ही हेतु सर्ग १५८, एक रूपसे जन्मादि रहित है, इसलिये धृतात्मा १५९, प्रजा समूहको निज निज अधिकारमें नियमित करनेसे नियम १६०, अन्तर्यामी प्रयुक्त यम १६१। अज्ञात प्रयुक्त वेदनाई है, इसलिये वैद्य १६२, सब विद्या अध्ययन करता है, इस ही निमित्त वैद्य १६३, सर्व्व क्रियामें कर्त्तृत्वके रहते भी यथार्थमें अकर्त्तृत्व प्रयुक्त होनेसे महायोगी १६४, दैत्यदलनाशक होनेसे वीरहा १६५, भगवद्विद्याका ईश्वर है, इसलिये माधव १६६, वसन्तकी भांति प्रीतपद होनेसे मधु १६७, इन्द्रियोंके अगोचर होनेसे अतीन्द्रिय १६८, अत्यन्त कृपावान् होनेसे महामाय १६९, महोत्साह १७०, बाल्यकालमें पूतना आदि वध करनेके समय अत्यन्त बल प्रकाशित किया था, इसलिये महाबल १७१। महाबुद्धि १७२, महावीर्य्य १७३, महाशक्ति १७४, महाद्युति ७५ यह है, वह है, इत्यादि रूपसे उसका निरूपण नहीं होता, इसलिये अनिर्देश्य वपु १७६, श्रीमान् १७७, अमेयात्मा १७८, पृथ्वी, गोवर्द्धन तथा मन्दर पर्व्वतको धारण किया था, इसलिये महाद्रिधृत् १७९, महाधनुर्धारी होनेसे महेष्वास १८०, महीभर्त्ता १८१, श्रीनिवास १८२, साधुओंका अवलम्ब होनेसे सतांगति १८३ कोई शत्रु उसे रोकनेमें समर्थ नहीं है, इसलिये अनिरुद्ध १८४, देवताओंको आनन्दित करता है, इसलिये सुरानन्द १८५, पहले समयमें पृथ्वीका उद्धार किया था, इसलिये गोविन्द १८६, वेदवादियोंको विशेषरूपसे पालन करता है, इस ही निमित्त गोविदांपति १८७। दुष्ट लोग उसके द्वारा विनष्ट होते हैं, इसलिये मरीचि १८८, वह दुष्टोंको शासन करता है, इस ही निमित्त दमन १८९, शुद्धत्व प्रयुक्त हंसकी भांति अथवा संसारबन्धनको काटता है, इसीसे हंसपक्षीकी भांति सुपर्ण १९०, शेषरूप होनेसे भुजगोत्तम १९१, सुवर्णकी भांति प्रकाशमान ब्रह्माण्ड उसके नाभिस्थानमें वर्त्तमान है, इसलिये हिरण्यनाभ १९२, नरनारायण रूपसे सुतपा १९३, पद्मनाभ, १९४ प्रजापति १९५, अमृत्यु १९६, सर्व्वदर्शी होनेसे सर्व्वदृक् १९७, दन्तवक्र आदि दुष्ट दस्युगणको मारनेसे

सिंह १९८, सन्धिकर्त्ता होनेसे सन्धाता १९९, सन्धिमान २००, भक्तोंके अन्तःकरणमें स्थिरताके सहित स्थित रहनेसे स्थिर २०१। शिशुपालके बधके लिये चक्र चलाया था, इसही हेतु अज २०२. दुःखसे उसे सहन किया जाता है, इसलिये दुर्म्मर्षण २०३, दुष्टोंको दण्ड देता है, इसही निमित्त शास्ता २०४, शास्त्र प्रसिद्ध बिराट देहधारी है, इस हेतु विश्रुतात्मा २०५, सुरारिहा २०६, भक्तियोग उपदेश करनेसे गुरु २०७। उपदेष्टा पुरुषोंके बीच श्रेष्ठ है, इसलिये गुरुत्तम २०८, सबको धारण करनेसे धाम २०९, त्रिकाल बाधारहित होनेसे सत्य २१०, अप्रतिहत सामर्थयुक्त है, इस ही निमित्त सत्यपराक्रम २११, विशेष रीतिसे दर्शन करनेसे निमिष २१२. निमेषहीन होनेसे अनिमिष २१३, वैजयन्ती माला धारण करनेसे स्रग्वी २१४, वाक्यके अधिपति होनेसे वाचस्पति २१५, महाबुद्धि हेतुसे उदारधी २१६। सबसे पहले पूजनीय है, इसलिये अग्रणी २१७, मथुरा ग्रामसे सब लोगोंको द्वारकामें लेजानेसे ग्रामणी २१८, श्रीमान् २१९, श्रुति, स्मृति और पुराणोंके तात्पर्य्यको विशेष रीतिसे जानता है, इसलिये न्याय २२०, धर्म्मफल प्रापक है, इसलिये नेता २२१, सम्यक् रीतिसे उसका ईरण अर्थात् भाषण होता है, इस ही निमित्त समीरण २२२, बिराटरूप होनेसे सहस्र मूर्द्धा २२३, बिश्वात्मा २२४, सहस्राक्ष २२५, सहस्रपात २२६। धर्म्म रक्षाके निमित्त बार बार उत्पन्न होता है, इसलिये आवर्त्तन २२७ उसका चित्त परम वैराग्ययुक्त है, इस ही निमित्त निवृत्तात्मा २२८, योगमायासे परिपूरित रहनेसे संवृत्त २२९, दुष्टोंको मर्द्दन करता है, इसलिये सम्प्रमर्द्दन २३०, सूर्य्यरूपसे दिनका प्रवर्त्तक है, इस ही हेतु अह २३१, सम्प्रवर्त्तक अग्निरूपसे देवताओंका हवि ढोता है, इसी हेतु बह्नि २३२, कंसको जीतकर उग्रसेनको पृथ्वी दान करनेसे उसके इला अर्थात् भूमि न थी, इस ही निमित्त अनिल २३३, अनन्त अथवा बराहरूपसे भूभार धारण करता है, इस ही हेतु धरणीधर २३४। उसकी प्रसन्नतासे सब प्रकारके आलस दूर होते हैं, इसलिये सुप्रसाद २३५, भक्तोंके अपराध करनेपर भी उसका चित्त अप्रसन्न नहीं होता, इसलिये प्रसन्नात्मा २३६, विश्वधृक् २३७, विश्वभुक् २३८, बिबिध रूप धारण करनेसे विभु २३९, धर्म्मरक्षाके हेतु गोब्राह्मणोंका सत्कार करता है, इस ही निमित्त सत्कर्त्ता २४०, पूजित पुरुषोंसेभी पूजनीय होनेसे सत्कृत २४१, न्यायकार्य्यसे दूसरोंका कार्य्य सिद्ध करता है, इसलिये साधु २४२, संहारसमयमें प्राणियोंको हरण करनेसे जह्नु २४३, प्रलयकालमें नारा अर्थात् जल ही उसका अयन अर्थात् आश्रय था, इस ही हेतु नारायण २४४, सनातन परमात्मा होनेसे नर २४५। अनिर्व्वचनीय होनेसे असंख्येय २४६, अप्रमेयात्मा २४७, सबसे उत्कृष्ट होनेसे विशिष्ट २४८ वेदोक्त कर्म्म करता है, इसलिये शिष्टकृत् २४९, शुचि २५०, सिद्धार्थ २५१, सिद्धसङ्कल्प २५२, सिद्धिद २५३, त्रैवर्गिक फल साधन करनेसे सिद्धिसाधन २५४, धर्म्मयुक्त द्वादश अह्न अर्थात् दिवस विशिष्ट होनेसे वृषाहि २५५, अभिलषित विषय दान करता है, इसलिये वृषभ २५६, चरण संक्रमणसे जगत्को वेष्टन कर रहा है, इस हेतु विष्णु २५७, धर्म्म ही उसका सोपान होनेसे वृषपर्व्वा २५८, धर्म्म उसके उदरमें विद्यमान है, इसलिये वृषोदर २५९, भक्तोंके किये हुए अल्प विषयोंकी भी वृद्धि करता है, इसलिये वर्द्धन २६०, वर्द्धमान २६१, पवित्र होनेसे बिविक्त २६२, वेदोंके तात्पर्य्यका विषय होनेसे श्रुतिसागर २६३। सुभुज २६४, दुर्द्धर २६५, वाग्मी २६६, महेन्द्र २६७, बसुद २६८, बसु २६९, नैकरूप २७०, वृहद्रूप २७१, शिपिविष्ट २७२, प्रकाशन २७३, ओज बल तेज प्रताप द्युति तथा देहकान्ति धारण करता

है, इस ही निमित्त ओजस्तेज द्युतिधर २७४, प्रकाशात्मा २७५, प्रतापन २७६, परिपूर्ण होनेसे ऋद्ध २७७, स्पष्ट २७८, अक्षर २७९, मन्त्रके द्वारा बोधित होनेसे मन्त्र २८०, चन्द्रांशु-भास्कर द्युति २८१। समुद्र मथके चन्द्रमाको उत्पन्न करनेसे अमृतांशूद्भव २८२, दीप्तिमान होनेसे भानु २८३, शशसदृश अनेक प्रकार लक्षणोंसे युक्त होनेसे शशविन्दु २८४, सुरेश्वर २८५, संसाररोग निवर्त्तक होनेसे औषध २८६, जगत्‌में सेतुरूपी होनेसे जगत्सेतु २८७, सत्यधर्म्म-पराक्रम २८८, भूतभव्य २८९, भवन्नाथ २९०, पवन २९१, पावन २९२, अनल २९३, भक्तोंको अपना रूप प्रदान करके उनके कामका विनाश करता है, इस-लिये कामहा २९४, प्रद्युम्नका उत्पादक होनेसे कामकृत् कान्त २९५, मुमुक्षुजनोंका काम्यकाम २९६, कामप्रद २९७, दिव्यरूपसे प्रकट होनेसे प्रभु २९८, युगादिकृत २९९, चारों युगोंका आव-र्त्तन करता है, इसलिये युगावर्त ३००, नैकमाय ३०१ महाशन ३०२, अदृश्य ३०३, अव्यक्तस्वरूप ३०४, सहस्राजित् ३०५, अनन्तजित् ३०६, पर-मानन्दस्वरूप युक्त अथवा सबसे पूजित होनेसे इष्ट ३०७, सर्व्वात्मयोंमें सर्वाङ्ग रूपसे विशिष्ट ३०८, शिष्टोंका इष्ट होनेसे शिष्टेष्ट ३०९, मयूर-पूंछसे युक्त होनेसे शिखण्डी ३१०, मायासे भूतोंको बद्ध करता है, इसलिये नहुष ३११, अभिलषित विषयोंकी वर्षा करता है, इसलिये वृष ३१२, भक्तोंके क्रोधको विनष्ट करनेसे क्रोधहा ३१३, दुष्टोंके विषयमें क्रोध करता है, इस ही निमित्त क्रोधकृत ३१४, कार्य्यमात्रके कर्तृत्व युक्त होनेसे कर्त्ता ३१५, विश्वबाहु ३१६, महीधर ३१७, अच्युत ३१८, प्रथित ३१९, प्राण ३२०, प्राणद ३२१, वासवानुज ३२२, अपां-निधि ३२३, अधिष्ठान ३२४, अप्रमत्त ३२५, निज महिमामें स्थित रहनेसे प्रतिष्ठित ३२६, वायु-रूपसे शोषण करनेसे स्कन्द ३२७, वायुकी धारणा करनेसे स्कन्दधर ३२८, जगत्‌का भार उठाता है, इसलिये धूर्य्य ३२९, अभिलषित पदार्थोंके दान करनेसे वरद ३३०, वायुकी भांति वेगवान् विनतानन्दन गरुड़ उसका वाहन है, इस ही निमित्त वायुवाहन ३३१, वसुदेवके पुत्र होनेसे वासुदेव ३३२, चन्द्र और सूर्य्यरूपसे वृहद्भानु ३३३, आदिदेव ३३४, शत्रुपुर विदारण करनेसे पुरन्दर ३३५, अशोक ३३६, तारण ३३७, शत्रु-ओंका भी उद्धार करता है, इसलिये तार ३३८, पराक्रमयुक्त होनेसे शूर ३३९, शूरके सन्तान होनेसे शौरि ३४०, जनेश्वर ३४१, अनुकूल ३४२, वह सैकड़ों बार प्रकट होता है, इसलिये शता-वर्त्त ३४३, हाथमें पद्मधारण करनेसे पद्मी ३४४, पद्मनिभेक्षण ३४५। पद्मनाभ ३४६, अरविन्दाक्ष ३४७, पद्मगर्भ अन्नरूपसे शरीर पोषण करता है, इस ही निमित्त शरीरभृत् ३४८, उसके महती सम्पत्ति है, इसलिये महर्द्धि ३४९, प्रपञ्च रूपसे वृद्धरूपी है, इसलिये ऋद्ध ३५०, पुरातन आत्मा होनेसे वृद्धात्मा ३५१, महाक्ष, ३५२, गरु-ड़ध्वज ३५३, उसकी उपमा नहीं है, इसलिये अतुल ३५४, शरीरके बीच प्रत्यागात्म रूपसे प्रकाशमान है, इस ही निमित्त शरभ ३५५, उससे सब कोई डरते हैं, इसीसे भीम ३५६, समयज्ञ ३५७, हवनीय रूपसे हवि ३५८, समस्त पाप हरनेसे हरि ३५९, सब शास्त्रोंका तात्पर्य्य विषय होनेसे सर्व्वलक्षण लक्षण्य ३६०, लक्ष्मीवान् ३६१, समर विजयी होनेसे समितिञ्जय ३६२। उसका विनाश नहीं है, इसलिये विक्षर ३६३, मत्स्य-रूप धारण करनेसे रोहित ३६४, भक्तोंका अन्वेषणीय है, इसलिये मार्ग ३६५, निमित्त-उपादान, दोनों कारणरूप होनेसे हेतु ३६६, रज्जुसे बद्ध होनेसे उदरमें उस चिन्हको धा-रण करता है, इसलिये दामोदर ३६७, सब कुछ सहता है, इस हेतु सह ३६८, गिरिरूपसे महीधर ३६९, परम भाग्यवान् होनेसे महाभाग ३७०, वेगवान् ३७१, सर्व्वसंहर्त्ता होनेसे अमिता-शन ३७२, उससे संसार उत्पन्न हुआ है, इस-

लिये उद्भव ३७३, शत्रुओंको चुब्ध करनेसे चोभण ३७४, क्रोड़ा करता है, इसलिये देव ३७५, जगत्‌रूपी बिभूति उसके उदरमें बिद्यमान है, इसलिये श्रीगर्भ ३७६, परमेश्वर ३७७, साधक तम होनेसे करण ३७८, कारण ३७९, कर्त्ता ३८०, बिकर्त्ता ३८१, दुर्ब्बिज्ञेय होनेसे गहन ३८२, स्वरूप सम्वरण करता है, इस ही निमित्त गुह ३८३, सम्बितरूपसे व्यवसाय ३८४, जगत् उसहीमें स्थित है, इसलये व्यवस्थान ३८५, उसमें ही सबकी समाप्ति होती है, इस लिये संस्थान ३८६, भक्तोंको बैकुण्ठ प्रभृति स्थान दान करता है, इस ही निमित्त स्थानद ३८७, अनेक कर्म्म कर्त्तृत्वयुक्त होनेपर भी स्वरूपसे निश्चल है, इसलिये ध्रुव ३८८, परम ऐश्वर्य्यशाली होनेसे परर्द्ध ३८९, स्वपकाश ज्ञानरूपसे परम स्पष्ट ३९०, परमानन्दरूप होनेसे तुष्ट ३९१, पूर्णत्वयुक्त होनेसे पुष्ट ३९२, शुभेक्षण ३९३, उसमें योगिजन रमण करते हैं, इसलिये राम ३९४, उसमें जगत्‌का ठहराव होता है, इसही निमित्त बिराम ३९५, रजोगुण-रहित होनेसे बिरज ३९६, पथ प्रदर्शक है, इसलिये मार्ग ३९७, भक्तजन उसे निज हृदयमें लेजा सकते हैं, इसलिये नेय ३९८, भक्तोंका अल्प उपहार भी ग्रहण करता है, इसलिये नय ३९९, अभक्तोंका दिया हुआ अधिक उपहार भी नहीं लेता, इसही निमित्त अनय ४००, युद्ध, दान, सत्य और दया बिषयमें बीर ४०१, शक्तिमान पुरुषोंके बीच श्रेष्ठ है, इसलिये शक्तिमतां श्रेष्ठ ४०२, धर्म्म बर्णन करता है, इसलिये धर्म्म ४०३, धर्म्मज्ञोंके बीच श्रेष्ठ है, इसलिये धर्म्म बिदुत्तम ४०४। जिनका कुण्ठा अर्थात् प्रतिघात बिगत हुआ है, वैसे भक्तोंका बाध्य है, इसलिये बैकुण्ठपुरुष ४०५, वेदरूप शब्दही उसका प्राण है, इसही हेतु प्राण ४०६, ब्रह्माको वेददान करनेसे प्राणद ४०७, प्रकृष्टरूपसे स्तवनीय है, इसलिये प्रणव ४०८, व्यापक होनेसे पृथु ४०९, प्रशस्त गर्व्वनिबन्धनसे हिरण्य गर्भ ४१०, शत्रुघ्न ४११, व्यापक होनेसे व्याप्त ४१२, सर्व्वत्र गमन करता है, इसलिये वायु ४१३, इन्द्रियजनित ज्ञान उसे प्रकाशित नहीं कर सकता, इसलिये अधोक्षज ४१४। वह ऋतुओंके बीच बसन्त है, इसलिये ऋतु ४१५, सुदर्शन ४१६, काल ४१७, सबसे श्रेष्ठ स्थानमें निवास करता है, इसही निमित्त परमेष्ठी ४१८, मुमुक्षुजन अन्य देवताओंको परित्याग करके उसे ग्रहण करते हैं, इसलिये परिग्रह ४१९, सदाशिवरूपसे उग्र ४२०, जो जैसा कर्म्म है, उसमें उस ही भांति पूरी रीतिसे बास करता है, इसलिये सम्वत्सर ४२१, सत्कर्म्मोंमें आलस रहित होनेसे दक्ष ४२२, जगत्‌को बिश्राम स्थान है, इसलिये बिश्राम ४२३, सब बिषयोंमें सरल होनेसे बिश्वदक्षिण ४२४। उसमें जगत् बिस्तीर्ण होरहा है, इसही निमित्त बिस्तार ४२५, सर्व्वत्र स्थितिशील होनेसे स्थावर ४२६, स्थिर होनेसे स्थाणु ४२७, प्रमाता सत्यबादी है, इसलिये प्रमाण ४२८, अव्ययबीज ४२९, प्रार्थनीय होनेसे अर्थ ४३०, उससे बढ़के और कोई नहीं है, इसही निमित्त अनर्थ ४३१, आनन्दमय होनेसे महाकोश ४३२, महाभोग ४३३, महाधन ४३४। भक्तोंके कार्य्यमें निर्ब्बेदयुक्त नहीं होता, इसलिये अनिर्ब्बिस्म ४३५, अत्यन्त स्थूल होनेसे स्थविष्ट ४३६, सत्तारूपसे धर्म्मरूप सदृश है, इसलिये धर्म्मयूप ४३७, सबकाही महान् सखा है, इसलिये महासख ४३८, सुधाकर सदृश आनन्द जनक है, इसही हेतु नक्षत्रनेमि ४३९, उसके जन्म समयमें श्रेष्ठ नक्षत्र रहनेसे नक्षत्री ४४०, अल्प पूजा करनेसेही अपराध क्षमा करता है, इसलिये क्षम ४४१, भक्तोंके दुःखी होनेपर वह भक्तकी भांति कृश होता है, इसही हेतु क्षाम ४४२, उसकी सब चेष्टा पूर्ण रीतिसे सिद्ध होती है, इसलिये समीहन ४४३। राजसूय यज्ञमें पूज्य होनेसे यज्ञइज्य ४४४, उसकी महती पूजा हुआ करती है,

इस हेतु महेज्य ४४५, अनेक कार्य्य करता है, इसलिये क्रतु ४४६, सत्रकी भांति आचरण करता अथवा सत्रयाग स्वरूप है, इसही निमित्त सत्र ४४७, साधुओंकी गति है, इसी लिये सतांगति ४४८, सर्व्वदर्शी ४४९, विमुक्तात्मा ४५०, सर्व्वज्ञ ४५१, वृत्तिभिन्न ज्ञानरूप होनेसे उत्तम ज्ञान ४५२। सुव्रत ४५३, सुमुख ४५४, सूक्ष्म ४५५, सुघोष ४५६, सुखद ४५७, सुहृत् ४५८, मनोहर ४५९, जितक्रोध ४६०, वीरबाहु ४६१, विदारण ४६२। भक्तोंका उक्तात्मा समर्पण करनेसे स्वापन ४६३, स्ववश ४६४, व्यापी ४६५, अनेकोंकी आत्मा होनेसे नैकात्मा ४६६, बिबिधि कर्म्मोंको करता है, इसलिये नैककर्म्म-कृत् ४६७, गऊ और गोपियोंको वत्स दान कर नेसे वत्सर ४६८, भक्तोंके विषयमें स्नेहवान् होनेसे वत्सल ४६९, चरानेके लिये उसके बछड़े थे, इसलिये वत्सी ४७०, रत्नगर्भ ४७१, धनेश्वर ४७२, धर्म्मकी रक्षा करता है, इसलिये धर्म्म-गुप ४७३, धर्म्मवेत्ता होनेसे धर्म्मकृत् ४७४, धर्म्मी ४७५, सूक्ष्मरूपसे सत् ४७६, स्थूलरूपसे असत् ४७७, विनाशी होनेसे क्षर ४७८, अबि-नाशी भावसे अक्षर ४७९, ज्ञातरूप नहीं है; किन्तु ज्ञानरूप है; इसलिये अविज्ञात सहस्रांशु ४८०, विधाता, उसके सब लक्षण पर्य्याप्त हैं, इसलिये कृतलक्षण ४८१। सब उसका नाम-स्वरूप है, इसलिये गभस्तिनेमि ४८२, सत्त्वस्थ ४८३, अत्यन्त विक्रमशाली होनेसे सिंह ४८४, भूतोंके उत्सवका ईश्वर है, इसही निमित्त भूतमहेश्वर ४८५, आदिदेव ४८६, महादेव ४८७, देवेश ४८८, देवभृद्गुरु ४८९। सबसे श्रेष्ठ होनेसे उत्तर ४९०, गोपति ४९१, रक्षाकर्त्ता होनेसे गोप्ता ४९२, ज्ञानगम्य ४९३, पुरातन ४९४, शरीररूप भूतगणको धारण करता है, इसलिये शरीर भूतभृत ४९५, भोक्ता ४९६, सुग्रीवको परम ऐश्वर्य्यशाली किया था; इस-लिये कपीन्द्र ४९७, वह अनेक लोगोंके निकट सरल है, इसलिये भूरिदक्षिण ४९८। रघुनाथ रूपसे अनेक यज्ञ करके सोमपान किया था, इसही निमित्त सोमप ४९९, अमरगणकी रक्षा करनेसे अमृतप ५००, चन्द्रमाको भांति आन-न्दजनक होनेसे सोम ५०१, अनेक पुरुषोंको जीतनेसे पुरुजित ५०२, पुरुषोत्तम ५०३, विशेष नीति सम्पन्न होनेसे विनय ५०४, क्रोधादि जय करनेसे जय ५०५, सत्य सन्ध ५०६, दानपात्र अथवा दशार्ह वंशमें उत्पन्न होनेसे दाशार्ह ५०७, यादवोंका प्रभु है, इसही निमित्त सात्त्व-तांपति ५०८, जीव ५०९, विनयी लोगोंका विन-यिता साक्षी है, इससलिये विनयिता-साक्षी ५१०, मुक्तिदाता होनेसे मुकुन्द ५११, अमित-विक्रम ५१२, देवताओंकी निधिकी भांति उपा-देव है, इसलिये अम्भोनिधि ५१३, श्रीमान् अनन्त बलभद्रमें उसका चित्त सन्निविष्ट है, इस ही निमित्त अनन्तात्मा ५१४, महोदधिशय ५१५, अन्तक ५१६। अशुद्ध हृदयसे उत्पन्न नहीं होता, इसही लिये अज ५१७, महापूज्य होनेसे महार्ह ५१८, निज भक्तोंका चिन्तनीय होनसे स्वाभाव्य ५१९. जितामित्र ५२०, प्रमोदन ५२१, आनन्द ५२२; नन्दन ५२३, स्वयं समृद्धि सम्पन्न होनेसे नन्द ५२४, सत्यधर्म्मा ५२५. तीनों लोकोंके बीच गरुड़के सहारे गमन करता है, इसलिये त्रिविक्रम ५२६। महर्षि ५२७, कपि-लाचार्य्य ५२८, कृतकर्म्मोंको जानता है, इसलिये कृतज्ञ ५२९, रामावतारमें मेदिनीपति ५३०, त्रिपद ५३१, त्रिपशाध्यक्ष ५३२, महत् प्रभुत्वयुक्त होनेसे महाश्टङ्ग ५३३. सिद्धान्त कर्त्ता होनेसे कृतान्तकृत् ५३४। लोकोत्तर बाराह है, इसलिये महाबाराह ५३५, गऊ चरानेसे गोविन्द ५३६, सेनाके सहित भली भांति शत्रुयुद्धमें गमन करता है, इसही निमित्त सुषेण ५३७, स्वर्णमय केयूरधारी होनेसे कनकाङ्गदी ५३८, परम रह-स्यरूपसे गुह्य ५३९, गूढ़ाभिप्राय निबन्धनसे गभीर ५४०, दुष्प्रवेश होनेसे गहन ५४१, इन्द्रि-

योंका आग्राह्य होनेसे गुप्त ५४२, चक्रगदाधर ५४३। भक्तोंका हितसाधन करता है, इसलिये वेधा ५४४, स्वभक्तजन उसके अङ्ग हैं, इसलिये स्वाङ्ग ५४५, शत्रुगण उसे जोत नहीं सकते, इसही निमित्त अजित ५४६, कृष्णवर्ण होनेसे कृष्ण ५४७, समर्थ होनेसे दृढ़ ५४८, पूर्णरीतिसे भक्तोंका दुःख कर्षण करता है, इसलिये संकर्षण ५४९, अच्युत ५५०, अपनेको वरण करनेसे वरुण ५५१, वरुण लोकसे आगत होनेसे वारुण ५५२, संसारवृक्षको छेदन करता अथवा भक्तजनोंका कल्पतरु है, इसही हेतु वृक्ष ५५३, पुष्कराक्ष ५५४, उन्नतचित्त होनेसे महामना ५५५, समस्त ऐश्वर्य्य धर्म्म यश श्री ज्ञान और वैराग्य-विशिष्ट है, इसलिये भगवान् ५५६, प्रलयकालमें ऐश्वर्य्य नष्ट करता है, इसलिये भगहा ५५७, नित्यसुखी होनेसे आनन्द ५५८, वनमाली ५५९, हलायुध ५६०, अदितिका अपत्य होनेसे आदित्य ५६१, ज्योतिसमूहमें कोटि सूर्य्य सदृश है, इसलिये ज्योतिरादित्य ५६२, सहिष्णु ५६३, गतिसत्तम ५६४, सुधन्वा ५६५, उसका परशु शत्रुओंको खण्ड खण्ड करता है, इसलिये खण्डपरशु ५६६, विरोधियोंके विषयमें दारुण है, इसलिये दारुण ५६७, धनदाता होनेसे द्रविणप्रद ५६८, वावन अवतारमें द्युलोक आक्रमण करनेसे दिवस्पृक् ५६९, सर्व्वदर्शी ५७०, वेदव्यास रूपसे उत्पन्न हुए इसलिये व्यास ५७१, वाचस्पति ५७२, अयोनिज ५७३, वेदव्रत समाख्यात नामक तीनों साम उसके प्रतिपादक हैं, इसलिये त्रिसामा ५७४, वह ब्रह्मवित रूपसे सामगान करता है, इसही निमित्त साम ५७५, परमानन्द रूप होनेसे निर्व्वाण ५७६, अच्युतानन्द गोविन्द इत्यादि नामोंके उच्चारण करनेसे रोग नष्ट होता है। इसलिये भेषज ५७७, संसारतारक विद्याका उपदेशक होनेसे भिषक् ५७८, मोक्षके हेतु सन्न्यास किया करता है, इस ही निमित्त सन्न्यास सकृत् ५७९, सन्न्यासियोंकी शान्तिका विषय उपदेश करता है, इसलिये शम ५८०, सुखमें अनासक्त है, इसलिये शान्त ५८१, प्रलयकालमें सब भूत उसमें निवास करते हैं, इसही निमित्त निष्ठा ५८२, अविद्या निवृत्तिरूपसे शान्ति ५८३, पुनरावृत्तिरहित अवलम्ब होनेसे परायण ५८४, शुभाङ्ग ५८५, शान्तिद ५८६, स्रष्टा ५८७, पृथ्वी तलमें आमोदयुक्त होनेसे कुमुद ५८८, प्रलयकालमें जलमें शयन करता है, इस ही निमित्त कुवलेशय ५८९, गौवोंका हितकारी होनेसे गोहित ५९०, पृथिव्यादिका पति होनेसे गोपति ५९१, गोप्ता ५९२, धर्म्म ही उसका नेत्र है, इसलिये वृषभाक्ष ५९३, धर्म्म ही उसे प्रिय है, इस ही हेतु वृषप्रिय ५९४, कर्म्मोंसे निवृत्त नहीं होता, इस ही निमित्त अनिवर्त्ती ५९५, विषयोंसे उसका चित्त निवृत्त हुआ है, इसलिये निवृत्तात्मा ५९६, वेदोंके अर्थको गीतामें संक्षेप करनेसे संक्षेप्ता ५९७, उसे स्मरण करनेसे पवित्रता होती है, इस हेतु क्षेमकृत् शिव ५९८, श्रीवत्सवक्षा ५९९, श्रीवास ६००, श्रीपति ६०१, श्रीमतांवर ६०२, श्रीद ६०३, श्रीश ६०४, श्रीनिवास ६०५, श्रीनिधि ६०६, कर्म्मके अनुसार श्री प्रदान करनेसे श्रीविभावन ६०७, श्रीधर ६०८, श्रीकर ६०९, श्रेय ६१०, श्रीमान् ६११, लोकत्रयाश्रय ६१२, उसके अक्ष अर्थात् इन्द्रियें उत्तम हैं, इस ही निमित्त स्वक्ष ६१३, सुन्दर अङ्गयुक्त होनेसे स्वङ्ग ६१४, अपरिमित आनन्द स्वरूप होनेसे शतानन्द ६१५, आनन्दित करनेसे नन्दी ६१६, ज्योतिगणेश्वर ६१७, विजितात्मा ६१८, कोई उसके सङ्ग विग्रह करनेमें समर्थ नहीं है, इसलिये विधेयात्मा ६१९, सत्कीर्त्ति ६२०, छिन्नसंशय ६२१, उदीर्ण ६२२, सर्व्वतश्चक्षु ६२३, उसका कोई ईश्वर नहीं है, इसलिये अनीश ६२४, सब समय सर्व्वस्थानोंमें व्याप्त रहनेसे शाश्वतस्थित ६२५, सीतान्वेषणके समय समुद्रके तीर भूमिपर शयन करनेसे भूशय ६२६, सबको भूषित करनेसे भूषण ६२७,

भूति ६२८, विशोक ६२९, शोकनाशन, ६३०, अर्च्चिष्मान ६३१, अर्च्चित कुम्भकी भांति उसमें सब प्रतिष्ठित है, इसलिये कुम्भ ६३२, विशुद्धात्मा ६३३, विशोधन ६३४, अनिरुद्ध ६३५, अप्रतिरथ ६३६, प्रकृष्टधनशाली होनेसे प्रद्युम्न ६३७, अमितविक्रम ६३८, कालनेमि नाम असुरको मारनेसे कालनेमिनिहा ६३९, वि अर्थात् गरुड़को चलानेसे वीर ६४०, शूर अर्थात् बसुदेवके पुत्र होनेसे शौरि ६४१, शूरजनेश्वर ६४२, त्रिलोकात्मा ६४३, त्रिलोकेश ६४४, बड़े केशोंसे युक्त है, इसलिये केशव ६४५, केशी नाम दानवको मारनेसे केशिहा ६४६, पापोंको हरनेसे हरि ६४७, कामनीय रूप होनेसे कामदेव ६४८, भक्तोंकी वाञ्छा पूरण करनेसे कामपाल ६४९, कामी ६५०, कान्त ६५१, वेदप्रणेता होनेसे कृतागम ६५२, अनिर्द्देश्य-वपु ६५३, द्यूलोक और भूलोकमें व्याप्त होनेसे विष्णु ६५४, वीर ६५५, अनन्त ६५६, धनञ्जय ६५७, तपस्या प्रभृतिके निमित्त हितू है, इसलिये ब्रह्मण्य ६५८, वेदकर्त्ता होनेसे ब्रह्मकृत् ६५९, सृष्टिकर्त्ता होनेसे ब्रह्मा ६६०, आत्मसंवेद्य ज्ञानस्वरूप है, इसलियि ब्रह्म ६६१, तपकी वृद्धि करनेसे ब्रह्मविवर्द्धन ६६२, तत्त्ववेत्ता होनेसे ब्रह्मवित् ६६३, वेद प्रवर्त्तक होनेसे ब्राह्मण ६६४, ब्रह्मतत्त्वयुक्त है, इसलिये ब्रह्मी ६६५, जीव रूपसे मैं ही ब्रह्म हूं ऐसे ज्ञानविशिष्ट होनेसे ब्रह्मज्ञ ६६६, ब्राह्मणगण उसे प्रिय हैं, इसलिये ब्राह्मणप्रिय ६६७, महाक्रम ६६८, महाकर्म्मा ६६९, महातेजा ६७०, महोरग ६७१, महाक्रतु ६७२, महायज्वा ६७३, महायज्ञ ६७४, महाहवि ६७५, स्तुतियोग्य होनेसे स्तव्य ६७६, स्तवप्रिय ६७७, गुण प्रतिपादक शब्दरूपसे स्तोत्र ६७८, गुणकीर्त्तन क्रियारूपसे स्तुति ६७९, स्तुतिकर्त्ता होनेसे स्तोता ६८०, रणप्रिय ६८१, पूर्ण ६८२, पूरयिता ६८३, पुण्य ६८४, पुण्यकीर्त्ति ६८५, अनामय ६८६, मनोजव ६८७, तीर्थकर ६८८, सुवर्ण रेता होनेसे वसुरेता ६८९, धनदाता होनेसे वसुप्रद ६९०, धनखण्डन करता है, इसलिये वसुप्रद ६९१, वसुदेवके पुत्र होनेसे वासुदेव ६९२, मायासे स्वरूप अच्छादन करता है, इसलिये वसु ६९३, सर्व्वत्र अविनाशी रूपसे उसका मन बसता है, इस ही निमित्त वसुमना ६९४, ब्रह्ममें कर्म्मफल अर्पित होनेसे हवि ६९५, सद्गति ६९६, सत्कृति ६९७, सर्व्वत्र प्रतीयमान अधिष्ठान रूपसे सत्ता ६९८, उससे साधुओंको ऐश्वर्य मिलता है, इसलिये सद्भूति ६९९, साधु भक्तोंके अभीष्ट होनेसे सत्परायण ७००, उसकी सारी सेना बलवान है, इसलिये शूरसेन ७०१, यदुश्रेष्ठ ७०२, साधुओंका आश्रय होनेसे सन्निवास ७०३, यमुनाके उत्तम तटपर गोपालोंने उसे परिवेष्ठन किया था, इसलिये सुयासुन ७०४, उसमें सर्व्वभूत निवास करते हैं, इसहो निमित्त भूतावास ७०५, विसुद्ध सत्त्वमें अधिष्ठित होनेसे वासुदेव ७०६, सब प्राण प्रभृतिका आश्रय है, इसही हेतु सर्व्वासुनिलय ७०७, उसके शक्ति सम्पदकी सीमा नहीं है, इसलिये अनल ७०८, दर्पहा ७०९, दर्पद ७१०, दृप्त ७११, दुर्द्धर ७१२, अपराजित ७१३, विश्वमूर्त्ति ७१४, महामूर्त्ति ७१५, दीप्तमूर्त्ति ७१६, अमूर्त्तिमान् ७१७, अनेक मूर्त्ति ७१८, अव्यक्त ७१९, शतमूर्त्ति ७२०, शतानन ७२१, स्वगत सजातीय और विजातीय भेदरहित होनेसे एक ७२२, मायाके सहारे बहुरूप होनेसे अनेक ७२३, उससे सोम उत्पन्न होता है, इसलिये यज्ञरूपसे सव ७२४, सुख अथवा ब्रह्मस्वरूपसे क ७२५, विचार्य्य होनेसे किं ७२६, भक्तोंके हितसाधनके हेतु उनके स्थानोंमें जाता है, इसलियि यत् ७२७, अनेक लीला फैलानेसे तत् ७२८, अनुत्तम आश्रय होनेसे मदमनुत्तम ७२९, लोकबन्धु ७३०, लोकनाथ ७३१, माधव ७३२, भक्त वत्सल ७३३, हिरण्यमय पुरुष रूपसे सुवर्णवर्ण ७३४, हेमाङ्ग ७३५, वराङ्ग ७३६, चन्दनाङ्गी ७३७, धर्म्मरक्षाके हेतु

वीर असुरोंको मारनेसे वीरहा ७३८, उसके समान कोई नहीं है, इसलिये विषम ७३६, सब धर्म्मोंसे रहित होनेसे शून्य ७४०, आशाहीन आप्तकाम होनेसे घृताशी ७४१, निजरूपसे विचलित नहीं होता, इसलिये अचल ७४२, प्राणीरूपसे चल ७४३, अमानी ७४४, मानद ७४५, मान्य ७४६, लोकस्वामी ७४७, त्रिलोकधृक् ७४८, सुमेधा ७४६, गिरियज्ञमें इन्द्रमख निवारण करनेके लिये अन्नकूट भोक्ता रूपसे उत्पन्न होनेसे मेधज ७५०, धन्य ७५१, सत्यमेधा ७५२, शेषरूपसे धराधर ७५३, आदित्यरूपसे वर्षा करता है, इसलिये तेजोवृष ७५४, द्युतिधर ७५५, सर्व्वशस्त्रभृतांवर ७५६, भक्तोंके द्वारा उपहृत पूजा प्रकर्षरूपसे ग्रहण करता है, इसलिये प्रग्रह ७५७, दण्डनीय लोगोंके विषयमें दण्डविधान करता है, इसलिये निग्रह ७५८, भक्तोंपर अनुग्रह विषयमें विहस्त है, इस ही हेतु व्यग्र ७५६, चतुर्शृङ्ग मन्त्र वर्णा होनेसे नैकशृङ्ग ७६०, गदनाम श्री कृष्णका भ्राता है, उससे पहले जन्म लेनेसे गदाग्रज ७६१, हिरण्यगर्भादि रूपसे चतुर्म्मूर्त्ति ७६२, चतुर्व्वाहु ७६३, चतुर्व्यूह ७६४, चारों वेदोंका तात्पर्य्यविषय होनेसे चतुर्गति ७६५, मनबुद्धि, अहंकार और चित्तस्वरूप होनेसे चतुरात्मा ७६६, चारों आश्रमके धर्म्मरूपसे चतुर्भाव ७६७, चतुर्व्वेदवित् ७६८, जगत रूपसे एकपात् ७६६ संसार चक्रको पूर्ण रीतिसे आवर्त्तन करता है, इसलिये समावर्त्त ७७०, विषयोंसे उसका चित्त निवृत्त है, इसलिये निवृत्तात्मा ७७१, दुर्ज्जय ७७२, दूरतिक्रम, ७७३, दुर्लभ ७७४, दुर्गम ७७५, अत्यन्त दुःखसे प्राप्त होता है, इसलिये दुर्ग ७७६, दुरावास ७७७, दुरारिहा ७७८, शुभाङ्ग ७७६, लोकशारङ्ग ७८०, उसहीका यह सब उत्तम प्रपञ्च तन्यमान है, इसलिये सुतन्तु ७८१, उक्त तन्तुकी वृद्धि करनेसे तन्तुवर्द्धन ७८२, इन्द्र उसका कर्म्म है, इसलिये इन्द्रकर्म्मा ७८३, महाकर्म्मा ७८४, कृतकर्म्मा ७८५, चतुर्व्विध पुरुषार्थ प्रापण उसका आगमन प्रर्य्याप्त है, इसलिये कृतागम ७८६, उससे जगत् उत्पन्न होता है, इसलिये उद्भव ७८७, जगत् में अत्यन्त सौन्दर्य्यशाली होनेसे सुन्दर ७८८, चिद्रूपशोभवान् होनेसे सुन्द ७८६, रत्न सदृश उसकी नाभि है, इसलिये रत्ननाभ ७६०, वेदरूपी नेत्रयुक्त है, इसलिये सुलोचन ७६१, अर्च्चनीय होनेसे अर्क ७६२, अन्नदान करता है, इसलिये वाजसन ७६३, मत्स्यावतारमें उनके शींग था, इसही निमित्त शृङ्गी ७६४, जयशील होनेसे जयन्त ७६५, सर्व्ववित् ७६६, जयी ७६७, उसके अवयव सुवर्णयुक्त हैं, इसलिये सुवर्ण बिन्दु ७६८, अक्षोभ्य ७६६, सर्व्ववागीश्वरेश्वर ८००, महाह्रद ८०१, महारथ होनेसे महागर्त्त ८०२, महाभूत ८०३, महानिधि ८०४, भूमण्डलमें आमोदित होता है, इसलिये कुमुद ८०५, कुन्दकी भांति स्वच्छफलदान करता है, इसही निमित्त कुन्दर ८०६, कुन्ददामकृत कौतुक रूपी होनेसे कुन्द ८०७, मेघकी भांति पापनाशन होनेसे पर्ज्जन्य ८०८, पावन ८०६, पवन ८१०, अमृतांश ८१ , अमृतवपु ८१२, सर्व्वज्ञ ८१३, सर्व्वतोमुख ८१४, नामगान नृत्यादिसे सहजहीमें प्राप्त होता है, इसलिये सुलभ ८१५, सुव्रत ८१६, सिद्ध ८१७, शत्रुजित ८१८, शत्रुतापन ८१६, सब भूतोंको नीचे रोक रखता है, इसलिये न्यग्रोध ८२०, अन्नादि रूपसे पोषण करता है, इसही निमित्त उडुम्बर ८२१, प्रपञ्चरूपसे विस्तीर्ण है, इसलिये अश्वत्थ ८२२, चाणूरनामक रन्ध्रदेशीय कन्सके मल्लका नाश किया था, इसही हेतु चाणूरान्ध्रनिसूदन ८२३, सहस्रार्च्चि ८२४। काली, करालो, मनोजवा, सुलोहिता, सुधुम्रवर्णा, स्फूलिङ्गिनी विश्वरुचिनामी सप्तजिह्वा विशिष्ट अग्निस्वरूप होनेसे सप्तजिह्व ८२५, सात समितयुक्त होनेसे सप्तैधा ८२६, सूर्य्यरूपसे सप्तवाहन ८२७, घनमूर्त्ति रहित होनेसे अमूर्त्ति ८२८, निष्पाप है, इसलिये अनघ ८२६, अचिन्त्य ८३०, अभक्तोंको

भयभीत करता है, इसलिये भयकृत ८३१, भक्तोंका भय दूर करता है, इसलिये भयनाशन ८३२, सूक्ष्म होनेसे अणु ८३३, वृद्धिशील होनेसे बृहत् ८३४, कृश ८३५, स्थूल ८३६, कल्याण-धाता होनेसे गुणभृत् ८३७, परमार्थ होनेसे निर्गुण ८३८, नाममात्रसेही जगत्‌का उद्धार करता है, इसलिये महान् ८३९, कोई उसे धारण नहीं कर सकता, इसलिये अधृत ८४०, स्वमहिमामें प्रतिष्ठित है, इसलिये स्वधृत् ८४१, उत्तम वेद उसके मुखसे निकलते हैं इस ही कारण स्वास्य ८४२, उसका प्रथमवंश है, इसही निमित्त प्राग्वंश ८४३, परीक्षितकी रक्षा करके पाण्डवोंकी वृद्धि करनेसे वंशवर्द्धन ८४४, अनन्त रूपसे पृथ्वीका भार धारण करता है, इसलिये भारभृत् ८४५, श्रुतिके तात्पर्य्य विषयी भूत होनेसे कथित ८४६, चित्तवृत्ति-निरोध युक्त होनेसे योगी ८४७, योगीश ८४८, सर्व्वकामद ८४९, संसाररूपी वनमें विचरनेवाले जीवोंके विश्रामस्थान होनेसे आश्रम ८५०, भक्त विरो-धियोंको खेदित करनेसे श्रमण ८५१, प्रलयका-लमें प्रजा समूहका नाश करता है, इसलिये क्षाम ८५२, उसके उत्तम छन्द संसारवृक्षके पत्ते हैं, इसलिये सुपर्ण ८५३, वायुको चलानेसे वायु-वाहन ८५४, धनुर्द्धर ८५५, धनुषके गुण दोषोंका जाननेवाला है, इसलिये धनुर्व्वेद ८५६, दमनकारी होनेसे दण्ड ८५७, मन्वादि-रूपसे प्रजा समूहको दमन किया था, इसही निमित्त दमयिता ८५८, दण्डके फल दम्यनिष्ठ होनेसे दम ८५९, अपराजित ८६०, सर्व्वसह ८६१, नियन्ता ८६२, नियम ८६३, अयम ८६४, सतो-गुणी होनेसे सत्त्ववान् ८६५, प्राधान्य रूपसे स्थित है, इसही निमित्त सात्त्विक ८६६, सत्य ८६७, सत्यधर्म्म परायण ८६८, पुरुषार्थकांक्षी पुरुषोंका अभिप्रेत होनेसे अभिप्राय ८६९, प्रियार्ह ८७०, आसनादिसे पूज्य है, इसलिये अर्ह ८७१, प्रियकृत ८७२, प्रीतिवर्द्धन ८७३, वह आकाशमें गमन करता है, इसही कारण विहाय सगति ८७४, द्युतिशील होनेसे ज्योति ८७५, सुरुचि ८७६, देवताओंके उद्देशसे दी हुई हवि भोजन करनेसे हविभुक् ८७७, विभु ८७८, रस आदान करनेसे रवि ८७९, विशेष-रूपसे रुचिशील है, इसलिये विरोचन ८८०, आकाशमें गमन करनेसे सूर्य्य ८८१, जगत् सृष्टिकर्त्ता होनेसे सविता ८८२, सूर्य्य उसका नेत्र हैं, इसलिये रविलोचन ८८३, उसका अन्त नहीं है, इसही निमित्त अनन्त ८८४, अग्निरू-पसे हवनीय घृतादि भोजन करता है, इसही कारण हुतभुक् ८८५, प्रकृतिका कार्य्यदर्शी होनेसे भोक्ता ८८६, अभक्तोंका सुख खण्डन करता है, इसही हेतु सुखद ८८७, अनेकबार बहुतेरे स्थानोंमें विविध भक्तोंसे उत्पन्न हुआ है, इसलिये अनेकज ८८८, हिरण्य गर्भ रूपसे अग्रज ८८९, अनिर्व्वेद शून्य होनेसे अनिर्व्विस्य ८९०, साधुओंके विषयमें क्षमा प्रदर्शित करनेसे सदामर्षी ८९१, सब लोकोंका अज्ञात कारण होनेसे लोकाधिष्ठान ८९२, अत्यन्त शक्तिमान् होनेसे अद्भुत ८९३, कालरूप होनेसे सनात्‌ ८९४, ब्रह्मादिकाभी कारण है, इसलिये सना-तन तम ८९५, कर्द्दम प्रजापतिके द्वारा देवहू-तीके गर्भसे कपिल रूपसे उत्पन्न हुए, इसलिये कपिल ८९६, वराहश्रेष्ठ रूपसे कपि ८९७, जगत् उसमें लीन होता है, इसलिये अव्यय ८९८, स्वस्तिद ८९९, अभक्त जनोंका स्वस्ति छेदन करता है, इस ही निमित्त स्वस्तिकृत् ९००, कल्याणरूप होनेसे स्वस्ति ९०१, भक्तज-नोंका मङ्गल पालन करता है, इसलिये स्वस्ति भुक् ९०२, कल्याण विषयमें अनुकूल रहता है, इसही निमित्त स्वस्तित ९०३, दक्षिण ९०४, अरौद्र ९०५, कुण्डली ९०६, चक्री ९०७, विक्रमी ९०८, उर्जितशासन ९०९, वचनसे उसका वर्णन नहीं होसकता, इसलिये शब्दातिग ९१०, शब्दोंका अपने सङ्ग एक तात्पर्य्य करता है,

इसही निमित्त शब्दसह ६११, संसार तापनाशक होनेसे शिशिर ६१२, शर्व्वरीकर ६१३, अक्रूर ६१४, मनोहर होनेसे पेशल ६१५, शीघ्रकारी होनेसे दक्ष ६१६, क्षमिणाम्बर ६१७, विद्वत्त ६१८, वीतभय ६१९, पुण्यश्रवण-कीर्त्तन ६२०. संसारसे उत्तीर्ण करता है, इसलिये उत्तारण ६२१, पापोंको नाश करनेसे दुष्कृतिहा ६२२, पुण्य करता है वा कहता है, इसलिये पुण्य ६२३, दुःस्वप्ननाशन ६२४, संसारकी विविधिगति हरनेसे वीरहा ६२५, रक्षा करता है, इसलिये रक्षण ६२६, विद्या विनय वृद्धिके निमित्त वर्त्तमान है, इसलिये सन्त ६२७, जीवित रखता है, इसलिये जीवन ६२८, विश्वव्यापक होनेसे पर्य्यवस्थित ६२९, अनन्तरूप ६३०, अनन्तश्री ६३१, जितमन्यु ६३२, भयापह ६३३, कर्म्मोंके अनुरूप फलदाता होनेसे न्याय ६३४, समवेत होनेसे चतुरस्र ६३५, गम्भीरचित्त है, इसही निमित्त गभीरात्मा ६३६. विविधफल दान करता है, इसलिये विदिश ६३७, विशेष रूपसे आदेश करता है, इसलिये व्यादिश ६३८, वेदरूपसे आदेशकर्त्ता है, इसही निमित्त दिश ६३९. अनादि पृथवीकी भांति सबका अवलम्ब है, इसलिये भू ६४०, पृथ्वीकी शोभा है, इसलिये भुवोलक्ष्मी ६४१, सुवीर ६४२, रुचिराङ्गद ६४३, उससे प्रद्युम्न प्रभृतिकी उत्पत्ति हुई है, इसलिये जनन ६४४ जन्ममात्रसेही आदि है, इसलिये जन जन्मादि ६४५, भयका हेतु होनसे भीम ६४६, भीमपराक्रम ६४७, भोक्ताकाश्रय महाभूतोंका आधार है, इसलिये आधारनिलय ६४८, उसका कोई भी धारक नहीं है, इसही हेतु अधोता ६४९, पुष्पकी भांति उसकी हांसी आनन्द जनक है, इसलिये पुष्पहास ६५०, प्रकृष्ट जागरण विशिष्ट होनेसे प्रजागर ६५१, ऊर्द्ध्वग ६५२, सत्पथाचार ६५३, प्राणद ६५४, प्रणव ६५५, भक्तोंके सहित व्यवहार करता है, इसलिये पण ६५६, यादवोंमें मर्य्यादा रूप होनेसे प्रमाण ६५७, जीवोंका अवलम्ब है; इसलिये प्राणनिलय ६५८, प्राणभृत् ६५९, प्राणजीवन ६६०, अवाधित सत्यस्वरूप होनेसे सत्त्व ६६१, तत्त्ववित् ६६२ एकात्मा ६६३, जन्म ६६४, मृत्यु ६६५, जरातिग ६६६, भूलोक भुवर्लोक और स्वर्गलोकमें कल्पवृक्षकी भांति अभीष्टप्रद है, इसलिये भुभुवःस्वस्तरु ६६७. भक्तोंको तारनेसे तार ६६८. सर्व्व साधारण रूपसे पिता है, इसलिये सपिता ६६९, पितामहका पिता है, इसलिये प्रपितामह ६७०, पूज्य है, इसलिये यज्ञ ६७१, यज्ञपति ६७२, यजमान रूपसे यज्वा ६७३. यज्ञाङ्ग ६७४, वह यज्ञसे प्राप्त होता है, इसलिये यज्ञवाहन ६७५. यज्ञभृत् ६७६, यज्ञकृत् ६७७, यज्ञी ६७८, यज्ञभुक् ६७९, युधिष्ठिरका अनेक उपायसे सिद्ध कराया, इसलिये यज्ञसाधन ६८०, यज्ञान्तकृत् ६८१, यज्ञगुह्य ६८२, उसहीसे सब प्राणी भक्षण करते हैं, इसलिये अन्न ६८३, भोक्ता होनेसे आन्नाद ६८४, आत्माही उसकी योनि अर्थात् उपदान कारण है, इसलिये आत्मयोनि ६८५, स्वयंजात ६८६, खनसम्बलित होनेसे वैखान ६८७, सामगायन ६८८, देवकीनन्दन ६८९, स्रष्ट ६९०, क्षितीश ६९१, पापनाशन ६९२, शङ्खभृत् ६९३, नन्दकनाम खड्गधारी होनेसे नन्दकी ६९४, चक्री ६९५, शार्ङ्गधन्वी ६९६, गदाधर ६९७, रथाङ्गपाणि ६९८, अक्षोभ्य ६९९, सर्व्वप्रहरणायुध १०००, ओं नमः। यह कीर्त्तनीय महात्मा केशवका दिव्य सहस्र नाम अशेष रूपसे वर्णित हुआ। जो मनुष्य सदा इसे सुनता, सुनाता वा कहता है, उसे इस लोक अथवा परलोकमें कुछभी अशुभ प्राप्त नहीं होता। ब्राह्मण इसे पाठ करनेसे वेदान्त पारदर्शी होता, क्षत्रियको विजय प्राप्त होती, वैश्य धन सम्पन्न होता और शूद्रको सुख मिलता है। धर्म्मार्थी मनुष्य धर्म्म लाभ करते, अर्थार्थी पुरुषोंको अर्थलाभ हुआ करता है। कामीजनोंको काम प्राप्त होता

और प्रजार्थी लोगोंको प्रजा प्राप्त हुआ करती है। जो भक्तिमान् पुरुष सदा उठके पवित्र और तद्गतचित्त होकर वासुदेवका यह सहस्र-नाम पाठ करते हैं, उन्हें बिपुल यश स्वजनोंके निकट प्रधानता, अचला लक्ष्मी और उत्तम कल्याण प्राप्त होता है, उन्हें किसी स्थानमें भय नहीं होता, वीर्य्य और तेज लाभ करते, अरोगी, द्युतिमान और बलरूपसे युक्त होते हैं, रोगार्त्त पुरुष इसे सुननेसे रोग रहित होता और बद्ध मनुष्य कारागारसे छूट जाते हैं। भीत मनुष्य भयसे और विपद्ग्रस्त आपदोंसे मुक्त हुआ करते हैं; मनुष्य भक्तियुक्त होकर सदा पुरुषोत्तमका इन्हीं सहस्रनामोंके सहारे स्तव करनेसे शीघ्रही क्लेशोंसे छूटता है और वासुदेवका आश्रय करने और वासुदेव परायण होनेसे सब पापोंसे रहित तथा पवित्रचित्त होकर ब्रह्मपद पाता है। वासुदेवके भक्तोंको कदाचित अशुभ नहीं होता और न उन्हें जन्म मृत्यु, जरा तथा व्याधिका भय होता है। जो लोग श्रद्धा और भक्तिपूर्व्वक इस स्तवका पाठ करते हैं, वे आत्मसुख, क्षमा, श्री, धृति और कीर्त्तियुक्त होते हैं,। पुरुषोत्तममें भक्तियुक्त पुण्यवान पुरुषोंको क्रोध, मत्सरता, लोभ और अशुभ बुद्धि नहीं होती। चन्द्र, सूर्य्य, स्वर्ग और नक्षत्रोंके सहित आकाश मण्डल सब दिशा तथा समुद्र महानुभाव वासुदेवके वीर्य्यसे विधृत होरहा है। सुरासुर, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस और उरगोंके सहित सचराचर जगत् श्रीकृष्णके वश-वर्त्ती होकर विद्यमान है। इन्द्रियें, मन, बुद्धि, सत्त्व, तेज, बल, धृति, शरीर, जीव, क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ सभी वासुदेवमय हैं। सब शास्त्रोंकी अपेक्षा आचार ही पहले परिकल्पित होता है, आचारसे धर्म्मकी उत्पत्ति हुआ करती है और अच्युत वासुदेव ही धर्म्मके प्रभु हैं। ऋषि, पितर, देवता महाभूत, सब धातु और स्थावर जङ्गमात्मक यह जगत् नारायणसे उत्पन्न हुआ है। योगज्ञान, सांख्ययोग, सब विद्या, शिल्पकर्म्म वेद, शास्त्र, समस्त विज्ञान, ये सब जनार्द्दनसे प्रकट हुए हैं। भूतात्मा अव्यय एक मात्र विष्णु ही महद्भूत और अनेक रूपसे पृथक् भूत हैं, वही विश्वभुक् त्रिभुवनमें व्यापक होके भोग कर रहा है। जो मनुष्य कल्याण तथा सुखलाभकी इच्छा करे, वह वेदव्यासके कहे हुए भगवान विष्णुका यह स्तोत्र पाठ करे, जो लोग जगतकी उत्पत्ति और प्रलयके कारण जन्मरहित कमल-नयन विश्वेश्वरदेवका भजन करते हैं, उनकी कदापि पराभव नहीं होतो।

१४९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्र विशारद महा-प्राज्ञ पितामह! कैसे जप्य मन्त्रको सदा जप-नेसे महत् धर्म्मफल होता है? प्रस्थानकाल, प्रवेशके समय अथवा कार्य्य आरम्भ होनेपर दैव वा श्राद्धकालमें कौनसा मन्त्र कार्य्य सिद्ध करता है? जिसे जपनेसे शान्ति, पुष्टि, रक्षा, शत्रुहानि तथा भय बिनाश होता है, और जो वेदतुल्य हो, आप उसे वर्णन कर सकते हैं।

भीष्म बोले, हे महाराज! तुम एकाग्रचित्त होकर यह व्यासदेवका कहा हुआ मन्त्र सुनो, यह साबित्री द्वारा बिरचित हुआ है और इसे पाठ करनेसे तुरन्तही पाप छूटता है। हे अनघ! हे पाण्डव! जिसके सुननेसे मनुष्य सब पापोंसे छूटता है, मैं उस मन्त्रकी सारी विधि कहता हूं, तुम सुनो। हे धर्म्मज्ञ नृपवर! रात्रि और दिनमें जिसके सहारे मनुष्य पापपु-ञ्जसे लिप्त नहीं होता, उसे मैं तुम्हारे समीप कहता हूं, तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो। हे नृपनन्दन! जिसे सुननेसे पुरुष आयुमान होता और सुसिद्ध अर्थ होकर इस लोक तथा पर-लोकमें प्रमुदित हुआ करता है। हे महाराज! पहली समयमें क्षत्रधर्म्मनिष्ठ सत्यधर्म्म परायण सत्तम राजर्षियोंके द्वारा यह मन्त्र सेवित हुआ

था। हे भरतश्रेष्ठ! जो सब राजा संयत होकर अव्यग्रभावसे सदा इस मन्त्रका जप करते हैं, उन्हें उत्तम श्री प्राप्त हुआ करती है। महाव्रत वशिष्टदेवको नमस्कार है, वेदनिधि पराशरको प्रणाम करके महोरग अनन्तदेवको नमस्कार है तथा इसलोकमें अक्षय सिद्धों और ऋषियोंको नमस्कार है। श्रेष्ठोंके बीच श्रेष्ठ देवताओंकेभी देव, वरणीयोंके वरद शिवस्वरूप सहस्रशीर्ष, सहस्रनाम जनार्द्दनको नमस्कार है। अजैकपाद, अहिवुर्ध्न, पिनाकी, अपराजित, ऋत, पितृरूपी, त्र्यम्बक, सुरेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हवनईश्वर, इन नामोंसे त्रिलोकेश्वर ग्यारह रुद्र प्रसिद्ध हैं, शतरुद्रिके बीच उन्हीं महानुभाव रुद्रगणके एक सौ नाम वर्णित हैं। अंशभग, मित्र, जलेश्वर, वरुण, धाता, अर्य्यमा, वैजयन्त, भास्कर, त्वष्टा, पूषा, इन्द्र और विष्णु, ये द्वादश आदित्य कश्यपकी सन्तान कहाते हैं। धव, ध्रुव, सोम, सावित्र, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास—ये अष्टवसु वर्णित हुए हैं। नासत्य और दस्र, दोनों अश्विनीकुमार विख्यात् हैं, ये मार्त्तण्ड अर्थात् सूर्य्यके आत्मज संज्ञाके नासिकासे बाहिर हुए हैं। इसके अनन्तर सब लोकोंके कर्म्मसाक्षी, अज्ञान और सुकृतकार्य्य वेत्ता, सब भूतोंमें अदृश्य रहकेभी जो विद्वशीश्वरगण शुभाशुभ कर्म्मोंको अवलोकन करते हैं, वेही मृत्यु काल, विश्वदेवगण, पितृगण, मूर्त्तिमान तपोधनगण, तपस्या और मोक्षपरायण, शुचिस्मित सिद्ध-मुनिगण, जो कीर्त्तनकारी मनुष्योंको शुभ सम्प्रदान करते हैं, जो दिव्यतेज प्रभावसे प्रजापतिके बनाये हुए लोकोंमें निवास करते हैं, सर्व्वलोकों और समस्त कार्य्योंमें जो प्रयत हुआ करते हैं, प्राणोंके ईश्वर, इन सबके नामकीर्त्तन करनेसे मनुष्य सदा विपुली धर्म्मार्थ कामसे युक्त होता है और उसी विश्वेश्वरकृत शुभ लोक प्राप्त होते हैं। ये तैंतीस देवगण सब भूतोंके ईश्वर हैं, महाकाय नन्दीश्वर ग्रामणी, वृषभध्वज, गणेश्वर और विनायक सब लोकोंके ईश्वर हैं। सौम्यगण, रौद्रगण, योगभूतगण, समस्त ज्योतिष, नदियें, आकाश, पतगेश्वर, सुपर्ण, पृथ्वीके समस्त सिद्ध तपस्वी, स्थावर-जङ्गम और हिमालय पर्व्वतके सहित चारों समुद्र, हर सदृश पराक्रमी शिवके अनुचर वृन्द, देवश्रेष्ठ विष्णु; विष्णु और अम्बिकाके सहित स्कन्द, इन देवताओंको सावधान होके स्मरण करनेसे मनुष्य सब पापोंसे छूटता है। इसके अनन्तर माननीय ऋषिसत्तमोंका नाम कहता हूं,—यवक्रीत, रैभ्य, अर्व्वावसु, परावसु, औशिज, काक्षीवान्, अङ्गिराके पुत्र बल, मेधातिथि और बर्हिषदेवकेपुत्र कण्वऋषि, ये सब कोई ब्रह्मतेजमय और लोक भावन कहके वर्णित होते हैं। ये सब रुद्र अग्नि और वसुतुल्य प्रभाशाली मुनिगण शुभलाभ करते, ये भूलोकमें शुभकर्म्म करके द्युलोकमें देवताओंके सहित दिव्य लीला किया करते हैं। महेन्द्रके गुरु सप्तर्षि पश्चिम दिशाको अवलम्बन कर रहे हैं, जो लोग सावधान होके इनका नाम लेते हैं, वे इन्द्रलोकमें निवास किया करते हैं। उन्मुच, प्रमुच, वीर्य्यवान् स्वस्त्यात्रेय दृढ़व्य, ऊर्द्ध्वबाहु, तृणसोम, अङ्गिरा और मित्रावरुणके पुत्र प्रतापवान् अगस्त्य, ये सातों धर्म्मराजके पुरोहित होकर दक्षिण दिशाको अवलम्बन किये हैं। दृढ़ेषु, ऋतेषु, कीर्त्तिमान, परिव्याध, आदित्य तुल्य एकत, द्वित और त्रित, अत्रिके पुत्र धर्म्मात्मा सारस्वत ऋषि ये सातों वरुणके पुरोहित पश्चिम दिशाको अवलम्बन कर रहे हैं। अत्रि भगवान् वशिष्ट, महर्षि कश्यप, गौतम, भरद्वाज कुशिकवंशोद्भव विश्वामित्र, ऋचिकके पुत्र उग्र और प्रतापशाली जमदग्नि, ये सातो धनेश्वर कुवेरके गुरु उत्तर दिशामें वास करते हैं। दूसरे सप्तमुनि सब दिशाओंमेंही अधिष्ठित हैं, ये मनुष्योंको कीर्त्ति और कल्याणकर तथा लोकभावन कहके

वर्णित हुए हैं। धर्म्म, काम, काल, वसु, वासुकि, अनन्त और कपिल, ये सातो धरणीधर हैं। भृगुराम, व्यासदेव, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा और लोमश, ये दिव्य मुनि हैं। इन मुनियोंके बीच प्रत्येक सात सात प्रकारके हैं, लोकमें येही शान्ति और स्वस्ति कर रहे हैं, ये जिस दिशामें रहें, उसही ओर मुह करके उनका शरणागत होवे, ये सब भूतोंके स्रष्टा और लोकपावन रूपसे विख्यात् हैं। सम्वर्त्त, मेरुसावर्णा, धार्म्मिक मारकण्डेय, सांख्ययोग, नारद और महर्षि दुर्व्वासा, ये अत्यन्त तपनिरत तथा दान्त होनेसे प्रसिद्ध हैं। दूसरे ब्रह्मलोकनिवासी मुनिगण रुद्रसङ्काश कहके वर्णित होते हैं। इनका नाम लेनेसे अपुत्र पुरुषको पुत्र लाभ होता, दरिद्र पुरुष धन पाते और धर्म्मार्थ काम विषयमें सिद्धिलाभ किया करते हैं। पृथिवी जिसकी कन्या हुई थी, उस वैण्य, नृपनन्दन प्रजापति सार्व्वभौम पृथु राजाका नाम लेवें। सूर्य्यवंशीय महेन्द्रसदृश पराक्रमी त्रिलोक विख्यात इलापुत्र पुरुरवा जो बुधका प्रियपुत्र है, उस वसुधाधिपका नाम लेवे। त्रिलोक विख्यात् वीरवर भरतका नाम और जिन्होंने सतयुगमें गामेधयज्ञ किया था, उस परम तेजस्वी महाराज रन्तिदेवका नाम कीर्त्तन करना योग्य है, विश्वविजयी तपस्यायुक्त सुलक्षण लोक हितकर महा तेजस्वी राजर्षि श्वेतका नाम लेवे। जिसने महादेवको प्रसन्न किया था, जिसके निमित्त अन्धक दैत्य मारा गया, जो महादेवकी कृपासे भूमण्डलमें गङ्गा देवीको ले आया, जिसने सगर सन्तानोंको प्लावित तथा उद्धृत किया है, उस परम तेजस्वी राजर्षि भगीरथका नाम लेवे। अग्नि सदृश महा रूपवान महातेजस्वी उग्रकाय महाबल कीर्त्तिवर्द्धन नृपनन्दनगणका नाम कीर्त्तन करना योग्य है। देवगण, ऋषिगण, जगत्के नियन्ता नृपतिगण परम सांख्ययोग और हव्य कव्य परम श्रुतिपरायण परब्रह्मरूपसे वर्णित होते हैं। हे भारत! सर्व्व भूतोंके मङ्गलकारी अनेक विषयोंको वर्णन किया है, यह सब व्याधियोंका नाश और सर्व्व कार्य्योंमें पुष्टिसाधन करता है, इसलिये सबेरे सन्ध्याके समय संयत होके इन्हें स्मरण करे। येही रक्षा करते, येही वर्षा करते, येही दीप्ति लाभ करते हैं, येही वहन तथा सृजन करते हैं, येही विनायक श्रेष्ठ, दक्ष, दान्त और जितेन्द्रिय हैं, इसलिये ये लोग कीर्त्तित होनेसे मनुष्योंके समस्त अशुभ दूर किया करते हैं, ये सब महात्मा पाप और पुण्यके साक्षी स्वरूप हैं, जो लोग भोरके समय उठके इन सब महात्माओंका नाम लेते, वे कल्याण परम्परा उपभोग किया करते हैं। जो मनुष्य सदा इनका नाम लेते हैं, उन्हें अग्नि और चोरका भय नहीं होता, उनके मार्गको कोई नहीं रोकता तथा उनके दुःस्वप्न नष्ट हुआ करते हैं। जो ब्राह्मण संयत होकर समस्त दीक्षाकालमें इसे पाठ करता है, वह सब पापोंसे छूटता और स्वस्तिमान होके गृहमें गमन करनेमें समर्थ होता है। न्यायवान्, आत्मनिरत, क्षान्त, दान्त, अनुसूयक, रोगार्त्त अथवा व्याधियुक्त मनुष्य इसे पाठ करनेसे पाप-रहित हुआ करते हैं। गृहमें इसे पाठ करनेसे कुलका मङ्गल होता है, जो लोग क्षेत्रमें पाठ करते हैं, उनके क्षेत्रमें सब अङ्कुर उत्पन्न होते हैं, गमनशील मनुष्यके मार्गमें मङ्गल हुआ करता है, अन्य ग्राममें गया हुआ मनुष्य इसे पाठ करते हुए आत्म सुतके सहारे धन, बीज और ओषधियोंकी रक्षा करे। संग्रामके सम-यमें इस मन्त्रको जपनेवाले क्षत्रियोंके सब शत्रु विनष्ट होते हैं और उसका कल्याण हुआ करता है। देव और पितृ कार्य्यमें जो पुरुष इन सब नामोंका पाठ करता है, उसके पितर और देवगण हव्य कव्य भोजन किया करते हैं। जो लोग इन नामोंका पाठ करते, उन्हें व्याधि नहीं होती, श्वापदोंका भय नहीं रहता, द्विप

और तस्करोंसे भय नहीं होता, पाप घटता तथा वे पापोंसे मुक्त हुआ करते हैं। जो लोग उत्तम सावित्री पाठ करते हैं, वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र इन चारों वर्णों विशेष करके सदा आश्रमोंको शान्ति किया करते हैं। जो लोग सावित्री गुण कीर्त्तनरूप महत् वेद ग्रहण करते हैं, उन्हें दुःख नहीं होता और वे परमगति पाते हैं, गौवोंके बीच सावित्री पाठ करनेसे गौवें बहुवत्सला होती हैं। प्रस्थानकाल वा प्रवेशके समय जिस किसी अवस्थामें स्थित होके सर्व्वदा ही सावित्री पाठ करे। हे नरनाथ! जपपरायण होमनिष्ठ और सदा सावधानचित्त ऋषियोंका यह परम जप्य तथा गुप्त मन्त्र है। पहले समयमें यह पराशर-सम्मत पुरातन इतिहास यथार्थ रीतिसे देवराजके निकट वर्णित हुआ था, वही इतिहास पूरी रीतिसे तुम्हारे समीप कहा गया। यह सनातन ब्रह्म स्वरूप, सर्व्वभूतोंका हृदय तथा सनातनी श्रुति है, चन्द्रवंशीय, सूर्य्यवंशीय, रघुवंशीय तथा कुरुवंशीय राजा लोग सदा पवित्र होकर यह परम पवित्र सावित्री पाठ किया करते हैं। देवताओंके निकट सप्तर्षिमण्डल और ध्रुव नक्षत्रके समीप इसे पाठ करनेसे सब पाप विनष्ट होते हैं और इसका पाठ अशुभसे सदा विमुक्त करता है। कश्यप गौतम प्रभृति ऋषिगण, और भृगु, अङ्गिरा, अत्रि, शुक्र, अगस्त्य, वृहस्पति प्रभृति ब्रह्मर्षिगण सेवित ऋचीक पुत्रोंके द्वारा अधिगत यह भरद्वाज सम्मत सावित्री वशिष्ठके निकट पाके देवराज और वसुओंने दानवोंका दल नष्ट किया था। जो लोग वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंको सोनेके सींगसे युक्त एक सौ गऊ दान करते और दिव्य भारत कथाको नित्य पाठ किया करते हैं, उनके सदृश इसे पाठ करनेसे फल होता है। भृगुका नाम लेनेसे विशेष रीतिसे धर्म्मकी वृद्धि होती है, वसिष्ठको प्रणाम करनेसे वीर्य्यकी वृद्धि हुआ करती है, रघुको नमस्कार करनेसे पुरुष युद्धमें विजयी होता है और दोनों अश्विनीकुमारोंके नाम लेनेसे कोई रोग नहीं होता। हे महाराज! यह तुम्हारे निकट शाश्वती ब्रह्म सावित्री वर्णित हुई। हे भारत! तुम सब भी विवक्षु हो, इसलिये और जो सुननेकी इच्छा हो उसे कहो।

१५० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पूज्य कौन है? किसे नमस्कार करना चाहिये? किनके सङ्ग कैसा व्यवहार करना होता है? कैसे पुरुषके साथ कैसा आचार करनेसे मनुष्य हिंसित नहीं होता?

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! ब्राह्मणोंको परिभव करनेसे देववृन्द भी अवसन्न होते हैं, ब्राह्मणोंको नमस्कार करनेसे पुरुष हिंसित नहीं होता। ब्राह्मण ही पूज्य हैं, वेही नमस्कारके योग्य हैं, उनके समीप पुत्रकी भांति वर्त्तमान रहे, वे मनीषि ब्राह्मण लोकोंको धारण कर रहे हैं। जो लोग धन परित्याग करके अभिराम अथवा जो वाक्यसंयममें रत हैं, वेही सब लोगोंके लिये महान् धर्म्मसेतु स्वरूप हैं। जो धृतवती रमणीय और सेवकोंके निधान हैं तथा जो लोक शास्त्रोंके प्रणेता हैं, वे ही यशस्वी होते हैं। तपस्या ही जिनका नित्यधन और वाक्य ही विपुल बल है, वे सूक्ष्मदर्शी धर्म्मज्ञ ब्राह्मण धर्म्मप्रभव हैं। धर्म्मकामना करनेवाले मनुष्य सदा सत्यधर्म्ममें स्थित रहते हैं, वे ही धर्म्मसेतुस्वरूप हैं, जिन्हें सम्यक् रीतिसे अवलम्बन करके चार प्रकारकी प्रजा जीवन व्यतीत करती है। सनातन यज्ञवाही ब्राह्मण लोग सबके नेता और मार्ग प्रदर्शक हैं, वेही पितृ पितामह सम्बन्धीय गुरुतर भारोंको सदा वहन करते हैं। साधुओंकी भांति जो लोग विषम भार उठानेमें अवसन्न नहीं होते, ब्राह्मण देवता और अतिथिगण जिनके सुखस्वरूप हैं,

जो हव्य कव्यका अग्रभाग भोजन करते और भोजनमात्रसे ही तीनों लोकोंको महत् भयसे परित्राण किया करते हैं, वेही सब लोकोंके दीपस्वरूप, वेही नेत्रवान मनुष्योंके नेत्रस्वरूप हैं, समस्त शिक्षा और श्रुति ही जिनका धन है, जो निपुण, मोक्षदर्शी, सब लोकोंके गतिज्ञ और अध्यात्मगति चिन्ताशील हैं। जो आदि मध्य और अन्तके ज्ञाता हैं, जिनके सब सन्देह दूर हुए हैं, जो परावर, विशेषज्ञ हैं, वेही परमगति पाते हैं, जो लोग विमुक्त, पापरहित, निर्द्द्वन्द्व, निष्परिग्रह, मनार्ह और मानवित् महात्माओंके द्वारा सदा मानित हैं, जो चन्दन और मलपङ्कको समान जानते हैं, भोज्य और अभोज्य वस्तुमें तुल्य बुद्धि किया करते हैं, दुकूल और पटवस्त्रमें जिन्हें सम-ज्ञान है, बहुत दिनोंतक बिना भोजन किये जो लोग निवास कर सकते हैं, जो संयतेन्द्रिय होकर स्वशाखोक्त वेदपाठके समय शरीर सुखाया करते हैं, जिनकी कोपाग्नि आजतक भी दण्डकमें उपशान्त नहीं हुई; जो देवताओंके भी देवता, कारणोंके भी कारण और प्रमाणोंके भी प्रमाण-स्वरूप हैं; कोई ज्ञानवान् मनुष्य उन ब्राह्मणोंको अभिभव करनेमें समर्थ नहीं होता; वे अदैवको दैव कर सकते और दैवको अदैव करनेमें समर्थ हैं, तथा क्रुद्ध होनेपर दूसरे लोकों वा लोकपालोंको उत्पन्न कर सकते हैं। जिन महात्माओंके शापसे समुद्र भी अपेय हुआ है, जिनके बीच वृद्ध, बालक सभी सम्मानके योग्य हैं, तप विद्या विशेषके सहारे वे लोग परस्परमें सम्मान प्रदर्शित किया करते हैं। अविद्वान् ब्राह्मण भी देवस्वरूप और महत् पवित्र, पात्र है, विद्वान् ब्राह्मण उससे अधिक देवतुल्य और पूर्णसमुद्र सदृश है। जैसे संस्कृत और असंस्कृत अग्नि महत् देवता है, वैसे ही अविद्वान् अथवा विद्वान् ब्राह्मण भी महत् देवतास्वरूप है। तेजस्वी अग्नि श्मशानमें भी दूषित नहीं होती, विधिपूर्व्वक हविर्यज्ञ और गृहके बीच विशेष रूपसे शोभित होती है। ब्राह्मण यदि सदा अनिष्ट कार्य्योंमें भी वर्त्तमान रहे, तौभी सब भांतिसे माननीय है, उसे परम देवता जानो।

१५१ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे महाप्राज्ञ नरनाथ! किस प्रकारके फलको देखके तथा कैसे कर्म्मोंदयको जानकर आप उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं?

भीष्म बोले, हे भारत! प्राचीन लोग इस विषयमें पवन और अर्जुनके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। माहिष्मती नगरीमें सहस्र भुजयुक्त महाबली श्रीमान कार्त्तवीर्य्य-अर्जुन नाम राजा समस्त जगतका प्रभु हुआ था। उस हैहयवंशीय सत्यपराक्रमी वीरने रत्नाकरवती ससागराम्बरा सद्दीपा समस्त पृथ्वीमण्डलको शासित किया था, उन्होंने किसी कारणसे दत्तात्रेय मुनिको निज वित्त प्रदान किया था, उस कृतवीर्य्यात्मज अर्जुनने क्षत्रधर्म्म विनय और प्रश्रयान्वित होकर उस मुनिकी आराधना की थी। मुनिवरने प्रसन्न होकर उसे तीन वर मांगनेको कहा, राजा मुनिके समीप तीन वर पानेकी बात सुनके बोला, कि सेनाके बीच मेरी हजार भुजा होवें और गृहमें इस विषयमें अन्यथा हो। युद्धमें सैनिक-पुरुष मेरी हजार भुजा अवलोकन करें, मैं संशितव्रती होकर पराक्रमसे समस्त पृथ्वीमण्डल जय करूंगा और धर्म्मपूर्व्वक उसे पाकर आलसरहित होके पालन करूंगा। हे द्विजसत्तम! मैं इन्हीं तीनों वरोंको मांगता हूं, परन्तु आपके समीप मैं और एक चौथा वर पानेके लिये प्रार्थना करता हूं। हे अनिन्दित! आप मुझपर कृपा करके उसे प्रदान कर सकते हैं, यदि मैं आपके आश्रयमें रहके मिथ्या उद्धत

होऊं, तो साधुगण मुझे अनुशासित करें। ब्राह्मणने राजाका ऐसा बचन सुनके उसे तथास्तु कहके वर दिया। इस ही प्रकार उस दीप्त तेजस्वी राजाने ब्राह्मणसे वर पाया था। अनन्तर वह राजा सूर्य्य और अग्निसदृश तेजस्वी रथपर चढ़कर वीर्य्य सम्मोहके वशमें होकर कहने लगा,—"धैर्य्य, वीर्य्य, यश, शौर्य्य, पराक्रम और तेजमें मेरे समान कौन है?" उसका बचन शेष होनेपर आकाशमें 'अशरीरिणी आकाशवाणी हुई। रे मूढ़! क्या तू नहीं जानता, कि ब्राह्मण क्षत्रियसे श्रेष्ठ हैं; क्षत्रिय ब्राह्मणोंके सङ्ग मिलकर इस लोकमें प्रजाशासन करते हैं।'

अर्ज्जुन बोले, मैं सन्तुष्ट होनेपर सबभूतोंकी सृष्टि कर सकता और क्रुद्ध होनेपर सबको बिनष्ट करनेमें समर्थ हूं, इसलिये बचन, मन और कर्म्मसे मेरी अपेक्षा ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं हैं। ब्राह्मणोंका प्राधान्यबाद पूर्व्वपक्ष और क्षत्रियोंका आधिक्य बाक्य सिद्धान्तपथ है, तुमने हेतुयुक्त दोनों बाक्य कहा, किन्तु उस बिषयमें बिशेष दीखता है। ब्राह्मण लोग क्षत्रियोंका आसरा किया करते हैं, परन्तु क्षत्रिय ब्राह्मणोंका आसरा नहीं करते, ब्राह्मण वेदाध्ययन छलनिबन्धनसे क्षत्रियोंको उपजीव्य किया करते हैं। प्रजासमूहके धर्म्म क्षत्रियोंके आश्रित हैं, क्षत्रियोंसे ब्राह्मणोंकी जीविका हुआ करती है, तब उन क्षत्रियोंसे ब्राह्मण किस प्रकार श्रेष्ठ हो सकते हैं? मैं सब प्राणियोंकी अपेक्षा उन प्रधानभिक्षा वृत्तिशाली ब्राह्मणोंको अपने अधोनमें स्थापित करूंगा। सुरलोकमें इस आकाशबाणीने असत्य बचन कहा है, मैं अवश्य तथा अजिन बस्त्रधारी ब्राह्मणोंको जय करूंगा। तीनों लोकोंकेबीच ऐसा कोई देवता वा मनुष्य नहीं है, जो मुझे राज्यसे च्युत कर सके। इसलिये मैं ब्राह्मणोंसे अवश्यही श्रेष्ठ हूं। मैं ब्राह्मण-प्रधान लोकको क्षत्रियप्रधान करूंगा, क्यों कि युद्धके बीच मेरेबलको सहनेमें किसीकाभी उत्साह नहीं है, आकाशबाणी अर्ज्जुनका बचन सुनके भयभीत हुई। अनन्तर आकाशसे वायुने उससे कहा, यह दूषितभाव परित्याग करके ब्राह्मणोंको नमस्कार करो ब्राह्मणोंके बिषयमें पापाचरण करनेसे राज्य नष्ट होगा अथवा महाबल ब्राह्मण लोगही तुम्हें शान्त करेंगे, वे तुम्हें उत्साहरहित करके राज्यसे निराश करेंगे। राजाने उनसे पूंछा, तुम कौन हो? वायुने कहा, मैं देवदूत पवन तुमसे हित-बचन कहता हूं।

अर्ज्जुन बोले, क्याही आश्चर्य्य है! इस समय तुम ब्राह्मणोंके बिषयमें भक्ति अनुराग प्रदर्शित करके ब्राह्मणोंको पृथ्वीके सदृश कहते हो, ब्राह्मणगण वायुके सदृश वा जलके समान, किम्वा अग्नि तुल्य, सूर्य्य अथवा आकाशके सदृश हैं।

१५२ अध्याय समाप्त।

वायु बोले, हे मूढ़! महानुभाव ब्राह्मणोंके कई एक गुण सुनो। हे महाराज! तुमने जिनका नाम लिया, ब्राह्मण लोग उनसेभी श्रेष्ठ हैं। पृथ्वी अङ्गराजके सङ्ग स्पर्द्धा करके भिनष्ट हुई थी बिप्रवर कश्यपने उस पृथ्वीका फिर उद्धार किया था। महाराज ब्राह्मण लोग इस लोक और सुरलोकमेंभी सदा अजेय हैं। पहले समयमें अङ्गिराने निज तेज प्रभावसे समस्त जलपान किया था, वह महात्मा क्षीरको भांति जलको पीकेभी तृप्त नहीं हुए। हे पार्थिव! उन्होंने महाप्रवाहसे समस्त पृथ्वी मण्डलको परिपुरित किया था, उनके क्रुद्ध होनेपर मैंने भी जगत् छोड़के गमन किया और अङ्गिराके भयसे बहुत समय तक अग्निहोत्रमें निवास किया था, और भगवान इन्द्र अहल्याकी कामना करके गौतमके द्वारा अभिशप्त होकर धर्म्मार्थमात्र हिंसित नहीं हुए। हे राजन्! समुद्र मीठे जलसे युक्त प्रकट हुआ था, वह ब्राह्मणके शापसे लवणोदक हुआ है। सुवर्णवर्ण निर्धूम-

युक्त उद्दशिख कवि हुताशन क्रुद्ध अङ्गिराके द्वारा अभिशापित होकर पूर्व्वोक्त गुणोंसे रहित हुए थे। हे राजन्! देखिये सगरके पुत्रगण जिन्होंने महोदधिकी उपासना की थी, वे सब उत्तम ब्राह्मणवर्णधारी द्विजाति कपिलके द्वारा अभिशापयुक्त हुए। हे नरनाथ! तुम ब्राह्मणोंके सदृश नहीं हो, तुम अपने कल्याणकी चिन्ता करो, भगवान गभस्थ ब्राह्मणोंकोभी सदा नमस्कार करते हैं। दण्डक राजाओंका महत्-राज्य ब्राह्मणोंके द्वारा नष्ट हुआ; तालजङ्घ नाम महा क्षत्रिय एकले उर्व्वके द्वारा नष्ट हुआ। तुम्हें भी दत्तात्रेय मुनिकी कृपासे विपुल राज्य, बल, धर्म्म और परम दुर्लभ शास्त्रज्ञान प्राप्त हुआ है। हे अर्ज्जुन! तुम ब्राह्मणरूपी अग्नि-देवकी किस निमित्त सदा पूजा करते हो? वेही सब लोकोंके हव्य कव्यको वहन करते हैं, क्या तुम उन्हें नहीं जानते? अथवा श्रेष्ठ ब्राह्मण प्रतिभूतोंकेही पालन कर्त्ता हैं, इसलिये ब्राह्मणोंको जीवलोकका कर्त्ता जानकेभी तुम क्यों मुग्धहोते हो? अव्यक्त अव्यय प्रभु पितामह ब्रह्मा जिन्होंने इस स्थावर-जङ्गममय निखिल विश्वकी सृष्टि की है, कोई कोई मूर्ख उस ब्रह्माको अण्डसे उत्पन्न हुआ कहनेकी इच्छा करते हैं, अण्ड विभिन्न होनेपर उससे पर्व्वत दिग्मण्डल जल, पृथ्वी और आकाश प्रकाशित होता है, यह दृष्टव्य नहीं है, क्यों कि ब्रह्मा अज होकर किस प्रकार उत्पन्न हुए? आकाश अण्डरूपसे स्मृत हुआ है; पितामह उसही आकाशसे प्रकट हुए हैं, उस समय कुछभी नहीं था, इसलिये ब्रह्माने वहां किस भांति निवास किया? उसे वर्णन करो। हे राजन्! सर्व्वतेजगत प्रभु अहङ्कार नामसे अभिहित होते हैं, लोक-विधाता ब्रह्मा उसके अण्डसे ही प्रकट हुए हैं। वायु उस समय इतनी कथा कहके चुप होरहे, अनन्तर फिर कहने लगे।

१५३ अध्याय समाप्त।

वायु बोले, हे महाराज! पहले समयमें अङ्ग नामक राजाने ब्राह्मणोंको दक्षिणा स्वरूपमें इस भूमिको दान करनेकी इच्छा की; उस समय पृथ्वीने सोचा, कि मैं सर्व्वलोकधारिणी ब्रह्मसुता हूं; तब यह राजा मुझे पाके किस निमित्त ब्राह्मणोंको दान करनेके लिये अभिलाषी हुआ है? जो हो, मैं भूमित्व परित्याग करके ब्रह्मलोकमें चलूं, यह राजा राज्यहीन होवे; ऐसा विचार करके धरणी ब्रह्मलोकमें चली गई। अनन्तर कश्यपने पृथ्वीको जाती हुई देखके उसही समय योगबलसे अपना शरीर परित्याग करके निर्ज्जीव महीदेहमें प्रवेश किया। तब पृथ्वी तथा औषधियोंसे युक्त तथा सब भांतिसे समृद्धिसम्पन्न हुई। हे राजन्! अनन्तर पृथ्वीपर धर्म्मकी प्रधानता हुई और सब भय नष्ट हुआ। हे महाराज! इस ही प्रकार देवपरिमाणसे तीस हजार वर्षतक कश्यपके द्वारा अधिष्ठिता भूमि सदा अतन्द्रित हो रही। हे राजन्! अनन्तर पृथ्वीने ब्रह्मलोकसे आके कश्यपको नमस्कार किया और उस समय महानुभाव कश्यपकी कन्या होनेसे काश्यपी नामसे प्रसिद्ध हुई। हे महाराज! कश्यप ब्राह्मण ऐसे पराक्रमी थे; तुम ही बताओ कोई क्षत्रिय कश्यपसे श्रेष्ठ है वा नहीं? इतनी कथा सुनके राजा चुप हो रहा।

पवन बोले, हे राजन्! आङ्गिरस कुलमें उत्पन्न उतथ्यका वृत्तान्त सुनो। सोमकी कन्या भद्रा परम रूपवती थी, सोमने उतथ्यको उसके योग्य पति जाना था। उस चार्व्वङ्गीने परम नियम अवलम्बन करके उतथ्यके निमित्त घोर तपस्या की। अनन्तर सोमके पिता अत्रिने उतथ्यको आह्वान करके वह यशस्विनी कन्या दान की, भूरिदक्षिण उतथ्यने भी उसे भार्य्या रूपसे विधिपूर्व्वक ग्रहण किया। श्रीमान् वरुणने पहले उस कामिनीके लिये कामना की थी, इसलिये वह वनस्थलमें आगमन करके यमु-

नाके तटपर उसी हरके निज पुरीमें लेगाये, वरुणपुरीसे बढ़के और कोई लोक उत्तम न थे, उसमें परम अद्भुत षट् सहस्र शत ह्रद थे, वह प्रासाद अप्सराओं और दिव्यकामसे शोभित था। हे राजन्! जलेश्वर उस पुरीके बीच उतथ्यभार्य्याके सङ्ग क्रीड़ा करने लगे। अनन्तर नारदने उतथ्यसे उसकी भार्य्या हरनेका वृत्तान्त कहा, उतथ्य नारदके मुखसे ऐसा समाचार सुनके उस समय उनसे बोले, आप वरुणके निकट जाके उससे परुष वाक्य कहिये, कि मेरे वचनके अनुसार मेरी भार्य्याको छोड़ दो, तुमने क्यों उसे हरण किया? तुम लोकपाल हो, लोकोंके विलोपकारी नहीं हो, सोमने मुझे भार्य्या दी है, तुमने इस समय उसे क्यों हरण किया? उतथ्यका यह सब वचन नारदमुनिके द्वारा जलेश्वर सुनके तिरस्कृत हुए और जब नारदने कहा, तुम उतथ्यकी भार्य्या परित्याग करो, तुमने उसे क्यों हरण किया है? तब वरुण उनसे बोले, यह भीरु मेरी भी अत्यन्त प्यारी है, मैं इसे परित्याग नहीं कर सकता। जब वरुणने ऐसा वचन कहा, तब नारद रुष्ट चित्तसे उतथ्य मुनिके निकट आके बोले, वरुणने मुझे गर्द्दनमें हाथ लगाकर बिदा किया, तुम्हारी भार्य्या नहीं दी। अब तुम्हें जो करना हो, वह करो। महातपस्वी उतथ्य मुनि नारदका वचन सुनके क्रुद्ध और प्रज्वलित हुए और निज तेजोप्रभावसे जलको विष्टम्भन पूर्व्वक पान किया। जब सब जल उतथ्यने पीलिया, उस समय जलेश्वरने सुहृदोंसे तिरस्कृत होकर भी उनको भार्य्या न दी। अनन्तर द्विजवर उतथ्य क्रुद्ध होकर भूमिसे बोले, हे भद्रे! छः हजार एक सौ ह्रद विशिष्ट स्थल मुझे दिखाओ। अनन्तर वह स्थल मरुभूमि और समुद्र भी सूख गया! उस ब्राह्मणश्रेष्ठने सरस्वती नदीसे कहा, हे भीरु सरस्वती! तुम इस देशसे गमन करो, हे भीरु! तुमसे रहित होके यह देश पुण्यहीन होवे। अनन्तर उस देशके पुरी रीतिसे सूखनेपर वरुण भद्राको लेकर उतथ्यके शरणागत हुए और उन्हें उनकी भार्य्या प्रत्यर्पण की। हे हैहय! उतथ्य अपनी भार्य्या पाके प्रसन्न हुए और जगत् दुःखसे मुक्त हुआ। महातेजस्वी धर्म्मज्ञ उतथ्यने अपनी भार्य्या पाके वरुणसे जो वचन कहा, सुनो। "हे जलाधिप! तुम्हारे आक्रोश प्रकाश करनेपर भी मैंने इसी तपस्याके द्वारा पाया है," ऐसा वचन कहके वह अपनी भार्य्या लेकर निजगृहपर गये। हे राजन्! वह उतथ्य ऐसे श्रेष्ठ ब्राह्मण थे। अब मैं तुमसे पूछता हूं, कि उतथ्यकी अपेक्षा कौन क्षत्रिय श्रेष्ठ है?

१५४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, वह राजा इतनी कथा सुनके चुप होरहा। अनन्तर वायुने कहा, हे महाराज! द्विजश्रेष्ठ अगस्त्यका माहात्म्य सुनो। असुरोंके द्वारा पराजित देवगण निरुत्साह हुए थे, उनका यज्ञभाग और पितरोंका स्वधा मन्त्रके द्वारा प्रदत्त कव्यादि भी हृत हुआ था। हे हैहयश्रेष्ठ! ऐसी जनश्रुति है, कि मनुष्यका यज्ञकर्म्म नष्ट होनेसे देवगण ऐश्वर्य्यभ्रष्ट होकर इस पृथ्वीतलमें विचरते थे, हे महाराज! अनन्तर किसी समय उन देवताओंने आदित्यसदृश तपस्वी प्रदीप्त विपुलव्रती तेजसे युक्त अगस्त्यको देखा। हे नरनाथ! वे लोग उस महात्मा अगस्त्यको प्रणाम करके कुशलप्रश्नके अनन्तर यह वचन बोले, हे मुनिपुङ्गव! हम लोग युद्धमें दानवोंके द्वारा पराजित तथा ऐश्वर्य्यभ्रष्ट हुए हैं, इसलिये आप हमें तीव्रभयसे परित्राण करिये। अगस्त्य देवताओंका ऐसा वचन सुनके अत्यन्त कुपित हुए और वह तेजस्वी प्रलयकालकी कालाग्नि सदृश प्रज्वलित होगये।

हे महाराज! उस समय सहस्रों दानवगण उस प्रदीप्त किरणजालसे एकबारही जलके

आकाशसे निपतित हुए। दैत्यगण अगस्त्यके तेजसे दह्यमान होकर भूलोक और स्वर्गलोक परित्याग करके दक्षिण दिशामें गये। बलि उस समय पृथ्वीतलमें अश्वमेध यज्ञ करता था, इसीसे वह और उसके अतिरिक्त जो सब महासुर नीचे तथा पृथ्वीतलमें थे, वे भस्म नहीं हुए। हे नृप! अनन्तर भय शान्त होनेपर देवताओंके द्वारा सब लोक फिर व्याप्त हुआ, तब देवताओंने फिर अगस्त्यसे कहा, आप भूमिमें रहनेवाले असुरोंका नाश करिये। हे राजन्! अगस्त्य देवताओंका ऐसा वचन सुनके उनसे बोले, मैं भूमिस्थ दानवोंको जलानेमें समर्थ नहीं हूं, क्योंकि उससे मेरी तपस्या नष्ट होनेकी सम्भावना है। हे राजन्! इस ही प्रकार पवित्रचित्तशाली अगस्त्यने निज तेजके सहारे दानवोंको जलाया था। हे अनघ! अगस्त्य ऐसे ही थे,—यह मैंने तुम्हारे समीप वर्णन किया। अब मैं कहता हूं, अथवा तुमही कहो, क्या अगस्त्यकी अपेक्षा क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं? भीष्म बोले, राजा ऐसा प्रश्न सुनके चुप होरहा।

अनन्तर वायु बोले, हे महाराज! यशस्वी वशिष्ठके मुख्य कर्म्म सुनो। आदित्यगण मन ही मन वशिष्ठका गौरव जानके उनके समीप वैखानस नाम सरोवरपर जाके यज्ञ करते थे। पर्व्वतसदृश खलि नाम दानवोंने देवताओंको यजमान और यज्ञदीक्षासे कृश देखकर वध करनेकी इच्छा की। उन लोगोंके निकटमें ही ब्रह्मदत्त नाम तड़ाग था, दानवगण हताहत होके उस तड़ागमें स्नान करते ही जीवित होते थे; वे महाघोर पर्व्वत परिघ और वृक्षोंको लेकर एक सौ योजन समुत्थित जलको आन्दोलित करते थे। अनन्तर दश हजार दानव देवताओंकी ओर दौड़े, देवगण दानवोंसे पीड़ित होके देवराजके शरणागत हुए; देवराज देवताओंके दुःखसे पीड़ित होकर वसिष्ठके शरणमें गये। अनन्तर भगवान् वसिष्ठ ऋषिने उन लोगोंको अभय दिया, अनृशंसता परायण मुनिने उस समय देवताओंको दुःखित जानके निज तेज प्रभावसे सहजहीमें उन खलि नामक दानवोंको जला दिया। महातपस्वी वसिष्ठ कैलाशपर्व्वतसे चलनेवाली गङ्गा नदीको उस दिव्य सरोवरमें लिवा लाये, तब वह तड़ाग गङ्गामें मिल गया, गङ्गासे मिलकर उस सरोवरका सरयू नाम हुआ। जिस स्थानमें खलि दानवगण मारे गये थे, उस देशका खलिन नाम हुआ। इस ही प्रकार इन्द्रके सहित सब देवताओंकी वसिष्ठ मुनिने रक्षा की थी और ब्रह्मदत्त बरदीप्त दैत्योंका महात्मा वसिष्ठके द्वारा नाश हुआ। हे अनघ! यह मैंने तुमसे वसिष्ठका माहात्म्य कहा, मैं कहता हूं तथा तुम ही कहो, क्या वसिष्ठसे क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं?

१५५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, कार्त्तवीर्य्य अर्ज्जुनने इतनी कथा सुनके मौनावलम्बन किया था। अनन्तर वायु उससे कहने लगे। हे हैहयश्रेष्ठ! मेरे समीप महात्मा अत्रिका कर्म्म सुनो। देवता और दानवगण घोर अन्धकारके बीच इकट्ठे होकर युद्ध करते थे, उस युद्धमें राहुने बाणसे सूर्य्य और चन्द्रमाको बिद्ध किया। हे नृपश्रेष्ठ! अनन्तर अन्धकारसे ग्रस्त देवगण उस समय बलवान दानवोंसे मारे जाने लगे। देवताओंने असुरदलसे बध्यमान तथा क्षीणबल होकर तपस्वी अत्रि नाम ब्राह्मणको तपस्या करते देखा। अनन्तर देवगण उस शान्त जितेन्द्रिय अत्रिसे बोले, हम दोनों सूर्य्य और चन्द्रमा हैं, दानवोंने बाणोंसे हमें बिद्ध किया है, हम लोग अन्धकारयुक्त स्थानमें शत्रुओंके द्वारा व्यथित होते हैं, शान्ति लाभ नहीं कर सकते। हे प्रभु! इसलिये आप हम लोगोंको भयसे परित्राण करिये। ऋषिने कहा, मैं किस प्रकार आप लोगोंकी रक्षा करूंगा?

देवगण बोले, आप चन्द्रमा और अन्धकार-नाशक सूर्य्य होकर हमारे शत्रुओंका नाश करिये। अत्रि देवताओंका ऐसा वचन सुनके उस समय तमोनुद शशी हुए और सौम्यभावसे चन्द्रमाकी भांति प्रिय दीखने लगे। हे महाराज! उस समय अत्रिने सूर्य्य और चन्द्रमाको प्रभायुक्त न देखकर निज तेजसे रणभूमिको प्रकाशित किया, जगत् अन्धकाररहित और प्रकाशमान हुआ। उन्होंने निज तेजके सहारे देवताओंके शत्रुओंको जय किया, देवगण महाघोर विकराल असुरोंको अत्रिके द्वारा दह्यमान देखकर आप भी उनसे रक्षित होकर दानवोंसे युद्ध करने लगे। अनन्तर सूर्य्य उदय होनेसे देवताओंका परित्राण हुआ और दानवगण मारे गये, अत्यन्त तेजस्वी अत्रिने दानवोंको सामर्थ्य हरण की। हे राजर्षि! द्वितीय अग्निसदृश मृगचर्म्म धारी जपपरायण फल खानेवाले अत्रिने जो कार्य्य किया था, उसे अवलोकन करो। मैंने महात्मा अत्रिके कार्य्यको विस्तारपूर्व्वक कहा, अब मैं कहता हूं, वा तुम्हीं बताओ, क्या अत्रिसे भी क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं? अर्ज्जुन ऐसा वचन सुनके चुप होरहा।

अनन्तर वायु बोले, हे राजन्! महात्मा च्यवनका महत् कर्म्म सुनो। च्यवन मुनि दोनों अश्विनीकुमारोंके निकट प्रतिश्रुत होकर देवताओंके सहित इन्द्रसे बोले, इन दोनों वैद्योंको सोमपान कराओ। इन्द्र बोले, हमने इन्हें परित्याग किया है, इसलिये ये लोग किस प्रकार सोमपान कर सकते हैं? देववृन्द इनकी प्रशंसा नहीं करते, इसलिये आप हमसे ऐसा वचन न कहिये। हे महाव्रत विप्रवर! हम लोग दोनों अश्विनीकुमारोंके सहित सोमपान करनेकी इच्छा नहीं करते, आप और जो कुछ कहें, उसे हम प्रतिपालन करेंगे।

च्यवन मुनि बोले, दोनों अश्विनीकुमार तुम्हारे सङ्ग सोमपान करेंगे; हे सुरेश्वर! ये दोनों अमर और सूर्य्यके पुत्र हैं। हे देवगण! मैंने जैसा कहा, उसे प्रतिपालन करो, ऐसा करनेसे तुम्हारा कल्याण होगा, नहीं तो तुम लोगोंके विषयमें अमङ्गल होगा।

इन्द्र बोले, हे द्विजवर! हम अश्विनीकुमारोंके सहित सोमपान न करेंगे। जिनकी इच्छा हो, वे पीवें; किन्तु मैं इनके सङ्ग सोमपान करनेका उत्साह नहीं करता।

च्यवन बोले, हे बलसूदन! यदि तुम मेरी बात न मानोगे, तो यज्ञमें मेरे द्वारा प्रमथित होके उस ही समय सोमपान करोगे।

वायु बोले, अनन्तर अश्विनीकुमारोंके हितके निमित्त च्यवनने सहसा यज्ञकर्म्म आरम्भ किया। उनके मन्त्रसे देववृन्द अभिभूत हुए, इन्द्रने उस कर्म्मको आरम्भ हुआ देखके वज्रके सहित विपुल पर्व्वत उठाके क्रोधपूर्व्वक च्यवनकी ओर दौड़े। तपस्वी भगवान् च्यवनने इन्द्रको आते हुए देखकर क्रोधपूर्व्वक जल छिड़कके वज्र और पर्व्वतके सहित उन्हें स्तम्भित कर दिया। महामुनि च्यवनने आहुतिमय एक मुख बाये हुए महाघोर मद नाम पुरुषको इन्द्रका शत्रु बनाके उत्पन्न किया। उसके सहस्र दांत एक सौ योजन लम्बे थे और उसके परम दारुण दांत दो सौ योजनके बीच व्याप्त थे। उसका एक ओठ भूमि और दूसरा आकाशमण्डलमें जा लगा। जैसे समुद्रमें सब मछलियं तिमिके मुखमें समा जाती हैं, वैसे ही इन्द्रके सहित सब देवता उसके जिह्वामूलमें स्थित हुए अनन्तर देवताओंने आपसमें विचार करके मदके समीप जाकर देवराजसे कहा, इस द्विजवरको प्रणाम करो; हम लोग प्रसन्न होकर दोनों अश्विनीकुमारोंके सङ्ग सोमपान करेंगे। अनन्तर इन्द्रने प्रणत होके च्यवनका वचन प्रतिपालन किया; च्यवन मुनिने दोनों अश्विनीकुमारोंको सोमपान कराया। अनन्तर मुनिश्रेष्ठ वीर्य्यवान च्यवनने कर्म्म प्रत्याहरण किया

और जूआ, मृगया, मद्यपान तथा स्त्रियोंमें मदको विभाग कर दिया। हे राजन्! मनुष्योंका निःसन्देह इन्हीं दोषोंसे नाश होता है, इसलिये मनुष्य इन दोषोंको एकबारगी परित्याग करे। हे महाराज! यह च्यवनके कर्म्म तुम्हारे समीप वर्णित हुए। मैं कहता हूं; तथा तुम ही कहो, क्या ब्राह्मणोंसे क्षत्रिय श्रेष्ठ हैं?

१५६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अर्जुनके चुप हो रहनेपर पवनने उससे फिर कहा, हे जननाथ! ब्राह्मणोंके जो मुख्यकर्म्म हैं, वह सब मेरे मुखसे सुनो। जब इन्द्रादि देवता मदके मुखके भीतर चले गये तब च्यवनने उनकी भूमि हरण की। दोनों लोक हरे जानेपर महानुभाव देवगण अत्यन्त दुःखित और शोकार्त्त होकर ब्रह्माके शरणागत हुए। देवगण बोले, हे लोकपूजित! जब हम लोग मदके मुखके भीतर थे, उस समयमें च्यवन मुनिने हमारी भूमि हर ली और रूप नामक दानवोंने स्वर्गलोक हर लिया।

ब्रह्मा बोले, हे इन्द्रादि देवगण! तुम लोग शीघ्र ही ब्राह्मणोंके शरणमें जाओ, उन्हें प्रसन्न करनेसे पहलेकी भांति तुम लोग दोनों लोकोंको पाओगे। अनन्तर इन्द्रके सहित सब देवता ब्राह्मणोंके शरणागत हुए।

ब्राह्मणगण बोले, हम किसे जय करें? देववृन्द ब्राह्मणोंका ऐसा वचन सुनके बोले, इस समय आप लोग रूपनाम दैत्योंको जीतिये, द्विजगण बोले, हम भूमिगत दैत्योंको जीतनेमें समर्थ हैं। अनन्तर ब्राह्मणोंने रूपनाशन कर्म्म आरम्भ किया, रूपगणने यह वृत्तान्त सुनके धनी नाम दूतको उनके समीप भेजा। धनी उस समय भूलोकवासी ब्राह्मणोंसे रूपका कहा हुआ वचन कहने लगा। "रूपगण आप लोगोंके सदृश हैं, इसलिये इस समय यह क्या होरहा है? वे सभी वेद जाननेवाले प्राज्ञ हैं, सभी यज्ञ करनेवाले, सब कोई सत्यव्रती और सभी महर्षियोंके तुल्य हैं, उनमें सदा श्री निवास करती है, वेभी श्रीको धारण करते तथा स्त्रीगमन नहीं करते, तथा मांस भक्षण नहीं करते, जलती हुई अग्निमें होम करते हैं, गुरुवचनके वशीभूत रहते हैं, सभी नियतचित्तवाले हैं, बालकोंको खानेकी वस्तु विभाग करके देते हैं। वे लोग धीरे धीरे गमन करते हैं, रजस्वलाकी सेवा नहीं करते, स्वर्गमें गति लाभ करते तथा वे लोग शुभकर्म्मशाली हैं। गर्भिणी तथा वृद्धोंके भूखे रहते, वे लोग भोजन नहीं करते, पूर्व्वान्हमें क्रीड़ा नहीं करते और दिनमें शयन नहीं करते"—इन सब गुणों तथा इनके अतिरिक्त और भी बहुतेरे गुणोंसे युक्त रूपगणको तुम क्यों जय करोगे, इस कार्य्यसे निवृत्त हो जाओ निवृत्त होनेसे तुम्हारा मङ्गल होगा।

ब्राह्मणोंने कहा, हम लोग रूपगणको जीतेंगे, देवताओंके सहित हम लोग अभिन्नभावसे युत हुए हैं, इसलिये रूपगण हमारे बध्य हैं। हे धनी! तुम जिस स्थानसे आये हो, वहांही जाओ। धनी रूपगणके समीप जाके बोला, ब्राह्मण लोग तुम्हारे प्रियङ्कर नहीं हैं, ऐसा सुनकर रूपगण अस्त्र लेकर ब्राह्मणोंकी ओर दौड़े। ब्राह्मणोंने रूपगणकी ऊंची ध्वजाके सहित आते हुए देखकर उनके प्राणनाशके निमित्त जलती हुई अग्नि चलाई। हे नरनाथ! ब्राह्मणोंकी चलाई हुई अग्नि रूपगणका नाश करके आकाश मण्डलमें बादलोंकी भांति विराजमान हुई। देवता लोग इकट्ठे होकर युद्धमें दानवोंके दलका संहार करके ब्राह्मणोंके द्वारा रूपगणके मारे जानेका वृत्तान्त न जान सके। हे विभु! अनन्तर महातेजस्वी नारद मुनि आके बोले, महाभाग ब्राह्मणोंके तेजसे रूपगण मारे गये। नारदमुनिका वचन सुनके सब देवता प्रसन्न हुए और यशस्वी ब्राह्मणों तथा द्विजगणोंकी प्रशंसा करने लगे अनन्तर

देवताओंके तेज और वीर्य्यकी वृद्धि हुई और उन्होंने तीनों लोकोंमें पूजित होकर अमरत्व लाभ किया। हे महाबाहो नरनाथ! जब पवनने इतनी कथा कही, तब अर्ज्जुनने उनको पूजा करके जो उत्तर दिया उसे सुनो।

अर्ज्जुन बोले, हे प्रभु! मैं सब प्रकारसे सदा ब्राह्मणोंके निमित्त जीवित हूं, मैं व्रतनिष्ठ होकर ब्राह्मणोंको प्रतिदिन प्रणाम किया करता हूं। दत्तात्रेयके प्रसादसे मैंने यह बल पाया है और इस लोकमें मेरी परम कीर्त्ति हुई है तथा मैंने महत्कर्म्म किया है। हे मारुत! तुमने जो ब्राह्मणोंके अद्भुत कर्म्म वर्णन किये, उसे मैंने सावधान होकर सुना है।

वायु बोले, तुम ब्राह्मणों और इन्द्रियोंको चत्रधर्म्मके अनुसार पालन करो, समयके अनुसार भृगुवंशसे तुम्हें घोर भय प्राप्त होगा।

१५७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे जननाथ! आप संशित-व्रती ब्राह्मणोंको सदा अर्च्चना करते हैं, परन्तु कौनसा फलोदय देखके उनकी पूजा किया करते हैं? हे महाव्रत महाबाहो! ब्राह्मणपूजासे क्या फल दीखता है, जिससे आप उन लोगोंको अर्च्चना करते हैं। यह सब वृत्तान्त मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, ब्राह्मणपूजाके फलदर्शी ये महाव्रत महाबुद्धिमान केशव तुमसे समस्त फलका विषय कहेंगे। आज मेरा बल, दोनों कान, वचन, मन, दोनों नेत्र और ज्ञान विशुद्ध नहीं है; जान पड़ता है शरीर त्यागमें अब अधिक बिलम्ब नहीं है; सूर्य्य भी शीघ्र प्रयाण नहीं करता है। हे राजन्! पुराणोंके बीच ब्राह्मण; चत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके जो महत् धर्म्म वर्णित है, और वे लोग जिस धर्म्मको उपासना करते हैं, उसका शेषभाग कृष्णके निकट सीखो। मैं ही इस कृष्णको यथार्थ रीतिसे जानता हूं, इनका स्वरूप तथा इनका पुराण-बल मुझसे अविदित नहीं है। हे कौरवेन्द्र! केशव अमेयात्मा हैं, इसलिये येही सन्देहके स्थलमें धर्म्मका वर्णन करेंगे। कृष्णने ही पृथ्वी, आकाश और स्वर्गको सृष्ट की है; कृष्णके देहसे ही महिमण्डलकी उत्पत्ति हुई है, येही भीमबल पुराण बराह हैं; इन्होंने ही पर्व्वतों तथा सब दिशाओंको उत्पन्न किया है। येही पाताल, आकाश, सुरपुर, चारों दिशा तथा चारों विदिशामें व्याप्त हैं, यह सृष्टि इन्हींसे प्रकट हुई है, इन्होंने ही इस दृश्यमान पुरातन जगत्को उत्पन्न किया है; इन्हींकी नाभिसे कमल प्रकट हुआ था, जिससे अत्यन्त तेजस्वी स्वयं हिरण्यगर्भ उत्पन्न हुए। हे पार्थ! जिन्होंने घोर अन्धकारको दूर किया है, वेही अतल-स्पर्शी अपार समुद्रमें निवास कर रहे हैं। सत्ययुगमें पूरा धर्म्म था, त्रेतायुगमें विवेक प्रबल हुआ था, द्वापर युगमें बलकी प्रधानता थी। हे पार्थ! कलिकालमें पृथ्वीपर अधर्म्म आया है। इस कृष्णने ही पहले दैत्योंको मारा, येही पहले देव और सम्राट् हुए थे, येही सब भूतोंको उत्पत्तिके कारण हैं, यही भूत-भविष्यत और येही समस्त जगत्के रचाकर्त्ता हैं। जिस समय असुरवंशमें धर्म्म ग्लानियुक्त होता है, उस समय कृष्ण मनुष्यलोकमें अवतार लेते हैं। येही विशुद्धस्वभाववाले भगवान् धर्म्ममें स्थित रहके परापर लोकोंको रचा किया करते हैं। हे पार्थ! ये असुरोंके बधके निमित्त त्यज्य पुरुषोंका परित्याग किया करते हैं। यह देव ही कार्य्य, अकार्य्य, कारण, कृत, भविष्यत और क्रियमाण है; इसे ही राहु, चन्द्रमा तथा इन्द्र जानो, येही विश्वकर्म्मा, येही विश्वरूप, येही विश्वभुक, येही विश्वस्रष्टा और येही विश्वजित् हैं; येही शूलधारी शरीरधारी कराल हैं; कर्म्मोंके द्वारा विदित होनेवाले इस देवकी सब कोई स्तुति किया करते हैं। गन्धर्व्व, अप्सरा

और सैकड़ों देवता सदा इनकी उपासना करते हैं, राक्षसगण इन्हींका कीर्त्तन किया करते हैं, येही एक मात्र धनपोषक और विजिगीषु हैं। यज्ञमें उद्गातृगण इनकी स्तुति करते हैं, साम-गान करनेवाले रथन्तर सामके सहारे इनकी स्तुति किया करते हैं, ब्राह्मण लोग ब्रह्ममन्त्रसे इनका स्तव करते हैं, अध्वर्य्युगण इन्हींके उद्देश्यसे हवि प्रदान किया करते हैं। गोवर्द्धन पर्व्वत धारण करनेके समय इन्द्रादि देवताओंने वाणीके सहारे इनकी स्तुति की थी।

हे भारत! अकेले येही समस्त जीवों तथा पशुओंके नियन्ता हैं, येही पुरातनी गुहाके बीच प्रविष्ट ब्रह्म हैं। हे भरतकुलप्रदीप! इन्होंने ही पहले पृथिवीका छादन और मज्जन दर्शन किया है। येही श्रेष्ठ कर्म्मशील पुरुष दैत्य और असुरोंको विक्षोभित करके पृथ्वीका उद्धार करता है। पण्डित लोग इनका विविध भक्ष्य निर्द्देश करते और इन्हें युद्धमें जय प्रापक कहा करते हैं। आकाश, पृथ्वी और स्वर्गादि इनके वशमें हैं; इन्होंने ही मित्रावरुणको रेत-कुम्भसे उत्पन्न किया, जिसमें उत्पन्न हुए ऋषिको लोग वशिष्ठ कहा करते हैं। येही सर्व्वव्यापी मातरिश्वा वेगवान् अश्व हैं, येही किरणधारी सूर्य्य और आदि देव हैं; इन्हींके द्वारा सब असुर पराजित हुए हैं; इन्होंने ही त्रिपाद विक्षेपसे त्रिभुवन जय किया है। येही देवताओं, मनुष्यों और पितरोंके आश्रय हैं। पण्डित लोग इन्हें ही यज्ञवित् पुरुषोंका यज्ञ कहा करते हैं। येही कालका विभाग करके उदित होते हैं, इनकी दक्षिण और उत्तर, दानों गतिको अयन कहा जाता है। इनकी समस्त किरण मेदिनीमण्डलको प्रकाशित करती हुई, ऊपर नीचे और तिर्य्यक्प्रदेशमें विचरती हैं। वेद जाननेवाले ब्राह्मण लोग इनकी ही सेवा किया करते हैं; सूर्य्य इनकी ही प्रभाको पाके प्रकाशित होता है। यज्ञकारी होकर प्रतिमासमें यज्ञका विधान करते हैं। वेद जाननेवाले ब्राह्मणगण यज्ञमें इन्हींकी स्तुति किया करते हैं। ये सर्दी, गर्म्मी, बर्षाका समय, गर्भ त्रिनाभियुक्त सम्वत्सर चक्ररूपसे वर्णित होके सप्ताश्वयुक्त वर्षा·वात उष्ण-प्रकार तीनों धाम वहन करते हैं। येही महातेजस्वी सब भांतिसे सब लोकोंकी हिंसा करते हैं, पापोंको आकर्षण करनेसे इनका कृष्ण नाम हुआ है; ये अकेले ही सब लोकोंको धारण किये हुए हैं। हे वीरवर पार्थ! येही सूर्य्यरूपसे अन्धकारका नाश करते हैं, इसलिये इस कृष्णको ही तुम कर्त्ता जानके इनका आसरा करो। जिस महात्माने किसी समयमें कक्षगत सर्व्व शक्तिमान् नित्य-सन्तुष्ट धूमकेतुरूपसे खाण्डववनमें राक्षसों और उरगोंको पराजित करके सर्व्वगामी होकर अग्निमें सब आहुति प्रदान की थी, उसीने धनञ्जयको सफेद घोड़े प्रदान किये हैं; उसहीने घोड़ों तथा अन्य समस्त जीवोंकी सृष्टि की है। वही संसार-रथको योजना करनेवाला है। ऊर्द्ध, मध्य और अधः लोकोंमें उसके रथकी गति हुआ करती है; इसलिये उसका रथ त्रिचक्र और त्रिवृत-शिरा नामसे विख्यात है। काल, अदृष्ट, ईश्वरेच्छा और सङ्कल्प ये चारों उसके रथके घोड़े हैं। श्वेत कृष्ण और शुक्लकृष्ण मिश्रित त्रिविध-धर्म्मगर्भ है, इसलिये त्रिनाभि और वही पञ्चभूतोंका अवलम्ब है, इसलिये पद्मनाभि कहाता है। उसने ही पृथिवी, स्वर्ग और अन्तरिक्षको सृष्टि की है, उसीने वन पर्व्वतोंको उत्पन्न किया है। वह विषयेन्द्रियोंका नियन्ता है, इसलिये हृषीकेश कहाता है और वही अपरिमित प्रदीप्त अग्निसदृश तेजस्वी है। उसने ही नदियोंकी जिघांसा करते हुए उन्हें लङ्घन किया था; वज्र प्रहार करनेके लिये उद्यत देवराजको पराजित किया था; एक मात्र वही यज्ञमें महेन्द्ररूपसे ब्राह्मणोंके द्वारा पुरातन

ऋग्वेदके सहस्र मन्त्रोंसे स्तुतियुक्त हुआ करता है। हे राजन्! महातेजस्वी दुर्व्वासाको गृहमें निवास करानेके लिये इनके अतिरिक्त और कोई भी समर्थ न हुआ। पण्डित लोग उन्हें ही एक मात्र पुरातन ऋषि कहा करते हैं, वही विश्वकर्त्ता है, वही अपने सहारे सब जीवोंका विधान करता है। जो देवाधिदेव होकर वेदोंको स्थापन करता है, वही अग्निहोत्र प्रभृतिका आश्रय करता है। पुरातन विधि, काम, वेद और लौकिकमें जो कुछ फल होते हैं, विश्वकसेन नारायणको ही फलस्वरूप जानना चाहिये। सब लोकोंमें जो सब शुक्लवर्ण ज्योतिके पदार्थ हैं, तीनोंलोक तीनोंलोकपाल तीनोंअग्नि, तीनों व्याहृति और समस्त देवगण देवकीनन्दनस्वरूप हैं। वेही सम्वत्सर, वेही ऋतु, वेही पक्ष, वेही अहोरात्र हैं; वेही कला, काष्ठा, मात्रा, मुहूर्त्त, लव और क्षण हैं,—यह सब विश्वक्सेनका ही स्वरूप जानो। हे पार्थ! चन्द्रमा, सूर्य्य, ग्रह, नक्षत्र, तारा, सब पर्व्व, पौर्णमास, नक्षत्रयोग और ऋतु,—ये सब विश्वक्सेन नारायणसे ही उत्पन्न हुए हैं। रुद्रगण, आदित्यगण, वसुगण, दोनों अश्विनीकुमार साध्यगण, विश्वगण, मरुद्गण, प्रजापति, देवमाता अदिति और सप्तर्षि कृष्णसे ही उत्पन्न हुए हैं। वही विश्वरूप वायु होकर जगतको विक्षिप्त कर रहा है, वही अग्नि होकर जगतको जलाता है, वही जल होके सबको डुबाता है और ब्रह्मा होके सबकी सृष्टि करता है। वही वेद-प्रतिपाद्य वेदवस्तुओंका बोध कराता है और विधि होकर वेद तथा विधेय विषयोंका आश्रय करता है। धर्म्म, वेद, बल तथा चराचरात्मक सब विषयोंको ही केशवस्वरूप जानो। जिसकी प्रभाके सहारे यह परम ज्योतिस्वरूप पूर्व्व दिशामें प्रकाशित है, उस सर्व्व-भूतात्मा विश्वरूपने पहले जलकी सृष्टि करके अनन्तर सब विश्व निर्म्माण किया है। सब ऋतु, उत्पात, विविध अद्भुत विषय, मेघमण्डल, बिजली ऐरावत और स्थावर जङ्गम सबकोही विश्वात्मा विष्णु जानो। पण्डित लोग उसी विश्वावास, निर्गुण, वासुदेव, सङ्कर्षण और जीवस्वरूप कहते हैं, उससे प्रद्युम्न और चौथा अनिरुद्ध अर्थात् अहङ्कार उत्पन्न होता है। वह आत्मयोनि महात्माही देव, असुर, मनुष्य, श्वापद और तिर्य्यक,—इन पांचों रूपसे पञ्चजनोत्पन्न पञ्चभूतयुक्त जगतकी सृष्टि करनेके लिये अभिलाषी होकर आज्ञा प्रचार किया करता है। हे पार्थ! अनन्तर वह पृथ्वी, वायु, आकाश, अग्नि और जलकी सृष्टि करता है, वह इस स्थावर जङ्गमात्मक चतुर्व्विध लोकोंकी सृष्टिकरता और अन्तरिक्ष तथा भूमितलमें भूरिवारि स्थापित करता है। हे राजन्! उसने जो इस विश्वको बनाया है, वह आत्मयोनि स्वयं ही सबको जीवित रखता है। अनन्तर वह भूपति सुरासुर मनुष्यलोक, ऋषिगण, पितृगण, प्रजासमूह तथा प्राणियोंको संक्षेप रीतिसे विधिपूर्व्वक उत्पन्न करनेका अभिलाषी होकर शुभाशुभ स्थावर और जङ्गमोंकी सृष्टि करता है, इस लिये जानना चाहिये कि विश्वक्सेनसे सब कोई उत्पन्न हुए हैं। जो वर्त्तमान है, जो होगा, तुम वह सब इस केशवको ही जानो। शाश्वत धर्म्मवाही कृष्ण ही प्राणियोंके अन्तकालमें साक्षात् मृत्युस्वरूप हैं। इस लोकमें जो कुछ अतीत हुआ तथा जो विषय हम लोगोंको मालूम नहीं हैं, उन सबको भी विश्वक्सेन नारायण जानो। लोकमें जो कुछ प्रसस्त अथवा जो कुछ शुभ अशुभ अचिन्तनीय विषय हैं, वे सब केशवके ही रूप हैं; जो उससे भिन्न है, वही विपरीत है। केशवका ऐसा ही प्रभाव है, इसही निमित्त ये नारायण परम अव्यय हैं, येही जगतको आदि, मध्य और अन्तमें निवास करते हैं। येही जगतको उत्पत्तिके कारण हैं, इनका विनाश नहीं है; इन्हें जाननेकी इच्छा करो।

१५८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे मधुसूदन! ब्राह्मणोंकी पूजा करनेसे क्या फल होता है, उसे तुम वर्णन करो, तुम ही इस विषयके जाननेवाले हो और पितामह तुम्हें विशेष रीतिसे जानते हैं।

बासुदेव बोले, हे कुरुसत्तम भरतकुलधुरन्धर महाराज! मैं यथार्थ रीतिसे ब्राह्मणोंके गुणोंको वर्णन करता हूं, तुम सावधान होकर सुनो। हे कुरुनन्दन! पहले द्वारकानगरमें मेरे बैठे रहनेपर प्रद्युम्नने ब्राह्मणोंके द्वारा प्रकोपित होकर मुझसे पूछा, हे मधुसूदन! ब्राह्मणोंकी पूजा करनेसे क्या फल होता है और इस लोक तथा परलोकमें किस निमित्त उनका ईश्वरत्व हुआ है? हे मानद! सर्व्वदा द्विजातियोंकी पूजा करनेसे क्या फल है? आप स्पष्ट रीतिसे मेरे समीप उसका उपदेश करिये; इस विषयमें मुझे बहुत ही सन्देह हुआ है। हे महाराज! जब प्रद्युम्नने ऐसा कहा, तब मैंने उन्हें जो उत्तर दिया था, उसे सावधान होके सुनो। हे रुक्मिणीनन्दन! ब्राह्मणोंकी पूजाका फल मेरे समीप सुनो। त्रिवर्ग, अपवर्ग, यश, श्री और रोगशान्तिविषयमें देवताओं तथा पितरोंकी पूजा करनेके समयमें ब्राह्मणोंको सन्तुष्ट करना हम लोगोंका कर्त्तव्य कार्य्य है। हे रुक्मिणीपुत्र! ये सोमराज हैं, येही इस लोक और परलोकमें सुख-दुःखके ईश्वर हैं; ब्राह्मणोंकी उत्पत्ति अतिकल्याणी है, इस विषयमें मैं विचार नहीं करता। ब्राह्मणोंकी पूजा करनेसे आयु, कीर्त्ति, यश और बलकी वृद्धि होती है, जो लोग ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं, वे लोकेश्वर होते हैं। हे पुत्र! मैं ईश्वर होके भी किस हेतु ब्राह्मणोंका समादर न करूंगा? हे महाबाहो! द्विजोंके विषयमें तुम्हें मन्यु न होवे। इस लोक और परलोकमें ब्राह्मण ही महाप्राणी हैं, प्रत्यक्षदर्शी ब्राह्मण लोग क्रुद्ध होनेसे इस जगतको भस्म कर सकते हैं, और दूसरे लोकों तथा लोकेश्वरोंकी सृष्टि भी कर सकते हैं। जिनमें पूर्ण ज्ञान और सुन्दर तेज है, ब्राह्मणोंके अधीनमें क्यों न वर्त्तमान रहेंगे। हे तात! मेरे गृहमें चीरवासा बेलका दण्ड धारण करनेवाला दीर्घश्मश्रु, अत्यन्त कृश पिङ्गलवर्ण एक ब्राह्मण बास करता था। भूलोकमें जो सब दीर्घ मनुष्य हैं, वह उन सबसे अधिक दीर्घ था; वह मनुष्यलोक तथा समस्त दिव्य लोकोंमें बिचरता था, वह चत्वर और सभाओंके बीच यह गाथा गाता था, कि 'दुर्व्वासा ब्राह्मणको सत्कारपूर्व्वक कौन गृहमें बास करा सकता है अल्प अपराध करनेपर भी मैं सर्व्वभूतोंके विषयमें रोष प्रकाश किया करता हूं, मेरा वचन सुनके कौन मुझे आश्रय देगा? जो कोई मुझे गृहमें बास करावेगा, वह मुझे प्रकोपित न कर सकेगा'। दुर्व्वासा ब्राह्मणके ऐसी कथा प्रचार करते रहनेपर जब किसीने भी उनका आदर न किया; तब मैंने उन्हें निज गृहमें बास कराया। उन्होंने एक ही बार सहस्र लोगों तथा उससे भी अधिक लोगोंका अन्न भोजन किया, किसी बार थोड़ा ही भोजन किया; पुनर्व्वार गृहमें न आये। सहसा हंसे कभी अकस्मात रोदन करनेमें प्रवृत्त हुए। उस समय पृथ्वीपर उनके तुल्य अवस्थावाला पुरुष न था।

अनन्तर उन्होंने आश्रममें जाके बिछाई हुई शय्या और अलंकृत कन्याओंको जलाकर वहांसे प्रस्थान किया। अन्तमें वह संशितव्रती मुनि मुझसे फिर बोले, हे कृष्ण! मैं शीघ्र ही पायस भोजन करनेकी इच्छा करता हूं। मैं उनका मन जानता था, इसलिये पहलेसे ही परिजनोंको सब अन्न पान तथा अनेक प्रकारकी भक्ष्यवस्तु तय्यार रखनेको कहा था। अनन्तर मैंने उन्हें उष्ण पायस प्रदान किया, वह शीघ्र ही उसे भोजन करके बोले, मेरे सारे शरीरमें पायस लगाओ। मैंने उनके वचनमें कुछ भी बिचार न करके वैसा ही किया; वह जूठा पायस उनके शरीर और मस्तकमें लगा

दिया, उन्होंने उस समय तुम्हारी शुभानना जननीको देखा और हंसके उसके शरीरमें भी पायस लगाया, उस समय मुनिने पायस-लिप्ताङ्गी तुम्हारी माताको शीघ्र ही रथमें योजना किया और उस रथपर चढ़के मेरे गृहसे बाहिर हुए, उस जलते हुए अग्निवर्ण रथ ध्वयैवत धीमान् ब्राह्मणने मेरे सम्मुखमें ही बालिका रुक्मिणीको कोड़ेसे मारा। उस समय मुझे ईर्षाजनित अल्पमात्र भी दुःख न हुआ, वह प्रशस्त राजपथके द्वारा बाहर निकले।

दाशार्हगण उस महत् आश्चर्यको देखकर क्रुद्ध हुए, उनके बीच कोई कोई आपसमें वार्त्तालाप करते हुए जल्पना करने लगे, कि ब्राह्मणगण ही यथार्थमें जन्म ग्रहण करते हैं; अन्य वर्ण किसी प्रकारसे पुरुष ही नहीं हैं। दूसरा कौन पुरुष इस रथपर चढ़के जीवित रहनेमें समर्थ होगा? आशीविस सर्पका विष तीक्ष्ण है, ब्राह्मण उससे भी अधिक तीक्ष्ण है; जो पुरुष ब्राह्मण रूपी विषसे जलता है, उसका कोई चिकित्सक नहीं है। उस दुर्द्धर्ष दुर्व्वासाके गमन करते रहनेपर मार्गमें रुक्मिणी शिथिल होगई, श्रीमान् मुनिने उस विषयमें क्रुद्ध होकर वेगपूर्व्वक रथको चलाया। अनन्तर वह द्विजवर अत्यन्त क्रुद्ध होकर रथसे उतरके पाद-चारी हुए और दक्षिणकी ओर ऊर्द्ध मार्गसे दौड़े। उनके ऊर्द्ध मार्गसे दौड़नेपर मैंने उस द्विजवरका अनुधावन किया और उस ही भांति पायस लिप्त रहके उनसे कहा,—हे 'भगवन्! प्रसन्न होइये।' अनन्तर उस तेजस्वी ब्राह्मणने मुझे देखकर कहा, हे महाभुज कृष्ण! तुमने स्वभावसे क्रोधका जय किया है। हे सुव्रत! इस विषयमें मैंने तुम्हारा कुछ भी अपराध नहीं देखा। हे गोविन्द! इसलिये मैं तुमपर प्रसन्न हुआ हूं, तुम्हें जो अभिलाष हो, वह वर मांगो। हे तात! मेरे प्रसन्न होनेसे जो फल होता है, उसे विधिपूर्व्वक देखो। जबतक मनुष्योंकी अन्नमें अभिलाष रहेगी, तबतक लोकके बीच तुम्हारे पुण्यका वर्णन होगा; उतने समयतक तीनों लोकोंके बीच तुम्हें विशिष्टता प्राप्त होगी। हे जनार्द्दन! तुम सब लोकोंमें अत्यन्त ही प्रिय होगे; तुम्हारा जो कुछ टूटा, जला वा नष्ट हुआ है, उन सब वस्तुओंको तुम वैसी ही तथा उससे भी उत्कृष्ट देखोगे। हे मधुसूदन! हे अच्युत! तुम्हारे शरीरमें जितने परिमाणसे पायस लिप्त हुआ है, तुम जबतक इच्छा करो इसके सहारे तुम्हें मृत्युका भय नहीं है। हे वत्स! तुम्हारे दोनों पदतल किस हेतु लिप्त नहीं हुए इस बचनका उत्तर मुझे प्रिय नहीं है। उन्होंने प्रसन्न होकर उस समय मुझसे ऐसा ही बचन कहा था। जब उन्होंने ऐसा कहा, तब मैंने अपने शरीरको श्रीसम्पन्न देखा।

अनन्तर वह पसन्न होके रुक्मिणीसे बोले, हे सुन्दरी! लोकके बीच तुम सब स्त्रियोंसे श्रेष्ठ यश और कीर्त्ति लाभ करोगी। हे भाविनि! तुम्हें जरा, समस्त रोग अथवा वैवर्ण स्पर्श न कर सकेगा। तुम पवित्र सुगन्ध-युक्त होकर कृष्णकी आराधना करोगी। केशवकी सोलह हजार स्त्रियोंके बीच तुम वरिष्ठा होगी और कृष्णके तुल्य लोकोंमें निवास करोगी।

हे पुत्र! प्रस्थान करनेमें उद्यत महातेजस्वी दुर्व्वासाने अग्निकी भांति महाप्रज्वलित होके तुम्हारी मातासे इतनी बात कहके मुझसे फिर कहा। हे केशव! ब्राह्मणोंके विषयमें तुम्हारी ऐसी ही बुद्धि रहे। वह विप्रवर उस समय इतनी कथा कहके उस ही स्थानमें अन्तर्हित हुए। उनके अन्तर्द्धान होनेपर मैंने उपांशु ब्रताचरण किया, ब्राह्मण लोग जो कुछ कहेंगे, मैं वही करूंगा। हे पुत्र! तुम्हारी माताके सहित मैंने यही ब्रत करके अन्तमें परम हृष्टचित्तसे गृहमे प्रवेश किया। हे पुत्र! अनन्तर निज भवनमें प्रविष्ट होकर उस विप्रके द्वारा जो कुछ

भिन्न वा भस्म हुआ था उन सबको मैंने नूतन देखा। हे रुक्मिणीनन्दन! मैं सब वस्तुओंको नवीन तथा दृढ़ देखके विस्मित हुआ और सदा ब्राह्मणोंकी मनहीमन पूजा करने लगा। हे भरतश्रेष्ठ! उस समय रुक्मिणीपुत्रके पूछनेपर मैंने श्रेष्ठ विप्रका यही सब माहात्म्य कहा था। हे प्रभु कुन्तीनन्दन! आप भी महाभाग ब्राह्मणोंको सदा धन और गौवोंके सहारे पूजा करिये, मैंने ब्राह्मणोंके प्रसादसे ही इस प्रकार फल पाया है। हे भरतर्षभ! भीष्मने मेरे विषयमें जो कुछ कहा है, वह सब सत्य है।

१५९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे मधुसूदन! दुर्व्वासाके प्रसादसे उस समय तुम्हें जो विज्ञान प्राप्त हुआ था मेरे समीप तुम्हें उसको व्याख्या करनी योग्य है। हे मतिमतप्रवर! उस महात्माके महत् भाग्य और नामोंको जाननेकी अभिलाष करता हूं।

वासुदेव बोले, हे महाराज! अच्छा मैंने जो कुछ कल्याण लाभ तथा यश उपार्ज्जन किया है, कपर्द्दीको नमस्कार करके वह सब विषय आपके समीप वर्णन करता हूं। हे नरनाथ! मैं प्रातःकालमें उठकर प्रयत तथा प्राञ्जलि होकर जो अध्ययन किया करता हूं, वह शतरुद्रीय आपके निकट कहता हूं, सुनिये। हे तात! महातपस्वी प्रजापतिने तपस्याकी समाप्तिमें उसे रचा है, शङ्करने इस स्थानपर जङ्गममय समस्त प्रजाकी सृष्टि की है। हे नरनाथ! महादेवसे श्रेष्ठ कोई प्राणी नहीं है, इस त्रिभुवनके बीच वह सब प्राणियोंके बीच श्रेष्ठ हैं; उस महात्माके आगे कोई भी निवास करनेका उत्साह नहीं कर सकता, तीनों लोकोंके बीच उनके समान कोई भी विद्यमान नहीं है, उनके क्रुद्ध होनेपर संग्राममें शत्रुगण उनकी गन्धके द्वाराही संज्ञा रहित तथा बहुतेरे हत होकर कांपते वा गिरते हैं। बादल गर्ज्जनेकी भांति उनका घोर शब्द सुनके देवताओंका भी हृदय विदीर्ण होता है, पिनाकधारी क्रुद्ध होके जिन्हें घोर रूपसे देखते हैं, उनका भी हृदय विदीर्ण होजाता है। लोकोंके बीच उनके कुपित होनेपर देवता, असुर, गन्धर्व्व और पन्नगगण, गुफामें प्रविष्ट होकेभी सुख लाभ करनेमें समर्थ नहीं होते। यजमान प्रजापति दक्षके विस्तृत यज्ञको महादेवने निर्भय और कुपित होकर विद्ध किया था। उन्होंने शरासनसे बाण छोड़कर घोर निनाद किया उस शब्दको सुनके सुख और शान्ति कहां? देववृन्द भयभीत हुए, सहसा यज्ञ विद्ध हुआ और महेश्वरके क्रुद्ध होनेपर उस ज्यातलशब्दसे सब लोक समाकुल तथा अवश हुए। हे पार्थ! देव असुर सब कोई विषण्ण हुए, जल उथलने लगा और पृथ्वी कांपने लगी। सब पर्व्वत विद्रुत हुए और आकाश मण्डल विशीर्ण होगया, सब लोक अन्धतमसाच्छन्न होके प्रकाशरहित हुए। हे भारत! सूर्य्यके सहित ज्योतिवाले पदार्थोंकी प्रभा नष्ट हुई। अनन्तर सर्व्वभूत तथा आत्महितैषी ऋषिगण अत्यन्त भयभीत होकर शान्ति और स्वस्त्ययन करने लगे।

अनन्तर रौद्र पराक्रमी रुद्रदेव क्रुद्ध होकर देवताओंकी ओर दौड़े, उन्होंने क्रुद्ध होकर प्रहारके द्वारा भगका दोनों नेत्र विनष्ट किया और रोषित तथा पादचारी होकर पूषाको ओर दौड़े। पूषाके उस समय पुरोडाश भक्षण करते रहनेपर रुद्रदेवने क्रुद्ध होकर उसके सब दांतोंको उखाड़ दिया। अनन्तर उन देवताओंने कम्पित होकर शङ्करको प्रणाम किया; रुद्रदेवने फिर प्रदीप्त शाणित बाण सन्धान किया, ऋषियोंके सहित सब देवता महादेवका पराक्रम देखके भयभीत हुए। अनन्तर उन श्रेष्ठ देवताओंने शङ्करको प्रसन्न किया, देवगण उस समय हाथ जोड़के शतरुद्री जप करने लगे,

महेश्वर देवताओंके द्वारा सब प्रकारसे स्तुति-युक्त होकर प्रसन्न हुए, देवताओंने रुद्रदेवके यज्ञभागकी विशिष्टरूपसे कल्पना की।

हे महाराज! देववृन्द डरकर महादेवके शरणमें गये, तब महादेवने प्रसन्न होकर उस यज्ञको सन्धित किया; उस यज्ञमें जो जो वस्तु अपहृत हुई थी, उन्हें वह सब उसही भांति फिर सजीव कर दी।

सुरलोकमें वीर्य्यवान असुरोंके लोहमय, रजतमय और तीसरा स्वर्णमय,—ये तीन पुर थे; इन्द्र समस्त अस्त्रोंसे उसे भेद करनेमें समर्थ नहीं हुए। अनन्तर देववृन्द पीड़ित होकर महारुद्रके शरणागत हुए, समागत महानुभाव देवगण बोले, हे रुद्रदेव! पशुगण सब कर्म्मोंमेंही अत्यन्त भयंकर होते हैं। हे मानद! इसलिये त्रिपुरके सहित दैत्योंका संहार करके सब लोगोंका परित्राण करिये। उन्होंने देवताओंका वचन सुनके कहा, "ऐसा ही होगा" इतनी बात कहके विष्णुको श्रेष्ठ वाण, अग्निको शल्य, वैवस्वत यमको पुङ्ख, वेदोंको धनुष, सावित्रीको रोदा और ब्रह्माको सारथी करके सबके संयोग तथा काल क्रमसे त्रिपर्व्वयुक्त तीन शल्यके सहारे उन तीनों पुरोंको भेद किया। हे भारत! रुद्रदेवने प्रलयकालको अग्निसदृश तेजसम्पन्न आदित्यवर्ण शरके सहारे तीनों पुरोंके सहित असुरोंको जलाया था। वेही पञ्चशिख बालकरूपसे अङ्कगत हुए तब उमाने पूछा, "ये कौन हैं?" उस समय देवराज असूया करते हुए वज्रसे प्रहार करनेके लिये उद्यत हुए, तब उन्होंने इन्द्रको परिघसदृश भुजाको वज्रके सहित स्तम्भित किया था; देवगण उस भुवनेश्वरको नहीं जान सके, प्रजापतिके सहित सब कोई ईश्वरविषयमें मोहित हुए थे। अनन्तर भगवान् ब्रह्माने उस अत्यन्त तेजस्वी रुद्रदेवको ध्यानके सहारे जाना, कि "येही श्रेष्ठ हैं," ऐसा जानके उन्होंने उमापतिकी बन्दना की थी। अनन्तर देवताओंने उमादेवी और रुद्रदेवको प्रसन्न किया, तब बल-निसूदन देवराजको भुजा पहलेकी भांति होगई। उस रुद्र देवने दुर्व्वासा नामक वीर्य्यवान ब्राह्मण होकर द्वारकापुरीमें मेरे गृहके बीच बहुत समयतक वास किया था; उन्होंने मेरे गृहमें अनेक प्रकारके दुःसह व्यवहार किये, तौभी मैंने उदारताके सहित उन दुःसह व्यवहारोंको सहा था। वेही रुद्र, वेही शिव, वेही अग्नि, सर्व्व और सर्व्वजित् हैं; वेही इन्द्र और वायु हैं, वह अश्विनीकुमार और विद्युत हैं; वेही चन्द्रमा, वेही ईशान, वेही सूर्य्य और वेही वरुण हैं। वेही काल, वेही अन्तक तथा मृत्यु हैं; वेही तम, वेही रात्रि और दिवस हैं। वेही पक्ष, महीना, दोनों सन्ध्या और सम्वत्सर हैं; वेही धाता, वेही विधाता, वेही विश्वकर्म्मा और वेही सर्व्ववित् हैं; वेही सब नक्षत्र, ग्रह, चारों दिशा और विदिशा हैं। वह अमरद्युति भगवान् विश्वमूर्त्ति तथा अमेयात्मा हैं; वेही ब्रह्मरूपसे एक प्रकार और जीव ब्रह्म भेदसे दो प्रकार हैं, प्रपञ्चरूपसे अनेक प्रकार सहस्र प्रकार तथा सैकड़ो हजारों प्रकारके हैं। वह भूयान भगवान् जन्मरहित महादेव ऐसे ही हैं; सौ वर्षमें भी उनके गुणोंका वर्णन नहीं किया जा सकता।

१६० अध्याय समाप्त।

बासुदेव बोले, हे महाबाहु युधिष्ठिर! अनेक रूप और अनेक नामयुक्त महानुभाव रुद्रदेवका जो महत् ऐश्वर्य्य है, वह मेरे समीप सुनो। महेश्वर महादेवको अग्नि, स्थाणु, इकाक्ष, त्र्यम्बक, विश्वरूप और शिव कहते हैं। वेदज्ञ ब्राह्मण लोग उस देवको द्विविध देह कहा करते हैं; उनमेंसे एक मूर्त्ति घोरा और दूसरी शिवा है; येही दोनों मूर्त्तियें अनेक प्रकारको हुआ करती हैं। जो उग्र तथा घोरमूर्त्ति है, वही अग्नि, बिजली और सूर्य्य है,

उसकी शिव तथा सौम्यमूर्त्ति धर्म्म, जल और चन्द्रमा है। उनके शरीरका अर्द्धभाग अग्नि और अर्द्धभाग सोम कहा गया है; उनकी शिवा-मूर्त्ति ब्रह्मचर्य्य अवलम्बन करती है और घोरा मूर्त्ति प्रलयकालमें जगत्‌का संहार किया करती है। ईश्वरत्व और महत्त्वयुक्त होनेसे उनका महेश्वर नाम हुआ है। जो जलाके निःशेष करता तथा जो तीक्ष्ण, प्रतापवान् है और मांस शोणित-मज्जा भक्षण करता है, उसे रुद्र कहा जाता है। जो देवताओंमें उत्तम महान् है, महत्त्व जिसका विषय है, जो महत् विश्वको पालन करता है, वही महादेव नामसे स्मृत होता है। धूम्ररूप निबन्धनसे उसे धूर्ज्जटी कहा जाता है। वह सदा कल्याणकी कामना करते हुए सब मनुष्योंको कर्म्मोंके सहारे पवित्र करता है, इस ही निमित्त उसका नाम शिव है। वह ऊर्द्धमें स्थिर रहके मनुष्योंके प्राणोंको दहन करता है और सदा स्थिरलिङ्ग है, इस ही निमित्त स्थाणु नामसे स्मृत हुआ करता है। स्थावर, जङ्गम, भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान भेदसे उसके अनेक प्रकारके रूप हैं, इसी लिये वह बहुरूप नामसे प्रसिद्ध है। विश्वदेवगण उसका आश्रय कर रहे हैं, इसलिये उसका विश्वरूप नाम है। सब स्थानोंमें उसके नेत्र हैं, इस ही निमित्त उसे सहस्राक्ष और अयुताक्ष कहा जाता है। उसके नेत्रोंसे प्रकट हुए तेजका अन्त नहीं है, वह सब प्रकारसे पशुओंको पालन करता, उनके सङ्ग क्रीड़ा करता और उनका अधिपति होनेसे पशुपति नामसे प्रसिद्ध है। उसकी मूर्त्ति सदा ब्रह्मचर्य्यव्रतमें रत रहती है, इसही निमित्त लोग उस महात्माको प्रियमूर्त्तिकी पूजा किया करते हैं। जो लोग उस महानुभावके विग्रह अथवा लिङ्गको पूजा करते हैं, वे लिङ्गपूजक सदा महती समृद्धि सम्भोग किया करते हैं। ऋषिवृन्द, देवगण, अप्सरा और गन्धर्व्वगण उस ऊर्द्ध स्थित लिङ्गकी ही अर्चना करते हैं। लिङ्गके सदा पूजित होनेसे महेश्वर प्रमुदित होते हैं और भक्तवत्सल भगवान् प्रसन्नचित्त होकर भक्तोंको सुख प्रदान करते हैं। वह देव श्मशानके बीच निःशेष करके जलाते हुए निवास किया करता है। श्मशानके बीच जो पुरुष उसकी पूजा करते हैं, वे वीरस्थानमें निवास करनेके योग्य होते हैं। वही प्राणियोंके शरीरमें मृत्यु स्वरूप है और वही शरीरधारियोंके शरीरमें प्राण तथा अपान वायुस्वरूप है; उसके रूप घोर, प्रकाशमान तथा अनेक प्रकारके हैं। लोकमें उसके जो सब रूप पूजित होते हैं, उसे विद्वान् ब्राह्मण लोग जानते हैं। उसके कर्म्म तथा चरितके सहारे देवताओंके बीच बहुत्वप्रयुक्त होनेसे यथार्थ नामधेय हुआ करते हैं। ब्राह्मण लोग वेदके बीच उनकी शतरुद्रिय पाठ करते हैं और वेदव्यासने उस महात्माके जो सब नाम वर्णन किये हैं, उसे भी जानते हैं। वह सब लोगोंके सुखप्रदाता विश्व और महत् रूपसे वर्णित होते हैं, ब्राह्मण लोग तथा दूसरे ऋषिवृन्द इन्हें सबसे श्रेष्ठ कहते हैं; वेही देवताओंके बीच आदिपुरुष हैं; उन्होंने ही मुखसे अग्नि उत्पन्न की थी। अनेक प्रकारके ग्रहोंसे संरब्ध प्राण परित्याग करनेसे वह शरण्य पुण्यात्मा शरणागत पुरुषोंको कदापि परित्याग नहीं करता; वही मनुष्योंको आयु, आरोग्यता ऐश्वर्य्य और पुष्कल काम प्रदान करता है; फिर वही आक्षेपपूर्व्वक ग्रहण किया करता है। इन्द्रादि देवताओंमें उसका ही ऐश्वर्य्य वर्णित होता है, वह तीनों लोकोंके बीच शुभाशुभ विषयोंमें सदा व्यापृत होरहा है। वह ऐश्वर्य्यके हेतु सब कार्य्योंका ईश्वर कहा जाता है; वह सब लोकोंका महेश्वर है और महद्भूतोंका भी ईश्वर है। उसके अनेक भांतिके रूपसे यह विश्व जगत् व्याप्त होरहा है; उसी देवका मुख ही समुद्रमें बड़वामुख है।

१६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, देवकीनन्दन कृष्ण जब इतनी कथा कह चुके, तब युधिष्ठिरने शान्तनुनन्दन भीष्मसे फिर प्रश्न किया। हे सर्व्व-धर्म्मज्ञश्रेष्ठ महाप्राज्ञ! निर्णय अथवा प्रत्यक्ष आगम इन दोनोंके बीच कारण क्या है?

भीष्म बोले, हे प्राज्ञ! इस विषयमें कुछ सन्देह नहीं है, मेरे मनमें ऐसी धारणा है, कि तुमने सम्यक् प्रश्न किया है; मैं यह विषय कहता हूं, सुनो। इसमें संशय सुगम परन्तु निर्णय अत्यन्त दुर्गम है, जिसमें संशय दीखता है वह दृष्टश्रुत अथवा अचिन्त्य है। हेतुवादी लोग प्रत्यक्ष कारणको देखकर अपनेको प्राज्ञ समझके अभिमान करते हैं; संशयको सत्यज्ञानके 'नास्ति' ऐसा वचन कहा करते हैं; जो पण्डिताभिमानी बालकवृन्द ऐसा कहते हैं, वह युक्तिसिद्ध नहीं है। यदि ऐसा समझो, कि पक्षान्तरमें एक मात्र कारण होता है, तो बहुत समयतक निरालस तथा तत्परायण होनेसे उसे जान सकोगे। हे भारत! अनेक प्रकारकी प्राणयात्रा है, इसको जो लोग जल्पना करते हैं, वे तत्पर पुरुष हो इसे देख सकते हैं, दूसरे नहीं जान सकते। कारणोंका अन्त जाननेसे विपुल उत्तम ज्ञानज्योति लोगोंके अन्तःकरणमें प्राप्त होती है। हे महाराज! कारणोंका ज्ञान कदाचित् ज्ञान नहीं है, अग्राह्य और अनिवह विषयोंको परित्याग करना चाहिये।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! लोकमें सिद्धि प्रत्यक्ष होती है, लौकिक और आगमपूर्व्वक शिष्टाचार अनेक प्रकारका है, इसलिये आप मेरे समीप उसे ही वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! बलवान दुरात्माओंके द्वारा क्रियमान धर्म्मकी संस्थिति उन्होंने ही की है, कामक्रमसे वह विभिन्न हुआ है। तृणसे ढके हुए कूएंकी भांति अधर्म्म धर्म्मरूपसे प्रकाशित होरहा है, उस ही निमित्त चरित्र विभिन्न होता है। जो लोग शिष्टाचारविहीन श्रुतित्याग परायण, धर्म्मविद्वेषी तथा नीच कहके वर्णित हुए हैं और शिष्टाचार खण्डन करते हैं, वेही प्रत्यक्षानुमानचारी पुरुषोंमें सन्देह होता है। जिन्होंने साधुओंके निकट तृप्ति लाभ की है, शास्त्रकी आलोचनासे जिनकी बुद्धि शुद्धि हुई है, तथा जो लोग सन्तुष्ट हैं, वेही श्रेष्ठ प्रमाण हैं; उन्हींकी उपासना करो और उन्हींसे पूछो। लोभ मोहके अनुगत काम और अर्थको पीछे करके धर्म्मबोध करते हुए उनकी उपासना करो और पूछो; उनके चरित्र यज्ञ और स्वाध्याय कर्म्म भिन्न नहीं होते। प्रत्यक्ष दृष्ट चरित्र शौच आदि आचार तथा वेद, इन तीनोंके मिलनेसे एकमात्र धर्म्म होता है, वह धर्म्म ही साधनीय है।

युधिष्ठिर बोले, अपार पथकी खोज करनेवाले पार न पाके जिस प्रकार दीखते हैं, वैसे ही फिर मेरी बुद्धि सन्देहसे मुग्ध होती है। वेद, प्रत्यक्षदृष्ट चरित्र और आचार, ये तीनों ही यदि धर्म्मविषयमें प्रमाण हुए, तौभी इनमें पृथकत्व मालूम होता है, तीनों प्रमाणोंके द्वारा प्रतिपाद्य प्रमेयधर्म्म किस प्रकार एक होगा?

भीष्म बोले, हे राजन्! बलवान् दुष्टात्माओंके द्वारा ह्रियमान धर्म्मके सम्बन्धमें यदि तुम ऐसी शङ्का करते हो, तौभी धर्म्मकी विवेचना तीन प्रकारसे होती है; तीनों प्रमाणोंके सम्वादसे एक मात्र धर्म्म परीक्षणीय है। धर्म्म-दर्शन त्रिविध होनेपर भी धर्म्म एक ही है; तीनों प्रमाणोंके पृथक् होनेपर भी प्रमेय-धर्म्म पृथक् नहीं है; तीनों प्रमाण पृथक् पृथक् रीतसे धर्म्मके प्रतिपादक नहीं होते तीनोंके मिलनेसे एक मात्र धर्म्म हुआ करता है। तीनों प्रमाणोंका जो पथ वर्णित हुआ है, उसका उस ही प्रकार आचरण करो, धर्म्म विषयमें तर्क करके प्रश्न करना योग्य नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! इस विषयमें तुम्हें सदा संशय न होवे; अन्धे और जड़की भांति शंकारहित

होके जैसा कहता हूं, वैसाही आचरण करो। हे अजातशत्रु! अहिंसा, सत्य, क्रोधहीनता और दान, ये चारों ही सनातन धर्म हैं, इसलिये तुम इन चारोंकी सेवा करो। ब्राह्मणोंके विषयमें पितृ-पितामहोचित जो वृत्ति है, उसहीका अनुसरण करो; क्यों कि येही धर्म्मके उपदेशक हैं। जो अज्ञानी मनुष्य अप्रमाणको प्रमाण करते हैं, वह कदाचित प्रमाण नहीं होता केवल विषादजनक हुआ करता है, ब्राह्मणोंका सम्मान करते हुए अधिक आदरके सहित सेवा करो, यह जान रखो, कि ब्राह्मणोंसे ही ये सब लोग प्रतिष्ठित होरहे हैं।

युधिष्ठिर बोले, जो लोग धर्म्मकी असूया करते और जो मनुष्य धर्म्मकी सेवा किया करते हैं, वे लोग किन स्थानोंमें जाते हैं? आप मेरे निकट इस विषयको वर्णन करिये।

भीष्म बोले, जिनका चित्त रजोगुण और तमोगुणसे ढंका है, वे धर्म्मविद्वेषी मनुष्य नरकमें गमन किया करते हैं। हे महाराज! जो लोग सब प्रकारसे धर्म्मकी उपासना करते हैं, वे सत्य और सरल चित्तवाले पुरुष स्वर्गभोग किया करते हैं; आचार्य्यकी उपासनाके हेतु धर्म्मही उनकी गति है, जो लोग धर्म्मकी उपासना करते हैं, उन्हें देवलोक प्राप्त होता है। मनुष्य अथवा देवगण लोभ-द्वेषसे रहित होके शरीरको उपताप देकर धर्म्मसे सुख लाभ करते हैं। मनीषिगण ब्रह्माके पुत्रको प्रथम धर्म्म कहते हैं; जैसे भोक्ताका मन पके फलको भोग करता है, वैसेही धार्म्मिक लोग फलकी उपासना किया करते हैं।

युधिष्ठिर बोले, दुष्टोंका क्या लक्षण है? साधु लोग क्या किया करते हैं? साधु और दुष्टजन कैसे हैं? यह सब आप मेरे निकट वर्णन करिये।

भीष्म बोले, दुष्ट लोग दुराचारी दुर्द्धर्ष और दुर्म्मुख हैं और साधुजन शील सम्पन्न तथा महा शिष्टाचार लक्षणस्वरूप हैं। हे राजेन्द्र! धार्म्मिक मनुष्य राजमार्ग, गोसमूह और धान्यके बीच मल मूत्र परित्याग नहीं करते। साधु लोग देव, पितर, भूत, अतिथि और कुटुम्ब इन पांचोंको अन्नदान करके शेषमें स्वयं भोजन करते हैं, वे लोग भोजन करते करते जल्पना नहीं करते, आर्द्र पाणि होकर सोते नहीं। जो लोग चित्रभानु, वृषभ, देवता, गऊ, चतुष्पथ, ब्राह्मण, धार्म्मिक और वृद्ध पुरुषोंको प्रदक्षिणा करते हैं, जो लोग बूढ़े, भारसे थके हुए पुरुषों, स्त्रियों, अनेक ग्रामोंके स्वामी, ब्राह्मणों, गौवों और राजाओंको पथ प्रदान करते हैं, वेही साधु हैं। अतिथि, प्रेष्य स्वजनों और शरणागत पुरुषोंको प्रतिपालन तथा स्वागत प्रश्न करना चाहिये। सन्ध्या और सवेरे मनुष्योंका भोजन देवनिर्म्मित है, जो लोग उसके अनन्तर भोजन नहीं करते उसेही उपवास विधि कहते हैं। जैसे होमकालमें अग्नि समयकी प्रतीक्षा करती है, वैसेही ऋतुकालमें स्त्रियें ऋतुकी प्रतीक्षा किया करती हैं; ऋतुकालके अनन्तर अन्य समयमें जो लोग स्त्रीसङ्ग नहीं करते, वही उनका ब्रह्मचर्य्य कहाता है। अमृत, ब्राह्मण और गौवें,—ये तीनोंही समान हैं; इसलिये ब्राह्मणों और गौवोंकी विधिपूर्व्वक पूजा करे। वेदमन्त्रोंसे संस्कारयुक्त मांस भक्षण करनेमें दोष नहीं होता, पृष्ठमांस वृथामांस और पुत्रमांस,—ये तीनोंही समान हैं। निज देश तथा परदेशमें अतिथिको उपवासी न रखे; अध्ययन कार्य्य समाप्त करके गुरुजनोंको दक्षिणा दान करे, बड़े लोगोंको प्रणाम करे और पूजा करके आसन देना योग्य है। गुरुजनोंकी पूजा करनेसे परमायु यश श्रीके सहित वृद्धि होती है, वृद्धोंको कदापि निन्दा न करे और उन्हें किसी कार्य्यके निमित्त प्रेरण करना योग्य नहीं है। बड़े लोगोंके खड़े रहनेपर बैठा न रहे, इस प्रकार आचरण करनेसे आयु नहीं घटती। वस्त्ररहित

स्त्री-पुरुषोंकी ओर न देखे, सदा गुप्तभावसे मैथुन और अहार करे। गुरुजन सब तीर्थोंके भी तीर्थस्वरूप हैं, सब पवित्र पदार्थोंके बीच हृदय ही अत्यन्त पवित्र है; इन्द्रियोंके बीच ज्ञानही परम श्रेष्ठ और सन्तोष ही परमसुख है। सन्ध्या और सबेरेके समय वृद्ध लोगोंका पुष्कल बचन सुने, सदा बृद्धोंकी सेवा करनेसे मनुष्य ज्ञानवान् होता है, वेदपाठ और भोजनके समय दहिना हाथ उठावे अर्थात् यज्ञोपवीती होवे, बचन, मन और इन्द्रियोंको सदा संयत करे। संस्कार किया हुआ पायस, यवागू, कृशर और हविके सहारे ग्रहोंकी पूजा और पितृदेवत्य अष्टका श्राद्ध करे। प्रश्नायु-कर्म्ममें मङ्गलबचन कहे, च्युत होनेपर शत-जीव इत्यादि बचनसे अभिनन्दन करे, पीड़ित पुरुषोंकी परमायुके निमित्त प्रार्थना करे। आपद्ग्रस्त होके कदापि महत् पुरुषोंको "तुम" न कहे, विद्वानोंको तुम कहने और बध करनेमें विशेष अन्तर नहीं है; कनिष्ठ लोगों, बराबर वालों और शिष्योंकी तुम कहना योग्य है। पापकर्म्म करनेवाले मनुष्योंका हृदय ही सदा उन्हें पापी कहा करता है, अर्थात् कर्म्मके सहारे उनका हृदय जाना जाता है। महाजनोंके निकट जानके कृतकर्म्मोंको गोपन करनेसे वह कर्म्म विनष्ट होता है; दुष्ट लोग ही जानके कृतकर्म्मोंको गोपन किया करते हैं। मुझे मनुष्य लोग नहीं देख सकते और देवता लोग भी नहीं देखते हैं; ऐसा ही समझके पापसे परिपूरित पापाचारी मनुष्य पापमें ही निमग्न हुआ करता है। जैसे वृत्तजीवी लोग देशभेदसे वृद्धिकी प्रतीक्षा करते हैं, वैसे ही धर्म्मसे ढका हुआ पाप धर्म्मकी वृद्धि किया करता है। जैसे नमक जलमें पड़नेसे गल जाता है, वैसे ही प्रायश्चित्तके द्वारा पापकर्म्म उस ही समय विनष्ट हो जाते हैं; इसलिये पापकर्म्मोंको न छिपावे, छिपानेसे ही वह बढ़ता है; पाप करनेपर उसे साधुओंके निकट कहनेसे वे लोग उस पापको नष्ट किया करते हैं। आशाके सहारे सञ्चित किया हुआ द्रव्य कालक्रमसे उपभुक्त होता है, जो पुरुष सञ्चय करता है, उसके वियोगमें दूसरा उसे भोग किया करता है। मनोषीवृन्द सब जीवोंके मानसको ही धर्म्म कहते हैं, इसलिये सब जीव धर्म्मका ही आसरा कर रहे हैं। एक मात्र धर्म्मका ही आचरण करे, धर्म्मध्वजो न होवे; जो लोग धर्म्मको उपभोग करते हैं, वे धर्म्मवणिक् हैं। दम्भरहित होकर देवताओंकी पूजा करे, निष्कपट होके गुरुकी सेवा करे; परकालके लिये निधि स्थापन करे और सत्पात्रको दान करे।

१६२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, भाग्यहीन मनुष्य अत्यन्त बलवान होनेपर भी धनवान् नहीं होता और भाग्यवान् मनुष्य कृशित तथा बालक होनेपर भी अर्थ लाभ करता है। जब मिलनेका समय नहीं रहता, तब प्रयत्न करनेपर भी नहीं प्राप्त होता और मिलनेके समयमें बिना यत्नके ही बहुतसा धन मिलता है। ऐसे सैकड़ों लोग दीखते हैं, जो कि यत्न करके निष्फल हुए हैं और बहुतेरे पुरुष बिना यत्नके ही वर्द्धित होते दीख पड़ते हैं। यदि यत्न करनेसे मनुष्योंको उस ही समय फल प्राप्त होता, तो विद्वान् पुरुष मूर्खोंके निकट वृत्तिके निमित्त आश्रित न होते। हे भरतसत्तम! मनुष्योंको न मिलनेवाली वस्तु प्राप्त नहीं होती, देखा जाता है, कि प्रयत्न करनेपर भी बहुतेरे निष्फल होते हैं। कोई सैकड़ों नीति बचनके सहारे धन चाहते हैं, कोई बिना प्रार्थना किये ही सुखी होते हैं। देखनेमें आता है, कि कितने लोग बार बार दुष्कर्म्म करके निर्द्धन हो जाते हैं और दूसरे लोग निर्द्धन होनेपर भी निज कर्म्ममें रत होके धनवान् होते हैं। कोई पुरुष नीतिशास्त्रोंको पढ़के भी

मन्त्रिल पदमें नियुक्त नहीं होते और क्या कारण है, कि कितने ही मूर्ख पुरुष मन्त्रिल पदपर नियुक्त होते हैं ? क्या विद्वान् विद्याहीन है तथा क्या धनवान् दुर्ब्बुद्धि है ? यदि विद्याके अवलम्बसे मनुष्य सुखी होता, तो विद्वान् मनुष्य वृत्तिके निमित्त मूर्खोंका आसरा न करते। जैसे पुरुष जल पाके प्यास बुझाता है, वैसेही इष्टार्थी पुरुष विद्याके सहारे अर्थरूपी प्यासको शान्ति किया करता है ; तथापि विद्या परित्याग नहीं करता। जिसका समय नहीं पहुंचा है, वह सैकड़ों बाणोंसे विद्ध होनेपर भी नहीं मरता और जिसका काल पहुंच गया है, वह तृणकी नोकसे छूए जानेपर भी जीवित नहीं रहता।

भीष्म बोले, कार्य्योंकी चेष्टा करते हुए यदि अर्थ लाभ न होवे, तो उग्र तपस्यामें प्रवृत्त होना चाहिये ; क्यों कि बिना बीजके कदापि अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता। मनीषिवृन्द कहा करते हैं, कि दान करनेसे मनुष्य भोगवान् होता है, वृद्धोंकी सेवा करनेसे मेधावी हुआ करता है और अहिंसासे महादीर्घायु होता है,। इसलिये दान करे जांचना योग्य नहीं है। धार्म्मिक लोगोंकी पूजा करे, उत्तम वचन कहे ; प्रियकारी, शुद्ध और सब प्राणियोंके विषयमें अहिंसक होवे। हे युधिष्ठिर ! जब कर्म्म और स्वभाव दंश, कीट तथा चींटी प्रभृतिके सुख दुःख प्राप्तिविषयमें प्रमाण हैं, तब अपने विषयमें भी वैसा ही जानके तुम्हें स्थिर होना चाहिये।

१६३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, जो सत् वा असत् कर्म्म किया जाता तथा कराया जाता है ; किम्वा कृत वा अकृत हो ; उसके बीच सत्कर्म्म करके उसपर विश्वास करे और असत् कार्य्योंमें विश्वास न करना चाहिये। काल ही सब समयमें निग्रह-अनुग्रह प्रदान करता हुआ प्राणियोंकी बुद्धिमें आविष्ट होकर धर्म्म अधर्म्मका प्रवर्त्तक होता है। जिस समय धर्म्मार्थ प्रदर्शन हेतु पुरुषकी बुद्धिमें धर्म्म कल्याणकारी बोध होता है, उस समय धर्म्मात्मा मनुष्य आश्वस्त होवे ; अदृढ़ बुद्धि पुरुष धर्म्मफलमें विश्वास नहीं करते। प्राणियोंकी इतनी ही धर्म्ममें विश्वासवत्ता प्राप्त लक्षण है। जो लोग कर्त्तव्य अकर्त्तव्य दोनोंको जानते हैं, वे समयके अनुसार जैसा उचित होता है, वैसा ही आचरण किया करते हैं। जैसे ऐश्वर्य्यशाली मनुष्य रजोगुणसे युक्त सन्तान उत्पन्न नहीं करता, इस लोकमें धार्म्मिकपुरुष उस ही प्रकार आप ही अपना सम्मान किया करते हैं। काल कदापि दुःखके हेतु स्वरूपसे धर्म्म दान नहीं करता ; इसलिये धर्म्मचारी मनुष्य अपनेको पवित्र जाने। सन्तत अधर्म्म कालकी द्वारा परिरक्षित जलती हुई अग्निसदृश धर्म्मको स्पर्श करनेमें भी समर्थ नहीं है। विशुद्धता और अधर्म्मका अस्पर्श धर्म्मके द्वारा ही करना चाहिये ; क्यों कि धर्म्म ही विजया-वह है ; धर्म्म ही तीनों लोकोंको प्रकाशित करता है। कोई बुद्धिमान् पुरुष मनुष्यको हाथसे पकड़के धर्म्ममें प्रवृत्त नहीं कर सकता ; परन्तु वह धर्म्मभय तथा लोकभयके छलसे उसे धर्म्मानुष्ठानके निमित्त प्रेरण करता है, अर्थात् प्राज्ञ पुरुषोंके द्वारा लोकभय प्रभृति छलसे प्रेरित होकर मनुष्य धर्म्मानुष्ठानमें प्रवृत्त होता है। "मैं शूद्र हूं मुझे चारों आश्रमोंके धर्म्मसेवनमें अधिकार नहीं है" ऐसा वचन कहके दूसरे लोग अधिकारके अनुसार धर्म्मानुष्ठान किया करते हैं, वह छल नहीं है ; इसलिये समस्त प्रवर्त्तना व्यर्थ है। सदृशचित्तवाले प्राणियोंका पञ्चभौतिक शरीर प्रत्यक्ष होनेपर भी 'यह पवित्र है, यह अपवित्र है', इस ही प्रकार विशेष व्यवस्थापन लोक धर्म्म और शास्त्रीय धर्म्म निमित्त कृत हुए हैं ; पशु, पामर, पण्डित प्रभृति प्राणीवृन्द जिस प्रकार पुनर्निर्दिष्ट एकल लाभ करते हैं, शास्त्रमें विस्तारपूर्व्वक वही धर्म्म

नियम वर्णित है; इसलिये चारों वर्णोंका विषय यथार्थ रीतिसे वर्णन करता हूं। लोक अनित्य है और धर्म नित्य है, यह किस प्रकार सम्मत हुआ? लोक और धर्मके कार्य्य-कारण भाव हेतुसे कार्य्यकी अनित्यता युक्तियुक्त नहीं होती। हे तात! इसलिये सङ्कल्परूप काल अर्थात् निष्काम धर्म ही नित्य है, उसका फल कभी सकाम नहीं हो सकता; इसलिये धर्म्मही सनातन है। तुल्य देहविशिष्ट तथा सदृशचित्तवाले प्राणियोंके सम्बन्धमें धर्म्मयुक्त सङ्कल्प ही विशेष रूपसे स्वयं उपदेशक होता है, जब जीवोंका पूर्व्वकृत कर्म्म उनके जन्मनेपर सुख दुख साधनका प्रवर्त्तक हुआ; तब जीवोंको धर्म्मसेवन अर्थात् कर्म्मफल भोगनेमें दोष नहीं है, क्योंकि तिर्य्यक्योनिमें वर्त्तमान जीवोंकी सदसत् प्रवृत्तिविषय पूर्व्वकर्म्मके अनुसार लोकमें गुरुतर दीखता है; विधि नियन्त्रित होकर लोक दृष्टान्तके अनुसार लोकसमाज ही उपदेष्टा हुआ करता है।

१६४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुरुकुल धुरन्धर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने हिताकांक्षी होकर शरशय्याशायी भीष्मदेवसे पापामह हितविषय पूछा।

युधिष्ठिर बोले, इस लोकमें पुरुषके लिये कल्याण क्या है? क्या करनेसे मनुष्यको सुख मिलता है? किन कर्म्मोंके सहारे पुरुष निष्पाप होता है और किस प्रकार कर्म्म पापोंको नाश करता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ! उस समय शान्तनुनन्दन भीष्मदेव सेवा करनेवाले युधिष्ठिरके निकट देववंश वर्णन करने लगे। भीष्म बोले, हे तात! ऋषिवंश युक्त इस देववंशका त्रिसन्ध्या पाठ करनेसे सब पाप नष्ट होते हैं। पुरुष दिनमें इन्द्रियोंके सहारे जो पापाचरण करता है अथवा जानके वा विना जाने रात्रि तथा दोनों सन्ध्यामें जो पाप करता है, सदा पवित्र होके इस देववंशका पाठ करनेसे उन पापोंसे छूट जाता है। इसी पाठ करनेसे पुरुष कालक्रमसे अन्धा वा बहिरा नहीं होता, सदा स्तुतिमान् होता है, तिर्य्यक् योनि, नरक और सङ्करजातिमें गमन नहीं करता, उसी मरनेसे भय, दुःख और मोह नहीं होता। देवासुर गुरु सर्व्वभूत नमस्कृत अचिन्त्य अनिर्देश्य सर्व्वप्राण अयोनिज देव पितामह ब्रह्माकी सती सावित्री, वेदभू वेदकर्त्ता विष्णु नारायण, प्रभु उमापति विरूपाक्ष, सेनापति स्कन्द, विशाख, हुतभुक, वायु, चन्द्रमा, प्रभाकर सूर्य्य, शचीपति शक्रदेव, धूमोर्णाके सहित यम, गौरीके सहित कुवेर, सौम्यगण सुरभीदेवी, महर्षि विश्रवा, सङ्कल्पसागर, गङ्गा प्रभृति नदीगण, मरुद्गण, तपसे सिद्ध बालखिल्यगण, कृष्ण द्वैपायन, पर्व्वत, विश्वावसु, हाहा, हूहू, तुम्बुरु, चित्रसेन, देवदूत विश्रुत, महाभागा देवकन्यागण, अप्सरावृन्द, उर्व्वशी मेनका, रम्भा, मिश्रकेशी, अलम्बुषा विश्वाची घृताची, पञ्चचूड़ा, तिलोत्तमा, आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, दोनों अश्विनीकुमार, पितृगण, धर्म्म, श्रुत, तप, दीक्षा व्यवसाय, पितामह, शर्व्वरी, दिवस, मारीच, कश्यप, शुक्र, वृहस्पति, मङ्गल, बुध राहु, सनैचर, सब नक्षत्र, सब ऋतु, मास, पक्ष, सम्वत्सर, वैनतेय, समुद्र, कद्रुज, पन्नगगण, शतद्रु विपाशा, चन्द्रभागा, सरस्वती, सिन्धु, देविका, प्रभास, पुष्कर, गङ्गा, महानदी, वेणा, कावेरी, नर्म्मदा, कुलपुना, विशल्या, करतोया, अम्बुवाहिनी, सरयू, गण्डकी महानदी लोहित, ताम्रारुणा, वेत्रवती पार्णासा, गौतमी, गोदावरी, वेणा, कृष्णवेणा, अद्रिजा, दृषद्वती, कावेरी, वंक्षु, मन्दाकिनी, प्रभास, प्रयाग, पवित्र नैमिषक्षेत्र, विमल सरोवर जहांपर विश्वेश्वरका स्थान है, पुण्यतीर्थोंके बीच उत्तम कुरुक्षेत्र, सिन्धूत्तम, तप, दान, जम्बूमार्ग, हिरण्वती, वितस्ता, प्लक्षवती, नदी, वेद, स्मृति, वेदवती, माल वा अश्ववती, भूमिके समस्त पवित्र

स्थान, गङ्गासागर, पवित्र ऋषिकुल्या, चित्ररथा नदी, पवित्र नदी चर्म्मण्वती, कौशिकी, यमुना, भीमरथी नदी, बाहुदा, महानदी, महेन्द्रवाणी, त्रिदिवा, नीलिका, सरस्वती, नन्दा, अपरनन्दा, महाह्रद, तीर्थ गया, फल्गू तीर्थ, देवताओंसे परिपूरित धर्म्मारण्य, पुण्या देवनदी, ब्रह्मनिर्म्मित तीनों लोकमें विख्यात् सब पापोंको हरनेवाला कल्याणकारी पुण्यसरोवर, दिव्य औषधियोंसे युक्त हिमालय पर्व्वत; धातुओंसे चित्रित विन्ध्य, औषधीयुक्त तीर्थवान् मेरु, महेन्द्र, मलय, रौप्ययुक्त श्वेत पर्व्वत, शृङ्गवान, मन्दर, नील, निषद, दर्दुर, चित्रकूट, अञ्जनाभ, गन्धमादन पर्व्वत, पवित्र सोमगिरि इनके अतिरिक्त अन्य समस्त पर्व्वत, दिशा, विदिशा, सारीपृथ्वी, समस्त, वृक्ष, विश्वदेवगण, आकाश, नक्षत्रगण, ग्रहगण और ये समस्त देवगण जो मुझसे हारा कीर्त्तित अथवा अकीर्त्तित हुए हैं, वे सब कोई सदा हमारी रक्षा करें।

मनुष्य इन्हीं नामोंके पाठ करनेसे सब पापोंसे छूटता है, इन सबकी स्तुति तथा अभिनन्दन करनेसे पुरुष समस्त भयसे मुक्त हुआ करता है। जो लोग देवता स्तवकी प्रशंसा करते हैं, वे सब पापोंसे रहित हुआ करते हैं। देवताओंके अनन्तर तपसे सिद्ध अधिक तपस्यायुक्त सब पापोंके नाशक विख्यात् ब्राह्मणोंका नाम वर्णन करता हूं।

यवक्रीत, रैभ्य, काक्षीवान, औशिज, भृगु, अङ्गिरा, कण्व, शक्तिमान, मेधातिथि और गुरुसम्पन्न वर्हि, ये पूर्व्वदिशाको अवलम्बन किये हैं। दक्षिण दिशाको अवलम्बन करनेवाले महाभाग उन्मुच, प्रमुच, वीर्य्यवान् स्वस्त्यात्रेय, मित्रा वरुणके पुत्र प्रतापवान् अगस्त्य, दृढ़ायु और ऊर्द्ध्वबाहु नामसे विख्यात् दोनों ऋषिसत्तम हैं। जो पश्चिम दिशाको अवलम्बन करके निवास करते हैं, उनके नाम सुनो। सहोदरगणोंके सहित उषङ्ग, वीर्य्यवान् परिव्याध, दीर्घतमा ऋषि, गौतम, काश्यप, महर्षि, एकत, द्वित और त्रित, तथा अत्रिके पुत्र धर्म्मात्मा शक्तिमान सारस्वत। जो लोग उत्तरदिशाको अवलम्बन करके वास करते हैं, उनके नाम सुनो। अत्रि, वशिष्ठ, शक्ति, पराशर, विश्वामित्र, भरद्वाज, जमदग्नि, ऋचीक पुत्र राम, उद्दालकि ऋषि, श्वेतकेतु, कोहल, विपुल, देवल, देवशर्म्मा, धौम्य, हस्तिकाश्यप, लोमश, नाचिकेतु, लोमहर्षण, उग्रश्रवा, ऋषि, भार्गव और च्यवन। हे महाराज! सर्व्वपापोंका नाशक ऋषिदेव समन्वित यह आदि समवाय प्रकीर्त्तित हुआ। नृग, ययाति, नहुष, यदु, वीर्य्यवान, पुरु, सगर, धुन्धुमार, प्रतापवान्, दलीप, कृशाश्व, यौवनाश्व, चित्राश्व, सत्यवान्, दुष्मन्त, महामना, चक्रवर्त्ती भरत, पवन, जनक, राजा धृष्टरथ, महाराज रघु, राजा दशरथ, राक्षसोंके नाशक वीर श्रेष्ठ रामचन्द्र, शशबिन्दु, भगीरथ, हरिश्चन्द्र, मरुत्त, राजा दृढ़रथ, महोदर अलर्क, नरनाथ ऐल, नरश्रेष्ठ करन्धम, नराधिप काश्मीर, दक्ष, अम्बरीष, कुकुर, महायशस्वी, रैवत, कुरु, सम्वरण, सत्यविक्रम मान्धाता, राजर्षि, मुचकुन्द, जान्हवी, सेवित, जन्हु, आदिराज वेणुके पुत्र पृथु, मित्रभानु, प्रियङ्ग, राजत्र सदस्यु, राजर्षिसत्तम श्वेत, विख्यात् महाभिष, राजा निमि, अष्टक, आयु, राजर्षि क्षूप, नरनाथ कक्षेयु, प्रतर्द्दन, दिवोदास, कोशलराज सुदास, ऐल, राजर्षि नल, प्रजापति, मनु, हविध्र, पिषध्र, प्रतीप, शान्तनु, अज, प्राचीन बर्हि महायशस्वी, इक्ष्वाकु, राजा अनरण्य, जानुजङ्घ और राजर्षि, कक्षसेन, इनका तथा इनके अतिरिक्त जो वर्णित हुए, उनके नामोंका भी प्रातःकालमें उठके सूर्य्योदय और सूर्य्यास्तके समय दोनों सन्ध्यामें पवित्र और अनाहत होकर जो लोग पाठ करते हैं, वे धर्म्मफलभागी होते हैं। देवताओं, देवर्षियों और राजर्षियोंकी स्तुति करनेसे ईश्वर हमारे

लिये पुष्टि, आयु, यश और स्वर्ग विधान करेगा, मुझे विघ्न प्राप्त न हो, पाप न हो और मेरे शत्रु न होवें, मेरी सदा निश्चय जय होवे और परलोकमें गति प्राप्त होवे।

१६५ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, हे विप्रवर! कुरुकुल धुरन्धर भीष्मदेवके शरशय्या तथा पाण्डवगण प्रणीत और शय्यापर शयन करते रहनेपर मेरे पूर्व्व पितामह महाप्राज्ञ युधिष्ठिर सब धर्म्मशास्त्र और दानकी विधि सुनके संशयके विषयों तथा धर्म्मार्थ विषयमें सन्देह रहित होकर और जो कुछ कार्य्य किया था, उसे आप मेरे समीप वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वह समस्त राजमण्डली पट लिखित चित्रकी भांति मुहूर्त्त भर निश्चल हुई। अनन्तर राजाओंके चुप होनेपर सत्यवती पुत्र व्यासदेव मुहूर्त्तभर सोचके उस समय सोये हुए नरनाथ गङ्गानन्दनसे बोले,—

हे राजन्! कुरुराज युधिष्ठिर भाइयों और सब अनुयाई राजाओंके सहित प्रकृतिको प्राप्त हुए हैं। हे नरनाथ! युधिष्ठिर कृष्णके सहित आपकी उपासना कर रहे हैं; अब आप इन्हें नगरमें जानेके लिये अनुमति दे सकते हैं, पृथ्वीपति गङ्गानन्दनभीष्मदेवने वेदव्यासका ऐसा बचन सुनके मन्त्रियोंके सहित युधिष्ठिरको अनुमति दी। हे महाराज! शान्तनुनन्दन भीष्मने राजा युधिष्ठिरसे यह मधुर बचन कहा। हे राजन्! अब तुम नगरमें जाओ, तुम्हारा मानसिक शोक बिनष्ट होवे, हे राजेन्द्र! तुम श्रद्धायुक्त और दान्त होकर ययातिकी भांति बहुतसे अन्न सम्पन्न आप्त दक्षिण बिबिध यज्ञके द्वारा यजन करो।

हे पार्थ! तुम क्षत्रधर्म्ममें रत रहके पितरों और देवताओंकी तृप्ति विधान करो; ऐसा करनेसे तुम्हारा कल्याण होगा। तुम्हारा मानसिक दुःख नष्ट होवे, तुम प्रजारञ्जन करो। प्रकृतिगणकी सब प्रकारसे धीरज दो और फल सत्कारके सहारे यथा योग्य सुहृदोंकी सम्माननना करो। हे तात! चैत्यस्थान स्थित फलयुक्त वृक्षका जैसे पक्षीवृन्द आसरा किया करते हैं, वैसे ही मित्र और सुहृदजन तुम्हें अवलम्बन करके जीवन करें। हे महाराज! सूर्य्य दक्षिणायनसे विनिवृत्त तथा उत्तरायणमें प्रवृत्त होनेपर मेरा समय उपस्थित होगा, उस समय तुम मेरे समीप आना, कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर 'ऐसा ही करूंगा,' इतना बचन कहके परिवारके सहित हस्तिनापुरकी ओर चले। हे कुरुश्रेष्ठ महाराज! उन्होंने धृतराष्ट्र और गान्धारीको आगे करके ऋषियों, भाइयों, श्रीकृष्ण, पुरवासी और जनपदवासी लोगों तथा मन्त्रियोंके सहित हस्तिनापुरमें प्रवेश किया।

१६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर पुरवासी और जनपदवासियोंका यथा रीतिसे सम्मान करके गृहमें जानेके निमित्त अनुमति दी। उस समय पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर मरे हुए वीरोंकी स्त्रियों वा पतिहीन नारियोंका बहुतसा धनदान करके धीरज देनेमें प्रवृत्त हुए। वह पुरुषश्रेष्ठ महाप्राज्ञ युधिष्ठिर राज्य पाके समस्त प्रजासमूहको बुलाकर अभिषिक्त हुए। धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर श्रीमान् धीमान् पुरुषश्रेष्ठ ब्राह्मणों सेनापतियों और वेदशास्त्र जाननेवाले पुरुषोंसे उत्तम आशीर्व्वाद पाके नगरके बीच पचास रात्रि बास करके कौरवोंमें अग्रगण्य भीष्मदेवका समय स्मरण किया। वह याचकोंके बीच घिरकर हस्तिनापुरसे बाहिर हुए आदित्यको निवृत्त और उत्तरायणमें प्रवृत्त देखकर भीष्मदेवके संस्कारके निमित्त पहले घृत, माला, पटवस्त्र, सुगन्ध, अगर प्रभृति चन्दन कालीयक द्रव्य, महामूल्यवान माला और बिबिध रत्न भेजके राजा धृतराष्ट्र यशस्विनी गान्धारी, माता

पृथादेवी और भाइयोंको अगाड़ी करके जनार्द्दन धीमान् विदुर, युयुत्सु, और सात्यकीके सहित राजाओंके योग्य उत्तम महत् परिवारके द्वारा घिरकर तथा स्तूयमान होकर भीष्मके संस्कारक अग्निका अनुगमन करते हुए देवराजकी भांति उस नगरसे बाहिर हुए। अनन्तर वह महातेजस्वी राजा कुरुक्षेत्रमें शान्तनु-पुत्रके समीप उपस्थित हुए। हे राजर्षि! राजा युधिष्ठिरने उस समय पराशरनन्दन बुद्धिमान व्यासदेव, नारद, देवल, असित और मरनेसे बचे हुए अनेक देशोंके समागत राजाओंके द्वारा उपासित और रचकोंसे रचित वीरशय्यापर सोये हुए भीष्मदेवका दर्शन किया। अनन्तर धर्म्मराजने भाइयोंके सहित रथसे उतरकर अरिदमन कुरुश्रेष्ठ पितामहको अभिवादन तथा द्वैपायन प्रभृति ब्राह्मणोंको प्रणाम किया; उन सब लोगोंने उन्हें अभिनन्दित किया। धर्म्मराज युधिष्ठिर ऋत्विकगण और भाइयोंके सहित ऋषियोंसे घिरकर शरशय्यापर सोये हुए गङ्गानन्दन भीष्मदेवसे बोले। हे नरनाथ जान्हवीनन्दन! मैं युधिष्ठिर आपको प्रणाम करता हूं। हे महाबाहो! यदि आप सुनते हों, तो कहिये मैं आपका कौनसा कार्य्य करूं? हे विभु! मैं अग्नि लेकर आपके समयपर उपस्थित हुआ हूं। आचार्य्य, ऋत्विकगण, ब्राह्मणगण आपके पुत्र महातेजस्वी प्रजानाथ धृतराष्ट्र और मन्त्रियोंके सहित वीर्य्यवान् वासुदेव उपस्थित हुए हैं। मरनेसे बचे हुए सब राजा और कुरुजाङ्गलके सब लोग आये हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! इसलिये आप दोनों नेत्र उघारके सबको देखिये। इस समय जो कुछ कर्त्तव्य है, वह सब मैंने संग्रह किया है; समयपर आपने जो कुछ कहा था, वह सब कर्म्म मैंने सिद्ध किया है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान कुन्तीपुत्रका ऐसा वचन सुनके भीष्मदेवने नेत्र उघारके देखा, कि सब भारतगण उन्हें घेरकर खड़े हैं। अनन्तर बलवान वाग्मी भीष्मदेव विपुल भुजा ग्रहण करके उद्यत मेघ सदृश गम्भीर स्वरसे बोले। हे कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर! प्रारब्धसे हो तुम मन्त्रियोंके सहित उपस्थित हुए हो; भगवान सहस्र किरणधारी दिवाकर परिवृत्त हुए हैं। चोखे बाणोंके अग्रभागपर आज अट्ठावन रात्रि पर्य्यन्त मैं सोया हूं; परन्तु बोध होता है, मानो एक सौ वर्ष व्यतीत हुआ है। हे युधिष्ठिर! यह चान्द्रमाघमास उपस्थित है, यह शुक्लपक्ष है इस महीनेका तीनभाग इस समय भी शेष रह सकता है। भीष्मदेव युधिष्ठिरसे इतना वचन कहके धृतराष्ट्रको आमन्त्रण करके उस समयके अनुसार वचन कहने लगे।

भीष्म बोले, हे राजन्! तुम धर्म्मज्ञ हो, तुमने विषय संशयका उत्तम रीतिसे निर्णय किया है; शास्त्रोंके जाननेवाले बहुतेरे ब्राह्मणोंकी तुमने उपासना की है। हे मनुजेश्वर! तुम्हें सूक्ष्म वेदशास्त्र सब धर्म्मों और चारों वेद मालूम हैं। हे कौरव! इसलिये तुम्हें शोक करना उचित नहीं है; जो होनहार था, वह हुआ है। तुमने कृष्ण द्वैपायनसे वेदरहस्य सुना है। हे महाराज! जैसे पाण्डुके पुत्रगण धर्म्मपूर्व्वक तुम्हारे पुत्र हो हैं; इसलिये तुम धर्म्ममें तत्पर रहके उन सेवा करनेवाले पाण्डुपुत्रोंका पालन करो। शुद्धचित्त धर्म्मराज तुम्हारे आज्ञावर्त्ती रहें अनृशंसता परायण तथा गुरुवत्सल जानो। तुम्हारे पुत्रगण दुरात्मा, क्रोध-मोहपरायण, ईर्षायुक्त और दुर्व्वृत्त थे; इसलिये उन लोगोंके निमित्त तुम्हें शोक करना उचित नहीं है। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरवश्रेष्ठ भीष्मदेव, महाराज धृतराष्ट्रसे इतनी कथा कहके फिर महाबाहु वासुदेवसे कहने लगे।

भीष्म बोले, हे देवदेवेश्वर सुरासुर नमस्कृत शङ्खचक्र गदाधारी त्रिविक्रम भगवन्! तुम्हें नमस्कार है। तुम वासुदेव, हिरण्यात्म,

सविता विराट पुरुष हो; तुम हो जीवस्वरूप अनुरूप सनातन परमात्मा हो; मैं तुम्हारा भक्त तुममें ही चित्त लगाके तथा अदार होके परिवारगणके बीच घिरा हूं। हे पुण्डरीकाक्ष पुरुषोत्तम! तुम सदा मेरा परित्राण करो। हे वैकुण्ठ पुरुषोत्तम कृष्ण! मुझे अनुमति दो, आप जिनके अवलम्ब हैं, उन पाण्डवोंकी रक्षा करिये। पहले मैंने दुर्बुद्धि मूर्ख दुर्य्योधनसे कहा था, कि जिस पक्षमें कृष्ण हैं, वहां ही धर्म्म है, जहां धर्म्म है, उस ही पक्षमें जय है। हे तात! वासुदेवको उपाय अवलम्बन करके पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि स्थापित करो; सन्धि करनेसे तुम्हारा समय उत्तम होगा। मेरे बार बार ऐसा कहनेपर भी मन्दबुद्धि मूढ़ दुर्य्योधनने मेरा वचन न माना। इस समय पृथ्वीके सब राजाओंको मरवाकर स्वयं मृत्युको प्राप्त हुआ है। हे देव! मैं तुम्हें बदरिकाश्रममें नरके सहित बहुकालवासी पुराण ऋषिसत्तम देव कहके जानता हूं; नारद मुनि और महातपस्वी व्यासदेवने मुझसे कहा है, कि ये नर नारायण मनुष्य लोकमें अवतार लिये हैं। हे कृष्ण! अब मैं शरीर परित्याग करता हूं, तुम मुझे अनुमति दो, तुम्हारी आज्ञा होनेसे मुझे परम गति प्राप्त होगी।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे पार्थिव भीष्म! मैं तुम्हें अनुमति देता हूं, तुम्हें समस्त वसुलोक प्राप्त हों, हे महातेजस्वी! इस लोकमें तुम्हारा तनिक भी पाप नहीं है; तुम पितृभक्त तथा द्वितीय मारकण्डेय सदृश हो, क्योंकि मृत्यु दासीकी भांति सिर झुकाके तुम्हारे वशमें हो रही है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्मदेवने कृष्णका ऐसा वचन सुनके पाण्डवगण तथा धृतराष्ट्र प्रभृति समस्त सुहृदोंसे कहने लगे। "मैं प्राण परित्याग करनेके लिये अभिलाषी हुआ हूं, उस विषयमें तुम लोग अनुमति करो। तुम लोग सत्यमें यत्नवान रहना, सत्य ही परम बल है। हे भारत! तुम लोग सदा अनृशंसतापरायण नियत-चित्त, ब्रह्मनिष्ठ धर्म्मशील और तपमें रत होना।" बुद्धिमान् भीष्मदेव सब सुहृदोंसे इतनी कथा कहके सबको आलिङ्गन करके फिर युधिष्ठिरसे यह वचन बोले। हे प्रजानाथ! ब्राह्मणगण, विशेष प्राज्ञजन, आचार्य्य और ऋत्विकगण सदा सर्व्वदा तुम्हारे पूजनीय हैं।

१६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे अरिदमन कुरुनन्दन! वह शान्तनव भीष्मने उस समय सब कौरवोंसे इसी प्रकार कहके मुहूर्तभर मौनावलम्बन किया। अनन्तर यथाक्रमसे मूलधारादि अधिष्ठानमें मनके सहित प्राणादि वायुको धारण करनेसे उस महात्माका प्राणादिवायु सम्यक् निरुद्ध होकर ऊर्द्ध्वगामी हुआ। शान्तनुनन्दन भीष्म उस समय जिस जिस अवयवके जिस अंशको परित्याग करने लगे, उस योगयुक्त महानुभावका वह अङ्ग विशल्य हुआ। क्षणभरमें सबके सम्मुखमें ही वह विशल्य हुए। वासुदेव प्रभृति व्यासादि मुनियोंके सहित सब कोई उसे देखकर विस्मित होरहे, उन्होंने सब अवयवोंमें प्राणसंयुक्त मनको निरोध करके मस्तक भेदकर स्वर्गमें गमन किया। आकाशमें पुष्पवृष्टिके सहित देवता लोग दुन्दुभी बजाने लगे। सिद्ध और ब्रह्मर्षिगण साधु साधु कहके हर्ष प्रकाश करने लगे। हे प्रजानाथ! भीष्मदेवके मस्तकसे महोल्काकी भांति कोई पदार्थ निकलकर आकाशमें प्रवेश करते हुए क्षणभरके बीच अन्तर्हित हुआ। हे नृपश्रेष्ठ! इस ही प्रकार वह भरतकुल धुरन्धर नरनाथ शान्तनुनन्दन उस समय कालके सहित संयुक्त हुए। अनन्तर महानुभाव पाण्डवगण विदुर और युयुत्सुने बहुतसा काष्ठ और विविध सुगन्धि लाकर चिता बनाई, और सब लोग देखने लगे। युधिष्ठिर और अत्यन्त श्रेष्ठ महाबुद्धिमान्

बिदुर दोनोंनेही कुरुश्रेष्ठ भीष्मको बसन और मालासे परिपूरित किया, युयुत्सुने उनके ऊपर उत्तम छत्र धारण किया। भीमसेन और अर्ज्जुन, दोनों सफेद चवंर लेकर डुलाने लगे। नकुल और सहदेवने उष्णीष धारण किया। युधिष्ठिर और धृतराष्ट्र कुरुकुल धुरन्धर भीष्मदेवके पांवके तलेसे सब शरीरपर तालका बेना सञ्चालन करने लगे। अनन्तर सबने उस महात्माका विधिपूर्व्वक पितृयज्ञ निर्व्वाह किया; अग्निमें बार बार यजन किया; सामग ब्राह्मणगण सामगान करने लगे। अनन्तर धृतराष्ट्र प्रभृति प्रचन्दनकाष्ठ और कालीयक, कालगुरु, प्रभृति अनेक प्रकारकी सुगन्धित वस्तुओंसे गङ्गानन्दनको आच्छादित करके अग्नि जलाकर प्रदक्षिणा की। कुरुकुल धुरन्धर कुरुसत्तमगण कुरुश्रेष्ठ भीष्मका संस्कार करके ऋषियोंसे सेवित पवित्र भागीरथीके तटपर गये। व्यासदेव, असित, नारद, कृष्ण, भरतकुलकी स्त्रियें और जो सब पुरवासी वहांपर इकट्ठे हुए थे, वे सब कोई उनका अनुगमन करने लगे।

हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर उन लोगोंने विधिपूर्व्वक महात्मा भीष्मदेवका तर्पण किया। अनन्तर गङ्गादेवी पुत्रका तर्पण होनेपर उस जलसे उठके रोदन करती हुई शोकसे विह्वल होकर विलाप करते करते कौरवोंसे बोलीं, हे निष्पापगण! जो घटना हुई है उसे मैं कहती हूं, सब कोई सुनो। जो मेरा पुत्र राजचरित्र, प्रज्ञा और नियम सम्पन्न था, जो कुरुवृद्धगणका सत्कार करनेवाला, पितृभक्त और महाव्रत था, पहले जो परशुरामके निकट पराजित नहीं हुआ; आज वही महावीर शिखण्डीके द्वारा दिव्य अस्त्रोंसे मारा गया! हे नृपगण! मेरा हृदय निश्चयही पाषाणमय है, क्यों कि उस प्रिय पुत्रको न देखकर अबतक भी विदीर्ण नहीं हुआ। काशीपुरीके बीच स्वयम्बर समाजमें इकट्ठे हुए समस्त क्षत्रिय राजाओंको एक रथसेही जीतकर जिसने तीनों कन्याओंको हरण किया था, पृथ्वीपर जिसके समान बलशाली और कोई भी न था, वह पुत्र शिखण्डीके हाथसे मारा गया है,—इस बातको सुनके मेरा हृदय विदीर्ण नहीं हुआ!! कुरुक्षेत्रको रणभूमिमें जामदग्न्य-राम जिस महात्माके द्वारा सहजमें ही पीड़ित हुए थे, आज वह शिखण्डीके द्वारा मारा गया!!! महानदी गङ्गाके उस समय इसही प्रकार बहुत विलाप करते रहनेपर विभु दामोदरने उसे सान्त्वना वाक्यसे धीरज दिया।

हे प्रियदर्शने भद्रे! तुम धीरज धरो, शोक मत करो; तुम्हारा वह पुत्र परम लोकमें गया है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे शोभने! यह भीष्म महा तेजस्वी वसु थे, शापदोषसे इन्हें मनुष्यत्व प्राप्त हुआ था; इसलिये इनके निमित्त शोक करना तुम्हें उचित नहीं है। वह क्षत्रियधर्म्मके अनुसार रणभूमिमें संग्राम करते हुए अर्ज्जुनके द्वारा मारे गये हैं। हे देवि! शिखण्डीने उनका बध नहीं किया। कुरुश्रेष्ठ भीष्मदेवके महायुद्धमें बाण उद्यत करके स्थित होनेपर साक्षात् शतक्रतु इन्द्र भी उनका बध करनेमें समर्थ नहीं थे। हे शुभानने! तुम्हारा पुत्र स्वच्छन्दताके सहित स्वर्गमें गया है, युद्धमें समस्त देवता भी उसका बध करनेमें समर्थ नहीं हैं। हे गाङ्ग देवि! इसलिये तुम कुरुनन्दनके निमित्त शोक मत करो। यह तुम्हारा पुत्र वसुलोकमें गया है। हे देवि! तुम शोकरहित हो। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! नदियोंमें श्रेष्ठ जान्हवी कृष्ण और व्यासदेवका ऐसा बचन सुनके शोकरहित होके प्रकृतिको प्राप्त हुई। हे प्रजानाथ! कृष्ण प्रभृति सब कोई उस समय उनका सत्कार करके तथा उनकी अनुमति लेकर निवृत्त हुए।

१६८ अध्याय समाप्त।

अनुशासनपर्व्व सम्पूर्ण।

महाभारत।

अश्वमेध पर्व्व।
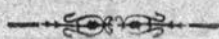
नारायण, पुरुषोत्तम नर और सरस्वती देवीको नमस्कार करके जयजयकार करे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबाहु युधिष्ठिर कृततर्पण राजा धृतराष्ट्रको आगे करके व्याकुलचित्तमें गङ्गासे बाहर हुए। वह आंसू डबडबाये हुए नेत्रसे गङ्गासे उत्तीर्ण होकर व्याधके द्वारा बिद्ध हाथीकी भांति तटपर गिर पड़े। अनन्तर कृष्णकी आज्ञानुसार भीमने उस अवसन्न युधिष्ठिरको पकड़ा और पर-बलपीड़क कृष्णने युधिष्ठिरसे कहा, कि "आप ऐसा न करिये।" हे महाराज! उस समय पाण्डवगण उस नरनाथ धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरका भूतलशायी, शोकार्त्त, दीनचित्त, ज्ञानरहित और लम्बी सांस छोड़ते हुए देखकर अत्यन्त शोकयुक्त होके बैठ गये। अनन्तर पुत्रशोकसे सन्तापित प्रज्ञाचक्षु महाबुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र नरनाथ युधिष्ठिरसे बोले। हे कुरुशार्द्दूल! तुम उठके इसके अनन्तर कर्त्तव्य कर्म्मोंको सम्पादन करो। हे कुन्तीनन्दन! तुमने क्षत्रियधर्म्मके अनुसार इस पृथ्वीको जीता है, इसलिये सुहृदों और भाइयोंके सहित इसे भोग करो। हे धार्म्मिक श्रेष्ठ! इस समय शोक करना उचित नहीं है, क्यों कि तुम्हारे लिये शोकका कारण कुछ भी नहीं देखता हूं। हे महिपाल! जिसके सपनेमें मिले हुए धनकी भांति एक सौ पुत्र नष्ट हुए हैं, उस गान्धारी और मुझे ही शोक करना उचित है। हे महाराज! मैंने दुर्ब्बुद्धिके वशमें होकर महात्मा हितैषी बिदुरके महत् अर्थयुक्त बचनको न सुननेसे इस समय परितापित होता हूं। दिव्यदर्शी महात्मा बिदुरने मुझसे कहा था "हे महाराज! दुर्य्योधनके अपराधसे ही आपका श्रेष्ठ कुल नष्ट होगा, यदि आप अपने कुलका कुशल चाहते हैं, तो मेरे बचनके अनुसार इस दुष्टात्मा मन्दबुद्धि राजा दुर्य्योधनको परित्याग करिये। जिस प्रकार कर्ण तथा शकुनिके सङ्ग इसकी भेंट न हो और अप्रवादमें इनकी द्यूतक्रीड़ा निवारित होवे, उसहीका विधान करिये। हे राजन्! धर्म्मात्मा युधिष्ठिरको ही राज्यपर अभिषिक्त करिये, वह चित्तको वशमें करनेवाला धर्म्मपुत्र राज्यपर अभिषिक्त होनेसे धर्म्मपूर्व्वक पृथ्वी पालन करेगा अथवा यदि उस कुन्तीपुत्रको राज्यपर अभिषिक्त करनेके लिये आपकी एकबारही इच्छा न हो, तो आप मध्यस्थ होकर स्वयं राज ग्रहण करिये। हे ज्ञातिवर्द्धन नरनाथ! जब आप सब प्राणियोंके विषयमें समभावसे विद्यमान रहके राज्यपालन करोगे, तो स्वजनवृन्द आपका आसरा करके जीविका निर्व्वाह करेंगे।" हे कुन्तीनन्दन! दीर्घदर्शी महात्मा बिदुरके ऐसा कहनेपर भी मैं दुर्व्बुद्धिके वशमें होकर उनके बचनको न मानके पापात्मा दुर्य्योधनका अनुवर्त्ती हुआ था। उस धीरवर बिदुरके मधुर बचनको टालनेसे ही यह फल पाके महादुःखरूपी शोक समुद्रमें

हुआ हूं। हे प्रजानाथ! तुम उस दुःखित वृद्ध पिता माताकी ओर देखो, इस समय तुम्हारे शोकका विषय कुछ भी नहीं दीखता है।

१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, मेधावी युधिष्ठिर बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्रका ऐसा वचन सुनके जब मौनभावसे ही स्थित रहे, तब श्रीकृष्णचन्द्रने उनसे कहा। हे प्रजानाथ! जो मन ही मन अत्यन्त शोक करता है, उसके प्रेतीभूत पूर्व्वपितामहगण अधिक सन्तापित होते हैं; इसलिये आप शोक परित्याग करके दक्षिणा-युक्त विविध यज्ञोंका अनुष्ठान कर देवताओंका विधिपूर्व्वक पूजन और सोमके सहारे तर्पण करके स्वधामन्त्रसे पितरोंको तृप्त करिये। हे महाराज! इस समय आपके सदृश महाप्राज्ञ पुरुषको अन्न और जलसे अतिथियों तथा अन्य प्रकारकी कामनासे दरिद्र मनुष्योंके मनकी अभिलाषको पूरण करना ही उचित है, इस प्रकार मुग्ध होना योग्य नहीं है। हे महाराज! आपने गङ्गानन्दन भीष्म, कृष्ण द्वैपायन व्यास, नारद और विदुरके निकट सब जानने योग्य कर्त्तव्य विषयोंको जाना तथा समस्त राजधर्म्म सुना है, इसलिये आपको इस प्रकार मूढ़वृत्तिका अनुवर्त्ती होना उचित नहीं है, आप पितृ-पितामहकी वृत्ति अवलम्बन करके राज्यका भार उठाइये। देखिये क्षत्रियोंके यशस्वरूप क्षत्रधर्म्म युद्धके सहारे जो स्वर्गलाभ होना उचित है, उन लोगोंके विषयमें वैसा ही हुआ है, क्यों कि कोई शूर युद्धमें पराङ्मुख होके नहीं मरे। हे महाराज! जो होनहार था, वही हुआ है, इस विषयमें आप अब शोक न करिये, शोक परित्याग करिये; आपने जिन्हें संहार किया है, उन्हें फिर कदापि न देखेंगे। हे महाराज! जब गोविन्द धर्म्मराज युधिष्ठिरसे ऐसा कहके विरत हुए, तब महातेजस्वी युधिष्ठिर उनसे कहने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे गोविन्द! मुझपर तुम्हारी जैसी प्रीति विद्यमान है और प्रेम तथा सुहृदताके सहित तुमने जो मेरे विषयमें अनुकम्पा की है, वह सब मुझे विदित है। हे श्रीमान् चक्र गदाधारी! अब यदि तुम मुझे सन्तुष्टचित्तसे तपोवनमें जानेके लिये आज्ञा दो, तो तुम्हारे द्वारा मेरा अत्यन्त प्रिय कार्य्य सिद्ध होगा। संग्राममें अपराङ्मुख पुरुषश्रेष्ठ कर्ण और भीष्म पितामहको मारके तपोवनमें जानेके अतिरिक्त किसी प्रकारसे भी मैं शोकशान्तिका उपाय नहीं देखता हूं। हे जनार्द्दन! जिस कार्य्यके करनेसे मैं इस पापसे छूटूं और मेरा चित्त पवित्र हो, तुम उसहीका विधान करो।

जब पृथापुत्र युधिष्ठिरने श्रीकृष्णचन्द्रसे ऐसा वचन कहा, तब महातेजस्वी धर्म्मज्ञ व्यासदेव उन्हें धीरज देते हुए अर्थयुक्त कल्याणकारी वचन कहने लगे। हे तात! तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त ही अपरिपक्व है, तुम बार बार बाल्य-स्वभावसे ही मुग्ध होते हो; क्या हम लोग उन्मत्तकी भांति बार बार आकाशसे वचन कहेंगे? जिनकी युद्धसे जीविका निर्भर है, उन क्षत्रियोंको सब धर्म्म विदित हुए हैं। जो राजा न्यायपूर्व्वक कार्य्य करता है, उसे आधि-रूपी बन्धनमें बद्ध नहीं होना पड़ता, तुमने इसे भी जाना है और निखिल मोक्षधर्म्म यथार्थ रीतिसे सुना है, तथा मैंने भी अनेक बार तुम्हारे कामज सन्देहोंको दूर किया है। तुम दुर्ब्बुद्धिके वशमें होकर हम लोगोंके वच-नमें श्रद्धा नहीं करते हो, तुम्हारी स्मरणशक्ति निश्चय ही लुप्त होगई है, तुम्हें ऐसा न होना चाहिये; तुम्हारे लिये ऐसा अज्ञान अयुक्त है। हे पापरहित! तुम्हें सब प्रायश्चित्त विदित हैं, तुमने राजधर्म्म और दानधर्म्म सुना है, इस-लिये सब धर्म्मोंको जानके तथा सर्व्वशास्त्र

विशारद होकर किस निमित्त बारम्बार अज्ञानकी भांति मोहित होते हो ?

२ अध्याय समाप्त ।

व्यासदेव बोले, हे युधिष्ठिर ! मुझे बोध होता है, कि तुम्हारी प्रखर बुद्धि नहीं है, क्यों कि कोई मनुष्य भी स्वयं स्ववश होके कार्य्य नहीं करता । हे मानद ! पुरुष ईश्वरकी प्रेरणासे जो उत्तम अधम कार्य्य करता है, उसमें क्या परिदेवना है ? हे भारत ! यदि तुम निश्चय ही अपनेको पापी समझते हो, तो जिस प्रकार पाप छूटता है, उसे सुनो । हे युधिष्ठिर ! मनुष्य लोग सदा बहुतसे पापकर्म्म करके तपस्या, यज्ञ और दानके सहारे उससे मुक्त हो सकते हैं । हे नरेन्द्रनाथ ! पापी मनुष्य यज्ञ, तपस्या और दानसे ही पवित्र हुआ करते हैं ; महात्मा देववृन्द और असुर लोग भी पुण्यके लिये यज्ञकार्य्यमें समधिक यत्न करते हैं ; इस ही निमित्त यज्ञ श्रेष्ठ हुआ है । महानुभाव देवगण यज्ञके द्वारा ही असुरोंसे अधिक हुए, इसही लिये क्रियावान् देवताओंने दानवोंके दलको धर्षित किया है । हे युधिष्ठिर ! इसलिये दशरथ-पुत्र रामकी भांति तुम राजसूय, अश्वमेध, सर्व्वमेध और नरमेध यज्ञ करो तथा विधिपूर्व्वक दक्षिणायुक्त बहुकाम अन्न और वित्तसमन्वित अश्वमेध यज्ञ करो । तुम्हारे पितामह दुष्मन्तपुत्र शकुन्तलानन्दन महावीर पृथ्वीपति राजा भरतने इस ही प्रकार सब यज्ञ किया था ।

युधिष्ठिर बोले, "अश्वमेध यज्ञ निःसन्देह राजाओंको पवित्र करता है, परन्तु इस विषयमें मेरा जो अभिप्राय है, उसे भी आपको सुनना उचित है । हे द्विजोत्तम ! मैं यह महत् स्वजनबध करके अल्पदान न कर सकूंगा और बहुत दान करनेके लिये भी मेरे पास धन नहीं है तथा मैं इन आर्द्रभाव युक्त अत्यन्त कष्टसे वर्त्तमान राजपुत्रोंके निकट धन मांगनेका उत्साह नहीं कर सकता । हे द्विजसत्तम ! मैं स्वयं पृथ्वीका विनाश करके यज्ञके लिये फिर किस प्रकार कर लूंगा ? हे मुनिसत्तम ! दुर्य्योधनने ही हमें अकीर्त्तिकर कार्य्यमें नियुक्त किया है और उसके अपराधसे ही पृथ्वीके सब राजा मारे गये हैं । उस धृतराष्ट्रपुत्र नीचबुद्धि दुर्य्योधनने लाभसे पृथ्वी क्षय की है और उसका कोष भी विशीर्ण होगया है । इससे इस यज्ञमें पृथ्वी दक्षिणा ही प्रथम कल्प है, यही विधि विद्वान् पण्डितोंके द्वारा परिदृष्ट हुई है, इसमें अन्यथा होनेसे विधिमें विपर्य्यय हुआ करता है । हे तपोधन ! मैं इस विधिको प्रतिनिधि करनेकी वासना नहीं करता ; इसलिये इस विषयमें आपकी पूरी रीतिसे मेरा मन्त्रित करना उचित है ।" उस समय कृष्णद्वैपायन व्यास पृथापुत्र युधिष्ठिरका ऐसा बचन सुनकर मुहूर्त्तभर चिन्ता करके धर्म्मराजसे कहने लगे ।

व्यासदेव बोले, "हे पार्थ ! जो खजाना खाली हुआ है, वह परिपूर्ण होगा, महात्मा मरुत्तराजके यज्ञकालका ब्राह्मणोंका उत्कृष्ट धन हिमालय पर्व्वतमें विद्यमान है ; उसही धनको मंगाओ, उसीसे पर्य्याप्त होगा ।"

युधिष्ठिर बोले, हे वक्तृप्रवर ! मरुत्तराजके यज्ञमें किस प्रकार धन सञ्चित हुआ था और वह किस समय राजा हुए थे ?

व्यासदेव बोले, हे पार्थ ! वह महाधनशाली महावीर जिस समयमें राजा हुए थे, उसे यदि तुम्हें सुननेकी इच्छा है, तो उस कारन्धम राजाका वृत्तान्त सुनो ।

३ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे धर्म्मज्ञ ! मैं उस राजर्षि मरुत्तका विवरण सुननेकी इच्छा करता हूं, आप मेरे समीप विस्तार पूर्व्वक उनकी कथा यथार्थ कहिये ।

व्यासदेव बोले, हे तात! सत्ययुगमें मनुनाम प्रजापालकदण्डधारी राजा थे, उनका पुत्र महाबाहु प्रसन्धि नामसे विख्यात हुआ था; प्रसन्धिका पुत्र क्षुप और क्षुपका पुत्र इक्ष्वाकु राजा हुआ था। हे महाराज! उस महात्मा इक्ष्वाकुके परम धार्म्मिक एक सौ पुत्र हुए थे, उन्होंने उन एक सौ पुत्रोंको ही महिपाल किया था। धनुर्द्धारियोंमें मुख्य विंश उनके बीच जेठे थे, विंशका पुत्र परमसुन्दर विविंश हुआ था; विविंशके पन्द्रह पुत्र हुए थे। विविंशके सब पुत्र धनुर्विद्यामें विक्रान्त, ब्रह्मनिष्ठ, सत्यवादी दानधर्म्ममें रत, शान्त और सदा प्रियवादी थे। उनमें जेठे खनीनेत्र थे, उन्होंने सबको पीड़ित किया था, खनीनेत्र अत्यन्त पराक्रमी थे, उन्होंने अकण्टक राज्य जय किया, तौभी प्रजा उनमें अनुरक्त न हुई; इसीसे राज्यकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हुए। हे राजेन्द्र! प्रजा उन्हें त्यागके उनके पुत्र सुवर्च्चाको राज्यपर अभिषिक्त करके आनन्दित हुई थी। वह सुवर्च्चा पिताकी विक्रिया तथा राज्यसे उन्हें निर्व्वासित होते देखकर प्रजासमूहकी हितकामनासे संयत होकर रहता था। प्रजा उस ब्रह्मनिष्ठ सत्यवादी, पवित्र, शमदम युक्त, मनस्वी और धार्म्मिक सुवर्च्चामें अनुरक्त थी। अनन्तर जब धर्म्ममें प्रवृत्त सुवर्च्चाका कोष और वाहन विशीर्ण हुए तब सामन्तगण उन्हें सब भांतिसे पीड़ित करने लगे। खजाना, घोडे तथा वाहनोंसे रहित होनेपर वह राजा सामन्तगणोंके द्वारा पीड़ित होकर सेवकों और पुरजनके सहित परम दुःखित हुए थे। हे युधिष्ठिर! वह सुवर्च्चा राजा बल नष्ट होनेपर भी सदा धर्म्ममें प्रवृत्त था, इसलिये सामन्तगण उसे विनष्ट करनेमें समर्थ न हुए। परन्तु जब वह पृथ्वीपति सुवर्च्चा पुरजनोंके सहित परम पीड़ा पाने लगा, तब उसने अपना हाथ अग्निसे लगाकर उससे बल उत्पन्न किया। अनन्तर उसही सेनाके सहारे उसने निज सीमाके अन्तवर्त्ती सब राजाओंको जय किया था। हे महाराज! इसही कारण वह करन्धम नामसे विख्यात हुआ था। त्रेतायुगके प्रारम्भमें करन्धमके इन्द्र सदृश श्रीमान् देवताओंसे भी दुर्जय कारन्धम नाम पुत्र हुआ था। उस समयमें उसने बल और वित्तके सहारे सबका सम्राट होकर सब राजाओंको अपने वशमें किया था। वही कारन्धम अविक्षित नामसे विख्यात हुए थे, वह धर्म्मात्मा अविक्षित इन्द्रके समान पराक्रमी, यज्ञशील, धर्म्ममें रत रहनेवाले धृतिमान्, संयतेन्द्रिय, सूर्य्यसदृश तेजस्वी, पृथिवीकी भांति क्षमाशील वृहस्पतिके समान बुद्धिमान तथा हिमवानकी भांति स्थिर थे। उस पृथ्वीपति अविक्षितने मन, वचन, कर्म्म, दम और शमके द्वारा प्रजासमूहके चित्तको आनन्दित किया था। जिस प्रभु अविक्षितने एक सौ अश्वमेध यज्ञ किया था, विद्वान् अङ्गिराने स्वयं जिसका यज्ञ कराया था, उस अविक्षितके पुत्र धर्म्मज्ञ चक्रवर्त्ती दश हजार हाथियोंके सदृश बलवान् साक्षात् द्वितीय विष्णुरूप महायशस्वी मरुत्तने निजगुणोंके सहारे पिताको अतिक्रम किया था। उस धर्म्मात्मा मरुत्तने यज्ञ करनेके लिये सुवर्णमय सहस्र पात्र सुशोभित किया था। उन्होंने हिमालयके उत्तर भागमें मेरु पर्व्वत पाके वहीं उत्तम महान् काञ्चनमय अत्यन्त पर्व्वतपर कर्म्म किया था। वहांपर सुनारोंने असंख्य सुवर्णमय कुण्ड, पात्र और पीढ़ा आसन बनाया था; उसके समीपमें ही यज्ञवाट था। धर्म्मात्मा पृथ्वीपति मरुत्तने सब राजाओंके सहित उस ही स्थानमें यज्ञ किया था।

४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे वाग्मिवर! वह मरुत्त राजा कैसे वीर्य्यसम्पन्न थे और किस भांति उन्होंने सुवर्ण सञ्चय किया था? हे भगवन्!

इस समय वे सब वस्तु कहां हैं और हमें किस प्रकार मिलेंगी ?

वेदव्यास बोले, हे तात ! जैसे दक्षप्रजापतिके सुर और असुर बहुतसे पुत्र होकर सदा परस्पर स्पर्द्धा करते हैं, उसी भांति अङ्गिराके तुल्य व्रतशाली तपोधन सम्वर्त्त और बृहस्पति नाम दो पुत्र हुए थे। हे महाराज ! वे दोनों अत्यन्त स्पर्द्धित होनेसे पृथक् पृथक् स्थानमें रहते थे ; परन्तु बृहस्पति सदा सम्वर्त्तको दुःख देते थे। हे भारत ! वह सम्वर्त्त जेठे भाई बृहस्पतिके द्वारा सदा पीड़ित होनेसे दिगम्बर होकर समस्त अर्थ परित्यागकर बनबासकी अभिलाष करके बनमें चले गये।

इधर बासवने असुरोंको जय तथा मारके तीनो लोकोंका इन्द्रत्व पाकर अङ्गिराके जेठे पुत्र ब्राह्मणश्रेष्ठ बृहस्पतिको अपना पुरोहित बनाया। जगत्के बीच अप्रतिम बलवित्त वीर्य्यसम्पन्न इन्द्रके समान तेजस्वी संशितव्रती धर्म्मात्मा राजा कारन्धम पहले अङ्गिराके यजमान थे। उनके अत्यन्त सुन्दर बाहन बलवान योद्धा ; बुद्धिमान विविध मित्र और महामूल्यवान शय्या थी। उन्होंने ध्यानबलसे राजा होकर निज गुणों तथा सुखवायुसे सब राजाओंको वशीभूत किया था। वह निज अभिलषित समय पर्य्यन्त जीवित रहके सशरीर स्वर्गमें गये। अनन्तर ययातिकी भांति धर्म्म जाननेवाले शत्रुञ्जित अविक्षित नाम उनके पुत्रने पृथ्वीको अपने वशमें करके निज बिक्रम और गुणोंके सहारे पिताकी भांति राज्य किया था। इन्द्रके सदृश वीर्य्यवान मरुत्त उनके पुत्र थे ; समुद्रके सहित सारी पृथ्वी उनपर अत्यन्त अनुरक्त हुई थी। हे पाण्डुनन्दन ! वह पृथ्वीपति मरुत्त देवराजके सङ्ग स्पर्द्धा करते थे। ऐसा हो नहीं बरण इन्द्र अनेक यत्न करनेपर भी उस गुणवान पवित्र चित्तवाले पृथिवीपति मरुत्तसे विशिष्टता लाभ न कर सके।

एक बार हरिवाहन इन्द्रने वैशिष्ट लाभमें असमर्थ होकर देवताओंको सङ्ग लेकर बृहस्पतिको आह्वान करके उनसे कहा। हे बृहस्पति ! आप यदि मेरे प्रियकार्य्य करनेकी इच्छा करते हैं ; तो आप किसी प्रकार मरुत्तराजाके दैव अथवा पितृकर्म्म न करने पावेंगे। हे बृहस्पति ! देवताओंके बीच मैंने ही तीनों लोकोंका आधिपत्य लाभ किया है ; मरुत्त केवल पृथिवीका अधिपति हुआ है। हे ब्रह्मन् ! आप अमरण धर्म्मयुक्त सुरपति इन्द्रका याजन कराके किस प्रकार अशङ्कचित्तसे उस मरणधर्म्म विशिष्ट राजा मरुत्तका याजन करेंगे ? हे बृहस्पति ! यदि आप अपना कुशल चाहते हैं, तो केवल मुझे अथवा महीपति मरुत्तको बरण करिये ; अथवा मरुत्तको परित्यागके सुखपूर्व्वक मुझेही भजिये।

हे कुरुनन्दन ! बृहस्पति देवराज इन्द्रका ऐसा बचन सुनके मुहूर्तभर सोचकर उनसे बोले, हे बलसूदन ! आप सब प्राणियोंके अधिपति हैं, तुम्हारेही द्वारा सब लोक प्रतिष्ठित हैं, आपने विश्वरूप नमुचि और बलको नष्ट किया है, आपनेही अकेले देवताओंकी बीरश्री हरणकी है और आपही सर्व्वदा पृथिवी तथा स्वर्गको पालन करते हैं। हे पाकशासन ! इसलिये मैं आपका पुरोहित होकर किस प्रकार मनुष्य महीपति मरुत्तका यज्ञ कराऊंगा ? हे देवेन्द्र ! आप आश्वासित होइये, आप निसयही मेरा यह बचन जान रखिये, कि मैं कभी भी उस मनुष्य मरुत्तके यज्ञमें स्रुवा ग्रहण न करूंगा। यदि हिरण्यरेता अग्निमें उष्णता न रहे, पृथिवी उलट जाय और सूर्य्य प्रकाशित न हो ; तोभी मेरा सत्य विचलित न होगा। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय देवराजने बृहस्पतिका ऐसा बचन सुनके मत्सररहित होकर उनकी प्रशंसा करके निज भवनमें प्रवेश किया।

५ अध्याय समाप्त।

वेदव्यास मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! इस स्थलमें पण्डित लोग बृहस्पति और बुद्धिमान मरुत्तके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। पृथ्वीनाथ मरुत्तने इन्द्रके सहित बृहस्पतिकी निश्चित प्रतिज्ञा सुनकर एक उत्तम महत् यज्ञ आरम्भका विचार किया। करन्धम सुतात्मज वाग्मिवर मरुत्त मनहीमन यज्ञका सङ्कल्प स्थिर करके बृहस्पतिके निकट जाकर उनसे बोले, हे भगवन्! आपने पहले मेरे समीप जाकर जिस यज्ञका प्रस्ताव किया था; मैंने आपके बचन अनुसार उस यज्ञकी अभिसन्धि की है। हे साधु! मैंने उस यज्ञके करनेका अभिलाषी होकर यज्ञकी सब सामग्री सञ्चय की है, मैं आपका यजमान हूं, इसलिये आप उन सामग्रियोंको ग्रहण करके यज्ञसम्पादन करिये।

बृहस्पति बोले, हे पृथ्वीनाथ! मैं आपका यज्ञ करानेकी इच्छा नहीं करता, मैंने देवराजसे रोके जानेपर उनके निकट प्रतिज्ञा की है।

मरुत्त बोले, मैं आपका पैत्रक यजमान होनेसे आपका अत्यन्त सम्मान किया करता हूं, इस समय मुझे आपकी याज्यता प्राप्त हुई है; इसलिये आप मेरा यज्ञ कराइये।

बृहस्पति बोले, हे मरुत्त! मैं अमर्त्यका याजन करके किस प्रकार मर्त्य मनुष्यका याजन करूं। इसलिये आप जाइये, वा न जाइये; अब मैं फिर यज्ञ करानेमें प्रवृत्त न होऊंगा। हे महाबाहो! अब मैं आपका यज्ञ न करा सकूंगा, इसलिये आपकी जिसे उपाध्याय करनेकी इच्छा हो और जो आपका यज्ञ करे; आप उसीको वरण करिये।

वेदव्यास मुनि बोले, पृथ्वीपति मरुत्त बृहस्पतिका ऐसा बचन सुनके अत्यन्त लज्जित हुए और सुसंविग्नचित्तसे लौटकर मार्गमें नारदमुनिको देखा। जब पृथ्वीनाथ मरुत्त मार्गमें नारदमुनिका समागम होनेपर यथा रीति हाथ जोड़के स्थित हुए, तब नारद मुनि उनसे बोले, हे राजर्षि! आप अत्यन्त असन्तुष्ट क्यों हुए हैं? हे पापरहित! आपका मङ्गल तो है? आप कहां गये थे? कहांपर इस प्रकार अप्रीति प्राप्त हुई? हे पार्थिवर्षभ! यदि मेरे सुननेके उपयुक्त हो तो आप मुझसे यह विषय कहिये, मैं सब प्रकारसे यत्नपूर्वक आपके मनका दुःख दूर करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, मरुत्तने महर्षि नारदका ऐसा बचन सुनके उपाध्याय बृहस्पतिका समस्त बिसम्वाद उन्हें सुनाया।

मरुत्त बोले, मैं अङ्गिराके पुत्र देवगुरु बृहस्पतिको यज्ञमें ऋत्विक करनेके लिये उनका दर्शन करने गया था, उन्होंने मुझे अभिनन्दित नहीं किया, बल्कि मुझे परित्याग किया है। हे नारद! इसलिये जब मैं गुरुके द्वारा दूषित और परित्यक्त हुआ, तब अब जीवित रहनेकी इच्छा नहीं करता।

वेदव्यास मुनि बोले, हे महाराज! देवर्षि नारद राजा मरुत्तका ऐसा बचन सुनके अविच्छितपुत्र मरुत्तको बाक्यके द्वारा जीवित करते हुए कहने लगे।

नारद मुनि बोले, अङ्गिराके पुत्र धर्मशील सम्वर्त्त दिगम्बर होकर प्रजा समूहको मोहित करते हुए सब दिशाओंमें भ्रमण करते हैं। यदि बृहस्पति एकबारही आपका याजन करनेकी इच्छा नहीं करते हैं, तो आप उस महातेजस्वी सम्वर्त्तके निकट जाइये; वह प्रसन्न होकर आपका यज्ञ करेंगे।

मरुत्त बोले, हे वाग्मिवर नारद! आपके इस बचनके सहारे मैं जीवित हुआ; परन्तु आप बताइये, कहांपर मैं उस सम्वर्त्तका दर्शन पाऊंगा और मुझे किस प्रकार उनके समीप रहना होगा? किस प्रकार वह मुझे परित्याग न करेंगे? वह उपाय उपदेश करिये; मैं उनसे परित्यक्त होनेपर जीवित न रह सकूंगा।

नारद मुनि बोले, हे महाराज! वह सम्वर्त्त

उन्मत्त वेष बनाके महेश्वरके दर्शनकी अभिलाषसे काशोमें सुखपूर्व्वक विचरते हैं। हे पृथ्वीनाथ! आप उस काशीपुरीके द्वारपर उपस्थित होके उसके किसी स्थानमें एक मुर्दा रखियेगा, उस मुर्देको देखके जो वहांसे निवृत्त होगा; उसे ही सम्वर्त जानना। वह वीर्य्यवान् सम्वर्त्त जिस स्थानपर जावें, आप भी हाथ जोड़के उनका अनुगमन करते हुए उन्हें एकान्त स्थानमें पानेसे हाथ जोड़के कहना, कि "मैं आपका शरणागत हुआ।" यदि वह सम्वर्त्त आपसे पूछें, कि मेरा सन्धान तुम्हें किसने बताया? तो आप कहना, कि नारदने मुझसे आपका पता कह दिया है। यदि वह आपको मेरे अनुगमन करनेकी आज्ञा करें, तो आप निशङ्कचित्तसे कहना, कि उन्होंने अग्निमें प्रवेश किया है।

वेदव्यास मुनि बोले, राजर्षि मरुत्तने नारद मुनिका वचन स्वीकार करके उनकी पूजा की और उनकी अनुमतिसे वाराणसी पुरीमें गये। महायशस्वी मरुत्त वाराणसी पुरीमें जाकर नारद मुनिके वचनको स्मरण करते हुए उस नगरीके द्वारपर यथोक्त शव स्थापित किया। विप्रवर सम्वर्त्त समकालमें ही पुरीद्वारमें प्रवृष्ट होकर द्वारदेशसे सहसा शवदर्शन करके वहांसे निवृत्त हुए। अविक्षितपुत्र पृथ्वीनाथ मरुत्त उन्हें निवृत्त होते देखकर उनके निकट शिक्षित होनेके निमित्त हाथ जोड़के उनके पीछे पीछे चले। सम्वर्त्तने महाराज मरुत्तको पीछे देखके निर्ज्जन स्थानमें उन्हें पांशु, कर्द्दम, श्लेष्मा और ष्ठीवनके सहारे समाच्छन्न किया। पृथ्वीनाथ मरुत्तने सम्वर्त्तके द्वारा इस प्रकार बाधित होके भी हाथ जोड़के उन्हें प्रसन्न करते हुए उनका अनुगमन किया। कुछ समयके अनन्तर सम्वर्त्त थककर अनेक शाखाओंसे युक्त न्यग्रोध वृक्षकी शीतल छायामें बैठ गये।

६ अध्याय समाप्त।

सम्वर्त्त बोले, तुमने मुझे किस प्रकार जाना और किस पुरुषने तुमसे मेरा परिचय कह दिया? यदि तुम मेरे प्रिय होनेके अभिलाषी हो; तो इसे यथार्थ रीतिसे मेरे निकट कहो। यदि तुम इस विषयमें सत्य कहोगे, तो तुम्हारा मनोरथ सफल होगा; झूठ बोलनेसे तुम्हारा सिर एक सौ टुकड़े हो जायगा।

मरुत्त बोले, आप मेरे गुरुपुत्र हैं, यह वृत्तान्त मैंने मार्गके बीचमें भ्रमण करनेवाले नारद मुनिके समीप सुना है, तभीसे आपके विषयमें मेरी उत्तम प्रीति उत्पन्न हुई है।

सम्वर्त्त बोले, वह नारद मुनि मुझे याज्ञिक जानते हैं, यह वचन तुमने मेरे समीप सत्य कहा है, अच्छा मुझसे बताओ, कि अब वह इस समय कहां हैं?

मरुत्त बोले, उस देवर्षिसत्तम नारदमुनिने मुझसे आपका परिचय कहके तथा आपके निकट गमन करनेकी अनुमति देकर अग्निमें प्रवेश किया है।

वेदव्यास मुनि बोले, सम्वर्त्त पृथ्वीप्रति मरुत्तका ऐसा वचन सुनके अधिक सन्तुष्ट होकर उनसे बोले, "मैं भी ऐसा कार्य्य करनेमें समर्थ हूं।" हे राजन्! अनन्तर सम्वर्त्त उन्मत्त होकर कठोर वचनसे मरुत्तको बार बार निन्दा करते हुए बोले, मैं वायु रोगग्रस्त हूं, इसलिये मेरे चित्तमें जिस समय जो उदय होता है, उस समय वही किया करता हूं; तब तुम ऐसे स्वभाववाले ब्राह्मणके द्वारा क्यों यज्ञ करनेकी अभिलाष करते हो? यज्ञकार्य्यमें समर्थ मेरे भाई बृहस्पति इन्द्रके सङ्ग मिलकर उनके याज्य-कर्म्ममें नियुक्त हैं, तुम उन्हींके सहारे अपना कार्य्य सिद्ध करो। मेरे पूर्व्वज बृहस्पतिने मेरे इस शरीरके अतिरिक्त जो कुछ गृहमें स्थित सामग्री गुप्त देवता और यजमान थे, वह सब हर लिया है। हे अविक्षितपुत्र! वह मेरे पूज्य हैं, उनकी अनुमतिके बिना मैं किसी प्रकार

तुम्हारा यज्ञ न कर सकूंगा। इसलिये यदि तुम यज्ञ करनेकी इच्छा करते हो, तो उस बृहस्पतिके निकट जाकर उनकी अनुमति लेकर आओ, तब मैं तुम्हारा याजनकर्म करूंगा।

मरुत्त बोले, हे सम्वर्त्त! मैं आपके समीप बृहस्पतिका वृत्तान्त कहता हूं, आप उसे सुनिये। मैं पहलेही बृहस्पतिके निकट गया था, वह इन्द्रको यजमान करनेकी कामनासे मुझे यजमान करनेके अभिलाषी नहीं हैं। हे विप्र! मैंने बृहस्पतिके निकट जाकर पहले यज्ञका वृत्तान्त कहा था। वह मुझसे बोले, कि इन्द्रने मुझसे कहा है, कि मरुत्त पृथ्वीपति होकर सदा मेरे सङ्ग स्पर्द्धा किया करता है, इसलिये आप उसका याज्यकर्म न करने पावेंगे। ऐसा कहके उन्होंने मुझे निषेध किया है, इसलिये मैं देवता यजमान पाकर मनुष्यका याज्यकर्म न करूंगा। हे मुनिपुङ्गव! इन्द्रने आपके भ्राता बृहस्पतिको मेरा यज्ञकर्म करनेके लिये निषेध किया है, वह उसमें ही स्वीकृत हुए हैं। हे मुनिवर! आप यह निश्चय जानिये, कि उन्हें देवराजका सहारा मिला है, इसीसे मैं प्रीतिपूर्व्वक उनके निकट गया था, तथापि वह मुझे यजमान करनेमें अभिलाषी नहीं हुए। उसही हेतु मैं सर्व्वस्व व्यय करके भी आपके द्वारा यज्ञ कराने तथा आपके गुणोंके सहारे इन्द्रको अतिक्रम करनेको इच्छा करता हूं। हे ब्रह्मन्! जब मैं बिना अपराधके ही उस बृहस्पतिके द्वारा प्रत्याख्यात् हुआ हूं, तब मेरा मन फिर उनके निकट जानेके लिये प्रवृत्त नहीं होता है।

सम्वर्त्त बोले, हे पार्थिव! यदि तुम मेरी सब अभिलाष पूरी कर सको, तो मैं तुम्हारे अभिलषित कार्य्योंको निश्चयरूपसे करनेकी इच्छा करता हूं। परन्तु मुझे एक संशय उपस्थित हुआ है, कि मैं जब तुम्हारा याजनकर्म करनेमें प्रवृत्त होऊंगा तब बृहस्पति और इन्द्र दोनों ही अत्यन्त क्रुद्ध होकर तुमसे द्वेष करेंगे। इसलिये इस विषयमें जिस प्रकार मेरी स्थिरता रहे, तुम उसका निश्चय करो, यदि किसी प्रकारसे उसमें अन्यथा होगी, तो मैं उसी समय तुम्हें बान्धवोंके सहित भस्म करूंगा।

मरुत्त बोले, हे ब्रह्मन्! यदि मैं आपका सङ्ग छोड़ूं तो जबतक सूर्य्य प्रकाशित रहेगा तथा समस्त पर्व्वत विद्यमान रहेंगे, तबतक मुझे उत्तम लोक न प्राप्त होवे और यदि मैं आपका सङ्ग परित्याग करूं, तो मैं कदापि शुभबुद्धि लाभ न कर सकूं तथा विषयोंके सहित मेरी आसक्ति होवे।

सम्वर्त्त बोले, हे अविक्षित पुत्र! सुनो। जिस प्रकार कर्म्ममें तुम्हारा सुन्दर मनोयोग हुआ है, मेरे अन्तःकरणमें भी उस ही प्रकार याजन विद्यमान है। हे महाराज! मैं कहता हूं, कि तुम्हारी सब उत्कृष्ट सामग्री अक्षय होगी और तुम गन्धर्व्वों तथा देवताओंके सहित इन्द्रको अभिभव करोगे। परन्तु याज्य वा धनमें मेरी स्पृहा नहीं है, मैं केवल उस भ्राता बृहस्पति और इन्द्र दोनोंका ही विप्रिय कार्य्य करूंगा। मैं तुमसे यह सत्य वचन कहता हूं, कि निश्चय ही मैं तुम्हें इन्द्रके सहित समता लाभ कराऊंगा

७ अध्याय समाप्त।

सम्वर्त्त बोले, हिमालय पर्व्वतके पृष्ठमें मुञ्जवान नाम एक पर्व्वत है, भगवान् उमानाथ वहां नित्य तपस्या किया करते हैं। शूलपाणि महातेजस्वी महेश्वर अनेक भूतगणोंसे घिरकर उमाके सहित उस शैलराजकी गुहा, विषम शृंग और वहांके वनस्पतियों तथा वृक्षोंके तले सदा इच्छानुसार सुखपूर्व्वक निवास करते हैं। वहां रुद्रगण, वसुगण, यम, वरुण, सहचरोंके सङ्ग कुबेर, भूत, पिशाच, दोनों अश्विनीकुमार नासत्य, गन्धर्व्व, अप्सरा, यक्ष, देवर्षि, आदित्य मरुत और यातुधान सब कोई महात्मा बहु-

रूपी उमापतिकी उपासना किया करते हैं। हे पृथ्वीपति! भगवान् शङ्कर विकृत और विकृताकार क्रीड़ा करनेवाले कुवेरके अनुचरोंके सहित वहां क्रीड़ा करते हैं। वालादित्य सदृश द्युतिशाली वह शैलपर निज सौन्दर्य्यसे प्रज्वलित अग्निकी भांति लोगोंके दृष्टिगोचर हुआ करता है। मांसलोचन युक्त कोई प्राकृत प्राणी उसके रूप तथा अवयवोंको किसी प्रकार निर्द्दिष्ट करनेमें समर्थ नहीं होता। हे महाराज! वहां गर्म्मी, सर्दी, वायु, सूर्य्य, जरा, भूख, प्यास, मृत्यु और भय नहीं है। हे विजयी प्रवर! उस पहाड़के चारों ओर सूर्य्यकिरण सदृश प्रभाशाली सुवरणकी बहुतसी आकर (खान) विद्यमान है। हे महाराज! महात्मा कुवेरके प्रियचिकिर्षु उद्यत शास्त्रधारी सहायवन्द उन आकरोंकी रक्षा करते हैं। तुम वहां जाकर उस भगवान् शर्व्व, विधाता, रुद्र, शितिकण्ठ, सुरूप, सुवर्च्च, कपर्द्दी, कराल, हर्य्यक्ष, वरद, त्रिलोचन, सूर्य्यदण्डभेदी, वामन, शिव, दक्षिणामूर्त्ति, अव्यक्तरूपी, सद्वृत्त, शङ्कर महन्त्य, हरिकेश, स्थाणु, पुरुष, हरिनेत्र, मुण्ड, कृश, उत्तर, भास्कर, सुतीर्थ, देवदेव, रंह, उष्णीषी, सुवक्र, सहस्राक्ष, मीढ्वान, गिरीश, प्रशान्त, यतिचीरवासा, बिल्वदण्ड, सिद्ध सर्व्वदण्डधारी, मृग, व्याध, महान्, धन्वी, भव, वर, सोमवक्र, सिद्धमन्त्र, नेत्रस्वरूप, हिरण्यबाहु, उग्र, दिक्पति, लेलिहान, गोष्ठ, सिद्धमन्त्र, सर्व्वव्यापी, पशुपति, भूतपति, वृष, मातृभक्त, सेनानी, मध्यम, सुवहस्त, यती, धन्वी, भार्गव, अज, कृष्णनेत्र, विरूपाक्ष, तीक्ष्णदंष्ट्र, तीक्ष्ण, दीप्त, दीप्ताक्ष, महातेजा, कपालमाली, सुवरणमुकुटधारी, महादेव, कृष्ण, त्र्यम्बक, अनघ, क्रोधन, नृशंस, मृदु, बाहुशाली, दण्डी, तपस्वी, अक्रूर, कर्म्मा, सहस्रशिर, सहस्रपाद, स्वधास्वरूप, बहुरूप, दंष्ट्री, पिनाकी, महादेव, महायोगी, अव्यय, त्रिशूलहस्त, वरद, भुवनेश्वर, त्रिपुरघ्न, त्रिलोकेश, सर्व्वभूतप्रभव, सर्व्वभूताधार, धरणीधर, ईशान, शङ्कर, शर्व्व, शिव, विश्वेश्वर, भव, उमापति, विश्वरूप, महेश्वर, विरूपाक्ष, पशुपति, दशभुज, दिव्य, गोवृषभध्वज, उग्र, स्थाणु, शिव, रौद्र, गिरीश, ईश्वर, शितिकण्ठ, अज, शुक्र, पृथु, पृथुहर, विश्वरूप, विरूपाक्ष, बहुरूप, उमापति, अनङ्गाङ्ग, हर, शरण्य, चतुर्म्मुख, महादेवको सिर भुकाकार प्रणाम करके उनका शरणागत होना। हे पृथ्वीपति! उस महारंह महात्मा महादेवको इस ही प्रकार नमस्कार करके उनका शरणागत होनेसे तुम वह सुवर्ण पाओगे। जो सब मनुष्य ऐसा ही करके वहां जाते हैं, वेही सुवरण लाभ कर सकते हैं। अनन्तर कारन्धमपुत्र मरुत्तने सम्वर्त्तका ऐसा वचन सुनके वैसाही कार्य्य करते हुए अमानुषयज्ञीय संविधि सञ्चय की। शिल्पीगण वहांपर सुवरणमय भाण्ड बनाने लगे। अनन्तर बृहस्पति पृथ्वीनाथ मरुत्तकी देवताओंसे भी अधिक समृद्धि सुनके अत्यन्त सन्ताप करने लगे, बृहस्पति मनही मन "मेरा शत्रु सम्वर्त्त वसुमान् होगा" ऐसी चिन्ता करके सन्तप्त, वैवर्ण्य और कृशताको प्राप्त हुए; तब देवराज बृहस्पतिके सन्तापका वृत्तान्त सुनकर देवताओंके बीच घिरकर उनके समीप आके कहने लगे।

८ अध्याय समाप्त।

इन्द्र बोले, हे गीष्पति! आपको सुखपूर्व्वक नींद लगती है न? परिचारकगण आपके मनके अनुसार हुए तो हैं? हे विप्रवर! आप देवताओंके सुखकी कामना करते हैं न? देवगण आपको पालन करते हैं न?

बृहस्पति बोले, हे देवराज! मैं शय्यापर सुखसे सोता हूं, परिचारकगण मेरे मनके अनुसार हुए हैं, मैं सदा देवताओंके सुखकी कामना किया करता हूं और देवगण भी मुझे परम आदरसे पालन किया करते हैं।

इन्द्र बोले, हे ब्रह्मन्! तब किस कारण आपको शारीरिक तथा मानसिक दुःख उपस्थित हुआ? आज किस निमित्तसे आप पाण्डु और विवर्ण हुए हैं? जिनसे आपको यह दुःख उत्पन्न हुआ है, आप मुझे बताइये, मैं इसी समय उन दुःख देनेवालोंका बध करूं।

बृहस्पति बोले, हे मघवन्! मैंने परम्परासे सुना है, कि मरुत्त उत्तम दक्षिणायुक्त एक महायज्ञ करेगा, सम्वर्त्त ही उस मरुत्तका यज्ञ करावेगा; इसलिये मेरी यह अभिलाष है, कि जिसमें सम्वर्त्त मरुत्तका यज्ञ न कराने पावे, आप वही उपाय करिये।

इन्द्र बोले, हे विप्र! जब आप देवताओंके मन्त्रज्ञ उत्तम पुरोहित हुए हैं और जरा तथा मृत्यु, दोनोंको ही अतिक्रम किया है, तब सम्वर्त्त आपका क्या करेगा?

बृहस्पति बोले, हे देवेन्द्र! शत्रुओंके बीच किसीके समृद्धिसम्पन्न होनेसे बड़ा दुःखकर बोध होता है। जैसे आप देवताओंके सहित असुरोंके वंशको खण्डन करके उनके बीच जिसे जिसे समृद्धिसम्पन्न देखते हैं उन्हीं असुरोंको मारनेकी इच्छा किया करते हैं, उस ही प्रकार मैं भी अपने शत्रु सम्वर्त्तको सम्वर्द्धित होते हुए सुनके दुःखसे विवर्ण हुआ हूं। हे इन्द्र! इसलिये आप सब भांतिसे उपायके सहारे उस मरुत्तको दमन करिये।

इन्द्र बृहस्पतिका बचन सुननेके अनन्तर अग्निको सम्बोधनपूर्व्वक आह्वान करके बोले, हे अग्निदेव! तुम मेरी आज्ञाके अनुसार बृहस्पतिको मरुत्तके समीप देनेके लिये उसके समीप जाकर कहो कि बृहस्पति तुम्हारा याजनकर्म्म करेंगे और अमर करदेंगे।

अग्निदेव बोले, हे भगवन्! मैं बृहस्पतिको मरुत्तके निकट देनेके लिये आपका दूत होकर इस समय उसके समीप जाता हूं, अग्निने इन्द्रसे ऐसा कहके बृहस्पतिका सम्मानवर्द्धन और पुरुहूतका बचन सत्य करनेके निमित्त मरुत्तके निकट गमन किया।

व्यासदेव बोले, तिसके अनन्तर महात्मा धूमकेतु अग्निदेव हिमके शेषमें इच्छानुसार घर्षमान् महावेगशाली शब्दायमान वायुकी भांति समस्त वन और वृक्षोंको विमर्द्दित करके मरुत्तके निकट उपस्थित हुए।

मरुत्त समागत अग्निको रूपवान् देखके विस्मयपूर्व्वक बोले, हे मुनि! आज मैंने यह अत्यन्त विस्मययुक्त व्यापार अवलोकन किया, क्यों कि अग्निदेव निज रूप धारण करके आये हैं, इसलिये आप इन्हें आसन, जल, पाद्य और गऊ प्रदान करिये।

अग्निदेव बोले, हे अनघ! मैं तुम्हारा आसन, जल और पाद्य ग्रहण करता हूं, परन्तु तुम मुझे ऐसा जानो, कि मैं इन्द्रकी आज्ञानुसार उनका दूत होकर तुम्हारे निकट आया हूं।

मरुत्त बोले, हे धूमकेतु! श्रीमान् देवराज सुखसे तो हैं? वह हमारे विषयमें सन्तुष्ट तो हैं और देवगण उनके बशमें हैं न? हे देव! आप यह सब बृत्तान्त मुझसे यथार्थ रीतिसे कहिये।

अग्निदेव बोले, हे पार्थिवेन्द्र! देवराज परम सुखसे निवास करते हैं और देवगण भी उनके बशीभूत हुए हैं; परन्तु तुम देवराजका बचन सुनो। वह तुम्हारे सहित प्रीति तथा तुम्हें अमर करनेके अभिलाषी हुए हैं और बृहस्पतिका तुम्हें देनेके लिये उन्होंने मुझे तुम्हारे निकट भेजा है। हे राजन्! वह सुरगुरु बृहस्पति तुम्हारा याजनकर्म्म करेंगे।

मरुत्त बोले, ये द्विजसत्तम सम्वर्त्त ही मेरा याजनकर्म्म करेंगे, उस बृहस्पतिके निकट मैं हाथ जोड़ता हूं; उनसे अब मेरा प्रयोजन नहीं है और महेन्द्रका यज्ञ कराके इस समय मनुष्यका याजनकर्म्म करानेसे उनको वैसी प्रतिभा न रहेगी।

अग्निदेव बोले, यदि बृहस्पति तुम्हारा

याजनकर्म्म करें, तो देवराजकी कृपासे देवलोकके बीच तुम्हें सब उत्तम स्थान प्राप्त होंगे और तुम महायशस्वी होकर निश्चय ही स्वर्ग जय करोगे। हे नरेन्द्र! इसके अतिरिक्त यदि वृहस्पति तुम्हारा यज्ञकर्म्म करेंगे, तो तुम मनुष्यलोक, देवलोक, समस्त देवराज्य तथा प्रजापतिके बनाये हुए जितने लोक हैं, उन सबका जय कर सकोगे।

सम्वर्त्त बोले, हे पावक! तुम वृहस्पतिका मरुत्तके निकट देनेके लिये कदापि इस प्रकार फिर न आना। जो तुम फिर आओगे, तो निश्चय जान रखो, कि मैं क्रुद्ध होकर दारुण दृष्टिके द्वारा तुम्हें भस्म करूंगा। व्यासदेव बोले, अनन्तर धूमकेतु अग्निदेव जलनेके भयसे अश्वत्थपत्रकी भांति कांपकर देवताओंके निकट गये। तब महात्मा शक्र हव्य वाहक अग्निको वृहस्पतिके निकट देखकर उनसे कहने लगे।

इन्द्र बोले, हे जातवेद! तुम जो वृहस्पतिको मरुत्तके समीप देनेकेलिये मेरी प्रेरणासे उसके निकट गये थे; उस विषयमें क्या हुआ? वह यज्यमान पृथ्वीपति मरुत्त क्या बोला? उसने उस वचनको स्वीकार किया है न?

अग्निदेव बोले, मैंने मरुत्तको बारम्बार आपका वचन सुनाया, परन्तु वह उसमें सम्मत न हुआ; बरन वह बृहस्पतिको हाथ जोड़के बोला, "सम्वर्त्त ही मेरा याजनकर्म्म करेंगे।" और उसने यह वचन कहा, कि मनुष्यलोक, स्वर्गलोक तथा प्रजापतिने जिन सब उत्कृष्ट लोकोंकी सृष्टि की है, मैं उन्हें पानेके लिये अभिलाष नहीं करता; यदि मेरे मनमें वैसी इच्छा होती, तो मैं उनके सङ्ग सम्भाषण करता।

इन्द्र बोले, तुम फिर उस पृथ्वीपति मरुत्तके समीप जाके मेरे इस अर्थयुक्त वचनसे उसे सावधान करो; यदि वह फिर तुम्हारे वचनको प्रतिपालन न करेगा तो मैं उसके ऊपर बज्रसे प्रहार करूंगा।

अग्निदेव बोले, हे वासव! यह गन्धर्व्वराज दूत होकर वहां जायें फिर वहां जानेमें मुझे भय होता है, क्योंकि उस ब्रह्मचर्य्य सम्पन्न तीक्ष्ण रोषसे युक्त सम्वर्त्तने सरम्भपूर्व्वक मुझे कहा है, कि यदि तुम वृहस्पतिको मरुत्तके समीप देनेके लिये फिर यहांपर आओगे, तो मैं क्रुद्ध होकर दारुण दृष्टिके सहारे तुम्हें जला दूंगा।

इन्द्र बोले, हे जातवेद! तुम सबको जलाया करते हो, तुम्हारे अतिरिक्त कोई भस्मकर्त्ता विद्यमान नहीं है और तुम्हारे संस्पर्शसे ही सब लोग भयभीत हुआ करते हैं। हे हव्यवाह! इसलिये तुमने जो कहा, वह मुझे अश्रद्धेय बोध होता है।

अग्निदेव बोले, हे देवेन्द्र! आपने निज बलसे स्वर्ग, मर्त्य और अन्तरिक्ष, इन तीनों लोकोंको वेष्टन किया है, परन्तु ऐसे त्रिलोकविहारी आपके यहांपर विद्यमान रहते भी पहले वृत्रासुरने किस प्रकार स्वर्गको हरण किया था।

इन्द्र बोले, हे अग्नि! मैं पर्व्वतोंको मशक प्रभृतिकी भांति सूक्ष्म कर सकता हूं, परन्तु मैं शत्रुओंका सोमपान नहीं करता—इससे वृत्रासुरने मेरी आराधना नहीं की और मैं निर्व्वल पुरुषके ऊपर बज्र नहीं चलाता,—इसीसे वह मेरे द्वारा निर्जित नहीं हुआ तथापि कोई मनुष्य मेरे ऊपर प्रहार करके सुखसे नहीं रह सकता। हे अग्नि! इसके अतिरिक्त मैं कालकेय असुरोंको पृथ्वीमें प्रव्राजित किया है, अन्तरिक्षसे दानवोंके दलको दूर किया है और प्रह्लादको स्वर्गमें बसाया है; इसलिये कौन मनुष्य सुखमें रहनेके लिये मुझपर प्रहार करेगा?

अग्निदेव बोले, हे महेन्द्र! पहले च्यवनने अश्विनीकुमारोंके सहित शर्य्यातिका यज्ञ कराके अकेले ही सोमपान कराया था; आपने उनके ऊपर क्रुद्ध होकर जो शर्य्यातिका यज्ञ निवारण किया था, उसे एक बार स्मरण करिये।

हे पुरन्दर! आप वज्र ग्रहण करके च्यवनके ऊपर घोर प्रहार करनेके लिये उद्यत हुए थे, उस विप्रने क्रुद्ध होकर तपोबलसे वज्रके सहित आपकी भुजा ग्रहण की थी। अनन्तर उन्होंने क्रुद्ध होकर आपके लिये फिर एक ऐसा शत्रु उत्पन्न किया, कि आपने उस विश्वरूप भयङ्कर मद नाम असुरको देखते ही उस समय नेत्र मूंद लिया था। उस दानवका एक बड़ा ओठ पृथ्वी और दूसरा स्वर्गमें व्याप्त था, एक सौ योजन पर्य्यन्त उसके तीक्षा दांत थे; उनमेंसे चार दांत वृत्त और स्थूल रजतस्तम्भकी भांति सफेद दो सौ योजन लम्बे थे; वह मद आपको मारनेकी इच्छासे दांतोंको कटकटाता हुआ घोरशूल उठाके तुम्हारी ओर दौड़ा था। उस समय उस घोररूपवाले असुरको देखकर आप ऐसे हुए थे, कि सब कोई दर्शनीयकी भांति तुम्हारी ओर देखने लगे। अनन्तर आप उससे डरके हाथ जोड़कर उस महर्षि च्यवनके शरणागत हुए। हे शक्र! क्षत्रबलसे ब्रह्मबल श्रेष्ठ है, ब्राह्मणोंसे श्रेष्ठ कोई भी नहीं है, इसलिये मैं ब्रह्मतेजको विशेष रीतिसे जानके सम्वर्त्तको जय करनेकी इच्छा नहीं करता।

९ अध्याय समाप्त।

इन्द्र बोले, यह सत्य है, कि सब बलोंसे ब्रह्मबल गरीयान् और ब्राह्मणोंसे दूसरा कोई भी श्रेष्ठ नहीं है, परन्तु अविक्षितपुत्र मरुत्तके बलको मैं कदापि न सहूंगा; उसके ऊपर घोर वज्रसे प्रहार करूंगा। हे धृतराष्ट्र! इसलिये तुम मेरे भेजनेसे सम्वर्त्तके सहित मिलके उस मरुत्तसे यह वचन बोलो, कि महाराज! तुम वृहस्पतिके निकट शिक्षित हो, यदि तुम ऐसा न करोगे, तो इन्द्र तुम्हारे ऊपर घोर वज्रसे प्रहार करेंगे। व्यासदेव बोले, तिसके अनन्तर गन्धर्व धृतराष्ट्र पृथ्वीपति मरुत्तके समीप जाकर उनसे इन्द्रका वचन कहने लगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे नरेन्द्र! आप मुझे धृतराष्ट्र गन्धर्व जानिये, मैं आपसे इन्द्रका वचन कहनेकी इच्छासे तुम्हारे समीप आया हूं। हे राजन्! इसलिये लोकाधिपति महात्मा महेन्द्रने आपको जो कहा है, उसे सुनिये। आपको इतना ही कहा है, कि "तुम वृहस्पतिको यज्ञमें याजकरूपसे वरण करो, यदि इस वचनको प्रतिपालन न करोगे, तो मैं तुम्हारे ऊपर घोर वज्रसे प्रहार करूंगा।"

मरुत्त बोले, आप पुरन्दर, विश्वदेव, वसुगण और अश्विनीकुमार, ये सब कोई जान रखें, कि इस लोकमें मित्रद्रोही पुरुषको निष्कृति नहीं होती। मित्रद्रोह महापाप और वह ब्रह्महत्याके सदृश है। हे राजन्! इस समय वृहस्पति और इन्द्रके वचनमें मेरी अभिरुचि नहीं होती है; वृहस्पति उस वज्रधारी महेन्द्रका याजनकर्म्म करें और मेरा यज्ञकर्म्म सम्वर्त्त करेंगे।

गन्धर्व बोला, हे राजसिंह! आप नभस्थलमें गर्जनेवाले इन्द्रका घोर शब्द सुनिये। सहस्र लोचन स्पष्टरूपसे ही आपके ऊपर वज्र छोड़ेंगे। हे राजन्! इसलिये अब आप अपने कुशलका विचार करिये।

व्यासदेव बोले, पृथ्वीपति मरुत्त धृतराष्ट्र गन्धर्वका ऐसा वचन सुनके नभस्थलमें उत्कट शब्दायमान इन्द्रका शब्द सुनकर धर्म्मवित् पुरुषोंमें वरिष्ठ सम्वर्त्तको शक्रका कार्य्य सुनाने लगे।

मरुत्त बोले, हे विप्रेन्द्र! आज समीपमें ही मेघ उदय होनेसे निकटमें हो इन्द्र दीख पड़ते हैं, इसलिये अपने सुखलाभकी सम्भावना नहीं देखता। हे विप्रवर! आप इन्द्रसे मुझे अभयदान करिये। यह वज्रधारी पुरन्दर भयङ्कर अमानुषरूपसे दशों दिशाओंको प्रकाशित कर मेरे सदस्योंको त्रासित करते हुए आ रहे हैं।

सम्वर्त्त बोले, हे राजसिंह! तुम्हें शत्रुसे भय न होगा; मैं शीघ्र ही स्तम्भनी विद्याके

सहारे तुम्हारे इस घोर भयको खण्डन करूंगा; इसलिये तुम धीरज धरो; इन्द्रके अभिभवसे कदापि भयभीत न होना। हे नरनाथ! तुम इन्द्रसे मत डरो, मेरे स्तम्भन करनेसे ही देवताओंके सब अस्त्र निष्फल होंगे। वज्र दिशा दिशामें गमन करे, वायु बादल होकर इस स्थानमें आकर वनके बीच जलकी वर्षा करे और समस्त जल आकाशमें प्लावित होवे। हे महाराज! यह जो बिजली दीख पड़ती है, वह व्यर्थ है, उससे तुम मत डरो। हे महाराज! इन्द्रने जो तुम्हारे बधके निमित्त जल समूहसे प्लवमान घोर अशनि यथा स्थानमें स्थापित किया है, उसे करे, उससे तुम भयभीत न होना; क्योंकि अग्निदेव तुम्हारी सब भांतिसे रक्षा करेंगे तथा समस्त कामना पूर्ण करेंगे।

मरुत्त बोले, हे बिप्रवर! वायुके सहित अशनिका यह महास्वनयुक्त भयङ्कर शब्द मेरे श्रवण-बिबिरमें प्रविष्ट होनेसे मेरा आत्मा बार बार व्यथित होता है, इसलिये किसी प्रकार भी मेरा स्वास्थ्य नहीं होता है।

सम्वर्त बोले, हे नरनाथ! इस उग्र वज्रसे तुम्हारा भय दूर होवे, मैं इसी समय वायु होकर वज्रको निरस्त करता हूं, इसलिये तुम भय परित्याग करो और तुम्हारे मनमें जो अभिलाष हो, वह वर मांगो; मैं उसे सिद्ध करूंगा।

मरुत्त बोले, हे विप्रवर! इन्द्र प्रत्यक्ष होकर यज्ञमें सहसा आके हवि प्रतिग्रह करें और देवगण अपना अपना यज्ञभाग ग्रहण करके सोमपान करें, मैं यही वर मांगता हूं।

सम्वर्त्त बोले, हे महाराज! आज मैं मन्त्रके द्वारा इन्द्रको सशरीर आकर्षण करता हूं, शीघ्रताके सहित देवताओंके द्वारा स्तूयमान वह इन्द्र मेरे मन्त्रके द्वारा आकर्षित होकर घोड़ोंके सहारे इस यज्ञमें आ रहा है, तुम प्रत्यक्ष इन्द्रको अवलोकन करो। तिसके अनन्तर देवराज उन सर्व्वोत्कृष्ठ घोड़ोंको रथमें युक्त करके देवताओंके सहित अविचिन्तपुत्र अप्रमेयात्मा मरुत्तके यज्ञमें आके सोमपान करने लगे। मरुत्तने पुरोधा सम्वर्त्तके साथ देवताओंके सहित समागत इन्द्रको देखके उठकर अभिवादन करके प्रसन्न चित्तसे शास्त्रके अनुसार देवराजकी उत्तम रीतिसे कुशल आदि पूंछके पूजा की और सम्वर्त्त देवराजसे स्वागत प्रश्न करने लगे।

सम्वर्त बोले, हे पुरुहूत! आपका कुशल है न? हे विद्वन्! आज आपके यहां आनेसे यह यज्ञ अत्यन्त ही शोभित हुआ। हे बलवृत्तघ्न! इसलिये आज आप मेरे द्वारा तैयार हुए, यह सोम फिर पान करिये।

मरुत्त बोले, हे सुरेन्द्र! आपको नमस्कार है, आप कुशलनेत्रसे मुझे देखिये; इस यज्ञमें आपके आनेसे मेरा जीवन सफल हुआ। हे सुरराज! बृहस्पतिके भाई यह बिप्रश्रेष्ठ सम्वर्त्त मेरा यज्ञ करते हैं।

इन्द्र बोले, हे नरनाथ! तुम्हारे गुरु बृहस्पतिके भ्राता तिग्म तेजस्वी तपोधन सम्वर्त्तको मैं जानता हूं, इनके आह्वानसे ही मुझे आना पड़ा है। आज मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ, तुम्हारे विषयमें जो मेरा कोप था, वह नष्ट हुआ।

सम्वर्त्त बोले, हे देवराज! यदि आप प्रसन्न हुए हैं, तो स्वयं यज्ञका विधान कहिये, और स्वयं समस्त करिये। हे देव! इन सब लोकोंको देवराजकृत जानिये।

व्यासदेव बोले, इन्द्रने आङ्गिरापुत्र सम्वर्त्तका ऐसा बचन सुनकर स्वयं देवताओंको आज्ञा दी, कि तुम लोग चित्रतकी भांति सुन्दर अत्यन्त उत्कृष्ट एक हजार गृह और सभा तैयार करो। गन्धर्व्वों और अप्सराओंके चढ़नेके लिये शीघ्र ही समस्त सामान स्थूल तथा दृढ़ करो; यज्ञ बाटके जिस स्थानमें अप्सरावृन्द नृत्य करेंगी, उसे स्वर्गकी भांति सुसज्जित करो। हे नरेन्द्र! स्वर्गवासी देववृन्द इन्द्रकी आज्ञानु-

सार शीघ्र ही उस कार्य्यमें नियुक्त हुए। अनन्तर इन्द्र पृथ्वीपति मरुत्तसे बोले, हे महाराज! मैं तुम्हारी पूजासे परम प्रसन्न हुआ। हे नरेन्द्र! इस स्थानमें तुम्हारे सङ्ग मेरे मिलनेसे आपके सब पूर्व्वपुरुषों और देवताओंने सन्तुष्ट होकर तुम्हारी हवि प्रतिग्रह की है। हे महाराज! इस समय ब्राह्मणश्रेष्ठगण, अग्निदेव सम्बन्धीय लोहितवर्ण और विश्वदेव सम्बन्धीय बहुरूप तथा नीलवर्ण चलच्छिश्न पवित्र विधिबोधित वृषभ वध करें।

हे महाराज! तिसके अनन्तर पृथ्वीपति मरुत्तका यज्ञ बर्द्धित होने लगा। उस यज्ञमें स्वयं देवगण अन्न ग्रहण करने लगे और हरिमान् देवराज उस यज्ञमें सदस्य हुए। अनन्तर प्रज्वलित अग्निसदृश महात्मा सम्वर्त्तने चैत्यगत होकर ऊंचे स्वरसे देवताओंको आवाहन करके प्रसन्नचित्तसे अग्निमें घृताहुति प्रदान की। अनन्तर बलसूदन इन्द्रने पहिले सोमपान किया और अन्य सब सोमपीनेवाले देवताओंने इन्द्रकी आज्ञानुसार पृथ्वीपति मरुत्तके सहित सुखपूर्व्वक सोमपान करके प्रसन्न और प्रीतियुक्त होकर प्रस्थान किया। अनन्तर शत्रुनाशन राजा मरुत्त कई स्थानोंमें सुवरणका ढेर लगाकर ब्राह्मणोंको बहुतसा धन बांटते हुए धनाध्यक्ष कुवेरकी भांति बिराजने लगे। अनन्तर उन्होंने उत्साहपूर्व्वक बिबिध वित्त खजानेमें अर्पित करके गुरुकी आज्ञानुसार वहांसे निवृत्त होकर समुद्र सहित बसुन्धराका शासन किया। हे नरेन्द्र! जिसके यज्ञमें बहुतसा सुवर्ण सञ्चित हुआ था, इस पृथ्वीपर वह ऐसे गुण सम्पन्न राजा थे। तुम उस सुवरणको मंगाकर बिधि बिधान पूर्व्वक देवताओंका तर्पण करते हुए यज्ञको करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तिसके अनन्तर पाण्डुपुत्र राजा युधिष्ठिर सत्यवतीसुत वेदव्यासका बचन सुनकर प्रसन्न होके उस धनसे यज्ञ करनेका निश्चय करके मन्त्रियोंके सङ्ग फिर विचार करने लगे।

१० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब राजा युधिष्ठिर अद्भुत कर्म्मा वेदव्यासका ऐसा बचन सुन चुके, तब महातेजस्वी वासुदेव कहने लगे। वृष्णिकुलोद्भव कृष्ण धर्म्मपुत्रपृथानन्दन राजा युधिष्ठिरको बन्धु तथा स्वजनोंके मारे जानेसे धुएं युक्त अग्नि और राहुग्रस्त सूर्य्यकी भांति निष्प्रभ दीनचित्त तथा खिन्नमन देखकर आश्वास बचनके सहारे आश्वासित करते हुए कहनेको उद्यत हुए।

श्रीकृष्ण बोले, हे राजन्! सब भांतिकी कुटिलता मृत्युको आस्पद और सब प्रकारकी सरलता ब्रह्मपद है; इतना ही ज्ञानका विषय है, मनुष्यगण विशेष रीतिसे इसे जाननेसे कुछ भी प्रलाप नहीं कर सकते। हे महाराज! आपके कर्म्म निःशेषित और शत्रुगण पराजित नहीं हुए, क्यों कि आप निज शरीरमें रहनेवाले शत्रुको नहीं जान सकते हैं। इसलिये मैं आपके समीप यथाधर्म्म तथा यथाश्रुत इन्द्र और वृत्रासुरके युद्धका वृत्तान्त बर्णन करता हूं। हे नरनाथ! पहिले समयमें वृत्रासुरके द्वारा पृथ्वी व्याप्त होनेसे गन्धका विषय हृत तथा पृथ्वी हरणजनित दुर्गन्ध उत्पन्न हुई; उसे देखकर इन्द्र वृत्रके ऊपर क्रुद्ध हुए। अनन्तर इन्द्रने क्रुद्ध होकर उसके ऊपर बज्र चलाया, तब उस अत्यन्त तेजस्वी इन्द्रके बज्रसे बहुत ही घायल होकर जलमें प्रविष्ट हुआ। वृत्रके द्वारा जल संगृहीत तथा जलका विषय रस अपहृत होनेपर इन्द्रने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसके ऊपर बज्र छोड़ा। तब वृत्र उस अमिततेजस्वी इन्द्रके बज्रसे अत्यन्त घायल होकर सहसा अग्निके बीच प्रविष्ट हुआ। अनन्तर वृत्रने अग्निके बीच प्रवेश करके तेजग्रहण तथा तेजके विषय रूपको

हरण किया; तब इन्द्रने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसके ऊपर बज्र छोड़ा। अनन्तर वृत्रासुरने अमित-पराक्रमी बलसूदनके बज्रसे बध्यमान होकर सहसा वायुके बीच प्रवेश किया। उस समय वृत्रासुरके द्वारा वायु व्याप्त और वायुका विषय स्पर्श अपहृत होनेपर फिर इन्द्रने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसके ऊपर बज्र चलाया। अनन्तर वृत्रासुर अमित-तेजस्वी इन्द्रके बज्रसे घायल होकर आकाशमें गया। उसके अनन्तर वृत्रासुरके द्वारा आकाश व्याप्त और आकाशका विषय शब्द अपहृत होनेपर इन्द्रने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसके ऊपर बज्र चलाया। तब वृत्रासुरने अमिततेजस्वी इन्द्रके बज्रसे घायल होकर सहसा उन्हें ही ग्रहण किया और इन्द्र वृत्रासुरके द्वारा पकड़े जानेपर महान् मोहको प्राप्त हुए। हे तात भरतर्षभ! हमने ऐसा सुना है, कि जब इन्द्र वृत्रासुरके द्वारा पकड़े जानेपर अत्यन्त विमोहित हुए उस समय वसिष्ठने उन्हें सावधान किया, तब उन्होंने अदृश्य बज्रके सहारे निज शरीरस्थ उस वृत्रासुरका बध किया। हे जननाथ! तुमने जिस विषयको सुना, इस धर्म्म रहस्यको इन्द्रने पहले महर्षियोंके निकट और महर्षियोंने मेरे समीप वर्णन किया था।

११ अध्याय समाप्त।

——

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे महाराज! शारीरिक और मानसिक, ये दो प्रकारकी व्याधि उत्पन्न होती हैं, परन्तु परस्परके सहयोगसेही उनकी उत्पत्ति हुआ करती है। जो व्याधि शरीरसे उत्पन्न होती है, वह शारीरिक और जो मनसे उत्पन्न होती है, वह मानसिक कहाती है। हे राजन्! सर्द्दी, गर्म्मी, अर्थात् कफ और पित्त, तथा वायु, ये शरीरके गुण हैं, इन गुणोंकी साम्यावस्थाको ही पण्डित लोग स्वस्थ शरीरका लक्षण कहा करते हैं। परन्तु सर्द्दी-गर्म्मी अर्थात् कफ और पित्त, इन दोनोंके बीच एककी अधिकता होनेसे इतरवर्द्धक औषधादिके सहारे उससे उत्पन्न हुए दोषोंको दूर करे। सत, रज और तम, ये तीनों ही आत्म गुण कहके वर्णित हुए हैं, इन तीनों गुणोंकी साम्यावस्थाको ही पण्डित लोग स्वास्थ्य कहा, करते हैं, परन्तु इनके बीच अन्यतमकी वृद्धि होनेपर उसके शान्तिको उपाय करना चाहिये। हे महाराज! शोकसे हर्ष और हर्षसे शोकमें बाधा हुआ करती है। कोई दुःखमें वर्त्तमान रहके सुखको स्मरण और कोई सुखमें वर्त्तमान रहके दुःखको स्मरण करनेकी इच्छा करते हैं, हे कौन्तेय! परन्तु आप सुखदुःखरूपी दोनों व्याधियोंसे रहित होकर सुख वा दुःख किसीकी भी इच्छा नहीं करते हैं, तब क्या आप दुःखविभ्रमसे और कुछ इच्छा करते हैं? हे पृथापुत्र! अथवा यह दुःखिलादिही आपका स्वभाव है, क्यों कि इसहीके द्वारा आप आकर्षित होते हैं। हे महाराज! आपने जो पाण्डवोंके सम्मुखमें रजस्वला एकवस्त्रवाली द्रौपदीको सभाके बीच आती हुई देखा था; इस समय उसे स्मरण करना आपको उचित नहीं है। नगरसे प्रवासित होना, मृगछाला, पहरना महावनके बीच निवास, जटासुरसे क्लेश मिलना चित्रसेनके सङ्ग संग्राम, सैन्धवके द्वारा क्लेश भोगना, अज्ञातवासमें कीचकका द्रौपदीको लात मारना और भीष्म तथा द्रोणके सङ्ग युद्ध, इन विषयोंका अब आप स्मरण न करिये। हे अरिंदमन! अकेले मनके सङ्ग युद्ध करना होता है; इस समय आपके लिये वही युद्ध उपस्थित हुआ है। हे भरतर्षभ! इसलिये आप युद्धके निमित्त मनके सम्मुख होकर योग और निज कर्म्मोंके सहारे उस अव्यक्तरूप मनको जीतकर उससे पार होइये। हे महाराज! जिस युद्धमें वाण, सेवक और बान्धवोंकी आवश्यकता नहीं है, केवल मनके सङ्ग युद्ध करना होता है, इस समय आपके लिये वही युद्ध उपस्थित हुआ

है। उस युद्धको न जीतनेसे आपको दुःखको बाहुल्यता प्राप्त होगी। हे कुन्तीनन्दन! इसलिये आप इसे जानकर कार्य्य करनेसे कृतकार्य्य होंगे, हे महाराज! आप इस बुद्धि और प्राणियोंकी गति तथा अगतिको विशेष रीतिसे निश्चय करते हुए पितृ पितामह वृत्तिके अनुवर्त्ती होकर यथा उचित राज्यशासन करिये।

१२ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, हे भारत! बाह्यराज्यादि परित्याग करनेसे सिद्धि अर्थात् मोक्ष नहीं होती; शारीरिक कामादिको परित्याग करनेसे ही मोक्ष हुआ करती है; परन्तु शुष्क वैराग्ययुक्त विवेक विहीन मनुष्योंका मोक्ष विषयमें निश्चय नहीं है। बाह्यवस्तु राज्यादिमें विरक्ति और शारीरिक वस्तु कामादिमें आसक्ति युक्त पुरुषोंको जो धर्म्म और सुख होता है, शत्रुओंको वही प्राप्त होवे। संसार विषयमें ममतारूप हाक्षर मृत्यु कहके वर्णित हुआ है और संसार विषयमें निर्म्ममतारूप त्राक्षर शाश्वत ब्रह्म कहा गया है। हे महाराज! वह ब्रह्म और मृत्यु दोनोंही अदृश्य भावसे मनुष्यचित्तके बीच विद्यमान रहके प्राणियोंको युद्धमें प्रवर्त्तित किया करते हैं। हे भारत! यदि इस जगत्में अविनाश निश्चित होता तो कोई किसी प्राणीका शरीर भेद करनेसे उसे हिंसाजनित पाप न भोगना पड़ता। हे पृथापुत्र! यदि कोई स्थावर जङ्गमोंके सहित समस्त पृथ्वीको पाके उसमें ममता न करता, तो यह पृथिवी उसके लिये फलदायिनी न होती और जो लोग वनवासी होकर वनके फलमूलोंसे जीविका निर्व्वाह करते हुए, बाह्यवस्तु राज्यादिमें ममता करते हैं, वे मृत्यु मुखमें वास किया करते हैं। हे भारत! आप ध्यानयोगसे वाह्य तथा आन्तरिक शत्रु, राज्य और कामादिक मायामयस्वरूप स्वभाव अवलोकन करिये। जो लोग इस अनादि मायामय स्वभावको विशेष रीतिसे जान सकते हैं, वेही महाभयङ्कर संसारसे मुक्त हुआ करते हैं, लोकसमाज कामनावान् पुरुषकी प्रशंसा नहीं करता और इसलोकमें कामना सबके मनकी अङ्गभूत होनेसे कामनाके विना किसी विषयमें प्रवृत्ति नहीं हो सकती। इसलिये योगवित पण्डित लोग बार बार जन्मके अभ्यासयोगसे शुद्धचित्त होकर सदा श्रेष्ठ मोक्षमार्गका ध्यान करते हुए समस्त कामना संहार किया करते हैं। जो मनुष्य "ये जो कामना करते हैं, वह धर्म्म नहीं है," इसे विशेष रीतिसे जानके कामनापूर्व्वक व्रत, यज्ञ और ध्यान योगका अनुष्ठान नहीं करते, वे कामनानिग्रहको ही धर्म्म और मोक्ष मूल समझते हैं। हे युधिष्ठिर! परन्तु इस विषयमें कामके दुरुच्छेद्यत्ववादी पुराण जाननेवाले पण्डित लोग कामगीत बहुतसी गाथा कहा करते हैं। मैं आपके समीप गाथा पूरी रीतिसे कहता हूं सुनिये।

काम कहता है, निर्म्ममता और योगाभ्यासरूपी उपायके अतिरिक्त कोई प्राणी भी मुझे जीतनेमें समर्थ नहीं होता, जो कामवान मनुष्य मनके बीच मेरे बलको मालूम करके वागादि इन्द्रियसाध्य जपादिरूपी शस्त्रसे मुझे नष्ट करनेके लिये यत्नवान होता है, मैं उसके चित्तमें "मैंही सबसे उत्कृष्ट और जपकर्त्ता हूं,—इसही प्रकार अभिमान रूपसे प्रकट होकर उसके जपादिको विफल किया करता हूं। जो पुरुष विविध दक्षिणायुक्त यज्ञके सहारे मुझे जीतनेमें प्रयत्नवान होता है, उत्तम योनिमें उत्पन्न हुए धर्म्मात्मा मनुष्यकी भांति मैं उसके चित्तमें इत्यादि रूपसे फिर प्रकट हुआ करता हूं। जो पुरुष वेद और वेदाङ्ग साधनके द्वारा मुझे विनष्ट करनेके लिये प्रयत्नवान होता है, स्थावरयोनिमें अनभिव्यक्त रूपसे उत्पन्न हुए जीवोंकी भांति मैं उसके चित्तके बीच प्रकट हुआ करता

हूं। जो सत्यपराक्रम मनुष्य धैर्य्यके सहारे मुझे जीतनेके लिये यत्नवान् होता है, मैं उसके समीप चित्तरूपसे प्रकट होता हूं; इसलिये वह मुझे नहीं जान सकता। जो संशितव्रत मनुष्य तपस्याके द्वारा मुझे जीतनेके निमित्त यत्नवान होता है, मैं उसके चित्तमें तपरूपसे उत्पन्न होता हूं, इसलिये वह मुझे नहीं जान सकता, जो पण्डित पुरुष नित्य मुक्त आत्माको न जानकर मोक्षके निमित्त मोक्षमार्ग अवलम्बन करके मुझे नष्ट करनेके लिये यत्नवान होता है, मैं सब प्राणियोंसे अवध्य सनातन अद्वितीय उस मोक्षरतिस्थ मूर्ख पुरुषकी उपहास करते हुए उसके समीप नृत्य किया करता हूं।"

हे महाराज! जब निष्कामपूर्व्वक योगाभ्यासके अतिरिक्त कामजय करनेका दूसरा उपाय नहीं दीखता है, तब उस कामको परित्याग करके विविध दक्षिणायुक्त यज्ञका अनुष्ठान करनेसे ही आपकी कल्याणसिद्धि होगी; इसलिये आप निष्काम होकर विधिपूर्व्वक दक्षिणायुक्त वाजिमेध तथा दूसरे प्रकारके सदक्षिणा यज्ञका अनुष्ठान करिये। आप युद्धमें मरे हुए बान्धवोंको बार बार स्मरण करके वृथा दुःखित न होइये। जो लोग इस रणभूमिमें मारे गये हैं, आप अब उन्हें फिर न देख सकेंगे। इसलिये आप शोक सम्वरण करके दक्षिणायुक्त महायज्ञके द्वारा देवताओंकी पूजा करनेसे इसलोकमें अनुत्तम यश पाके उत्कृष्ट गति लाभ कर सकेंगे।

१३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हतबन्धु राजर्षि युधिष्ठिर उन तपोधन मुनियोंके द्वारा ऐसे ही अनेक प्रकारके वाक्यके सहारे पूरी रीतिसे आश्वासित हुए। हे पार्थिव! विभु धर्म्मराजने भगवान विष्टरश्रवा, द्वैपायन, कृष्ण, देवस्थान, नारद, भीमसेन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी, बुद्धिमान् अर्ज्जुन तथा अन्यान्य श्रेष्ठ पुरुषों और शास्त्रदर्शी ब्राह्मणोंके द्वारा अनुनीत होकर मानसिक शोकसन्ताप और दुःख परित्याग किया। अनन्तर धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने बान्धवोंका मासिक प्रभृति प्रेतकार्य्य पूरा करके देवताओं और ब्राह्मणोंकी पूजा करते हुए समुद्र सहित पृथ्वीको अपने वशमें किया। कुरुनन्दन राजा युधिष्ठिर निज राज्य पाकर प्रशान्तचित्तसे व्यास नारद तथा अन्यान्य मुनियोंसे कहने लगे, कि आप लोग मुनियोंके बीच प्रधान, पुरातन और प्राचीन हैं, इसलिये आप लोगोंके द्वारा आश्वासित होनेसे अब मुझे अणुमात्र भी दुःख नहीं है। विशेष करके जिसके सहारे देवताओंकी पूजा करना होगी, वह महान् अर्थ भी मुझे प्राप्त हुआ है; इससे आज हम आप लोगोंको अगाड़ी करके यज्ञ करेंगे। हे द्विजसत्तम पितामह! हमने सुना है, कि वह स्थान अत्यन्त ही आश्चर्य्ययुक्त है; इसलिये जिस प्रकार हम आप लोगोंके द्वारा रक्षित होकर हिमालय पर्व्वतपर जा सकें वैसा ही उपाय करिये। हे विप्रर्षि! हमारा वह यज्ञ आप लोगोंके ही अधीन होरहा है और भी भगवान देवस्थान तथा देवर्षि नारदने बहुतसा कल्याण युक्त वचन कहा है; कोई भाग्यहीन मनुष्य व्यसनमें पड़के साधुसम्मत सुहृत् तथा इस प्रकार गुरु लाभ नहीं कर सकता। अनन्तर वे महर्षिगण राजा युधिष्ठिरका ऐसा वचन सुनके उन्हें और कृष्ण अर्ज्जुनको हिमालय पर्व्वतपर जानेकी आज्ञा देकर सबके सम्मुखमें वहीं अन्तर्द्धान हुए और धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर उस स्थानमें बैठे। उस समय पाण्डवगण भीष्मकी मृत्यु होनेपर उनका शौचकर्म्म करने लगे, उन लोगोंका वह अत्यन्त दीर्घसमय अतिवाहित न हुआ। कुरुसत्तम युधिष्ठिरने भीष्म और कर्ण आदि कौरवोंके ऊर्द्धदेहिक कार्य्य पूरा करके ब्राह्मणोंको महत् दान प्रदान किया और फिर

उन्होंने धृतराष्ट्रके सहित ऊर्द्ध्वदैहिक कार्य्य करके ब्राह्मणोंको बहुतसा धन दान किया। अनन्तर वह प्रज्ञाचक्षु पिता धृतराष्ट्रको अगाड़ी करके धीरज देते हुए हस्तिनापुरमें प्रवेश करके भाइयोंके सहित पृथिवी शासन करने लगे।

१४ अध्याय समाप्त।

———

राजा जनमेजयने वैशम्पायन मुनिसे पूंछा, हे द्विजसत्तम! पाण्डवोंके द्वारा राष्ट्र विजित और प्रशान्त होनेपर महावीर वासुदेव और धनञ्जयने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! पाण्डवोंके द्वारा राष्ट्र जित और प्रशान्त होनेपर श्रीकृष्ण तथा अर्जुन अत्यन्त हर्षित होकर सुरपुरमें प्रविष्ट दो सुरपति तथा नन्दन काननविहारी दोनों अश्विनीकुमारोंकी भांति हृष्ट अन्तःकरणसे विचित्रवन, पर्व्वत सानु, उत्तमपुण्ययुक्त तीर्थ, पल्वल तथा नदीके बीच विचरते हुए विहार करने लगे। हे भारत! महात्मा कृष्ण और पाण्डुपुत्र अर्जुन दोनोंही इन्द्रप्रस्थमें अनेक प्रकार क्रीड़ा करते हुए सभाके बीच प्रविष्ट होकर विहार करने लगे। उस सभाके बीच वे लोग अनेक प्रकारकी वार्त्ता करते हुए युद्धके क्लेशोंको वर्णन करने लगे। उस समय पुराण ऋषिसत्तम महात्मा कृष्ण अर्जुन दोनोंही परम प्रसन्न होकर ऋषियों तथा देवताओंका वंश कहने लगे। निश्चयज्ञ केशिनिसूदन कृष्ण सहस्रों स्वजनों और पुत्रशोकसे सन्तापित पृथा पुत्र अर्जुनको विचित्र अर्थप्रद और निश्चययुक्त मधुर बचनसे सान्त्वना की, विज्ञानज्ञ महातपस्वी कृष्ण अर्जुनको विधिपूर्व्वक आश्वासित करके मानो शरीरका बोझा हरकर विश्राम करने लगे।

तिसके अनन्तर वाक्यकी समाप्ति होनेपर गोविन्द गुड़ाकेश अर्जुनका मधुरबचनके सहारे सान्त्वना करते हुए हेतुयुक्त बचन कहना आरम्भ किया।

श्रीकृष्ण बोले, हे शत्रुतापन सव्यसाचिन्! राजा युधिष्ठिरने तुम्हारे बाहुबलके अवलम्बनसे इस समुद्र सहित पृथ्वीको जय किया है। हे नरोत्तम! भीमसेन और यमज नकुल सहदेवके प्रभावसे धर्म्मराज असपत्ना पृथ्वीभोग करते हैं। हे धर्म्मज्ञ! धर्म्मराजने धर्म्मबलसे ही अकण्टक राज्य पाया है और धर्म्मबलसे ही युद्धमें राजा सुयोधनको मारा है। हे कुरुद्वह! अधर्म्माभिलाषी सदा अप्रिय बचन कहनेवाले लोभी दुरात्मा धृतराष्ट्रपुत्रोंके बान्धवोंके सहित युद्धभूमिमें सोनेपर धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर अखिल प्रशान्त भूमण्डल भोग करते हैं और मैं भी तुम्हारे सङ्ग बनके बीच क्रीड़ा करता हूं। हे अमित्रकर्षण! मैं तुमसे अधिक क्या कहूं,—तुम पृथा, धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर, महाबली भीम और माद्रवतीपुत्र नकुल-सहदेव तुम लोग जहांपर रहते हो, उसही स्थानमें मेरा अत्यन्त ही अनुराग हुआ करता है। हे अनघ! स्वर्गतुल्य रमणीय पुण्यजनक सभाओंके बीच मुझे तुम्हारे सङ्ग रहते हुए बहुत समय बीत गया। वसुदेव, बलदेव और वृष्णिपुङ्गव पुरुषोंको बहुत कालतक न देखनेसे मुझे द्वारकापुरीमें जानेके लिये अत्यन्त ही अभिलाष हुई है; हे पुरुषर्षभ! इसलिये मेरे जानेमें तुम्हें सम्मत होना योग्य है। जब राजा युधिष्ठिर अत्यन्त शोकार्त्त हुए, तब उस शोककी निवारण करनेके लिये भीष्मके सहित हम लोगोंने उन्हें अनेक प्रकारकी युक्तियुक्त उपदेश बचन कहे थे। महात्मा युधिष्ठिर हम लोगोंके शास्ता और पण्डित होनेपर भी हमने उन्हें जो अनुशासन वाक्य कहा था, उन्होंने उस वाक्यमें अवहेला न करके पूरी रीतिसे ग्रहण किया है। धर्म्मपुत्रके अत्यन्त धर्म्मज्ञ कृतज्ञ तथा सत्यवादी होनेसे उनका धर्म्म तथा उत्कृष्ट बुद्धि और मर्य्यादा कभी भी विचलित न होगी।